ya Samaj Foundation Chennai

AGANISHIKHA

Vol. 19 1988-89 G. K .V. Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

079500

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Stock Verification-2024

Stock Verification-2024

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

236
079500
गु० कां० विश्वविद्यालय
हरिद्वार
570187
079500

उद्बुध्यस्वाग

अखिल भारतीय पत्रिका

अग्निशिखा

श्रीअरविंद सोसायटीकी मासिक पत्रिका

अगस्त १९८८ वर्ष १९, अंक १, पूर्णांक २१७

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

संदेश १
'संपादकीय': अवश्य सुनेंगे २
दैनन्दिनी ४
योगके तत्त्व
काम-वासना भोजन, नींद ९
कुछ व्याख्याएं १२
'योगके तत्त्व'पर माताजीके साथ प्रश्नोत्तर:
२१ अप्रैल, १९५४ १८
२८ अप्रैल, १९५४ २५
५ मई, १९५४ ३२
सोसायटी समाचार आ० ३

आपका अग्निशिखा/पुरोधाका चंदा . . . में समाप्त हो रहा है। कृपया अग्निशिखाके १० और पुरोधाके १४ शीघ्र भेजें अन्यथा अगला अंक वी.पी.पी. से जायगा। वी.पी.पी. लौट आनेसे हमे बहुत हानि होती है। अलग अनुस्मारक नहीं भेजा जायगा। कृपया चेक न भेजें। चाहें तो १७५ और २२५ एक साथ या किस्तोंमें देकर अग्निशिखा और पुरोधाके या ४०० देकर दोनोंके आजीवन सदस्य बन सकते हैं।

संपादक : रवींद्र, अनुबेन
प्रकाशक : श्रीअरविंद सोसायटी, पांडिचेरी-६०५००२
मुद्रक : अमियरंजन गांगुली, श्रीअरविंद आश्रम प्रेस, पांडिचेरी-६०५००२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गु० कां० विश्वविद्यालय
हरिद्वार

संदेश

O Son of the ancient Yoga, realise thy self in all things; fear nothing, loathe nothing; dread none, hate none. But do thy part with strength and courage; so shalt thou be what thou truly art, God in thy victory, God in thy defeat, God in thy very death and torture, — God who will not be defeated and who cannot die. Shall God fear any? shall He despair? shall He tremble and shake? Nay, 'tis the insects that form thy body and brain which shake and tremble; Thou within them sittest looking with calm eyes at their pain and terror; for they are but shadows that dream of themselves as a reality. Realise the Self in all creatures, realise all creatures in the Self; then in the end terror shall flee from thee in terror, pain shall not touch thee, lest itself be tortured by thy touch; death shall not dare come near to thee lest he be slain.

SRI AUROBINDO

हे पुरातन योगके वंशज, अपनी आत्माको सभी चीजोंमें चरितार्थ कर, किसी चीजसे मत डर, किसी चीजसे घृणा न कर, किसीसे आतंकित न हो, किसीसे नफरत न कर। अपनी भूमिकाको साहस और शक्तिसे अदा कर; तभी तू वह होगा जो तू सचमुच है, अपनी विजयमें भगवान्, अपनी पराजयमें भगवान्, स्वयं अपनी

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मृत्युमें और यंत्रणामें भगवान्––ऐसे भगवान् जिनकी पराजय नहीं हो सकती और जो मर भी नहीं सकते। क्या भगवान् किसीसे डरेंगे? क्या वे निराश होंगे? क्या वे कांपेंगे और लड़खड़ाएंगे? कांपता, लड़खड़ाता है यह शरीर और मस्तिष्क जिनकी रचना कीटाणुओंसे हुई है। उनके बीच बैठा हुआ तू शांत नेत्रोंसे उनके दर्द और आतंकको देखता है; क्योंकि वे केवल परछाइयां हैं जो वास्तविकता होनेका स्वप्न देखती हैं। सब प्राणियोंमें आत्माको चरितार्थ कर, आत्मामें सब प्राणियोंको चरितार्थ कर; तब अंतमें आतंक आतंकित होकर तुझसे भाग निकलेगा, दर्द तुझे छू न पाएगा इसी डरसे कि कहीं वह स्वयं तेरे स्पर्शसे यंत्रणा न पाये; मृत्यु तेरे पास आनेका साहस न कर पाएगी कि कहीं उसीकी हत्या न हो जाय।

––श्रीअरविंद

संपादकीय :

अवश्य सुनेंगे

भारतकी राजनीतिक, सामाजिक परिस्थिति ऐसी है कि कोई भी भविष्यके दर्पणमें झांकनेका साहस नहीं कर पाता। आजका भारत फिर भी स्वाधीन है किंतु जब वह पराधीन था और अंग्रेज अपने प्रिय होटलोंमें यह सूचना लटका देते थे, "कुत्तों और भारतीयों-का प्रवेश यहां निषिद्ध है।" तब एक भविष्य-द्रष्टा और देशप्रेमीने खुल्लमखुल्ला घोषणा की थी कि भारत न केवल स्वाधीन होगा बल्कि अन्य राष्ट्र उसके निर्देशनकी प्रतीक्षा करेंगे। वह व्यावहारिक क्षेत्रोंमें उनका मित्र होगा और आध्यात्मिक क्षेत्रमें गुरु। ऐसी निर्भीक वाणीके स्वामी थे श्रीअरविंद।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज हम उस अनन्य देशप्रेमी और भविष्य-द्रष्टासे प्रार्थना करें कि देशकी इस किंकर्तव्यविमूढ़ स्थितिसे उसे उबारें।

उनके अनुसार भारतकी मुख्य त्रुटियां हैं शक्तिका अभाव, स्वतंत्र विचार करनेकी अक्षमता, भावोंकी संकीर्णता, राष्ट्रकी एकताको समझनेकी अक्षमता।

शक्तिसे उनका अर्थ पहलवानके शारीरिक बलसे नहीं बल्कि चरित्र-बलसे है जो शरीरके बलसे कहीं अधिक शक्तिशाली है। सर्वोत्तम शक्ति वह होगी जिसमें शरीरकी और चरित्रकी शक्ति-सम्मिलित हो।

स्वतंत्र विचारकी क्षमता पानेके लिये हमें अपनी शिक्षा प्रणालीको बदलना होगा। बच्चेको अपने विचार अभिव्यक्त करनेकी शक्ति विकसित करनी होगी तभी वह बिना डरे अपने विचार प्रकट कर पाएगा।

हमारे समाजको जातिकी सीमाओंको तोड़ कर सारे राष्ट्रके कल्याणकी भावनाको प्रोत्साहित करना चाहिये। गुजरात, बंगाल, महाराष्ट्र वगैरहका न सोच कर पूरे भारतकी चिंता करनी चाहिये।

अलगावकी जगह ऐसे बिंदुओंपर जोर देना चाहिये जिन्हें हम सारे भारतमें पाते हैं; जैसे विवाह, धार्मिक पूजा-पाठ।

हम अपनी ओरसे इतना करें तो यह हमारी प्रार्थना होगी जिसे भगवान् अवश्य सुनेंगे।

—अनुबेन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दैनान्दिनी

अगस्त

१. यहां प्रत्येक व्यक्ति एक ऐसी असंभवताका प्रतिनिधित्व करता है जिसे हल करना है, लेकिन तेरी दिव्य कृपाके लिये सब कुछ संभव है।

२. तुम्हारे अंदर पर्याप्त अभीप्सा और ऐसी प्रार्थना होनी चाहिये जो काफी तीव्र हो। यह मानव प्रकृतिको भागवत करुणा-द्वारा दिया गया अद्भुत उपहार है; मनुष्य नहीं जानता कि उसका उपयोग कैसे किया जाय।

३. सच बात यह है कि अगर तुम एक क्षणार्धके लिये भी इस सच्ची निष्कपट सचाई या पर्याप्त तीव्र प्रार्थनामें जियो तो ध्यान करके जितनी चीजें जान सकते हो उससे अधिक जान लोगे।

४. भागवत करुणाको ग्रहण करनेके लिये तुम्हारे अंदर न केवल बड़ी अभीप्सा होनी चाहिये बल्कि सच्ची नम्रता और पूर्ण विश्वास भी होना चाहिये।

५. जब एक बार तुमने केवल समझ ही नहीं बल्कि अनुभव भी किया कि परम प्रभु सब चीजोंके स्रष्टा हैं और उनके साथ तुम सतत संपर्क रखते हो, तब सब कुछ उनकी करुणाका कार्य बन जाता है और अचंचल शांति और ज्योतिर्मय परमानंदमें बदल जाता है।

६. भागवत कृपा हर क्षण कार्य करनेके लिये तत्पर है लेकिन जैसे-जैसे मनुष्य अज्ञानके विधानसे प्रकाशके विधानकी ओर विकास करता है वैसे-वैसे वह अभिव्यक्त होती जाती है और उसका हस्तक्षेप प्रायः कितना भी चमत्कारिक क्यों न हो उसका अर्थ यह है कि वह कोई निरंकुश सनक नहीं है बल्कि विकासमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक सहायता है और ऐसे प्रकाशके रूपमें है जो मार्गदर्शन देता है और अंतमें मुक्ति दिलाता है।

७. साधकको हमेशा एक बात याद रखनी चाहिये कि सब कुछ आंतरिक मनोभावपर निर्भर है; अगर उसे भागवत कृपापर पूर्ण श्रद्धा है तो वह देखेगा कि हर कदमपर भागवत कृपा उससे उचित कार्य करवायेगी।

८. "अगर भागवत कृपा सब कुछ कर सकती है तो फिर तपस्या क्यों करें?"

मेरा ख्याल है कि तुम्हारे अंदर कोई चीज हमेशा इसकी—भागवत कृपाके अतिमानसिक चमत्कारकी—मांग करती रही है। वह कोई ऐसी चीज है जो तपस्याकी और आत्म-पूर्णता और लंबे परिश्रमकी मांगसे अधीर हो उठी है।

९. अगर तुम परिश्रम और तपस्या करनेके लिये तैयार नहीं हो, मन और प्राणपर नियंत्रण रखनेके लिये तैयार नहीं हो, तो तुम बड़े आध्यात्मिक लाभकी आशा नहीं कर सकते क्योंकि मन और प्राण हमेशा अपना राज्य देरतक जारी रखनेके लिये चालाकियां और बहाने ढूंढते रहेंगे, अपनी पसंद और नापसंद थोपते रहेंगे, और उस दिनको दूर धकेलते रहेंगे जब उन्हें आत्मा और भगवान्‌के आज्ञाकारी यंत्र और खुला मार्ग बनना पड़ेगा।

१०. तुम्हारी श्रद्धा, सहृदयता और समर्पण जितने पूर्ण होंगे भागवत कृपा और रक्षा उतनी ही तुम्हारे साथ बनी रहेंगी।

११. जब दिव्य मांकी कृपा और रक्षा तुम्हारे साथ है तो तुम्हें कौन-सी चीज छू सकती है या तुम्हें किससे भय हो सकता है?

१२. "माताजी, उनका क्या जो अभागे होते हैं और वे जो कुछ करते हैं उसमें असफल होते हैं?"

सबसे पहले तुम्हें यह जानना होगा कि अच्छे या बुरे भाग्य जैसी कोई चीज नहीं होती।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह निश्चित है कि तुममें कामनाएं हैं और वे संतुष्ट न हों तो तुम समझ लो कि भागवत कृपा तुम्हारे साथ है और तुम्हें अनुभवके द्वारा तेजीसे प्रगति कराना चाहती है। वह तुम्हें सिखाती है कि भागवत इच्छाके प्रति स्वेच्छासे और सहज रूपसे समर्पण करनेसे किसी कामनाकी तुष्टिकी अपेक्षा, शांति और प्रकाशमें सुखी रहनेका अधिक निश्चित उपाय है।

१३. अगर सामर्थ्य आध्यात्मिक है तो उसमें आध्यात्मिक उपलब्धि पानेकी शक्ति होगी, उससे अधिक सामर्थ्य निष्कपट सचाईमें है, सबसे अधिक समर्थ है भागवत कृपा। मैंने अनेक बार कहा है कि अगर मनुष्य निष्कपट और सच्चा है तो वह चिरस्थायी और दुर्दमनीय कठिनाइयोंको पार कर सकेगा। मैंने भागवत कृपाके बारेमें भी गीताकी इन पंक्तियोंका उल्लेख किया है।

अहम् त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः।

१४. फिर जो तुम्हारा है उसे किस चीजका भय हो? क्या वह तेरे द्वारा खींचे हुए मार्गपर हर्षपूर्ण आत्मा और प्रकाशित ललाटसे नहीं चल सकता? तब भी, जब वह मार्ग उसकी सीमित बुद्धिके लिये एकदम अबोधगम्य हो।

१५. तुम अधिक-से-अधिक तल्लीनतासे काममें लगकर अपने-आपको भूल सकते हो यानी जो कुछ करो उसे भगवान्‌के अर्पित करो, एकदम अनासक्त होकर, लेकिन प्राचुर्यके साथ, एक आत्मदानमें और अपने-आपको पूरी तरह भूलकर काम करो।

१६. एक ही बात है जिसका मूल्य है, वह है भगवान्, उनकी इच्छा, उनकी अभिव्यक्ति। हम यहां इसीलिये हैं, हम वही हैं, और कुछ नहीं।

१७. आत्म-विस्मृति ऐसी निष्क्रिय अवस्था हो सकती है जिसका परिणाम होगा अहंरहित होना। जब भगवान्‌की ओर मुड़ा जाय तो आत्म-दानका पूरा महत्त्व होगा और वह सक्रिय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्रिया बन जाएगा जिसमें प्रेम अपने शुद्धतम और उच्चतम रूपमें उपस्थित होगा।

१८. अपने बारेमें न सोचना, अपने लिये न जीना, किसी चीजका संबंध अपने साथ न जोड़ना, केवल उसीके बारेमें सोचना जो सर्वसुन्दर है, ज्योतिर्मय, आनंदमय, शक्तिमान, अनुकंपामय और अनंत है; इसमें इतना गभीर आनंद है कि उसकी तुलना किसी अन्य वस्तुसे नहीं की जा सकती।

१९. तुम भगवान्‌को अपने नजदीक, उन्हें सतत अपने पास अनुभव नहीं करते क्योंकि तुम उन्हींके नहीं हो, क्योंकि तुम हजारों अन्य वस्तुओं और मनुष्योंके हो, तुम्हारे अपने विचार, कर्म, भाव और आवेगोंमें ऐसी लाखों चीजें हैं जो तुम उन्हें नहीं देते और इसीलिये तुम्हें लगता है कि भगवान् तुम्हारे पास नहीं हैं, क्योंकि ये सब चीजें तुम्हारे और उनके बीच कितनी सारी दीवारें और परदे बन जाती हैं।

२०. प्रत्येक व्यक्तिको दोहरा परिश्रम करना है, उस परिश्रमका हर पहलू दूसरेकी सहायता करता है और उसे पूर्ण बनाता है। आंतरिक विकास, दिव्य प्रकाशके साथ बढ़ता हुआ ऐक्य, वही एक अवस्था है जिसमें मनुष्य वैश्व जीवनकी बृहद् धाराके साथ सामंजस्यमें रह सकता है।

२१. ऐसा बाह्य कार्य होना चाहिये जिसका चुनाव प्रत्येक व्यक्तिको अपनी क्षमता और व्यक्तिगत रुचिके अनुसार करना पड़ता है। उसे अपना स्थान खोजना चाहिये, वह स्थान जहां केवल वही संगीत समारोहमें बैठ सकता है और पूरी तरह उसीके समर्पित होना चाहिये। साथ ही उसे यह न भूलना चाहिये कि पार्थिव स्वर संगतिमें वह एक ही स्वर बजा रहा है, फिर भी उसका स्वर पूरे संगीतमें अनिवार्य है।

२२. सचाई दिव्यताका द्वार है।

२३. अच्छे कार्य सम्मिलित और धीरज भरे प्रयाससे ही होते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२४. जो कार्य आज नहीं हो पा रहा, वह कुछ समय बाद अवश्य होगा। प्रगतिके लिये किया गया कोई भी प्रयास व्यर्थ नहीं हुआ है।

२५. भागवत सहायतासे कुछ भी असंभव नहीं रहता।

२६. तुम जो भी कार्य करो पूरी सचाईके साथ करो, जितना पूर्ण कर सको उतना पूर्ण करो, निश्चय ही, यह भगवान्‌की सेवा करनेके उत्तम उपायोंमेंसे एक है।

२७. हमारे सारे सतही जीवनका तत्त्व है कामना।

२८. तुम जो कुछ जानते हो उसे व्यवहारमें लाओ, सीखनेका ऐसा उत्तम उपाय और कोई नहीं है।

२९. पलायन न तो विजय लाना है, न मुकुट। एक विराट् समाप्ति भगवान्‌का अंतिम शब्द नहीं है।

३०. जिस लक्ष्यको, जिस मार्गको तू चुनता है, वही तेरी नियति है।

३१. सरल और निष्ठावान् हृदय महान् वरदान है।

मैं तुम्हें नमन करता हूं मधुर मां, हमेशा और सदा के लिये मेरे अन्दर उपस्थित रहो।

उत्तर—हां, मैं हमेशा तुम्हारे साथ हूं लेकिन तुम्हें मुझे बुलाना कभी न भूलना चाहिये क्योंकि मुझे बुलानेसे ही उपस्थिति प्रभावकारी होती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काम-वासना, भोजन, नींद

(गतांकसे आगे)

मन और प्राण रातको इतने सक्रिय क्यों होते हैं? रातको उनकी गतिविधिको कैसे वशमें रखा जाय?

यह उनका कार्य है। जबतक तुम नींदमें पूरी तरह सचेतन न हो जाओ वे कार्य करते रहेंगे।

नींदके पहले और बीचके भागमें मेरे अंदर काफी मानसिक और प्राणिक क्रियाएं चलती रहती हैं, लेकिन अंतिम भागमें ये शांत हो जाती हैं और मुझे विभिन्न प्रकारके प्रतीकात्मक स्वप्न और उच्चतर ज्ञानके संकेत आने लगते हैं। इसका क्या कारण है?

नींदमें साधारणतः व्यक्ति चेतनासे गहरी चेतनाके लंबे क्रममें चलता चला जाता है और तब अंतरात्मामें पहुंचकर वहां विश्राम करता है या उच्चसे उच्चतर चेतनामें जाकर नीरवता और शांतिमें विश्राम पाता है। इस विश्राममें बीते कुछ मिनट सच्ची नींद होते हैं जो कि फिरसे भला-चंगा कर देते हैं और अगर यह न मिले तो आधा विश्राम होता है। जब तुम इन दोनोंमेंसे किसी क्षेत्रके निकट पहुंचते हो तो ऐसे उच्च प्रकारके स्वप्न देखना शुरू करते हो।

नींदमें अंतरात्मा या उच्चतर चेतनामें जाकर वहां आराम करनेका क्या तरीका है?

यूं तो यह अचेतन रूपमें होता है, लेकिन अगर कोई सचेतन रूपसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह करना और उसपर नियंत्रण रखना चाहे तो पहले उसे नींदमें सचेतन होना होगा।

भारी अवचेतन नींदको हल्का कैसे बनाया जाय?

अधिक चेतनाको बुलाकर।

मैंने देखा है कि दिनमें आधे घंटेकी नींद भी रातकी पांच-छः घंटेकी नींदसे ज्यादा ताजगी लाती है। इसका क्या कारण है?

यह इसलिये होगा कि दिनमें और तरहकी नींद होती है, कम भारी, जिसमें अवचेतनामें कम समय बीतता है।

कुछ लोग कहते हैं कि उन्हें सारी रात स्वप्न नहीं आते। क्या यह संभव है?

उनका मतलब बस यही होता है कि जब वे नींदमेंसे वापस आते हैं तो वे स्वप्न देखनेके बारेमें सचेतन नहीं होते। नींदमें चेतना अन्य स्तरोंपर जाती है और वहांके अनुभव प्राप्त करती है। जब भौतिक मन इन्हें पूरी तरह या अधकचरे रूपमें अनूदित करता है तो इन्हें स्वप्न कहा जाता है। नींदमें सारे समय ऐसे स्वप्न आते रहते हैं, कभी याद रहते हैं और कभी बिल्कुल याद नहीं रहते। कभी आदमी अवचेतनामें इतना नीचे चला जाता है कि स्वप्न आते तो हैं पर वहांसे लौटनेपर इतनी चेतना भी नहीं रहती कि स्वप्न देखे भी थे।

क्या स्वप्नोंका कोई अर्थ होता है? क्या अवचेतनाके स्वप्नोंका कोई मतलब होता है?

जो स्वप्न अवचेतनाका नहीं होता वह या तो प्रतीकात्मक होता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है या भौतिकसे परेके किसी स्तरका अनुभव होता है या वहांपर मन, प्राण या किसी और शक्तिकी रचना होता है। कभी-कदास वह भूत, भविष्य या वर्तमानमें किसी वास्तविक या संभाव्य घटनाका सूचक होता है। अवचेतनाके स्वप्नका कोई अर्थ नहीं होता। वह अवचेतनामें पहलेसे पड़े हुए संस्कारों और स्मृतियोंकी खिचड़ी होता है।

एक स्वप्नमें मैंने कुछ लोगोंको बड़ी कठिनाईसे पहाड़पर चढ़ते देखा। मैं भी उनके साथ चढ़ रहा था। कुछ देर बाद में थक गया और चढ़ना छोड़कर यह देखने बैठ गया कि अब क्या किया जाय। फिर मैंने अनुभव किया कि किसी शक्तिने मुझे उठाकर पहाड़की चोटीपर रख दिया। चोटीपर पहुंचकर मैंने देखा कि वहां भिन्न-भिन्न रंगों और प्रकाशोंके मकान थे। इसपर मैं जाग उठा। इस स्वप्नका क्या मतलब है?

यह दो विधियोंका प्रतीक है—एक तो अपना प्रयास, दूसरे माताजीकी शक्तिके द्वारा उठाया जाना।

नींदमें प्रायः मुझे प्राण जगत्के बुरे स्वप्न आते हैं। उन्हें कैसे रोका जाय?

अपनी जाग्रत् अवस्थामें—उदाहरणके लिये सोनेसे पहले—यह संकल्प रखो कि ऐसी चीजें स्वप्नमें न आयें। शुरूमें यह विधि तुरंत सफल न होगी, पर अंतमें सफलता मिलेगी। या तुम स्वप्नमें अधिक सचेतन होनेके लिये अभीप्सा करो।

कभी-कभी जब स्वप्नमें मेरे ऊपर प्रहार होता है तो मैं माताजी-का नाम जपकर उससे पिंड छुड़ा सकता हूं। क्या इसका यह मतलब है कि माताजीके नाममें भी शक्ति है?

हां, निश्चय ही। नाममें हमेशा शक्ति होती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ व्याख्याएं

क्या जप, धार्मिक पुस्तकोंका पाठ, पूजा आदि धार्मिक क्रियाएं भागवत जीवनके लिये अभीप्साका प्रतीक नहीं हैं? क्या वे उच्चतम सत्यतक पहुंचनेमें सहायक नहीं हैं?

यह इसपर निर्भर है कि वे क्रियाएं किस भावसे की जाती हैं। ये सब चीजें करते हुए भी मनुष्य अनाध्यात्मिक या असुर रह सकता है।

क्या तीर्थ-यात्रा और बहुत-से देवी-देवताओंको पूजनेका कोई आध्यात्मिक अर्थ है? क्या इससे भागवत सत्यको पानेमें सहायता मिलती है?

इसका सत्यसे कोई संबंध नहीं है। यह साधारण चेतनाके लिये धार्मिक अनुष्ठान हैं।

वैष्णवोंमें प्रचलित संकीर्तनका आध्यात्मिक उपयोग क्या है?

उसमें भक्ति जगानेकी क्षमता होती है—विशेषकर प्राणमें।

मैंने कुछ धार्मिक पुस्तकोंमें पढ़ा है कि अगर परिवारके एक सदस्यको आध्यात्मिक सिद्धि मिल जाय तो उसके प्रभावसे दूसरोंको भी मुक्ति मिल सकती है। यह कहांतक ठीक है?

यह सत्य नहीं है। हर एककी अपनी नियति होती है और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसका किसी जीवनमें किसी विशेष परिवारमें आना आनुषंगिक बात है।

रामकृष्ण कहा करते थे कि अगर तुम किसीके आगे किसी तरह कुछ देरके लिये भी भगवान्‌का नाम लो तो एक दिन उसका फल आयेगा और उसमें आध्यात्मिक परिवर्तन होगा। क्या यह हो सकता है?

यह उसी तरहसे हो सकता है जैसे चूहेके आगे 'शेर-शेर' कहनेसे शेर बन सकता है।

जो लोग पूरी तरह सांसारिक जीवनमें फंसे रहते हैं और कठिनाई या विपत्तिके समय ही भगवान्‌को याद करते हैं, क्या ऐसे लोगोंकी भगवान्‌की ओर पूरी तरह मुड़नेकी कोई संभावना है?

भावी संभावना तो सभीके लिये है, नास्तिकके लिये भी जो कभी भगवान्‌के बारेमें नहीं सोचता।

अगर नास्तिकके लिये, भगवान्‌के बारेमें कभी न सोचनेवालेके लिये भी पूरी तरह भगवान्‌की ओर मुड़नेकी संभावना है तो फिर कोई आध्यात्मिक जीवनमें प्रवेश करके कष्टोंका सामना क्यों करे?

भावी संभावना दस हजार वर्ष बाद सिद्ध हो सकती है, और तब भी योग-साधनासे ही होगी।

साधारण लोग भगवान्‌को सिर्फ मुसीबतके समय याद करते हैं और फिर भूल जाते हैं। क्या भागवत कृपा लोगोंके जीवनमें इसी तरह काम करती है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह बात सिर्फ साधारण लोगोंके साथ होती है, उनके साथ नहीं जो भगवान्‌की खोज करते हैं। भगवान्‌की विशेष कृपा भगवान्‌को खोजनेवालोंके लिये होती है, औरोंपर वैश्व संकल्प उनके कर्मके द्वारा काम करता है।

भागवत संकल्प और भागवत कृपामें कोई फर्क है क्या? वे दोनों एक ही नहीं हैं?

भागवत संकल्प सब चीजोंपर काम करता है, वह कोई भी परिणाम ला सकता है। भागवत कृपा सहायता देने और रक्षा करनेके लिये आती है।

क्या यह कहा जा सकता है कि जो साधक इस जीवनमें अपने-आपको भगवान्‌की ओर पूरी तरह नहीं खोल पाया वह अगले जन्म-में अपनी साधना जारी रखनेके लिये फिरसे योगका जीवन अपनायेगा?

हा, यह बहुत हदतक निश्चित है। हां, उसे शुरू करनेसे पहले विरोधी तत्त्वोंको खत्म करना हो तो और बात है।

क्या यह कहा जा सकता है कि जो लोग इस जीवनमें सांसारिक कामोंमें लगे हैं और कुछ हदतक भगवान्‌की ओर मुड़े हैं वे अगले जन्ममें पूरी तरह आध्यात्मिक जीवन अपनायेंगे?

ऐसा कोई कड़ा नियम नहीं है। वे जो कुछ रह चुके हैं और बननेकी अभीप्सा करते हैं उसके अनुसार अपने विकास-मार्गपर चलेंगे।

एक मान्यता है कि कोई आदमी जिसने सारे जीवन कभी भगवान्‌के बारेमें नहीं सोचा वह यदि अपनी मृत्यु शैयापर अंतिम क्षण भगवान्‌को पुकारे तो उसकी मुक्ति हो जाती है। क्या इसमें कुछ सत्य है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं, यह सिर्फ अंधविश्वास है। अगर मुक्ति इतनी आसान होती तो हर एक अपने जीवन-भर जो मरजी करता रहता और अंतमें भगवान्‌को याद करनेकी चालाकीसे चरम अवस्थातक जा पहुंचता। यह मूर्खतापूर्ण विचार है।

पुराण बहुत-से उच्चतर लोकोंकी बात करते हैं। क्या लोग मरनेके बाद इन लोकोंमें जाकर रहते हैं?

वे सबमेंसे नहीं, उनमेंसे कुछमेंसे गुजरते हैं।

लोगोंकी मान्यता है कि जो अच्छा या धर्मपरायण जीवन बिताता है वह मरनेके बाद स्वर्ग जाता है। क्या यह सच है?

वह मरनेके बाद कुछ समयतक सुखमय अवस्थामें रहता है। बस।

पुराणोंमें यह भी कहा गया है कि परलोकमें हजारों नरक हैं और जो इस जन्ममें कुकर्म करते हैं उन्हें मृत्युके बाद वहां रहना पड़ता है। क्या यह सत्य है?

यह एक अंधविश्वास है। लोग मरनेके बाद कुछ प्राणमय या मनोमय लोकोंमेंसे गुजरते हैं या कुछ मनोवैज्ञानिक अवस्थाओंमेंसे निकलते हैं जो जीवनमें उनकी प्रकृति और अवस्थाका परिणाम होती हैं। उसके बाद वे चैत्य जगत्‌में जाते हैं और बादमें धरतीपर लौट आते हैं।

कभी-कभी स्वप्नमें मैं अपने मरे हुए रिश्तेदारोंसे मिलता और बातचीत करता हूं। ऐसा क्यों होता है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वे प्राणमय जगत्में भौतिक जीवनके विचार और विशेषताएं रखते हैं। तुम उनसे प्राणमें मिलते हो।

क्या साधकके मरे हुए रिश्तेदारोंके लिये यह संभव है कि वे उसके मार्गमें आकर उसकी साधनामें बाधा दें?

अगर साधक ऐसा करने दे तभी।

क्या फलित ज्योतिषका योगमें कोई स्थान नहीं है?

ज्योतिष एक गुह्य विज्ञान है, योगका भाग नहीं। यूं तो हर चीज यदि ठीक वृत्तिसे की जाय तो योगका भाग हो सकती है।

क्या ज्योतिषसे आध्यात्मिक जीवनमें कोई लाभ हो सकता है?

नहीं।

ज्योतिषके बारेमें हमारी क्या मनोवृत्ति होनी चाहिये?

जो किसी भी कला या विज्ञानकी ओर होती है।

गुह्य शक्तिका योगमें क्या स्थान है?

अतिभौतिक लोकोंकी सूक्ष्म शक्तियोंको जानना और उनका उपयोग करना योगका भाग है।

गुह्य प्रयास और शक्तिका क्या अर्थ है?

यह प्रसंगपर निर्भर है। साधारणतः इसका अर्थ होगा कि प्रकृति-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की गुप्त शक्तियोंके उपयोग करनेकी शक्ति और उन शक्तियोंके द्वारा प्रयत्न। लेकिन किसी और प्रसंगमें "गुह्य"का अर्थ कुछ और हो सकता है।

क्या हर योगीको गुह्य प्रयासमेंसे गुजरना पड़ता है?

नहीं, हर एकमें यह क्षमता नहीं होती। जिनमें नहीं है उन्हें तबतक प्रतीक्षा करनी चाहिये जबतक उन्हें दी न जाय।

क्या भागवत शक्ति और योग-शक्ति--वह शक्ति जिसे योगी तपस्या करके प्राप्त करते हैं--एक ही हैं?

उस प्रकारकी योग-शक्ति और भागवत शक्ति एक नहीं हैं। असुरों और राक्षसोंमें भी शक्तियां होती हैं। असली योग-शक्ति वह है जो भागवत चेतना और उसके कार्योंके साथ संपर्कसे आती है।

क्या साधकके जीवनमें चमत्कार होते हैं?

चमत्कारसे तुम्हारा मतलब क्या है? सामान्यतः, लोग चमत्कार उस चीजको कहते हैं जो आश्चर्यजनक ढंगसे और ऐसी पद्धतिसे किया जाय जिससे वे अपरिचित हैं और जिसे उनका मन पकड़ नहीं पाता।

क्या योग-सिद्धिका मतलब है किसी कामको चमत्कारिक रीतिसे करना? अगर साधकमें ऐसी क्षमता हो तो उसका उपयोग करना गलत है क्या?

मैं बता चुका हूं कि चमत्कारके जैसी कोई चीज नहीं होती। अगर साधकमें कोई उच्चतर चेतना कोई उच्चतर शक्ति लाती है तो साधकको उसका उपयोग नयी चेतनाके एक भागके रूपमें, अहंकार, स्वार्थ, गर्व या घमंडके बिना ठीक ढंगसे करना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रश्न और उत्तर

२१ अप्रैल, १९५४

माताजी "योगके तत्त्व" पढ़ना आरंभ करती हैं—

तुमने कुछ प्रश्न पूछे हैं। अव तुम उन प्रश्नोंपर और प्रश्न करोगे! हां तो फिर?

मां, यहां लिखा है, "हमारे योगका उद्देश्य है भौतिक चेतनामें अतिमानसिक स्तरपर भगवान्के साथ जुड़ना"; जब भौतिक चेतना भगवान्के साथ जुड़ जाती है तो क्या उसके बाद रूपांतर होता है?

('योगके तत्त्व')

हां, उसके बाद, पर एकदम नहीं। उसमें समय लगता है। रूपांतर तभी होता है जब भगवान् भौतिक चेतनामें अवतरित हो जायें, बल्कि यों कहना चाहिये, जब भौतिक चेतना भगवान्के प्रति पूर्णतया ग्रहणशील हो जाय—तब स्वभावतया रूपांतर आरंभ हो जाता है। लेकिन रूपांतर जादूकी छड़ी हिलानेसे नहीं हो जाता। इसमें समय लगता है और यह क्रमिक रूपसे होता है।

किंतु जब एक बार भौतिक चेतना भगवान्के साथ संबद्ध हो जाती है तब तो यह निश्चित रूपसे हो जाता है न?

यह मैं तुम्हें थोड़ी देर बाद बता दूंगी।

कारण, यदि रूपांतर पीछे न आये तो यह क्या अंतिम लक्ष्य[1] नहीं है?

---

[1] "भगवान्के साथ पूर्ण मिलन ही अंतिम लक्ष्य है।"

('योगके तत्त्व')

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

, न, यह वह नहीं है जिसे हम अंतिम लक्ष्य कहते हैं। किंतु इसके बाद रूपांतरको आना ही चाहिये; स्वभावतया आना चाहिये। किंतु मेरा अभिप्राय यहां पूर्णताकी मात्रासे है, अर्थात्, उस समग्रतासे जो सुनिश्चित नहीं है, इस अर्थमें कि इस रूपांतरमें संभवत: कई अवस्थाएं आती हैं। हम बहुत ही अस्पष्ट रूपमें रूपांतरके विषयमें इस ढंगसे बात करते हैं; यह हमें एक ऐसी वस्तुका आभास देता है जो जब आयगी तो सब कुछ ठीक कर देगी—मेरे विचारमें लोग लगभग ऐसा ही सोचते हैं। "अगर हमारे सामने कठिनाइयां हैं तो कठिनाइयां दूर हो जायंगी; रोगियोंके रोग दूर हो जायेंगे; और यदि शारीरिक दोष हैं तो वे भी दूर हो जायेंगे", इत्यादि, इत्यादि। किंतु यह एक धुंधला-सा विचार है, एक आभास मात्र।

एक बात बड़ी विलक्षण है। भौतिक चेतना, अर्थात्, शरीरकी चेतना किसी भी वस्तुको यथार्थ रूपमें उसकी समस्त बारीकियों सहित तबतक नहीं जान सकती जबतक कि वह बस चरितार्थ होनेकी तैयारीमें न हो। और यह इस बातका एक निश्चित संकेत होगा कि अब व्यक्ति इस प्रक्रियाको समझ सकेगा : क्रियाओं और प्रक्रियाओं-के किस अनुक्रमसे पूर्ण रूपांतर साधित होगा ? अर्थात्, किस क्रमसे ? किस विधिसे ? पहले क्या होगा ? बादमें क्या होगा ?——ये सब छोटी-छोटी बातें। ऐसे प्रत्येक समय जब तुम एक छोटी-सी बारीकी-को यथार्थ रूपमें देख लोगे तो इसका अर्थ यह होगा कि वह चरितार्थ होनेवाली है।

व्यक्ति समग्रकी झलक पा सकता है। उदाहरणार्थ, यह बिल्कुल निश्चित है कि शारीरिक चेतनाका रूपांतर सबसे पहले होगा, इसके बाद आयेगा शरीरका सभी क्रियाओंपर स्वामित्व एवं नियंत्रण और पीछे यह स्वामित्व अथवा नियंत्रण धीरे-धीरे (यहां यह अधिक अस्पष्ट हो जाता है), हां, धीरे-धीरे यह स्वयं क्रियाके रूपांतरका रूप धारण कर लेगा—यह सब निश्चित है। किंतु अंतमें क्या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होगा इसके विषयमें श्रीअरविंदने अपने एक अंतिम लेख[१]में लिखा है; इसमें वे कहते हैं कि इन्द्रियोंका भी रूपांतर हो जायगा, दूसरे शब्दोंमें, इनका स्थान कुछ एकाग्र शक्तियोंके केंद्र (शक्तियोंके केंद्र और कर्म-केंद्र) ले लेंगे, ये शक्तियां विभिन्न प्रकारकी और विभिन्न गुणोंवाली होंगी और शरीरकी समस्त इंद्रियोंका स्थान ले लेंगी। पर, मेरे बच्चो, यह सब बहुत दूरकी बात है, दूसरे शब्दोंमें, यह कार्य कैसे साधित होगा, इसका अभीतक किसीको पता नहीं लग सका है। उदाहरणार्थ, हृदयको ही लो जिसका कार्य समूचे शरीर-में रक्त प्रवाहित करना है, इसका स्थान शक्तियोंका कौन-सा समूह लेगा? किस प्रकार कुछ शक्तियोंका केंद्र रक्तका स्थान लेगा? ऐसी अन्य सब बातें। फेफड़ोंका स्थान कौन-सी शक्तियां लेंगी और किन स्पन्दनोंके साथ और किस प्रकार? . . . यह सब बहुत बादमें आयेगा। अभी यह कार्य चरितार्थ नहीं हो सकता। इसकी एक झलक मिल सकती है, कुछ पूर्वाभास मिल सकता है, किंतु . . . शरीरके लिये कुछ जाननेका अर्थ है उसे करनेकी शक्ति प्राप्त करना। मैं तुम्हें एक जाना-पहचाना उदाहरण देती हूं—तुम व्यायामकी क्रियाको तबतक नहीं जान सकते जबतक उसे कर न लो। तुम देखोगे कि जब तुम उसे भली-भांति कर लेते हो तभी उसे जान और समझ सकते हो, इससे पहले नहीं। किसी वस्तुको भौतिक रूपसे जान लेनेका अर्थ है कि तुममें उसे करनेकी शक्ति है। हां तो, यह बात सभी वस्तुओंपर लागू होती है, रूपांतर पर भी।

यह कार्य कैसे होगा इस विषयपर हम ज्ञानपूर्वक कुछ वर्षोंके बीतनेपर ही कह सकेंगे। किंतु अभी मैं तुम्हें इतना ही बता सकती हूं कि यह आरंभ हो गया है। यदि तुम बुलेटिनका अगला अंक (२४ अप्रैलका) ध्यानपूर्वक पढ़ोगे तो तुम्हें पता चल जायगा कि यह

---

[१] "अतिमानसिक अभिव्यक्ति": दिव्य शरीर।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कार्य आरंभ हो गया है। हम बादमें देखेंगे, शायद मैं तुम्हें इसका कुछ अर्थ समझा सकूं।

कोई और प्रश्न ?

मां, बादका मतलब कब ? आप हमें कब बतायेंगी ?

कब बताऊंगी ? पता नहीं, मेरे बच्चो।

079500

मैं "साधनामें सक्रियता और निष्क्रियताके वास्तविक अर्थ" ('योग-के तत्त्व') को भली-भांति नहीं समझ सका।

क्या तुम्हें मालूम नहीं कि सक्रियता और निष्क्रियताका क्या अर्थ है ? क्या तुम इन दो शब्दोंका अर्थ जानते हो ?

जी हां।

हां, तो जब तुम सक्रिय होते हो तो इसका क्या अर्थ हुआ ?

जब कि मैं काम कर रहा होता हूं।

काम ? ठीक ! और तुम निष्क्रिय कब होते हो ? जब तुम सोते हो ? (सब हंसते हैं)

जब मुझे आलस्य आ घेरता है मैं कुछ नहीं कर सकता।

न, मेरे बच्चे, यह आवश्यक नहीं है। निष्क्रियता आलस्य नहीं है। एक सक्रिय कर्म वह है जिसमें तुम अपनी शक्तिको बाहरकी ओर प्रक्षिप्त करते हो, अर्थात्, जब कोई वस्तु तुम्हारे अंदरसे बाहर-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की ओर आती है--एक क्रिया, एक विचार, एक भावनाके रूपमें--एक ऐसी वस्तु जो तुम्हारे अंदरसे दूसरोंकी ओर या संसारमें जाती है। निष्क्रियताकी अवस्था वह होती है जब तुम अपनेमें ही सिमटे होते हो, अर्थात्, जो कुछ बाहरसे आता है उसके प्रति खुले होते हो, उसे ग्रहण करते हो। इससे तनिक भी अंतर नहीं पड़ता कि उस समय तुम हिल-डुल रहे हो या निश्चल बैठे हो। वह ऐसी बात बिल्कुल नहीं है। सक्रिय होनेका अर्थ है अपने अंदरसे बाहरकी ओर चेतना, शक्ति या किसी क्रियाको प्रक्षिप्त करना। निष्क्रिय रहनेका अर्थ है निश्चल रहकर बाहरसे आयी वस्तुको ग्रहण करना। यही बात वहां कही गयी है—मुझे पता नहीं वहां क्या लिखा है (माताजी पुस्तकके पन्ने उलटती हैं) . . . यह बहुत स्पष्ट है, "अभीप्सामें सक्रियता", उसका अर्थ यह है कि तुम्हारी अभीप्सा तुम्हारे भीतरसे निकलकर भगवान्की ओर ऊपर उठती है (तपस्यामें या जिस अभ्यासको तुमने अपनाया है उसमें) और जो शक्तियां तुम्हारी साधनाकी विरोधी हैं उन्हें तुम अस्वीकार कर देते हो। यही सक्रियताकी क्रिया है।

अब यदि तुम सच्ची प्रेरणा, आंतरिक पथ-प्रदर्शन या पथ-प्रदर्शक चाहते हो, यदि तुम ऐसी शक्ति प्राप्त करना चाहते हो जो तुम्हें मार्ग दिखा सके तथा तुम्हें ठीक ढंगसे कार्य करनेमें सहायता पहुंचा सके तो तुम हिलते-डुलते नहीं (मेरा मतलब शरीरके हिलने-डुलनेसे नहीं है), उस समय तुममेंसे कोई भी वस्तु बाहरकी ओर प्रक्षिप्त नहीं होनी चाहिये, प्रत्युत तुम्हें नितांत निश्चल परंतु खुले हुए भावमें बैठे रहना चाहिये, और शक्तिकी प्रतीक्षा करनी चाहिये, तुम्हें अपने-आपको इतना उन्मुक्त रखना चाहिये कि जो कुछ आए उस सबको तुम पूर्ण रूपसे ग्रहण कर सको। यह क्रिया ऐसी होती है: बाहरकी ओर प्रक्षिप्त होनेवाले स्पन्दनोंके स्थानपर वहां एक ऐसी शांत स्थिरता विराज जाती है जो पूर्णतया खुली होती है, मानों तुम इस प्रकार अपने सारे रन्ध्रोंको उस शक्तिके प्रति खोल रहे हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिसे तुम्हारे अंदर अवतरित होकर तुम्हारे कर्म और तुम्हारी चेतनाको रूपांतरित करना है।

ग्रहणशीलता सुन्दर निष्क्रियताका फल होती है।

किंतु, मां, निष्क्रिय होनेके लिये प्रयत्न करना होता है।

यह आवश्यक नहीं, यह लोगोंपर निर्भर है। प्रयत्न? हां, व्यक्तिको उसके लिये संकल्प करना ही होगा। किंतु क्या संकल्प प्रयत्न है? स्वभावतया ही, उसे उसके संबंधमें सोचना होगा। उसे पानेकी इच्छा करनी होगी। किंतु दोनों बातें साथ-साथ चल सकती हैं। चल सकती हैं न? एक ऐसा क्षण भी होता है जब दोनों, अभीप्सा और निष्क्रियता—बारी-बारी ही नहीं साथ-साथ भी चल सकती हैं। तुम एक ही साथ अभीप्सा और इच्छा करनेकी स्थितिमें हो सकते हो। जिसके फलस्वरूप कोई वस्तु नीचे उतरती है। एक ओर अपने-आपको खोलने और ग्रहण करनेका वह संकल्प और दूसरी ओर वह अभीप्सा जो उस शक्तिको नीचे बुलाती है, जिसे तुम ग्रहण करना चाहते हो—साथ ही, उस समय तुम पूर्ण आंतरिक निश्चलताकी उस अवस्थामें होते हो जो तुम्हारे भीतर प्रविष्ट होने की अनुमति देती है। कारण, ऐसी निश्चलतामें ही यह कार्य संपन्न हो सकता है तथा व्यक्ति शक्तिके प्रति ग्रहणशील हो सकता है। यह दोनों एक-दूसरेके कार्यमें विघ्न डाले बिना साथ-साथ चल सकती हैं, अथवा बारी-बारीसे आनेपर भी यह एक-दूसरेसे इतनी जुड़ी होती हैं कि इनमें भेद ही न किया जा सके। किंतु व्यक्ति इस अवस्थामें हो सकता है कि उसकी अभीप्सा अग्निकी एक बृहत् शिखाके रूपमें ऊपर उठकर एक विशाल पात्रका रूप धारण कर ले जो अपने-आपको खोलकर ऊपरसे आनेवाली वस्तुको ग्रहण करे।

हां, दोनों साथ-साथ चल सकती हैं। जब व्यक्तिको इस कार्यमें सफलता मिल जाती है तो वह जो भी करता हो दोनोंको सतत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूपमें साथ रख सकता है। केवल वहां चेतनाका जरा-सा, बहुत ही जरा-सा स्थानान्तरण हो जाता है। उसकी दृष्टिमें लौ (शिखा) पहले आती है फिर ग्रहण करनेवाला पात्र——वह जो अपने-आपको भरना चाहता है और वह 'लौ' जो ऊपर उठकर उस वस्तुका आह्वान करती है जिसे पात्रको भरना है। यह हल्की-सी लोलक क्रियाकी तरह होती है और ऐसा आभास होता है कि दोनों एक ही समय हो रही हैं।

(मौन)

यह उन चीजोंमेंसे एक है जिन्हें धीरे-धीरे शरीरके रूपांतरके लिये तैयार होनेके साथ-साथ पहचाना जाता है।

शरीर जितना रूपांतरके लिये तैयार हो जाता है उतना ही व्यक्ति इसे अपने अंदर देख लेता है। शरीर एक आश्चर्यजनक यंत्र है, इस अर्थमें कि यह दो विरोधी वस्तुओंको एक साथ अनुभव कर सकता है। शारीरिक चेतनाकी एक ऐसी अवस्था होती है जो उन वस्तुओंको पास लाती है और समग्र रूप देती है——जो अन्य चेतनाओंमें बारी-बारीसे घटती हैं, बल्कि किन्हींमें एक-दूसरेका विरोध भी करती हैं। किंतु जब व्यक्ति वहां, मन तथा प्राणके उच्च स्तरतक पहुंच जाता है और विरोधी वस्तुओंमें सामंजस्य स्थापित करने योग्य विकास साधित कर लेता है (ऐसा करना अनिवार्य है), जब व्यक्ति इस कार्यमें सफलता प्राप्त कर लेता है, तब ऐसे क्षण आते हैं जब कि वस्तुएं बारी-बारी घटती हैं, एकके बाद दूसरी आती है। जब कि शरीरकी चेतनामें एक विलक्षण बात यह है कि यह सभी वस्तुओंको एक साथ अनुभव कर सकती है (क्या इसे अनुभव करना कहें? बल्कि "सचेतन होना" शब्द इसे भली प्रकार अभिव्यक्त करता है), मानों तुम एक साथ ही गर्मी और सर्दी अनुभव कर रहे हो, मानों तुम एक साथ सक्रिय और निष्क्रिय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो, सभी कुछ तब ऐसा ही अनुभव होने लगता है। तभी तुम अपने कोषाणुओंमें क्रियाओंकी समग्रताको पहचानने लगते हो। यह वस्तु-सत्ताके और भागोंकी अपेक्षा शरीरमें अधिक ठोस—जो कि स्वाभाविक भी है—और पूर्ण है। इसका अर्थ यह हुआ कि यदि ऐसा ही होता रहा तो यह प्रमाणित हो जायगा कि यह भौतिक स्थूल यंत्र सबसे अधिक पूर्ण है। इसलिये इसका रूपांतर करना, इसमें पूर्णता लाना सबसे अधिक कठिन है। किंतु यह पूर्णता प्राप्त करनेमें सक्षम भी अधिक है।

आजके लिये इतना ही पर्याप्त है, है न?

अतएव, मेरे बच्चो, यदि हम इस प्रकार चलते रहें तो तीन या चार पाठोंमें हम इस पुस्तकको समाप्त कर सकेंगे। इसके बाद हम क्या लेंगे यह हमें पहलेसे सोच लेना चाहिये . . .।

"मां" पुस्तक, स्नेहमयी मां!

आह! तुम "मां" पुस्तक लेना चाहते हो? ठीक, हम यही पढ़ेंगे तो यह निश्चित हो गया। शुभरात्रि।

२८ अप्रैल, १९५४

मां, "तीव्र प्रतिरोध"का क्या अर्थ है?

तीव्र? "तीव्र" शब्द अलंकारके रूपमें प्रयुक्त हुआ है। "तीव्र" अर्थात्, तीक्ष्ण, नोकीला, क्या इसका अर्थ तुम नहीं जानते?—और शायद इसका अर्थ एक ऐसा आक्रामक, तीक्ष्ण प्रतिरोध है जो तीखे नखकी भांति अंदरतक धंस जाता है।

मैं इस प्रश्नका उत्तर भली-भांति नहीं समझा: "क्या अभीप्सा-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की शक्ति साधकोंमें उनकी प्रकृतिके अनुसार बदलती रहती है ?"

ओह ! हां।

मेरे विचारमें प्रश्न ठीक तरह नहीं किया गया है। जिसने वह प्रश्न पूछा था वह शायद "अभीप्साका प्रभाव" कहना चाहता था पर उसने कह दिया "शक्ति"। दूसरे शब्दोंमें, प्रत्येकमें, वह चाहे जो भी हो, अभीप्साकी शक्ति एक ही जैसी होती है, किंतु इसका प्रभाव भिन्न होता है ! कारण, अभीप्सा, अभीप्सा ही है : यदि तुममें अभीप्सा है तो उसमें शक्ति भी होगी। फिर यह अभीप्सा एक प्रत्युत्तर मांगती है और यह प्रत्युत्तर, अर्थात्, प्रभाव जो कि अभीप्सा-का परिणाम होता है, प्रत्येक व्यक्तिपर निर्भर करता है। व्यक्तिमें तीव्र अभीप्सा हो सकती है, पर हो सकता है कि उसकी ग्रहणशक्ति अत्यंत दुर्बल हो। मैं ऐसे कई लोगोंको जानती हूं, वे कहते हैं: "ओह ! मैं सारे समय अभीप्सा करता रहता हूं, पर मुझे प्राप्त कुछ भी नहीं होता।" यह असंभव है कि उन्हें कुछ प्राप्त न हो, प्रत्युत्तर तो आता है, किंतु वह स्वयं उसे ग्रहण नहीं करते। प्रत्युत्तर आता है पर वे ग्रहणशील नहीं होते। इसलिये उन्हें कुछ प्राप्ति नहीं होती।

कुछ ऐसे लोग होते हैं जिनके अंदर बहुत अभीप्सा होती है। वे शक्तिका आह्वान करते हैं। शक्ति उनके पास आती है—बल्कि उनके अंदर प्रविष्ट हो जाती है—और वे इतने अचेतन होते हैं कि उसके विषयमें कुछ भी नहीं जान पाते ! ऐसा प्रायः ही होता है। उनकी अचेतन अवस्था उन्हें इस शक्तिका अनुभव ही नहीं करने देती जो उनके भीतर प्रविष्ट हो चुकी है। पर वह अंदर जाकर अपना कार्य करती है। मैं कई ऐसे लोगोंको जानती थी जो धीरे-धीरे रूपांतरित भी हो गये पर वे अचेतन इतने थे कि उन्हें पता ही नहीं चला। उनमें चेतना काफी बादमें आती है। कुछ अन्य लोग अधिक निश्चल, दूसरे शब्दोंमें, अधिक खुले, अधिक सतर्क होते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं, उनके अंदर जरा-सी भी शक्तिका प्रवेश हो तो वे उसे तत्काल जान जाते हैं और उसका पूरा उपयोग करते हैं।

जब तुम्हारे अंदर कोई अभीप्सा हो, एक बहुत सक्रिय अभीप्सा, तो वह अपना कार्य करेगी ही। जिस प्रत्युत्तरके लिये तुम अभीप्सा कर रहे हो उसे वह लायेगी ही। किंतु यदि बादमें तुम किसी अन्य वस्तुके विषयमें सोचने लगो, या सतर्क न रहो तो तुम्हें यह पता भी नहीं चलेगा कि तुम्हें अपनी अभीप्साका प्रत्युत्तर मिल चुका है। ऐसा प्रायः ही होता है। लोग तुमसे कहते हैं: "मैं अभीप्सा करता हूं, पर मुझे कुछ भी नहीं प्राप्त होता, कोई प्रत्युत्तर नहीं मिलता।" वस्तुतः तुम्हें प्रत्युत्तर तो मिलता है, पर उसका भान नहीं होता, क्योंकि तुम चक्कीकी तरह प्रत्येक समय व्यस्त या क्रियाशील रहते हो।

मां, क्या पुरुष प्रकृतिके समान भूलें नहीं करता?

यह दृष्टिकोणपर निर्भर करता है... मैं नहीं जानती।

मां, यदि किसीकी प्रकृतिका कोई एक भाग नहीं खुलता तो उसे खोलनेके लिये अभीप्सा करनेकी क्या विधि है?

तुम यह अभीप्सा कर सकते हो कि यह भाग खुले, जो भाग खुला है वह दूसरेके लिये अभीप्सा करे। कुछ समय बाद वह खुल जायगा; व्यक्तिको अभीप्सा करते रहना चाहिये। केवल ऐसा ही करते रहना होगा। कोई ऐसी वस्तु है जो खुलना नहीं चाहती, कोई तीव्र प्रतिरोध है जो ऐसा नहीं चाहता, वह एक हठीले बच्चेकी भांति कहती है: "मैं नहीं चाहती, मैं वही बनी रहना चाहती हूं जो मैं हूं, मैं यहांसे नहीं हिलूंगी"... वह यह नहीं कहती कि "मैं अपने-आपसे तुष्ट हूं", क्योंकि वह ऐसा कहनेकी हिम्मत नहीं करती।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किंतु सत्य यह है कि वह अपने-आपमें बिल्कुल संतुष्ट है, इसलिये अपने स्थानसे नहीं हिलती।

किंतु जब व्यक्ति अभीप्सा करना चाहे तो क्या उसे यह न जानना चाहिये कि उसका कौन-सा भाग अभीप्सा कर रहा है?

ओह! हां, यदि व्यक्ति सच्चा है तो वह उस भागको जान लेगा। अगर वह अपनी ओर सचाईसे देखे तो वह निश्चय ही जान लेगा। पर यदि वह शुतुरमुर्गकी भांति आंखें मीच लेगा तो कुछ नहीं जान पायगा: वह अपनी आंखें बंद कर लेगा, सिर दूसरी ओर मोड़ लेगा, उस ओर देखेगा ही नहीं और कहेगा: "यहां ऐसा कोई भाग नहीं है।" किंतु यदि व्यक्ति सचाईसे अपनी ओर देखे तो उसे भली-भांति पता चल जायगा कि वह भाग कहां है —वह कहीं एक कोनेमें दुबका पड़ा है। और तब तुम जाकर उसपर सीधा प्रकाश फेंको, सीधा उसीपर, तो उसे कष्ट होता है, होता है न!

मां, ग्रहणशीलता किस बातपर निर्भर करती है?

इसका पहला आधार है सच्चाई—क्या व्यक्ति सचमुच ग्रहण करना चाहता है—और तब... हां, मेरे विचारमें इसके लिये मुख्य वस्तुएं हैं सच्चाई और नम्रता। घमंड जितना तुम्हारे हृदयके द्वार बन्द कर देता है उतना कोई और वस्तु नहीं करती। जब तुम अपनेमें संतुष्ट रहते हो तो यह तुम्हारे भीतरका अहं ही होता है जो तुम्हें यह मानने ही नहीं देता कि तुम्हारे अंदर भी कोई कमी है, कि तुम भी गलतियां करते हो, कि तुम भी अपूर्ण हो, कि कहीं कुछ छूट गया है, कि तुम... तुम्हारी प्रकृतिमें कोई ऐसी चीज मौजूद है जो इस प्रकार कठोर पड़ जाती है जो अपना दोष स्वीकार करना नहीं चाहती—यही चीज तुम्हें उच्चतर वस्तुको ग्रहण करनेसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रोकती है। इस अनुभवको प्राप्त करनेके लिये तुम कोशिश कर सकते हो। यदि तुम संकल्प-शक्तिके बलपर अपनी सत्ताके एक छोटे-से भागसे भी यह कहलवा सको : "ओह! हां, यह मेरी भूल थी, मुझे ऐसा नहीं होना चाहिये था, मुझे ऐसा करना और सोचना भी नहीं चाहिये था, हां, यह मेरा दोष है,"--यदि तुम उससे जो कुछ मैंने ऊपर कहा है स्वीकार करा सको तो शुरु-शुरुमें तो तुम्हें इससे कष्ट होगा, पर यदि तुम इसपर अड़े रहे, जबतक कि वह पूरी तरहसे स्वीकृत न हो जाय, तो वह भाग तत्काल ही खुल जायगा और तब प्रकाशका पुंज उसके अंदर प्रवेश कर जायगा और तुम इतने प्रसन्न और आनंदित हो उठोगे कि तुम अपनेसे पूछोगे : "आखिर क्यों, मैं इतने समय आखिर क्यों अड़ा हुआ था, कैसा मूर्ख था मैं?"

किंतु जब कोई इतना आत्म-संतुष्ट हो, तब भी क्या वह अभीप्सा कर सकता है?

व्यक्ति एक ही टुकड़ेका नहीं बना है, क्या तुम यह नहीं जानते? सत्तामें कोई ऐसी वस्तु है जो अभीप्सा कर सकती है। किंतु एक ऐसी वस्तु भी सदा होती है जो गलत वस्तुके प्रति सचेतन होती है --चाहे अस्पष्ट और अयथार्थ रूपमें ही हो--किंतु इतनी सचेतन वह अवश्य होती है कि यह सोच सके कि व्यक्ति पूर्ण तो है नहीं, वस्तु-स्थिति ज्यादा अच्छी हो सकती थी--बस इतना ही काफी है, यह भाग अभीप्सा कर सकता है।

पुरुष और प्रकृतिका क्या कार्य है?

आह! मुझे फिर कहना पड़ रहा है कि मैं नहीं जानती। (माताजी नलिनीकी ओर मुड़कर कहती हैं) इसे समझाओ तो (हंसी)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैं तो इस विषयमें कुछ नहीं समझती। मेरे आंतरिक अनुभवमें यह बात कभी नहीं आयी। मुझे यह अनुभव कभी नहीं हुआ, इसलिये मैं कुछ नहीं कह सकती।

यदि आप ही कहें कि मैं नहीं जानती तो मुझे कहना होगा कि मैं एकदम कोरा हूं। (हंसी)

इस संबंधमें जो भारतीय विचार है उसे मैं सिद्धांत रूपमें जानती हूं और उसके लिये पुस्तकें पढ़ी जा सकती हैं, किंतु इसे मैं "जानना" नहीं कहती। मैं तुम्हें केवल उन्हीं वस्तुओंके संबंधमें बता सकती हूं जिन्हें मैंने स्वयं अनुभव किया है। इसका मेरे भीतरकी किसी वस्तुसे संबंध नहीं है। मुझे यह अनुभूति हुई ही नहीं। मुझे एक साक्षी पुरुषका अनुभव अवश्य हुआ है जो वस्तुओंको नितांत निरासक्त भावसे देखता है, जो सब कुछ जानता है, पर स्वयं नहीं हिलता। जो समस्त वस्तुओंको चरितार्थ होनेकी अनुमति देता है और... मुझे एक ऐसी संकल्प-शक्तिका भी अनुभव हुआ है जो निर्णय करती है। स्वभावतया ही, प्रत्येकको एक प्रेरक शक्तिका अनुभव हुआ होता है—वह शक्ति जो प्रकृतिमें, उसकी अज्ञानतामें पायी जाती है—प्रत्येकको यह अनुभव प्राप्त है। किंतु इस ढंगसे एक स्पष्ट विभाजन करना, एकको पुरुष-पुंल्लिग कहना दूसरेको प्रकृति-स्त्रीलिंग कहना। न, मैं ऐसा करना अस्वीकार करती हूं—मैंने सदा ही इसका विरोध किया है और सदा करूंगी। इसीलिये इस विषयपर न बोलना ही पसंद करूंगी।

कहनेकी यह विधि मुझे एशियाई प्रतीत होती है या यह विशेष रूपसे भारतीय है, मुझे पता नहीं, या यह एक अकेले पुरुष-रूप भगवान्‌का वचकाना केल्डियन विचार भी हो सकता है—तुम ईसाई धर्मके भगवान्‌को तो जानते हो न! मेरे लिये यह वस्तु (माफ करना) बिगड़े पुरुष-मनकी उपज है। इस संबंधमें मेरी भावना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो यही है। यदि तुमने मुझसे न पूछा होता तो मैं यह सब न कहती।

मां, आपने अभी कहा था कि आपको "साक्षी" का अनुभव हो चुका है, उस "साक्षी" का जो अपने स्थानसे नहीं हिलता, वही तो पुरुष है।

ओह! यह मैं नहीं जानती (हंसी)। कहना चाहो तो इसे पुरुष कह लो। किंतु मैंने उसे विशेष पुरुष रूपमें नहीं पाया। समझे! जिस बातको मैं पसंद नहीं करती वह है पुरुष-तत्त्व और स्त्री-तत्त्व। और मैंने यह देखा है कि यह सत्य नहीं है। और मैं सदा कहूंगी: **यह सत्य नहीं है।** एक तत्त्व ऐसा है और दूसरा वैसा। (मां अपना हाथ एक ओरसे दूसरी तरफ ले जाती हैं) एक क्रिया ऐसी है, दूसरी वैसी। लेकिन तुम एकको पुरुष और दूसरीको स्त्री क्यों कहते हो? बात ऐसी नहीं है। यह पुरुष और स्त्रीका विवाद केवल प्रकृतिकी चाल है। यहां इसने वस्तुओंकी ऐसी ही व्यवस्था की है। हां तो, मैं तुम्हें बताती हूं: जब व्यक्ति ऊपरसे नीचे आता है तो वहां ऊपर "पुल्लिंग और स्त्रीलिंग"का विचार नहीं होता, यह सब अर्थहीन बातें वहां नहीं होतीं। जब तुम नीचे आते हो तो वस्तुएं वास्तविक रूप धारण करना आरंभ करती हैं। और तुम अपनेसे कहते हो: "हां, हां, प्रकृतिने ऐसी व्यवस्था की है।" ठीक! किंतु मैं कहती हूं कि यह विचार—यह भावना जो एक तत्त्वको पुल्लिंग बना देती है और दूसरेको स्त्रीलिंग—नीचेसे आयी है; दूसरे शब्दोंमें, यह पुरुषके मस्तिष्ककी उपज है जो **स्त्री या पुरुष**-का हवाला दिये बिना सोच ही नहीं सकता—क्योंकि वह अभीतक पशु है। तो समझे! मैं तो ऐसा ही सोचती हूं और मैंने सदा ऐसा ही अनुभव किया है। मैं आरंभसे ऐसा कहती आयी हूं और अंततक कहती रहूंगी, और यदि तुम मुझे यह कहते न सुनना चाहो तो इस विषयमें बात न करो! (सब हंसते हैं) हां तो बस।

शुभरात्रि!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५ मई, १९५४

"प्र०--जबतक अतिमानसिक 'सत्य'की प्राप्ति न हो जाय तबतक इस पथपर चलते रहनेके लिये कौन-सी वृत्ति ठीक है?

उ०--आंतरात्मिक स्थिति, सहृदयता और माताजीके प्रति भक्ति।"

(योगके तत्त्व)

"आंतरात्मिक स्थिति" किसे कहते हैं?

आंतरात्मिक स्थिति?. मेरे विचारमें इसका अर्थ है अपनी अंतरात्माके संपर्कमें निवास करना, उसीके द्वारा शासित होना।

स्नेहमयी मां, श्रद्धा, विश्वास और भरोसा--इनमें क्या अंतर है? मैं ठीक तरह नहीं समझ पाया।

किंतु श्रीअरविंदने वहां इसकी पूरी व्याख्या की है। यदि तुम्हारी समझमें नहीं आया तो . . .

उन्होंने लिखा है: "श्रद्धा संपूर्ण सत्ताकी अनुभूति है।"

(योगके तत्त्व)

संपूर्ण सत्ताकी, हां। श्रद्धा यह एकदम ही संपूर्ण सत्ता है। वे कहते हैं कि विश्वासकी क्रिया मस्तिष्कमें चलती है, यह विशुद्ध रूपमें मानसिक है; भरोसा एक अन्य वस्तु है। व्यक्तिका भरोसा जीवनमें, भगवान्में, अन्य व्यक्तियोंमें, अपने प्रारब्धमें, किसीमें भी हो सकता है; दूसरे शब्दोंमें, व्यक्ति सोचता है कि सब कुछ मेरी सहायता करने, मेरी इच्छाके अनुसार कार्य करनेके लिये है। जब कि श्रद्धा एक आश्वासन है जिसके लिये किसी प्रमाणकी जरूरत नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अगस्त १९८८

मां, श्रद्धाका आधार क्या है ?

शायद भागवत कृपा। कई व्यक्तियोंमें यह सहज भावमें मौजूद होती है। और कइयोंको इसे पानेके लिये बहुत प्रयत्न करना पड़ता है।

श्रद्धाको कैसे बढ़ाया जा सकता है ?

मेरा ख्याल है अभीप्सासे। कुछ लोगोंमें सहज स्वभावसे ही श्रद्धा होती है—और श्रद्धा न हो तो प्रार्थना करना कठिन है। यदि व्यक्ति अपने अंदर श्रद्धा बढ़ानेके लिये, या अभीप्सा करनेके लिये अथवा अपने अंदर श्रद्धा उत्पन्न करनेकी अभीप्सा करनेके लिये प्रार्थनाको साधन बना सकता है तो इनमेंसे अधिकांशके लिये उसे प्रयत्न करना पड़ेगा। यदि व्यक्तिके पास कोई वस्तु नहीं है और वह उसे प्राप्त करना चाहता है तो उसे लंबे समयतक बहुत, बहुत ही अधिक प्रयत्न करना पड़ेगा, एक सतत अभीप्सा, एक स्थिर संकल्प और पूर्ण सच्चाई अपने अंदर लानी ही होगी, और तब यह निश्चित है कि यह सब एक दिन आयेगा, यह एक सेकंडमें भी आ सकता है। कुछ लोगोंके पास यह होता है, और उनके अंदरकी विरोधी क्रियाएं आकर उनपर आक्रमण कर देती हैं। यदि ऐसे लोगोंका संकल्प सच्चा हो तो वे अपनी श्रद्धाकी रक्षा कर सकते हैं और आक्रमणोंको पीछे हटा सकते हैं। ऐसे लोग भी होते हैं जो संदेहको पोषण देते हैं, क्योंकि यह एक प्रकारका कलानुराग है—यह, इससे अधिक खतरनाक और कुछ नहीं होता। यह ऐसा है मानों फलमें कीड़ा घुसा दिया जाय; वह सारे फलको खाकर ही दम लेगा। दूसरे शब्दोंमें, जब कोई ऐसी क्रिया तुम्हारे अंदर प्रवेश करे—सामान्यतया यह पहले मनमें आती है—तो पहला काम जो करना चाहिये वह यह कि साहसपूर्वक इसे अस्वीकार कर दो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निश्चय ही यह न होना चाहिये कि व्यक्ति खड़ा देखता रहे कि क्या हो रहा है, इस तरहका कुतूहल बड़ा भयावह होता है।

बुद्धिजीवियोंमें श्रद्धाका होना अपेक्षाकृत अधिक कठिन होता है। जो लोग सरल, सच्चे और सीधे-सादे होते हैं, जिनमें बौद्धिक जटिलताएं नहीं होतीं, उन्हें अधिक आसानीसे यह प्राप्त हो जाती है। किंतु मेरे विचारमें यदि किसी बुद्धिजीवीमें श्रद्धा हो तो वह बड़ी शक्तिशाली होती है, इतनी शक्तिशाली कि वह सचमुच चमत्कार कर सकती है।

स्नेहमयी मां, यह संकल्प कहांसे आता है?

साधारणतया, यह उनमें होता है जिनमें इच्छा-शक्ति होती है और जो अपनी इच्छा-शक्तिको अपने कार्योंपर प्रयुक्त करते हैं।

यदि व्यक्ति भगवान्में श्रद्धा रखता है और उनपर भरोसा भी करता है तो श्रद्धा और भरोसेमें क्या अंतर हुआ?

(जैसा कि श्रीअरविंदने लिखा है) श्रद्धा भरोसेसे अधिक, कहीं अधिक पूर्ण है। तुम्हें भगवान्पर भरोसा है, इस अर्थमें कि तुम्हें विश्वास है कि जो कुछ उनकी ओरसे आयेगा वह सदा तुम्हारी अधिकतम भलाईके लिये होगा: उनका जो भी निर्णय हो, उनकी ओरसे जो भी अनुभूति आये, वे तुम्हें जिस किसी परिस्थितिमें रखें, सब सदा तुम्हारे अधिक-से-अधिक भलेके लिये ही होगा। यह भरोसा है किंतु श्रद्धा——भगवान्के अस्तित्वमें एक प्रकारकी अडिग निश्चयता ——एक ऐसी वस्तु है जो संपूर्ण सत्तापर अधिकार कर लेती है। यह केवल मानसिक, आंतरात्मिक अथवा प्राणिक ही नहीं होती : वस्तुतः श्रद्धा समूची सत्तामें होती है। श्रद्धा सीधे अनुभूतिकी ओर ले जाती है।

क्या भरोसा समग्र एवं संपूर्ण नहीं हो सकता?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह आवश्यक नहीं; किंतु जरा-सा सूक्ष्म अंतर अवश्य है, पता नहीं, पर यह वह वस्तु नहीं है।

व्यक्तिने अपने-आपको पूर्णतया भागवत कार्यके प्रति अर्पित कर दिया है, उसकी निष्ठा उसीमें है। उसकी संभावनामें ही नहीं, बल्कि उसे इस बातका दृढ़ निश्चय है कि केवल वही कार्य सत्य है और उसे होना ही चाहिये, और वह अपनेको पूर्ण रूपसे उसके प्रति अर्पित कर देता है, यह पूछे बिना कि इसका परिणाम क्या होगा। और तब वहां उसके अंदर एक दृढ़ निश्चय, एक दृढ़ विश्वास जम जाता है कि वह इस कार्यको कर सकता है, दूसरे शब्दोंमें, वह इसमें हिस्सा ले सकता है, इसे संपन्न कर सकता है, क्योंकि उसने अपने-आपको इसके प्रति अर्पित कर दिया है। उसे यह दृढ़ विश्वास होता है कि जो कुछ वह करनेवाला है, जो कुछ वह करना चाहता है उसे कर सकेगा। जिस उपलब्धिको वह पाना चाहता है, उसे जरूर पायेगा। पहला कोई प्रश्न नहीं करता, न ही परिणामके विषयमें सोचता है: वह अपने-आपको पूर्णतया अर्पित कर देता है—वह अपने-आपको दे देता है और बस फिर सब समाप्त। वह इसमें पूरी तरह डूब जाता है। दूसरा उसपर परिश्रम करता है। भरोसा करता है: "हां मैं इस कार्यमें योगदान दूंगा, जो कुछ मैं पाना चाहता हूं वह पाऊंगा, मैं इस कार्यमें वास्तविक रूपमें भाग लूंगा।" दूसरी अवस्थामें व्यक्तिको भगवान्में श्रद्धायुक्त विश्वास होता है, उसके अनुसार भगवान् ही सब कुछ हैं, वे ही सब कुछ कर सकते हैं और करते भी हैं... वास्तविक अस्तित्व उन्हींका है—और व्यक्ति पूरी तरह इस श्रद्धायुक्त निश्चयताके प्रति, अर्थात्, भगवान्के प्रति अर्पित हो जाता है। बस, व्यक्तिको भगवान्के अस्तित्वमें निष्ठायुक्त विश्वास है और वह उनके प्रति अर्पित हो जाता है; और इसके साथ-साथ उसे भरोसा भी हो सकता है कि भगवान्के साथ उसका जो संबंध है, जो भगवान्में उसकी निष्ठा है उसके फलस्वरूप उसके साथ जो कुछ होगा (चाहे जो कुछ हो), वह सब केवल भागवत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इच्छाकी अभिव्यक्ति ही नहीं (यह तो मानी हुई बात है), बल्कि उसके सर्वोच्च भलेके लिये भी होगा, इससे बढ़कर और कुछ नहीं हो सकता, क्योंकि यह सब स्वयं भगवान् ही उसके लिये कर रहे हैं। यह वृत्ति आवश्यक रूपमें श्रद्धाका अंग नहीं है, क्योंकि श्रद्धा कोई प्रश्न नहीं पूछती। वह यह नहीं पूछती कि उसके समर्पणका क्या परिणाम निकलेगा—वह केवल अपने-आपको दे देती है—बस। जब कि भरोसा आकर कह सकता हैं: "ह, तो, इसका यह परिणाम होगा।" और यह एक पूर्ण तथ्य है कि जिस क्षण तुम अपने-आपको भगवान्के प्रति पूर्णतया समर्पित कर देते हो, बिना कुछ हिसाब लगाये, पूर्ण निश्चयताके साथ, बिना किसी प्रकारका सौदा किये अपने-आपको अर्पित कर देते हो, और कहते हो: "जो होगा होने दो! मुझे इससे कुछ लेना-देना नहीं, मैंने तो अपने-आपको दे दिया है"—तो स्वभावतया ही, तब जो होगा वह सदैव तुम्हारे लिये, सदा ही, सभी परस्थितियोंमें, प्रत्येक क्षण अच्छे-से-अच्छा होगा ...वह नहीं जिसे तुम अच्छा समझते हो (स्वभावतया ही सोचने-वाला मन कुछ नहीं जानता), बल्कि वह, जो सचमुच अच्छा है। हां, सत्ताका एक भाग इसे जान सकता है और उसमें यह विश्वास भी हो सकता है। यह वस्तु फिर श्रद्धाके साथ जुड़कर उसे अधिक शक्ति प्रदान करती है; इस शक्ति—इसे कैसे कहा जाय?—की सहायतासे व्यक्ति उस सबको जो कुछ उसके साथ घटेगा, पूर्णतया स्वीकार कर लेगा और उससे अधिक-से-अधिक फायदा उठायेगा।

एक ऐसी अवस्था होती है जिसमें व्यक्ति यह जान लेता है कि उसकी चेतनापर वस्तुओंका, परिस्थितियोंका, जीवनकी सभी गतिविधियों तथा कार्योंका प्रभाव मुख्य रूपसे उसकी इन वस्तुओंके बारेमें वृत्तिपर निर्भर है। एक ऐसा क्षण आता है जब तुम इतने चेतन होते हो कि यह देख सकते हो कि सचमुच वस्तुएं अपने-आपमें न भली हैं, न बुरी, जैसे हम होते हैं वैसी ही वे दिखायी देती हैं; हमारे ऊपर उनका प्रभाव पूरी तरहसे उनके बारेमें हमारी वृत्तिपर निर्भर होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक वस्तुको यदि हम भगवान्‌की देन, भागवत कृपाके रूपमें तथा पूर्ण समस्वरताके परिणामके रूपमें लें तो वह हमें अधिक चेतन, अधिक शक्तिशाली, अधिक सच्चा बननेमें सहायता पहुंचाती है; जब कि यदि हम उसे, ठीक उसी परिस्थितिको नियतिद्वारा दी गयी ठोकरके रूपमें, हानि पहुंचानेवाली एक बुरी शक्तिके रूपमें लें तो वह हमारी शक्ति कम कर देती है, हमें जड़ बना देती है, तथा हमारी चेतना, शक्ति और समस्वरताको हर लेती है, जब कि परिस्थिति बिल्कुल वही होती है—मैं चाहती हूं कि यह अनुभूति तुम सबको प्राप्त हो, क्योंकि यदि तुम इसे प्राप्त कर लोगे तो तुम अपने स्वामी बन जाओगे। केवल अपने ही स्वामी नहीं, जहांतक तुम्हारा संबंध है, अपने जीवनकी सभी परिस्थितियोंके भी स्वामी। और यह केवल उस वृत्तिपर निर्भर करता है जो तुम उसके प्रति लेते हो। यह अनुभूति मस्तिष्कमें नहीं होती, शुरू वहां अवश्य होती है, यह एक ऐसी अनुभूति है जो सारे शरीरमें हो सकती है। यह एक ऐसी अनुभूति है जो बहुत परिश्रम, एकाग्रताकी मांग करती है, अपने ऊपर स्वामित्व और जड़-पदार्थमें चेतनाकी मांग करती है, किंतु इसके फलस्वरूप जिस ढंगसे शरीर बाहरी आघातको लेता है, उसीके अनुसार फल विभिन्न प्रकारका हो सकता है। यदि तुम्हें इस क्षेत्र-में पूर्ण सफलता प्राप्त हो जाय तो तुम दुर्घटनाओंपर भी स्वामित्व प्राप्त कर लोगे। मुझे आशा है कि ऐसा होगा। यह संभव है, संभव ही नहीं, **निश्चित** है। यह केवल एक पग आगे है; दूसरे शब्दोंमें, जो शक्ति तुम्हारे पास है—जिसे मनने पूर्ण और शक्तिशाली रूपमें प्राप्त कर लिया है—जो परिस्थितियोंपर इस हदतक कार्य करती है कि तुमपर किये गये उनके कार्यको पूर्णतया बदल देती है, वह शक्ति जड़-पदार्थमें, ठोस भौतिक-पदार्थमें, शरीरके कोषाणुओंमें भी प्रवेश कर सकती है और शरीरको भी, अपने चारों ओरकी वस्तुओंके संबंधमें वही शक्ति प्रदान कर सकती है।

(क्रमशः)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Selfishness kills the soul; destroy it. But take care that your altruism does not kill the souls of others.

SRI AUROBINDO

*
**

Assam Tea Warehousing Corporation

Registered and approved Ware House

at Gauhati (Assam)

H. O. 8, Camac Street, Room No. 7

Shantiniketan Building

CALCUTTA - 700 017

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

A happy beginning
a good continuation
and no end—
an endless progression

14-5-57

New Horizon Sugar Mills
(Pvt.) Ltd.

PONDICHERRY

Telegram : SAKAR
Phone : Town Office : 26780
Factory : 24423 24424

P.O. Box 29
Pondicherry
S. India

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

O Lord, awaken in me an ardent desire to know Thee. I aspire that my life may be consecrated to Thy service.

The Mother

Space donated by

Kooverji Devshi & Co., Pvt. Ltd.

FIREX LEADS TO SAFETY

SAFETY LEADS TO PROSPERITY

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोसायटी समाचार

इस अंकके साथ श्रीअरविंद सोसायटीके सदस्योंके नाम एक परिशिष्ट भी जा रहा है जिसमें ३० अगस्त १९८८ को कलकत्तेमें होनेवाली सोसायटीके सदस्योंकी आम सभाकी सूचना, ३१.३.८७ को खतम होनेवाले आर्थिक वर्षका संक्षिप्त हिसाब और वार्षिक विवरण भी भेजा जा रहा है।

१५ अगस्त ८८ श्रीअरविंदका ११६ वां जन्म दिन होगा। सवेरे श्रीअरविंदके कमरेका दर्शन, १० बजे समाधिके चारों ओर ध्यान और शामको क्रीड़ांगणमें ध्यान होगा।

सोसायटीका वार्षिक अधिवेशन १२, १३, १४ अगस्तको होगा। सभी सदस्योंका स्वागत है। रेलवे कंसेशनकी सुविधाके बारेमें जानकारीके लिये अपने यहांकी सोसायटीसे या पांडिचेरीसे पत्र-व्यवहार करें।

२४ मईसे ४ जूनतक सोसायटीने पांडिचेरीमें श्री महेश्वरीके तत्त्वावधानमें एक शिक्षा-शिविरकी व्यवस्था की थी जिसमें भारत-के विभिन्न स्थानोंसे लगभग ७० व्यक्ति आये थे। सवेरेके समय माताजी और श्रीअरविंदके शिक्षासंबंधी साहित्यका अध्ययन होता था और दोपहरको आश्रम विद्यालयके शिक्षकोंसे व्यावहारिक विषयोंपर बातचीत होती थी।

अप्रैलमें हमारी बड़ौदा शाखाने डा० महेश्वरीके तत्त्वावधानमें पूर्णयोगपर स्वाध्याय शिविरकी व्यवस्था की थी। लगभग १०० व्यक्तियोंने इसमें भाग लिया। उन्होंने तीन सार्वजनिक भाषण भी दिये। मईमें कु. प्रज्ञा जावडेकरने संस्कृत अध्ययन शिविर चलाया।

हल्दिया (बंगाल) में सोसायटीके युवक परिषद्ने एक सांस्कृतिक कार्यक्रम रखा था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Registered with the Registrar of Newspapers for India
No. R. N. 18135/70
REGD. No. M. 8731

केरलके एक गांव मरवन्तुरुतुमें सोसायटीने जनवरीमें एक कालिज-में 'नये जगत्‌की ओर' विषयक प्रदर्शनी लगायी जहां छोटी-छोटी पुस्तिकाओंद्वारा श्रीअरविंद और माताजीके आदर्शोंकी जानकारी दी गयी। माताजीके जन्म-दिवसके उपलक्ष्यमें फरवरी में युवकोंको माताजी और श्रीअरविंदकी दृष्टिसे शारीरिक शिक्षणका महत्त्व बत-लाया गया। सार्वजनिक सभामें सुन्दर भविष्यकी—धरतीपर अति-मानसिक जीवनकी—संभावना और अनिवार्यताके बारेमें बतलाया गया। बीच-बीचमें छोटी-छोटी बैठकोंमें ऐसे कार्यक्रम किये जाते हैं।

पहली मईको देहरादूनमें प्रयाग नारायण त्रिपाठीने पूर्णयोगपर भाषण दिया।

घोषणाएं

सोसायटीका ४४ वां वार्षिक ग्रंथ सभी शाखाओं और वाचना-लयोंको भेजा जा रहा है।

श्रीअरविंदाश्रम दिल्ली शाखा १५ से २४ अक्तूबरतक श्रीअरविंद विद्यालयोंकी बैठककी योजना बना रही है। आश्रममें ही रहने-खानेकी व्यवस्था हो सकेगी। विस्तृत जानकारीके लिये दिल्ली पत्र लिखें।

सोसायटीकी सदस्यताके फार्म किसी भी शाखा या पांडिचेरीके केंद्रीय कार्यालयसे प्राप्त किये जा सकते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

236
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

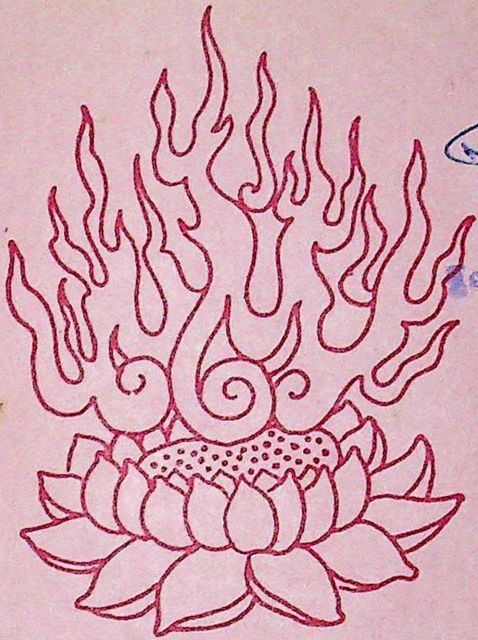

57918
पुस्तकालय
गु० कां० विश्वविद्यालय
हरिद्वार

उद्बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि

अखिल भारतीय पत्रिका

अग्निशिखा

श्रीअरविंद सोसायटीकी मासिक पत्रिका

सितंबर १९८८ वर्ष १९, अंक २, पूर्णांक २१८

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-सूची

संदेश	श्रीअरविंद	१
संपादकीय : बाढ़ और सूखा	अनुबेन	२
दैनन्दिनी		३
'योगके तत्त्व'पर माताजीके साथ प्रश्नोत्तर :		
५ मई १९५४		६
१२ मई १९५४		१०
१९ मई १९५४		१८
२६ मई १९५४		२८
मिथ्यात्व		आ० ३

आपका अग्निशिखा/पुरोधाका चंदा . . . में समाप्त हो रहा है। कृपया अग्निशिखाके १० और पुरोधाके १४ शीघ्र भेजें अन्यथा अगला अंक वी.पी.पी. से जायगा। वी.पी.पी. लौट आनेसे हमें बहुत हानि होती है। अलग अनुस्मारक नहीं भेजा जायगा। कृपया चेक न भेजें। चाहें तो १७५ और २२५ एक साथ या किस्तोंमें देकर अग्निशिखा और पुरोधाके या ४०० देकर दोनोंके आजीवन सदस्य बन सकते हैं।

संपादक : रवींद्र, अनुबेन

प्रकाशक : श्रीअरविंद सोसायटी, पांडिचेरी-६०५००२

मुद्रक : अमियरंजन गांगुली, श्रीअरविंद आश्रम प्रेस, पांडिचेरी-६०५००२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकालय
गु० कां० विश्वविद्यालय
हरिद्वार

संदेश

...हमारे सारे ऊर्ध्वमुखी प्रयास, संघर्ष और हमारी खोज अपनी पराकाष्ठाको तभी पाते हैं और तृप्त पूर्तिमें समाप्त होते हैं जब हम पर्देको चीर कर, अपनी आभासी आत्माके पीछे जा कर, सच्ची आत्मातक पहुंच सकें, अपनी सारी सत्ताको अपने सच्चे स्वामीमें चरितार्थ कर सकें, अपने व्यक्तित्वका परित्याग करके, उसे वास्तविक पुरुषके अर्पण कर सकें, हमारे सदा अस्तव्यस्त और सदा एकत्र होते रहते मानसिक कार्यकलापोंको उनके संपूर्ण प्रकाशमें विलीन कर दें, उनकी विराट्, ज्योतिर्मय और अभिव्यक्त इच्छाके प्रति हम अपनी भटकती और संघर्षरत इच्छा और ऊर्जाएं समर्पित कर दें, उनके स्वयंभू आनंदकी पूर्णतामें अपनी सारी छिन्न-भिन्न, बाहरकी ओर मुड़ी हुई कामनाओं और संवेगोंका एक साथ परित्याग करके उन्हें संतुष्ट करें... इसी दिव्य शब्दकी ओर हमारी अंतरात्माकी श्रवणेन्द्रियको जागना होगा।

—श्रीअरविंद

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संपादकीय :

बाढ़ और सूखा

माताजीने कहा है कि हमारी परिस्थितियां हमारी आंतरिक अवस्थाके अनुसार अनुकूल या प्रतिकूल होती रहती हैं।

इस उक्तिके समर्थनमें प्राचीनसे लेकर अनेक अर्वाचीन उदाहरण पाये जाते हैं। प्रायः सभीने पढ़ा या सुना होगा कि ऋषियोंके सामने हिंस्र प्राणी पालतू पशुकी तरह व्यवहार करते थे। संत फ्रांसिसकी घटना तो और भी रोचक है। उन्होंने आसपासके ग्रामोंको तंग करनेवाले भेड़ियेको 'भइया भेड़िया' कह कर पुकारा और उसको समझाया कि वह गांवमें जाकर ग्राम-वासियोंके पशुओंको नष्ट न करे। भयंकर भेड़ियेने प्रतिज्ञा करते हुए स्वीकृतिमें अपना पंजा संत फ्रांसिसकी हथेलीपर रख दिया था।

अभी भारतके किसी छोटे रजवाड़ेकी कहानी इसी बाह्य परिस्थिति-का दूसरा पहलू प्रस्तुत करती है। उस परिवारका कोई सदस्य छद्मवेशमें घूम रहा था। नगरसे दूर एक छोटे गांवमें उसे प्यास लगी और देखा कि एकाकी नारी ईखके खेतमें फसलकी गठरी बांध रही थी। उसने नारीसे जल मांगा, धरती-सी उदार नारीने उसी समय ईखपर हंसियेकी धार धर दी और अपने छोटे-से कटोरे-को भरकर अतिथिके सामने प्रस्तुत कर दिया। इतना रस देख, चख कर राज-रक्त उछल पड़ा। उसने मन-ही-मन सोचा "इतना अच्छा रस, इतनी फसल!! इन किसानोंसे अधिक लगान लेना चाहिये।" सुस्तानेके बाद वह फिर उसी स्त्रीके पास गया और बोला, "मां, और थोड़ा रस पिलाओगी?" प्रसन्नवदना स्त्री बोली, "क्यों नहीं" इस बार उसने बार-बार हंसियेकी धार लगायी किन्तु आश्चर्य!! एक बूंद भी नहीं!! युवकने पूछा "क्या हुआ?" दुखी स्वरमें स्त्री बोली, "बेटा, या तो भगवान् मुझसे नाराज हैं या हमारे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजाकी बुद्धि बिगड़ गयी है। पिताकी भांति प्रजाकी भलाईका न सोच कर वे शायद प्रजापर अत्याचार करनेकी सोच रहे हैं।"

हम भी आजकलके सूखे और बाढ़के विषयमें अपने अंदर ही झांक कर देखें कि हमारा ऐसा कौन-सा आंतरिक आचरण प्रकृतिको इस तरह विक्षुब्ध करता है कि वह अपना संतुलन खो बैठती है।

—अनुवेन

दैनन्दिनी

सितंबर

१. केवल भगवान्को अर्पण किये गये कार्यमें ही चेतना सबसे अच्छी तरह विकसित होती है।

२. आलस्य और निष्क्रियताका परिणाम तमस् है जो निश्चेतनामें जा गिरना है; प्रगति और प्रकाशके बिल्कुल विपरीत!

३. अपने अहम्पर विजय पाना और केवल भगवान्की सेवामें जीना, यह सच्ची चेतना पानेका आदर्श और सबसे छोटा रास्ता है।

४. तुम मानते हो कि भागवत करुणाका अर्थ यह है कि तुम्हारे सारे जीवनमें सब कुछ सहज, निर्विघ्न रहेगा। यह सच नहीं है। भागवत करुणा तुम्हारी अभीप्साको चरितार्थ करनेके लिये कार्य करती है, और जल्दी और तत्परतासे उपलब्धि प्राप्त हो सके उसके लिये सब चीजोंकी व्यवस्था करती है।

५. अगर तुम्हारे अंदर भागवत कृपाके प्रति श्रद्धा है कि भागवत कृपा तुमपर नजर रखती है, कि चाहे कुछ क्यों न हो जाय भागवत कृपा उपस्थित है; और वह तुमपर निगरानी रखती है; यह भाव तुम्हें हमेशा, सारे जीवन रखना चाहिये और उसकी सहायतासे तुम सभी खतरोंको पार कर लोगे, सारी कठिनाइयोंका सामना कर पाओगे और कहीं कोई हलचल नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होगी क्योंकि तुम्हें श्रद्धा है कि भागवत कृपा तुम्हारे साथ है।

६. सबसे पहले तुम्हें भागवत कृपाकी आवश्यकता का अनुभव होना चाहिये। यह महत्त्वपूर्ण बात है।

तुम्हारे अंदर एक तरहकी नम्रता होनी चाहिये जो तुम्हें भागवत कृपाके बिना अपनी पंगुताकी अभिज्ञता दे कि सचमुच उसके बिना तुम शक्तिहीन और अपूर्ण हो।

७. हम कुछ भी क्यों न करें, हमें अपने लक्ष्यको हमेशा याद रखना चाहिये।

८. तुम टेनिस खेल सकते हो या और कुछ कर सकते हो फिर भी भगवान्के बारेमें सोच सकते हो। भगवान्के साथ चेतनामें संबंध रखनेके लिये बैठ कर आंखें मूंदना जरूरी नहीं है।

९. स्त्रियां स्वभावतः पुरुषोंसे कमजोर नहीं होतीं, लेकिन समाजमें उन्हें पुरुषोंकी तरह मजबूत इच्छा-शक्ति और अपने ऊपर नियंत्रण रखनेकी शिक्षा नहीं दी जाती, इसलिये जब संघर्ष आ खड़े होते हैं तो वे उन्हें न समझ पाती हैं न उनके विरुद्ध प्रतिक्रिया कर पाती हैं।

१०. लेकिन ऐसे पुरुष भी हैं जो संघर्षोंमें वैसे ही असहाय बन जाते हैं और वे भी स्त्रियों-सी प्रतिक्रिया करते हैं। एक बार कोई भगवान्की ओर खुल जाय, तो स्त्रियां दिव्य शक्तिके साथ पुरुषोंसे कम शक्तिमान नहीं रहतीं और दिव्य प्रकाश और ज्ञानके साथ ज्योतिर्मय और प्रज्ञावान बन् जाती हैं।

११. हमें सब शंकाओंसे पिंड छुड़ानेका निश्चय करना होगा। वे हमारी प्रगतिके सबसे बुरे शत्रुओंमेंसे हैं।

१२. किसी भी वस्तुके साथ तदात्म होकर उसके बारेमें अभिज्ञ होनेकी क्षमताको चेतना कहते हैं। . . . इस तरह तुम क्रोधकी लहरके साथ एक होकर अपनी सारी सत्ताको क्रोधका एक स्पंदन बना देते हो जो अंधा और अन्य सबसे बेखबर होता है।

१३. जब तुम उत्तेजित कोलाहलके बीच अनासक्त और अलग-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अलग खड़े हो उसे देखते हो, तभी तुम समझने वाली दृष्टिसे उसकी सारी प्रक्रियाओंको देख सकते हो।

१४. तुम्हें अपने बलपर नहीं, भागवत शक्तिपर श्रद्धा होनी चाहिये।

१५. जो तुम्हें भगवान्‌की ओर ले जाय उसे अच्छा मानना चाहिये और जो तुम्हें भगवान्‌से दूर ले जाय उसे बुरा।

१६. मनमें हमेशा अचंचल और सचेत रहो।

१७. अचंचल मन तेजी या बुदबुदाहटके बिना चीजोंको देखता है, न हड़बड़ी करता है, न ऊंटपटांग बातें सोचता है।

१८. शिव तपस्‌के स्वामी हैं। उनकी शक्ति तपःशक्ति है।

१९. देवताके रूपमें कृष्ण आनंद, प्रेम और भक्तिके स्वामी हैं और अवतारके रूपमें ज्ञान और कर्मके सम्मिलनको अभिव्यक्त करते हैं।

२०. अपने कर्मोंकी बुराईको समझनेके लिये मनुष्यको बहुत अधिक सचेतन होनेकी आवश्यकता होती है और बुराईके विषयमें सचेत हो जाना ही उसे फिरसे न करनेकी पहली सीढ़ी है।

२१. अपनी दुश्चिन्ताको घटानेका सबसे उत्तम साधन है अच्छा काम करना, सच्चा होना, सरल होना और न्याय-परायण होना।

२२. तुम अपने कर्मोंसे उत्पन्न वातावरणको अपने साथ, अपने चारों ओर, अपने अंदर लिये रहते हो, तुम जो कुछ करो, वह यदि सुन्दर, सामंजस्यपूर्ण हो तो तुम्हारा वातावरण भी सुन्दर, शुभ और सामंजस्यपूर्ण बना रहेगा।

२३. सभी अच्छे और सौजन्यपूर्ण कार्य ज्योति, विश्रांति और आनंद प्रदान करते हैं—ऐसा सूर्यालोक ले आते हैं जिसमें फूल खिलते हैं।

२४. मोहका अर्थ है बाहरी रूपको ही सद्‌वस्तु समझना और क्षणभंगुर वस्तुओंको ही एकमात्र अनुकरणीय वस्तु, चिर स्थायी सत्य मानना।

२५. मन, प्राण और शरीरके लिये नम्र होनेका अर्थ है यह कभी न भूलना कि भगवान्‌के बिना वे कुछ नहीं जानते, कुछ नहीं हैं और कुछ नहीं कर सकते।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२६. जो कुछ भी होता है, हमें एक पाठ सिखानेके लिये होता है।

२७. जबतक हम अपने अहंकारसे छुटकारा नहीं पा लेते तबतक शांति नहीं हो सकती, न हमारे लिये, न औरोंके लिये।

२८. जब तुम ध्यान करते हो तो आंतरिक सत्ताके अंदर प्रवेश करनेका प्रयास करते हो।

२९. भगवान्से प्रेम करने और धरतीपर उनकी सेवा करनेका सबसे अच्छा तरीका है अथक, स्पष्टदर्शी और व्यापक शुभ-चिंता जो सभी व्यक्तिगत प्रतिक्रियाओंसे मुक्त हो।

३०. विरोधी शक्तियोंको जगत्में केवल इसी कारण सहा जाता है कि वे मनुष्यकी निष्कपटताकी कसौटी होती हैं।

'योगके तत्व'पर माताजीके साथ प्रश्नोत्तर

(गतांकसे आगे)

५ मई, १९५४

यह श्रद्धा नहीं, एक निश्चयता है जो अनुभूतिसे उत्पन्न होती है। यह अनुभूति पूर्ण तो नहीं है, पर है अवश्य।

यह तुम्हारे आगे नये क्षितिजोंको खोल देती है, यह एक मार्ग है, उस मार्गपर बढ़ाया गया एक पग है जो रूपांतरकी ओर ले जाता है।

और तर्क-संगत निष्कर्ष यह है कि कुछ भी असंभव नहीं है। यह तो हम ही सीमाएं उत्पन्न कर देते हैं। हम सारे समय कहते रहते हैं: "यह संभव है; वह असंभव है; यह कार्य हो सकता है; वह नहीं हो सकता; हां, यह ठीक है। यह हो तो सकता है, यह तो हो भी गया है, किंतु वह, उसे करना असंभव है।" वस्तुतः हम ही अपने-आपको, दासोंकी भांति, हर समय अपनी सीमाओंमें, अपनी मूर्खतापूर्ण संकुचित और अज्ञानपूर्ण विचारोंमें बंद रखते हैं जो जीवनके नियमोंको नहीं जानते। जीवनके नियम वे बिलकुल नहीं हैं जो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुम समझते हो, न वे हैं जो बुद्धिमान् लोग सोचते हैं। वे बिलकुल अलग हैं। इस मार्गपर पग रखकर, बल्कि पहला ही पग रखकर व्यक्ति यह जानना आरंभ कर देता है।

स्नेहमयी मां, यहां लिखा है:

"प्र०---क्या अपनी दुर्बलताओं और दोषोंको भगवान्के आगे तथा दूसरोंके आगे स्वीकार कर लेना सच्चाईका चिह्न है?

उ०---दूसरोंके आगे क्यों? भगवान्के आगे ही स्वीकार करना चाहिये।

प्र०---किंतु यदि किसीने दूसरेके साथ बुरा बर्ताव किया है तो क्या उसके आगे दोष स्वीकार करना आवश्यक नहीं है? क्या भगवान्के आगे स्वीकार करना ही काफी है?

उ०---यदि दूसरोंके साथ इस बातका संबंध हो तो ऐसा किया जा सकता है।"

(योगके तत्त्व)

इसमें कोई हानि नहीं। इससे तुम्हें प्रसन्नता होती हो तो तुम ऐसा कर सकते हो। मूलतः, यदि इससे तुम्हें सान्त्वना मिलती हो और यह तुम्हारे विकासमें सहायक हो, यदि तुम्हें ऐसा लगे कि तुम्हारी प्रगतिके लिये आवश्यक है तो यह बहुत अच्छा है।

स्नेहमयी मां, क्या यह हो सकता है कि किसी व्यक्तिमें सच्चाई न हो, किंतु उसे इसका ज्ञान भी न हो?

मेरा ख्याल है कि ऐसी अवस्थामें वह कपटी नहीं, दुष्ट है; कारण, यदि वह यह जानता है कि वह कपटी है और फिर भी अपनी असत्यतामें ही निवास करता रहे तो यह दुष्टता है, क्यों है न? इसका मतलब यह है कि उसका आशय बुरा है, नहीं तो वह असत्यताके साथ ही क्यों चिपटा रहेगा?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैंने कहा था : यदि वह इसके प्रति अचेतन हो ?

एक ही समय वह चेतन और अचेतन कैसे हो सकता है ? यही तो असंभव है। यदि व्यक्ति अपनी असत्यताके प्रति सचेतन है तो वह उसके प्रति अचेतन नहीं हो सकता। यह असंभव है। दोनों बातें एक साथ नहीं हो सकतीं।

किंतु यदि व्यक्तिमें मिथ्यात्व हो और वह यह जानता भी न हो कि मिथ्यात्व उसकी सत्तामें कहां है, तो ?

ओह ! वह नहीं जानता ? . . . इसका कारण भी यही है कि वह काफी सच्चा नहीं है और अपनी ओर नहीं देखता, मैं विश्वास दिलाती हूं कि यदि तुम यह जानते हो कि तुममें असत्यता है, तो तुम यह भी जानते हो कि वह कहां है ? नहीं तो तुम अपनी असत्यताके प्रति सचेतन हो ही नहीं सकते। उदाहरणार्थ, एक परिस्थितिमें व्यक्ति जानता है; वह जानता है कि उसे यह कार्य करना चाहिये : "मुझे यह करना चाहिये," साथ ही वह करना भी नहीं चाहता, फिर ! और तब वह अपने-आपको धोखा देता है, काम न करनेके लिये उपाय खोज निकालता है, क्योंकि वह उसे करना नहीं चाहता––हां, ऐसा प्रायः होता है। (हंसी) जिस समय तुम अपने अंदर उस छोटे-से कार्यको करते हो, अर्थात्, जो नहीं करना चाहते उसे न करनेके लिये वहाना ढूंढ़ते हो, उसी समय यदि तुम जान लो कि तुम सच्चे नहीं हो और फिर भी उस कार्यको करते रहते हो, तो इसका अर्थ यह हुआ कि तुम प्रपंची हो। तुम मुझसे पूछो तो मैं इसीको दुष्टता कहती हूं, बुरा कहती हूं। किंतु यदि तुम यह जान लो कि तुम सच्चे नहीं हो तो इसका अर्थ यह हुआ कि तुम अपने मिथ्यात्वके प्रति सचेतन हो, तब यह कैसे कह सकते हो : "मैं अपनी असत्यताके प्रति सचेतन नहीं हूं ?" व्यक्ति सौमेंसे नब्बे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बार बिना जाने ऐसा ही करते हैं। दुःखकी बात यही है। इतनी सरलतासे व्यक्ति अपने-आपको धोखा देता है कि जिस काम-को वह नहीं करना चाहता उसे न करनेके लिये बहाने खोज लेता है; इससे उल्टा भी होता है: वह जिस कार्यको करना चाहता है उसे करनेके लिये भी बहाने खोज लेता है, यह जानते हुए भी कि वह नहीं करना चाहिये—बात एक ही है। वह इसके लिये अच्छे-अच्छे तर्क उपस्थित करता है, और, दुर्भाग्यसे, जैसा कि मैं कह भी चुकी हूं, अधिकतर व्यक्ति इतने अचेतन होते हैं कि वे बिना समझे ही ऐसा करते रहते हैं। वे सोचते हैं कि वे बहुत सच्चे हैं: "न, मैंने सचमुचमें यह सोचा था कि मुझे यह करना चाहिये," बड़े भोलेपनसे कहते हैं। और यह सब इसलिये होता है कि उनमें सच्चाई नहीं है, इसलिये नहीं कि वे पूर्णतया अचेतन हैं। किंतु यदि व्यक्ति अपने अंदर घटनेवाली वस्तुओंके प्रति जरा भी सचेतन होगा तो वह उस छोटी-सी चालाकीको, जो उसने की थी और जिस प्रकार उसे ढूंढ़ा था, वह सब जान लेगा, और यह भी कि कहींसे बड़े सुन्दर ढंगसे एक बहुत बढ़िया बहाना प्रकट हो रहा है ताकि वह जो करना चाहता था कर सके। और वह यह भली-भांति जानता भी है कि उसे यह नहीं करना चाहिये। ये दो वस्तुएं हैं: इस प्रकार यह एक खेल है अचेतना और असत्यताके बीच और असत्यता और अचेतनाके बीच। किंतु यदि तुम मुझसे कहो "मैं अपनी असत्यताके प्रति सचेतन हूं" तब स्वभावतया ही, यह तथ्य तुम्हारे सामने आता है: "क्या तुमने अंधकारमें ही रहनेका निश्चय कर लिया है, अथवा तुम विकास करना चाहते हो?" समस्या यही है। यदि तुम अपनी असत्यताके प्रति सचेतन हो तो तुम्हें केवल एक बात करनी होगी: गर्म लाल लोहेसे इसे दाग दो और अपने-आपको सच्चा बनाओ। परिणाम यही है। तुम्हें गर्म लोहा लेना होगा: वह अच्छी तरहसे जलायेगा और तब ... उफ! ... यही करना होगा। क्षण-भरके लिये इससे कष्ट तो होगा, पर फिर चैन पड़ जायगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मां, आपने लिखा है: "सच्चाई भगवान्का द्वार खोलनेकी कुंजी है।" इसका क्या अर्थ है?

यह एक अलंकारिक रूपक है, मेरे बच्चे, यह अलंकारयुक्त भाषामें इस तथ्यको दर्शाता है कि सच्चाईसे व्यक्ति सब कुछ पा सकता है, भगवान्को भी। यदि किसी द्वारको खोलना हो तो उसकी कुंजी होनी चाहिये, है न? अतएव, जो द्वार तुम्हें भगवान्से अलग करता है सच्चाई उसकी कुंजीका काम करेगी, वह उस द्वारको खोल देगी और तुम उसके अंदर प्रवेश कर सकोगे, बस इतना ही।

शुभरात्रि!

१२ मई, १९५४

("योगके तत्त्व" मेंसे कुछ अंश पढ़नेके बाद) जब श्रीअरविंदसे यह प्रश्न पूछा गया था: "यदि पुरुष मातृकृपाकी क्रियाको अनुमति न दे तो क्या वह दूसरी सत्ताओं--मानसिक, प्राणिक, भौतिक और आंतरिक सत्ताओं--को रूपांतर करनेवाली मांकी कृपाको ग्रहण या अनुभव करनेसे रोक देता है?" तो श्रीअरविंदने इसका उत्तर दिया था: "नहीं। पुरुष प्रायः पीछेकी ओर रहता है, और अपने स्थानपर दूसरी सत्ताओंको अनुमति देने या अनुभव करनेकी छूट दे देता है।" बादमें माताजी एक साधकसे कहती हैं):

"पुरुष"से तुम्हारा ठीक अभिप्राय क्या है? . . . अहंभाव।

(साधक): नहीं, यह चेतन सत्ता है। एक सत्ता (स्थिर सत्ता) होती है और एक संभवन (क्रियाशील सत्ता)। चेतन सत्ता पुरुष है और संभवन प्रकृति।

तो क्या प्रत्येक आंतरिक सत्ताका अपना-अपना पुरुष होता है? अथवा सभी सत्ताओंमें एक पुरुष है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(साधक): सत्ताके प्रत्येक भागमें: दूसरे शब्दोंमें, एक प्राणिक पुरुष होता है, एक मानसिक पुरुष और एक भौतिक सत्ताका पुरुष...

क्या इसीको हम चेतना कहते हैं?

(साधक): जी हां, चेतन सत्ता।

निरंतर बनी रहनेवाली चेतन सत्ता?

जी हां।

किंतु यदि अंदरकी चेतन सत्ता सहमत न हो तो फिर व्यक्ति साधना कैसे कर सकता है? कारण, मुझे लगता है कि साधना आरंभ करनेका निश्चय इसी सत्ताको लेना होगा।

जी हां।

(बच्चोंसे) आज मैं प्रश्न पूछ रही हूं।

(एक बच्चा) यहां यह प्रश्न पूछा गया है: "कौन-सा संकेत हमें यह बताता है कि साधकका भगवान्‌के प्रति समर्पणका निश्चय उसके जीवनको क्रियात्मक रूपमें प्रभावित कर रहा है?" और श्रीअरविंद उत्तर देते हैं: "संकेत यह होगा कि वह बिना कोई प्रश्न किये उनकी आज्ञाका पालन करता है, इसमें न वह विद्रोह करता है, न मांग और न ही कोई शर्त रखता है; वह केवल भगवान्‌के ही प्रभावोंको प्रत्युत्तर देता है तथा अन्य सभी प्रभावोंको अस्वीकार कर देता है।"

(योगके तत्त्व)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या इस समर्पणमें विवशताका भाव नहीं है?

विवशता? इस "विवशता"का क्या अर्थ है?

निष्क्रिय समर्पण।

मैं नहीं जानती तुम क्या कहना चाहते हो। वह एक ऐसा संकेत चाहता है जो यह बता सके कि उसका समर्पण पूर्ण है। यहां सक्रिय या निष्क्रिय समर्पणका प्रश्न ही नहीं उठता। वह कहता है कि समर्पणका निश्चय कुछ परिणाम लाता है। पहला परिणाम है बिना प्रश्न किये आज्ञाका पालन करना; दूसरा, भगवान्‌के प्रभावोंको छोड़कर अन्य सभी प्रभावोंको अस्वीकार करनेकी शक्ति प्राप्त करना। ये बहुत बड़े परिणाम हैं। जब व्यक्ति इन्हें प्राप्त कर ले तो वह मार्गपर बहुत आगे बढ़ लेता है।

क्या तुम भगवान्‌की ओरसे आनेवाले और कहीं औरसे आनेवाले प्रभावमें भेद कर सकते हो? . . . जब तुममें कोई प्रवृत्ति उठती है, तो क्या तुम कह सकते हो कि यह भगवान्‌की ओरसे आयी है, या कहीं औरसे?

थोड़ा-सा।

थोड़ा-सा! ओह। यह अच्छी बात है। और यह भी बताओ कि क्यों और कैसे? . . . बड़ी मनोरंजक बात है यह!

कभी-कभी, जब मैं सवेरे या दोपहर बाद सोकर उठता हूं तो मुझे ऐसा लगता है कि कोई कह रहा है: "समय निकल रहा है, शीघ्रता करो . . .।"

फिर? . . . कोई . . . अर्थात्, तुम्हें ऐसा प्रतीत होता है कि कोई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यक्ति तुमसे कह रहा है: "उठो, जल्दीसे जाकर अपना काम करो।"

व्यक्ति नहीं।

कोई प्रभाव?

हां।

किंतु क्या तुम्हें पता है कि वह कहांसे आता है? ... क्या तुम यह जानते हो कि उसका स्रोत क्या है?

यह प्रभाव बुरा नहीं है, मेरे विचारमें तो यह बुरा नहीं है। तब उसे भगवान्से ही आना चाहिये।

आह! यह एक अंदाज है। उदाहरणार्थ, तुम्हारे मनमें एक रचना, एक विचार है कि तुम्हें आलसी नहीं होना चाहिये, तुम्हें कार्य करना चाहिये—समयका ध्यान रखना चाहिये, सोनेमें समय नहीं गंवाना चाहिये—तो इतना काफी है, यह विचार अथवा रचना यदि तुम्हारे जागनेके समय एक प्रभावके रूपमें (क्योंकि यह तुम्हारे मनका ही एक भाग है जो जगता रहा है) प्रकट होती है और तुमसे कहती है: "जल्दी करो, उठो, काम करो, आलसी मत बनो!" तो ठीक है। किंतु यह संभवतः तुम्हारी सत्ताका एक भाग दूसरे भागपर कार्य करनेका प्रयत्न करता है। अथवा यदि तुम्हें कक्षा-में जाना है या किसीके साथ कार्य करना है तो वह उस व्यक्तिका सक्रिय विचार भी हो सकता है जो कहता है: "अभीतक वह आया नहीं, कहीं सो न रहा हो, और देर कर दे"—इतना ही काफी है। इस वस्तुका एक अच्छा पक्ष है जो तुम्हारी गतिविधिपर नियंत्रणके रूपमें उपयोगी सिद्ध हो सकता है। किंतु यह वस्तु आवश्यक रूपसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भगवान्से नहीं आयी है, बिल्कुल नहीं। यह समझना कि कोई वस्तु अच्छी है, इसलिये वह भगवान्से आयी है तुम्हें भयानक भूलोंकी ओर ले जा सकता है।

वस्तुओंको अनुभव करनेका यह तरीका नहीं है। इस प्रकारकी चेतनाके बोधसे यह अनुभव नहीं होता, उसका यह तरीका नहीं है। किसी स्पंदनके महत्त्वको यथार्थ रूपसे जाननेके लिये व्यक्तिमें काफी स्वच्छ और सूक्ष्म संवेदनशीलता होनी चाहिये। जो भी स्पंदन बाह्य गतिविधियोंसे आते हैं, चाहे वे मानसिक हों, चाहे प्राणिक अथवा शारीरिक, चाहे आंतरात्मिक भी हों, उन सबमें एक विशिष्ट गुण होता है, किंतु जो वस्तु भागवत प्रभावके फलस्वरूप आती है वह एक और ही वस्तु होती है और उसका गुण भी एकदम अलग होता है; इनमें भेद कर सकनेके लिये यह जरूरी है कि व्यक्ति पहले दोनोंको अपने अंदर अनुभव करे, अनुभव करनेके बाद भी उसे अत्यंत शांत, सावधान तथा आंतरिक रूपसे स्थिर रहना चाहिये ताकि वह दोनोंके अंतरको जान सके और गलती न करे। यदि तुम्हारा क्रियाशील विचार बीचमें आ जाय तो बस किस्सा खतम, तब तुम यह विभेद नहीं कर सकते, और प्रश्न करना आरंभ कर देते हो। तुम यह जाननेके लिये कि यह वस्तु भगवान्से आयी है या नहीं आयी, अपने शुभ और अशुभसंबंधी विचारोंका प्रयोग करने लगते हो। यह मूर्खता है। यह असंभव है।

व्यक्तिको यह दुहरी अनुभूति हो भी जाय, वह इनमें भेद भी कर सके, तो भी उसे कुछ और सावधानियां बरतनी पड़ेंगी, अपने ऊपर नियंत्रण रखना होगा, ताकि गलती न होनेका निश्चय हो सके। जब व्यक्ति अंतरात्माका द्वार पूरी तरह खोल लेता है तथा चेतन रूपमें उसमें प्रवेश कर जाता है, भगवान्के साथ पूर्ण, समग्र एवं सर्वांगीण संबंध स्थापित कर लेता है, जब उसे ऐसा प्रतीत होने लगता है कि उसने एक नया जीवन प्राप्त कर लिया है, वह एक दूसरी ही सत्ता बन गया है, अब वह वस्तुओंको पुराने ढंगसे नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देखता, न ही उस ढंगसे सोचता है—केवल तभी वह निकटसे, गहराईमें और पूर्ण रूपसे जान पाता है कि दिव्य जीवन क्या है। इसके बाद यदि द्वार पुनः बंद हो भी जाय तो व्यक्तिके पास उसकी ठीक-ठीक स्मृति बची रहती है। इसी ढंगसे यह वस्तु अभिव्यक्त होती है। तब भूल करना असंभव हो जाता है। यह बिल्कुल भिन्न चीज है, इसकी कोई बराबरी नहीं, बिल्कुल नहीं : इसकी किसी चीजसे तुलना नहीं की जा सकती। यह एक अद्वितीय और अपने-आपमें पूर्ण वस्तु है। इसीलिये मैंने तुमसे पूछा था : "क्या तुम इसमें भेद कर सकते हो? कारण, यदि तुममेंसे किसी एकको यह अनुभूति प्राप्त हो चुकी हो तो वह इस प्रकार जान लेता है कि कौन-सी वस्तु भगवान्से आयी है, और यदि वह निश्चित और पूर्ण रूपसे उस वस्तुको जान लेता है जो भगवान्से आती है तो वह उन सबको भी अवश्य जान लेगा जो उनसे नहीं आती।" इसीलिये मैंने तुमसे पूछा था। यदि तुममेंसे एक भी सच्चाईके साथ मुझसे कह सकता कि, "मुझे यह अनुभूति हो चुकी है और मैं इस विषयमें जानता हूं," तो मुझे बहुत प्रसन्नता होती। किंतु यह बात उपर्युक्त अनुभूतिके बाद ही जानी जा सकती है, उससे पहले नहीं। इसलिये, यदि व्यक्ति सचमुच प्रगति करना चाहता है तो उसे प्रत्येक पगपर अपनेसे यह पूछना होगा और इस बातका निश्चय करना होगा कि वह प्रभाव कहांसे आया है : यह सुझाव किसने दिया है? क्या यह मेरी सत्ताका ही एक भाग है अथवा बाहरकी कोई वस्तु? क्या यह भगवान्की ओरसे आयी है?

किंतु इस अनुभूतिको प्राप्त करनेसे पहले व्यक्ति अपने-आप ही निर्णय नहीं कर सकता। स्वभावतया, यदि व्यक्तिका समर्पण वास्तविक रूपमें सच्चा है और सत्तामें निरंतर यह वृत्ति रहती है, भगवान्के प्रति पूर्ण आत्मदानकी वृत्ति : "तेरी इच्छा पूर्ण हो," तो वह बिना जाने या समझे-बूझे, सहज प्रेरणावश उसी वस्तुको चुन सकता है जिसे चुनना चाहिये और जिसे नहीं चुनना चाहिये उसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अस्वीकार कर सकता है। किंतु यह एक सहज प्रवृत्ति, स्वचालित क्रिया बन जाती है, पर केवल तभी जब तुम्हारा समर्पण पूर्ण हो। समर्पणका यही लाभ है, क्योंकि तब तुम ठीक कार्य, ठीक ढंगसे, सहज भावमें कर सकते हो, ज्ञान प्राप्त करनेसे पहले ही।

किंतु इसे वैसा ही होना चाहिये जैसा श्रीअरविंदने कहा है, अर्थात्, व्यक्ति पूर्ण आज्ञाकारिताकी ऐसी अवस्थामें हो जो कोई प्रश्न न पूछे, जो वाद-विवाद न करे और सहज भावमें आज्ञापालन करे, उन्हींके पथ-प्रदर्शनमें कार्य करे, उसके विचार और प्राणमें कोई भी वस्तु विद्रोह न करे, न विरोध और शंका ही करे, न अपनेको सच्चा प्रमाणित करनेके लिये तर्क ही करे और न ही वह अपने आगे (कभी-कभी भगवान्‌के भी आगे) यह प्रमाणित करना चाहे कि वह सच्चा है, उसका कार्य ठीक है। यह सब समाप्त होना चाहिये।

मूलतः व्यक्ति किसी भी मार्गका अनुसरण करे—चाहे वह मार्ग समर्पणका हो या आत्मदान अथवा ज्ञानका—व्यक्ति यदि इसे पूर्ण बनाना चाहता है तो यह सदा एक-सा कठिन होता है और इसकी विधि एक ही है, केवल एक, मैं तो एक ही जानती हूं: वह है पूर्ण सच्चाई। लेकिन सच्चाई **पूर्ण** हो!

क्या तुम्हें पता है कि पूर्ण सच्चाई किसे कहते हैं? . . .

अपने-आपको कभी धोखा देनेकी कोशिश न करो, सत्ताका कोई भी भाग दूसरोंको विश्वास दिलानेका उपाय ढूंढ़नेकी कोशिश न करे। जो कुछ तुम करना चाहते हो उसे करनेके लिये बहाने ढूंढ़नेकी खातिर उसके विषयमें चिकनी-चुपड़ी बातें मत करो, कोई वस्तु यदि तुम्हें अच्छी न लगती हो तो उसकी तरफसे आंखें मत मूंद लो, किसी वस्तुको अपने सामनेसे यह कहते हुए मत गुजरने दो: "इसका कुछ महत्त्व नहीं, अगली बार ज्यादा अच्छा होगा।"

ओह, यह सब अत्यधिक कठिन है! घंटे-भरके लिये ऐसा करनेकी कोशिश करो तो तुम देखोगे कि यह कितना कठिन है! केवल एक घंटा, पूर्ण सच्चाईके साथ रहो। कुछ भी छूटे नहीं। अर्थात्

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो कुछ भी करो, जो कुछ भी अनुभव करो, जो कुछ भी सोचो, जो कुछ भी चाहो, सब अनन्य भावसे भगवान् ही हों।

"मैं भगवान्के सिवाय कुछ नहीं चाहता, मैं भगवान्के सिवाय अन्य किसी वस्तुके संबंधमें नहीं सोचता, मैं केवल वही करता हूं जो मुझे भगवान्की ओर ले जाता है, मैं भगवान्के सिवाय और किसी वस्तुसे प्रेम नहीं करता।"

चेष्टा करो—चेष्टा करो और देखो, केवल आधे घंटेके लिये ही, और तुम देखोगे कि यह कितना कठिन है! और उस समय इस बातका ध्यान रखो कि वहां मन, प्राण या भौतिक सत्ताका कोई भी भाग आरामसे छुपा तो नहीं पड़ा है, पीठ पीछे, ताकि तुम उसे देख न सको (मां अपने हाथ पीठ पीछे छिपा लेती हैं), और यह न जान सको कि वह कार्यमें सहयोग नहीं दे रहा—वह वहां चुपचाप बैठा है ताकि तुम उसे बाहर न ला सको . . . वह कुछ कहता नहीं, पर बदलता भी नहीं, छुपा पड़ा रहता है। ऐसे कितने भाग अपने-आपको छिपाये रहते हैं! व्यक्ति उन्हें अपनी जेबमें डाल लेता है क्योंकि वह उन्हें देखना नहीं चाहता, अथवा वे तुम्हारी पीठके पीछे ठीक बीचों-बीच पड़े रहते हैं ताकि दिखायी न दें। जब तुम वहां अपनी टार्चके साथ, सच्चाईकी टार्चके साथ जाते हो और सब कोनों, छोटे-छोटे कोनोंमें भी ढूंढ़ते हो तो जो कोने इस बातसे सहमत नहीं रहते, जो वस्तुएं "न" कहती हैं अथवा अपनी जगहसे हिलना-डुलना नहीं चाहतीं, वे कहती हैं: "मैं नहीं हिलूंगी; मैं अपनी जगहसे चिपकी रहूंगी, कोई वस्तु मुझे यहांसे हटा नहीं सकती! . . ." तुम्हारे पास एक टार्च होती है और तुम उस चीजपर, उन सबपर प्रकाश फेंकते हो। तुम देखोगे कि वहां, उस चीजपर ऐसी अनेक वस्तुएं हैं, पीठके पीछे अच्छी तरह चिपकी हुईं।

कोशिश करो, केवल एक घंटेके लिये, कोशिश करो!

और कोई प्रश्न नहीं है? किसीको कुछ नहीं कहना है?

अच्छा तो विदा, मेरे बच्चो!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१९ मई, १९५४

भगवान्‌के लिये एक तो विशुद्ध स्नेह होता है और एक विशुद्ध प्रेम। इन दोनोंमें क्या अंतर है?

यह बात उस अर्थपर निर्भर है जो तुम अपने शब्दोंको देते हो। यह इसपर निर्भर है कि तुम स्नेह किसे कहते हो। पता नहीं। सामान्यत:, स्नेह एक व्यक्तिगत भाव होता है, बाह्य और थोड़ा सतही भी। यह पूर्णतया उस अर्थपर निर्भर है जो तुम अपने शब्दोंको देते हो। साधारणत: जब कोई कहता है: "ओह! मुझे उससे बहुत स्नेह है," तो इसका अर्थ होता है कि उसके अंदर उसके लिये शुभ भावनाएं हैं, एक प्रकारका मित्र-भाव है, किंतु इसमें बहुत गहरा नहीं; पर इस शब्दका प्रयोग गहनतर अर्थमें भी किया जा सकता है। जबतक व्यक्ति बिल्कुल सही रूपमें अपनी शब्दावलीकी परिभाषा न कर दे, उसके शब्दोंमें भेद करना बहुत कठिन होता है। जब व्यक्ति कुछ कहना चाहता है तो बोलते समय यदि वह अपने शब्दोंमें विचार-बोध और ज्ञान-संबंधी तीव्रता ले आता है तो वह अवस्था—आत्माकी अवस्था—उन शब्दोंमें भी आ जाती है। किंतु यदि शब्दोंका प्रयोग बिल्कुल ही बौद्धिक रूपसे, अर्थात्, मनमाने ढंगसे किया जाय तो बोलनेसे पहले व्यक्तिको कह देना चाहिये: "जब मैं यह कहूं"...और उसे अपने शब्दोंकी पूर्ण व्याख्या और परिभाषा देनी चाहिये।

"आंतरात्मिक दृष्टि" का क्या अर्थ है?

दृष्टि? तुम भौतिक दृष्टिका अर्थ जानते हो न?—भौतिकको जानते हो न? यही बात अंतरात्माके साथ है। दूसरे शब्दोंमें, भौतिक इंद्रियोंसे देखनेके स्थानपर तुम आंतरात्मिक इंद्रियोंसे देखते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो। तुम्हारी यह भौतिक आंखें हैं न? इसी प्रकार अंतरात्माकी भी आंखें हैं जो आंतरात्मिक ढंगसे देखती हैं। यह बात दृष्टिके गुण-धर्मपर नहीं, वरन् सत्ताकी उस अवस्थापर निर्भर है जो देखनेका कार्य करती है, उन इंद्रियोंपर जो देखती हैं। आंतरात्मिक दृष्टि उस सबको देखती है जो अंतरात्माके भीतर, अर्थात्, आंतरात्मिक अवस्थामें या आंतरात्मिक क्षेत्रमें अथवा आंतरात्मिक सत्तामें होता है। जब कि मानसिक दृष्टि केवल उसे देखती है जो मनमें घटता है: वह बस देखती है। यह भौतिक दृष्टिकी ही भांति देखती है, सचमुच भौतिक दृष्टिकी भांति।

भौतिक आंखोंसे तुम चैत्य दर्शन नहीं पा सकते; तुम्हारी आंतरात्मिक सत्ताके पास ही आंतरात्मिक दृष्टि हो सकती है। अपनी आंतरात्मिक सत्ताके साथ तुम्हारा इतना निकट संबंध हो सकता है कि जो कुछ उसने देखा है उसे तुम याद रख सको, उसके प्रति सचेतन हो सको, किंतु देखनेका यह कार्य तुम्हारी आंतरात्मिक सत्ताने किया है, भौतिक सत्ताने नहीं। यह मत समझो कि तुम्हारी भौतिक सत्ता ही इसे भिन्न ढंगसे देख रही है; नहीं, देखनेका यह कार्य तुम्हारी आंतरात्मिक सत्ता करती है।

मां, यहां लिखा है कि भागवत प्रेमकी तीव्रता सत्तामें कहीं भी विक्षोभ पैदा नहीं करती।[1]

हां।

किंतु यदि किसीका शरीर दुर्बल हो तो क्या भागवत प्रेमकी तीव्रता उसमें क्षोभ पैदा नहीं कर देगी?

शरीरमें? भागवत प्रेम भला शरीरको क्यों विक्षुब्ध करेगा?

---

[1] "योगके तत्त्व"।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किंतु यदि वह उसकी तीव्रताको सह न सके तो?

तब संभवतः वह भागवत प्रेम होगा ही नहीं। मुझे तुम्हारी बात समझमें नहीं आयी। जहांतक भागवत प्रेमका संबंध है व्यक्ति स्वभावतया उतना ही पाता है जितना वह सह सकता है।

भागवत प्रेम तो अपनी पूरी तीव्रताके साथ एक विराट् शक्तिके रूपमें सदैव उपस्थित रहता है। किंतु अधिकतम लोग—९९ प्रति-शत—कुछ भी अनुभव नहीं करते। वे जितना अनुभव करते हैं वह ठीक उसी अनुपातमें होता है जो वे हैं, या जितना वे ग्रहण कर सकते हैं। उदाहरणके लिये, कल्पना करो कि तुम एक ऐसे वायु-मंडलमें स्नान कर रहे हो जो कि भागवत प्रेमसे पूर्णतया स्पंदित है —और तुम उस सबसे एकदम अनभिज्ञ हो। कभी बहुत ही कम, दो-एक सेकंडोंके लिये अचानक ही तुम्हें किसी वस्तुकी अनुभूति होती है और तुम कहते हो: "ओह, भागवत प्रेम मेरी ओर आया था!" बात हंसीकी है, जब कि वास्तवमें हुआ यह था कि किसी-न-किसी कारणसे तुम कहीं जरा-से खुले थे, अतएव तुम्हें उसकी अनुभूति हुई। वह तो सदा ही उपस्थित रहता है। यही बात भागवत चेतनाके साथ है। वह भी हर समय अपनी पूर्ण तीव्रताके साथ उपस्थित रहती है। पर व्यक्ति उसके संबंधमें कुछ भी नहीं जानता; अथवा इसी प्रकार बीच-बीचमें अनुभव करता है; अचानक ही जब व्यक्ति कुछ अच्छी अवस्थामें होता है तो उसे किसी वस्तुका अनुभव होता है और वह कहता है: "ओह, भागवत चेतना, भागवत प्रेम मेरे अनुभवमें आये हैं।" पर बात ऐसी बिलकुल नहीं है। व्यक्ति कहीं जरा-सा खुला होता है, बहुत जरा-सा, कभी-कभी सुईकी नोक जितना और स्वभावतया ही शक्ति उसमें प्रवेश कर जाती है। कारण यह सक्रिय वायुमंडल जैसा होता है, जब कभी ग्रहण करनेकी संभावना होती है ये चीजें ग्रहण कर ली जाती हैं। यह बात सभी भागवत वस्तुओंके साथ है। वे सदा होती हैं, केवल व्यक्ति उन्हें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ग्रहण नहीं करता, क्योंकि वह स्वयं बन्द होता है, उसके अंदर कोई रुकावट होती है, वह अन्य वस्तुओंमें व्यस्त रहता है। बल्कि अधिकतर तो व्यक्ति अपनेमें ही व्यस्त रहता है, इसलिये किसी अन्य वस्तुके लिये उसमें स्थान नहीं रहता। व्यक्ति बड़े सक्रिय रूपमें (माताजी हंसती हैं) अन्य वस्तुओंमें व्यस्त रहता है, वह वस्तुओंसे इतना भरा रहता है कि उसमें भगवान्‌के लिये कोई स्थान ही नहीं रहता।

किंतु वे उपस्थित रहते हैं।

यह भी उन सब चमत्कारोंकी न्याईं है जो तुम्हारे चारों ओर फैले हैं, तुम उन्हें देखते नहीं। देखते हो क्या? . . . न, कभी-कभी केवल उसी समय, जब तुम जरा, बहुत ही जरा-से ग्रहणशील होते हो, अथवा निद्रामें, जब तुम अपनी छोटी-छोटी बातोंमें थोड़ा कम ऐकांतिक रूपसे व्यस्त होते हो, तुम्हें उस वस्तुकी एक झलक मिल जाती है, तुम उसे देख लेते हो, अनुभव कर लेते हो। किंतु साधारणतया तो ऐसा होता है कि ज्यों ही तुम, जागते हो, यह सब धुल-पुंछ जाता है—जैसा कि तुम्हें पता है, इसका पहला कारण होता है वह भयावह अहं जो केवल अपनेसे ही भरपूर रहता है और फिर समूचा विश्व इस अहंके चारों ओर घूमता है: तुम केंद्रमें होते हो और विश्व तुम्हारे चारों ओर घूमता है। यदि तुम ध्यानपूर्वक अपनी ओर देखो तो तुम्हें ऐसा ही दीखेगा। विश्वकी तुम्हारी अनुभूति ऐसी ही होती है—तुम केंद्रमें और विश्व तुम्हारे चारों ओर। अतएव, वहां किसी और वस्तुके लिये स्थान ही नहीं रहता। तुम विश्वको नहीं, विश्वमें अपने-आपको देखते हो।

इसलिये, सबसे पहले, शुरूके लिये व्यक्तिको अपने अहंसे बाहर निकलनेके योग्य होना होगा। इसके बाद इसे, समझ रहे हो, एक अनस्तित्वकी-सी अवस्थामें होना चाहिये। तब तुम कुछ ऊपर उठकर वस्तुओंको उनके वास्तविक रूपमें देखना आरंभ करोगे। किंतु यदि तुम वस्तुओंको उनके वास्तविक रूपमें देखना चाहते हो तो तुम्हें पूर्णतया एक दर्पणके समान होना होगा: नीरव, शांत, अचल और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निष्पक्ष, तुम्हें अपनी कोई भी अभिरुचि न रखते हुए पूर्णतया ग्रहणशील अवस्थामें होना होगा। यदि तुम ऐसे हो जाओ, तो यह देखने लगोगे कि ऐसी बहुत-सी वस्तुएं हैं जिनके बारेमें तुम कुछ भी नहीं जानते, किंतु जो मौजूद हैं और तुम्हारे अंदर क्रियाशील होना आरंभ कर देंगी।

तब तुम केवल उस छोटे-से विंदुमें, जो कि विश्वमें तुम हो, पूरी तरह बन्द रहनेके स्थानपर, इन वस्तुओंके भीतर निवास कर सकोगे।

अपनेसे बाहर निकलनेके तरह-तरहके तरीके हैं। किंतु यदि तुम वस्तुओंको उनके असली स्वरूपमें जानना चाहते हो, अपने साथ उनके संबंधकी दृष्टिसे नहीं, तो तुम्हें ऐसा करना ही पड़ेगा।

अहंसे बाहर निकलनेके लिये व्यक्तिको कौन-सी वृत्ति अपनानी चाहिये ?

वृत्ति नहीं, बल्कि संकल्प ! है न ? तुम्हें इसके लिये संकल्प करना पड़ेगा . . . क्या तुम यही पूछ रहे हो कि इसके लिये क्या करना चाहिये?

सबसे अधिक सुनिश्चित ढंग है, अपने-आपको भगवान्को सौंप देना। भगवान्को अपनी तरफ खींचनेकी कोशिश न करो, वरन् अपने-आपको भगवान्में लीन करनेका प्रयत्न करो। तब तुम कम-से-कम अपनेसे थोड़ा बाहर निकलनेके लिये बाध्य तो हो ही जाते हो। जानते हो, साधारणतया ऐसा होता है कि जब लोग भगवान्के विषयमें सोचते हैं तो पहला काम यह करते हैं कि भगवान्को अपनी ओर अधिकाधिक खींचें। और तब सामान्यतया वे कुछ भी नहीं पाते। वे कहते हैं: "आह ! मैंने उन्हें पुकारा, उनसे प्रार्थना की, पर मुझे उत्तर नहीं मिला, कुछ भी तो नहीं मिला।" किंतु यदि तुम उनसे पूछो: "क्या तुमने अपने-आपको उन्हें दिया था ?"— "न, मैंने उन्हें खींचा था।"—"ओह, तभी वे नहीं आये।" यह नहीं कि वे नहीं आये, वास्तविक बात यह है कि जब तुम खींचते हो तो तुम अपने अहंमें इतने बन्द हो जाते हो (जैसा कि मैंने अभी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुम्हें बताया था) कि तुममें और जो वस्तु तुम्हें ग्रहण करनी हैं उसमें एक दीवार खड़ी हो जाती है। तुम अपने-आपको एक कारा-गृहमें वन्द कर लेते हो और तब तुम्हें इस बातपर आश्चर्य होता है कि वहां तुम्हें कोई अनुभूति नहीं हुई।

और वह बन्दीगृह भी कैसा, जिसकी कोई भी खिड़की सड़ककी ओर नहीं खुलती।

अपने-आपको बाहरकी ओर उंडेल दो (माताजी बाहरकी ओर अपनी हथेलियां खोलती हैं), विना कुछ छिपाये, अपने-आपको समर्पित कर दो, केवल समर्पणके आनंदकी खातिर। केवल तभी यह संभावना रहती है कि तुम्हें कुछ अनुभव हो सके।

किंतु यदि व्यक्ति कुछ अनुभव करनेकी कोशिश करे . . .।

अनुभव करनेकी कोशिश करे? क्या यह भी अहंभाव नहीं है, अनुभव करनेकी कोशिश करना? . . . व्यक्ति अहंवादी रहते हुए अहंमेंसे निकलना चाहे तो यह बहुत कठिन हो जाता है, है न? ये दोनों बातें परस्पर-विरोधी हैं।

"अनुभव करनेकी कोशिश करना," पर किसलिये, अपनी संतुष्टिके लिये?

व्यक्तिका अपना अस्तित्व नहीं है, केवल भगवान्‌का ही अस्तित्व है, यदि इस अनुभूतिको पानेके लिये व्यक्ति प्रयत्न करे, तो क्या इस तरह वह अपने अहंसे बाहर निकल सकता है?

व्यक्तिका अपना अस्तित्व नहीं है? मुझे पता नहीं कि मानसिक रूपमें कोशिश करके व्यक्ति किसी भी वस्तुको पा सकता है, क्योंकि यह एक प्रकारका मानसिक प्रयत्न है। इस तरह व्यक्ति मानसिक रचनाएं गढ़ता रहता है और उसे कोई खास प्राप्ति नहीं होती। नहीं, आवश्यकता ऐसी चीजकी है जो सहज रूपमें आये, सत्तामें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जलती हुई ज्वालाकी, अभीप्साकी ज्वालाकी, एक ऐसी वस्तुकी... पता नहीं इसे कैसे व्यक्त किया जाय।

यदि चीज मस्तिष्कमें ही चलती रहे तो कुछ भी नहीं हो सकता।

वह व्यक्ति जो प्रयत्न कर सकता है मानसिक ही तो होगा। उसे सहज बनानेके लिये क्या किया जाय?

क्या?

प्रयत्नको...

हां, हां, मैंने तुम्हारी बात सुन ली है। किंतु तुम इस बातपर आग्रह क्यों करते हो कि व्यक्ति जो भी प्रयत्न करता है वह केवल मानसिक ही हो सकता है?

लेकिन उसे सहज स्वाभाविक बनानेके लिये क्या किया जाय?

मेरे विचारमें रूपांतरके लिये किये गये प्रयत्नमें, जो सत्ताके चैत्य केंद्रसे आता है, और किसी वस्तुको प्राप्त करनेके लिये मानसिक रचनामें, बहुत अधिक भेद है।

पता नहीं, अपने-आपको समझा पाना बहुत कठिन है, किंतु जबतक वस्तु इस प्रकार (माताजी एक अंगुली अपने माथेतक लाती हैं) दिमागमें घूमती रहती है, उसमें कोई शक्ति नहीं होती, यदि होती भी है तो बहुत ही कम और बहुत अधिक सीमित। सारे समय वह अपनेको झुठलाती रहती है। व्यक्तिको ऐसा लगता है कि वह बड़ी कठिनाईसे संकल्प-शक्तिको पकड़ पाता है, जो काफी हदतक कृत्रिम होती है, और फिर किसी वस्तुको पकड़नेकी कोशिश करता है, और अगले ही क्षण सब कुछ लुप्त हो जाता है। और उसे कुछ पता नहीं चलता। वह अपनेसे कहता है: "यह सब कैसे हो गया?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पता नहीं, मुझे तो मस्तिष्कसे योग करना बहुत कठिन प्रतीत होता है—जबतक कि व्यक्ति पूरी तरहसे उसकी पकड़में ही न आ जाय।

संकल्प मस्तिष्कमें नहीं है।

संकल्प—जिसे मैं संकल्प कहती हूं—एक ऐसी वस्तु है जो यहां है (माताजी छातीके बीचकी ओर संकेत करती हैं) जिसमें कार्य करनेकी, उसे चरितार्थ करनेकी शक्ति है।

जो कार्य व्यक्ति केवल मस्तिष्कके साथ करता है, उसमें असंख्य उलट-फेर होते रहते हैं; उदाहरणार्थ, ऐसा कोई भी सिद्धांत नहीं बनाया जा सकता जिसमें तत्काल ही विरोधी तर्क उपस्थित करनेवाली वस्तुएं आकर हस्तक्षेप न करें। यही तो मनका बड़ा कौशल है: वह किसी भी वस्तुको प्रमाणित कर सकता है, किसी भी वस्तुके विषयमें तर्क उपस्थित कर सकता है। फलस्वरूप, व्यक्ति एक पग भी आगे नहीं बढ़ पाता। थोड़ी देर के लिये वह किसी शक्तिशाली विचारको पकड़ भी ले तो भी, यदि वह उसमें तीव्रताकी अवस्थाको बनाये न रख सके तो थोड़ी-सी शिथिलता आते ही विरोधी वस्तुएं आ धमकेंगी और अपने-आपको सुन्दर ढंगसे व्यक्त करने लगेंगी। अतः, यह कभी न समाप्त होनेवाली लड़ाई है।

इसका कोई समाधान नहीं है।

तुम पूछते हो कि यह सहज कैसे हो सकता है। उदाहरणार्थ, शरीरमें भी, जब उसपर किसी रोगका, दुर्घटना आदिका आक्रमण होने लगता है—कोई भी आक्रमण—तो जो शरीर अपनी सहज प्राकृतिक अवस्थामें रहने दिया गया है, उसमें सहायता पानेके लिये एक प्रवृत्ति, एक अभीप्सा, एक सहज संकल्प होगा। किंतु, ज्यों ही यह सारी बात मस्तिष्कतक पहुंचती है, वह उन्हीं चीजोंका रूप ले लेती है जिनका व्यक्ति अभ्यस्त होता है। और तब सब कुछ बिगड़ जाता है। किंतु शरीरके वास्तविक स्वरूपको देखा जाय तो पता लगेगा कि उसमें एक ऐसी वस्तु है जो अचानक ही जागकर सहायताकी पुकार करने लगती है, इतनी श्रद्धाके साथ, इतनी तीव्रता-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के साथ जैसे कोई छोटा बच्चा अपनी मांको, या जो कोई भी वहां हो उसे पुकारता है (यदि वह बोलना नहीं जानता तो कुछ कहता नहीं); किंतु शरीर यदि अपनेपर छोड़ दिया जाय और मन भी उस-पर सतत रूपमें कार्य न करे तो . . . हां, तो शरीरमें यह बात होती है: ज्यों ही उसमें कोई विक्षोभ पैदा होता है, तत्काल ही उसमें एक अभीप्सा, एक पुकार, सहायता पानेके लिये एक प्रयत्न जाग उठता है, और उसमें बहुत शक्ति होती है। यदि इसमें कोई हस्त-क्षेप न करे तो उसमें बहुत शक्ति होती है, मानों स्वयं शरीरके कोषाणु ही अभीप्सा करने और पुकारने लगे हों।

शरीरमें बहुत ही मूल्यवान् निधियां भरी पड़ी हैं, जिनके विषयमें किसीको मालूम नहीं है। उसके सभी कोषाणुओंमें जीवन-शक्तिकी तीव्रता है, उत्कट अभीप्सा है, विकासके लिये संकल्प है, जिसे मनुष्य साधारणतया अनुभव भी नहीं करता। शरीर-चेतना मन और प्राण-की क्रियाके कारण पूरी तरह विकृत हो गयी हो तभी वह संतुलनको वापिस लानेके लिये तुरंत संकल्प नहीं करती। जब वह संकल्प-शक्ति न हो तो इसका अर्थ है कि पूर्ण शरीर-चेतना ही मन और प्राणके हस्तक्षेपके कारण दूषित हो गयी है। जो लोग अचेतन रूपमें अपने रोगको इस कारण पोसते हैं—और यह एक अस्वस्थ प्रवृत्ति है—कि लोग उसमें रुचि लेने लगें, तो इसमें उनके शरीरका दोष नहीं रहता—बेचारा शरीर!—यह ऐसी चीज होती है जिसे उन्होंने अपने विकृत मन और प्राणकी सहायतासे उसपर लादा है। शरीरको अपने-आप पर छोड़ दिया जाय तो वह विलक्षण होता है। वह समता एवं स्वास्थ्यकी प्राप्तिके लिये अभीप्सा ही नहीं करता, प्रत्युत अपने अंदर संतुलन भी स्थापित कर सकता है। यदि व्यक्ति अपने शरीरको अकेला छोड़ दे और समस्त विचारों, प्राणिक प्रतिक्रियाओं, अवसादों, तथाकथित ज्ञान, मानसिक रचनाओं और भयोंको उसमें हस्तक्षेप न करने दे—शरीरको स्वयं उसीपर छोड़ दे तो वह स्वाभाविक रूपमें ही अपने-आपको स्वस्थ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करनेके लिये वह सब कुछ कर लेगा जो उसके लिये आवश्यक है।

अपनी स्वाभाविक अवस्थामें शरीर समतुल्यताको, समस्वरताको ही पसंद करता है; यह तो सत्ताके अन्य भाग हैं जो सब कुछ बिगाड़ देते हैं।

मां, मनको हस्तक्षेप करनेसे कैसे रोका जाय?

आह! सबसे पहले तो तुम्हें इसके लिये इच्छा करनी चाहिये और फिर कहना चाहिये, ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार उन लोगोंसे कहा जाता है जो बहुत शोर मचाते हैं: "चुप रहो, चुप रहो, शांत हो जाओ!" जब-जब मन अपने सुझावों, अपनी क्रियाओंके साथ आगे बढ़े, तुम्हें यही करना चाहिये। तुम्हें उसे शांत, स्थिर एवं नीरव बनाना चाहिये। पहली बात यह है कि तुम्हें उसकी बात नहीं सुननी चाहिये। अधिकतर तो ऐसा होता है कि ज्यों ही ये समस्त वस्तुएं, अर्थात्, विचार आदि आते हैं व्यक्ति उन्हें देखता है, समझनेकी कोशिश करता है, सुनता है, तब स्वभावतया ही वह मूर्ख समझता है कि तुम उसमें रुचि ले रहे हो, और वह और भी अधिक क्रियाशील हो उठता है। तुम्हें उसकी बात न सुननी चाहिये, न उसकी ओर ध्यान देना चाहिये। यदि वह अधिक शोर मचाये तो उससे कहो: "शांत रहो, बस, चुप हो जाओ।" पर ऐसा कहते समय तुम स्वयं शोर मत करो, समझे? तुम्हें उन लोगोंकी नकल नहीं करनी चाहिये जो चीखना शुरू करते हैं: "चुप रहो।" और अपने-आप इतना हल्ला-गुल्ला मचाते हैं कि उनका शोर दूसरोंके शोरसे भी अधिक होता है।

(यहां टेप-रिकार्डका फीता समाप्त हो जाता है)

दूसरा फीता मत लगाओ, मेरी बात भी समाप्त हो गयी है।

भाग्य!

अच्छा, तो शुभरात्रि!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२६ मई, १९५४

स्नेहमयी मां, जब हम आपको स्वप्नमें देखते हैं तो क्या वह स्वप्न सदा सांकेतिक होता है?

नहीं, यह आवश्यक नहीं है। वह एक तथ्य भी हो सकता है। इसका अर्थ है कि तुम भौतिक आंखोंसे देखनेके स्थानपर सूक्ष्म भौतिक, प्राण अथवा मनमें देखते हो। किंतु व्यक्ति देखता मेरे किसी अंशको ही है: उदाहरणार्थ, यदि मैं किसीको एक शक्ति, एक विचार, क्रिया या कार्य-विधि भेजती हूं तो वह उसके वायुमंडलमें मेरा रूप धारण कर लेती है; अतएव वह उसे देखता है। यह एक तथ्य है। मैं कोई वस्तु भेजती हूं और वह उसे देख लेता है। यह मेरी पूर्ण सत्ता नहीं होती (यहां जो इसका अर्थ निकाला जाता है वह अधिकतर गलत होता है), किंतु यह मेरा ही एक अंश होता है।

किंतु मां! इसका सदा कुछ-न-कुछ अर्थ तो होता ही है न?

निश्चयं ही, इसका अर्थ होता है। वरन् अधिकतर तो इसका एक निश्चित उद्देश्य भी होता है। मैं या तो उस समय कुछ करना चाहती हूं अथवा किसीसे कुछ कहना चाहती हूं, या फिर उस व्यक्तिके अंदरकी किसी वस्तुको बदलना चाहती हूं या उसे कोई आवश्यक ज्ञान प्रदान करना चाहती हूं, अथवा किसी वस्तुके विरुद्ध उसे सावधान करना चाहती हूं, उसे सावधान करके सतर्क रहनेके लिये कहती हूं; कभी-कभी मैं उसके किसी प्रश्नका उत्तर देनेके लिये भी आती हूं।

सांकेतिक स्वप्न . . . साधारणतया सांकेतिक स्वप्नोंमें काफी सुसंगति होती है, व्यक्ति उसकी छोटी-से-छोटी बातको याद रख सकता है; वह भौतिक जीवनसे अधिक सजीव और वास्तविक होता है, उसमें अधिक शक्ति होती है, पर ऐसे स्वप्न काफी विरल होते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जब व्यक्ति ऐसे सांकेतिक स्वप्नमेंसे लौटता है तो उसे सब कुछ याद रहता है, उसकी छोटी-से-छोटी बात भी; व्यक्ति यह अनुभव करता है कि इन क्षणोंमें उसने भौतिक जीवनसे कहीं अधिक सच्चा और शक्तिशाली जीवन जिया है, और वह उसपर बहुत गहरा प्रभाव भी छोड़ता है। पर ऐसा विरल ही होता है। ऐसा स्वप्न बहुत आवश्यकता पड़नेपर ही आता है।

क्या किसीको अपना स्वप्न बताना है?

बहुत ही मनोरंजक होगा यह! मैं तुम्हें एक उदाहरण दे सकती हूं। यदि तुममेंसे कोई स्वप्न बताये तो मैं उसकी व्याख्या कर सकती हूं।

मां, मैं एक स्वप्न बता सकता हूं।

आह! तुम! देखें तुम्हारा स्वप्न!

एक दिन जब आप आशीर्वाद दे रही थीं तो मैं भी आपके पास गया, आपने मुझे अपनी बांहोंमें ले लिया और कुछ देरतक लिये रहीं।

और तब? बस इतना ही?

आपने मुझे कुछ कहा भी, पर...

और वह तुम्हें याद नहीं रहा!

न।

(एक अन्य बालक) **मां, कभी-कभी मैं आपको स्वप्नमें रोते देखता हूं।**

क्या? मैं रोती हूं?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जी हां, आपको रोते देखता हूं।

मैं, मैं रोती हूं? (हंसती हैं)

जी हां।

जरा ठहरो!...ऐसा स्वप्न क्या तब आता है जब तुम कुछ उदास होते हो?

शायद।

यह वस्तुतः बहुत सांकेतिक स्वप्न है। इसका अर्थ है...न, यह मैं पीछे बताऊंगी। किंतु सामान्यतया इसका अर्थ यह होता है कि ऐसे प्रत्येक समय जब व्यक्ति स्वयं दुःखी होता है तो वह दुःख मानों भगवान्‌के सामूहिक दुःखके साथ जुड़ जाता है।

भगवान् जड़-पदार्थमें गहरी करुणाकी स्थितिसे कार्य करते हैं। और यह गंभीर भागवत करुणा जड़-पदार्थमें ठीक इस आंतरात्मिक दुःखमें अनूदित होती है जिसके विषयमें यहां चर्चा की गयी है।[1] हमने आज सायंकाल ही तो पढ़ा था। यह तो मानों ऐसे हुआ कि कोई वस्तु उलट दी गयी हो, वस्तु वही है, पर इस प्रकार उल्टी रख दी गयी है (माताजी अपने हाथोंको इकट्ठा करके समर्पणकी मुद्रामें खोलती हैं)।

हां, तो भागवत करुणाकी यह अवस्था आंतरात्मिक चेतनामें एक ऐसे दुःखमें अनूदित होती है जो अहंभावयुक्त नहीं होता। यह एक ऐसा दुःख है जो वैश्व दुःखके साथ सहानुभूतिद्वारा तादात्म्य अभिव्यक्त करता है। "प्रार्थना और ध्यान" पुस्तकमें मैंने एक स्थानपर (अंतकी ओर) कहा है, मैंने अपनी एक अनुभूतिका वर्णन किया है: "मैंने उस दिन अपने जीवनके मधुरतम आंसू बहाए"[2] कारण, मेरा

---

[1] "योगके तत्त्व"।

[2] "प्रार्थना और ध्यान": १२ जुलाई, १९१४।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह रोना अपने लिये नहीं था, समझे? हां, तो यही बात है; तुम यह जानते तो हो ही न कि मनुष्य अहंभावयुक्त कारणोंसे मानवीय रूपसे दुःख पाते हैं। उदाहरणार्थ (मैं यह तुम्हें कई बार बता भी चुकी हूं), जब वे अपने किसी प्रेमपात्रको खो देते हैं तो वह दुःखी होते हैं और रोते हैं, वे उस व्यक्तिकी अवस्थाके लिये नहीं रोते—क्योंकि अधिकतर तो ऐसा होता है—९९ प्रतिशत—कि वे उस व्यक्तिकी अवस्था जानते ही नहीं, वे यह भी नहीं जान सकते कि वह व्यक्ति प्रसन्न है या दुःखी, वह कष्ट पा रहा है या शांतिमें है, वे रोते हैं बिछोहकी भावनाके कारण, जिसे वे स्वयं अनुभव कर रहे हैं, क्योंकि वे उस व्यक्तिको अपने निकट चाहते थे और वह चला गया है। अतएव, मानवीय दुःखकी जड़में व्यक्ति सदा अपनी ओर ही मुड़ता है, यह थोड़े-बहुत चेतन रूपमें होता है, इसे थोड़ा-बहुत—कैसे कहा जाय?—माना भी जाता है किंतु होता सदा ऐसा ही है। जब व्यक्ति दूसरेके दुःखके लिये रोता है तब भी मिश्रण होता है, किंतु ज्यों ही इस दुःखमें आंतरात्मिक तत्त्व आ जाता है त्यों ही सत्तामें "विपरीत दयाभाव" उदय होता है (यही बात मैं अभी-अभी कहनेकी कोशिश कर रही थी), और यदि व्यक्ति उन दोनोंको अलग-अलग कर सके, उसपर अपने-आपको केंद्रित कर सके तथा अपने अहंभावसे निकलकर इस विपरीत करुणा-के साथ संयुक्त हो सके तो उसके द्वारा वह उस महत् वैश्व करुणाके संपर्कमें आ सकता है जो एक असीम, विशाल, स्थिर, शक्तिशाली, गहन और पूर्ण शांति एवं असीम मधुरतासे परिपूर्ण वस्तु है। मेरा अभिप्राय यही होता है जब मैं कहती हूं कि यदि व्यक्ति अपने दुःखको गहन बना सके, उसके ठीक केंद्रमें पहुंच सके, अपने अहं-भावयुक्त और वैयक्तिक भावसे उठकर गहराईमें जा सके, तो वह एक महान् अनुभूतिका द्वार खोल सकता है। इसका यह अर्थ नहीं कि तुम्हें दुःखके लिये दुःखकी चाह करनी चाहिये, किंतु जब वह हो, जब वह तुमपर आक्रमण करे, तब यदि तुम दुःखके अहंसे ऊपर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उठ सको--पर पहले यह देख लेना चाहिये कि अहंभावपूर्ण भाग कौन-सा है, कौन-सी वस्तु तुम्हें दुःख दे रही है, तुम्हारे दुःखका अहंभावयुक्त कारण कौन-सा है—और इस सबसे ऊपर उठकर गहराईमें जाकर, तुम एक सर्वव्यापी वस्तुकी ओर, एक गंभीर और सारभूत सत्यकी ओर मुड़ते हो, तभी तुम उस असीम "करुणा"में प्रवेश करते हो और तब वहां सचमुच ही अंतरात्माका द्वार खुल जाता है। अतएव, यदि कोई मुझे आंसू बहाता देखे तो उस समय यदि वह उन आंसुओंके साथ पूर्ण तथा एक होनेकी कोशिश करे, दूसरे शब्दोंमें, उनके अंदर प्रवेश करके उनमें घुल-मिल जाय तो वह द्वार खुल सकता है। व्यक्ति द्वार खोल सकता है और संपूर्ण अनुभूति, एक अनोखी और विशेष अनुभूति प्राप्त कर सकता है जो अपने पीछे तुम्हारी चेतनापर गहरा प्रभाव छोड़ जाती है। साधारणतया, यह प्रभाव कभी नहीं मिटता, किंतु यदि द्वार पुनः बंद हो जाय और तुम फिरसे वही बन जाओ जो तुम अपनी सामान्य गतिविधियोंमें हो तो भी वह अनुभूति कहीं, पृष्ठभूमिमें बनी रहती है और तुम तीव्र एकाग्रताके क्षणोंमें दुबारा उसे पा सकते हो, तुम एक असीम दुःख एवं विपुल शांतिको दुबारा अनुभव कर सकते हो, एक ऐसी शांतिको जो . . . सब कुछ समझती है, किंतु बौद्धिक रूपमें नहीं, जो समस्त दुःखको अनुभव कर सकती है, सभी वस्तुओंको अपने अंदर समेट सकती है, उनका दुःख दूर कर सकती है।

स्वभावतया, बात सदा वही होती है, व्यक्तिको सच्चे दिलसे दुःखसे मुक्त होनेकी इच्छा करनी चाहिये, नहीं तो उसे सफलता नहीं मिलेगी। यदि कोई अनुभूतिकी ही खातिर यह अनुभूति प्राप्त करना चाहे और अगले क्षण अपनी पूर्ण सामान्य स्थितिमें लौट आये तो यह कार्य संभव नहीं होगा। किंतु यदि वह सचमुच अपना दुःख दूर करना चाहता है, यदि बाधापर विजय प्राप्त करनेकी उसकी अभीप्सा सच्ची है तो उसे अपने-आपसे ऊपर उठना होगा, उस सबका त्याग कर देना होगा जो उसे पीछे की ओर खींचता है,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सीमाओंको तोड़ देना होगा, जो वस्तु उसके मार्गको अवरुद्ध करती है उसे अलग करके अपने-आपको स्वच्छ एवं निर्मल बनाना होगा। यदि उसमें सचमुच दृढ़ संकल्प है कि वह अब अपनी पुरानी भ्रांतियों-में न पड़े, अंधकार और अज्ञानसे ऊपर उठकर तथा सभी अत्यधिक मानवीय, तुच्छ एवं अज्ञानपूर्ण वस्तुओंको पूर्णतः त्याग कर प्रकाशमें प्रवेश करे, तो बात बन सकती है। तब यह कार्य बहुत शक्तिशाली रूपमें होता है, कभी-कभी तो यह निश्चित एवं सर्वांगीण रूपमें भी हो जाता है। किंतु व्यक्तिमें एक भी ऐसी वस्तु नहीं होनी चाहिये जो पुरानी क्रियाओंसे चिपटी रहे, जो उस समय तो चुप रहकर अपने-आपको छुपा ले और बादमें आगे आकर कहे: "हां, हां, यह सब बहुत अच्छा है, यह तुम्हारी अनुभूति आदि ठीक हैं किंतु अब मेरी बारी है।" और जब ऐसा हो जाय तो फिर मैं किसी बातका उत्तर नहीं देती, क्योंकि कभी-कभी तो प्रतिक्रियास्वरूप कार्य और भी बिगड़ जाता है। इसलिये मैं सदा इसी बातपर लौट आती हूं, सदा यही बात कहती हूं: "व्यक्तिको वास्तविक रूपमें सच्चा होना चाहिये, हां, वास्तविक रूपमें।"

यदि उसमें कोई ऐसी वस्तु है जो उसके साथ जोरसे चिपटी हुई है तो उसे पूर्णतया काटकर फेंक देनेके लिये तैयार रहना चाहिये, और इस प्रकार कि उसका जरा भी निशान बाकी न रहे। इसी-लिये व्यक्ति बार-बार वही गलतियां दोहराता है और तबतक दोहराता रहता है जबतक कि दुःख इतना बड़ा न हो जाय कि उसे अपनेमें पूर्ण सच्चाई लानेके लिये विवश करे। पर यह तरीका अपनाना ठीक नहीं, यह बुरा तरीका है, बुरा इसलिये है कि यह कई वस्तुओंको नष्ट कर देता है। यह अत्यधिक शक्तिका अपव्यय करता है और बुरे स्पंदन फैलाता है। किंतु यदि व्यक्ति इससे अन्यथा न कर सके तो फिर दुःखकी तीव्र अवस्थामें अपने अंदर पूर्ण सच्चाईकी प्राप्त करनेका संकल्प पैदा कर सकता है।

ऐसा क्षण प्रत्येकके जीवनमें आता है—एक ऐसा क्षण जब उसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह आवश्यकता अनुभव होने लगती है कि उसे अब निश्चित रूपसे पूर्ण सच्चाईका चुनाव करना है, वैयक्तिक जीवन और सामूहिक जीवनमें भी, जब व्यक्ति एक दलका सदस्य होता है। एक ऐसा क्षण आता है जब कि उसे यह चुनाव करना ही **चाहिये**, शोधनकी यह क्रिया होनी ही **चाहिये**। कभी-कभी यह सब बहुत गंभीर रूप धारण कर लेता है, समूहके लिये यह लगभग जीवन और मृत्युका प्रश्न बन जाता है। यदि उसे जीवित रहना है तो उसे एक निश्चित प्रगति करनी ही होगी।

(मौन)

कोई और स्वप्न?

मां, आपने मेरे स्वप्नका अर्थ नहीं बताया।

इसमें कुछ बतानेको नहीं है, मेरे बच्चे। तुमने वह वस्तु देखी जिसके प्रति तुम भौतिक सत्तामें सचेतन नहीं हो, बस इतना ही। शक्तियां तो सदा उपस्थित रहती हैं, स्नेह, प्रेम, सहायता आदिसे भरपूर...पर व्यक्ति इन सबके प्रति सचेतन नहीं होता, क्योंकि वह अत्यधिक संकीर्ण और क्षुद्र चेतनामें निवास करता है। इसमें कुछ भी बतानेकी आवश्यकता नहीं है, ये चीजें समझायी नहीं जातीं। ये तो तथ्य हैं। यदि तुम चाहो तो इसे एक अनुभूति, एक तथ्यके रूपमें देख सकते हो। वहां कुछ होता है, और वह तुम्हारे मस्तिष्क-में अनूदित हो जाता है। जागनेपर जो बात तुम्हें याद रहती है वह तुम्हारे स्वप्नका एक प्रकारका उल्था ही होता है। ऐसा बहुत कम होता है कि व्यक्ति अनुभूतिके घटते समय उसके प्रति अथवा उसके वास्तविक रूपके प्रति सचेतन रह सके। इसके लिये व्यक्ति को रात्रिमें बहुत सचेतन रहना चाहिये, निद्रामें भी बहुत जाग्रत् रहना चाहिये, जब कि साधारणतया ऐसा नहीं होता। सत्ताके,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वस्तुतः, एक भागको अनुभूति होती है; जब वह भाग, जो अंदर गया होता है, उसके अंदर दुबारा प्रवेश करता है और अनुभूतिको अपने साथ ले आता है तो मस्तिष्कके साथ इस अनुभूतिका संपर्क जुड़ जाता है और फिर वह इसे प्रतिरूपों, शब्दों, विचारों और भावनाओंमें अनूदित कर देता है, और तब जागनेपर व्यक्ति उसके जिस अंशको पकड़ पाता है उसे वह स्वप्न कहता है। किंतु वह उस अनुभूतिकी एक प्रतिलिपि मात्र होती है—जो वास्तविक अनुभूतिसे सादृश्य अथवा समानता तो रखती है, किंतु यथार्थतः वह चीज नहीं होती जिसे व्यक्ति स्वप्नके रूपमें ग्रहण करता है।

जो अनुभूति तुम्हें रात्रिमें उस स्वप्नमें हुई उसमें तुम उन शक्तियोंके संपर्कमें आये जो व्यक्तिके चारों ओर व्याप्त हैं, उसे सहायता देती तथा उसका पोषण करती हैं, और . . . समझ रहे हो न ?—जो प्रेम और कोमलभावसे भरपूर हैं, जो उन सबसे, जो वहां आते हैं, प्रेम करती है, उनका स्वागत करती हैं—जो वस्तुतः सदा और सर्वत्र उपस्थित और कार्यरत रहती हैं, इसीलिये तुम उन्हें जान भी सके। और जब तुम जागे तो यह सब तुम्हारे सम्मुख प्रतिरूपोंमें अनूदित हो गया, अर्थात्, तुम मेरे पास आशीर्वाद लेने आये और तब वहां क्योंकि एक नई अनुभूति भी थी —वेष्टित करनेवाली और सहायता पहुंचानेवाली 'शक्ति'के साथ संपर्ककी अनुभूति—तुम्हें यह भान हुआ कि मैंने तुम्हें अपनी बांहोंमें ले लिया है। हां, तो यह सब इस प्रकार अनूदित हुआ। तथ्य मौजूद है, इसका उल्था तुम्हारे मस्तिष्कका किया हुआ है।

कुछ लोग रात्रिमें मुझसे बहुत अजीब-अजीब बातें करवाते हैं! मैंने ऐसी कई अनोखी कहानियां सुनी हैं। किंतु बात सदा वही होती है। उनके पीछे एक तथ्य होता है। वे एक विभूति, शक्ति या किसी क्रियाके संपर्कमें आते हैं; जैसा कि मैं अभी कह रही थी, उसके मस्तिष्कमें वह वस्तु ऐसे प्रतिरूपोंमें अनूदित हो जाती है जो कभी-कभी बहुत विचित्र होते हैं। किंतु यह वास्तवमें होता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है उनका अपना अनुवाद ही। जहांतक मेरा संवंध है, जब वे यह सब मुझे बताते हैं, मेरे सामने उनकी मानसिक, प्राणिक और भौतिक चेतनाकी अवस्थाका यथार्थ चित्र खिंच जाता है। अनुवादकी विकृति मुझे यह बता देनेके लिये पर्याप्त है कि उनके मनकी क्या अवस्था है। और मैं उन्हें यह भी नहीं कह सकती : "मैं वह नहीं थी," क्योंकि मैं वह थी! केवल उन्होंने इसे अपने ढंगसे बदल दिया है जो कभी-कभी आश्चर्यजनक होता है! तो भी तुम्हारे उदाहरणमें प्रतिरूप बहुत सुन्दर है।

हां तो, मेरे बच्चो, कुछ और?

मधुर मां, मुझे भी एक स्वप्न आया था।

बहुत अच्छा, बताओ।

तूफानके बादकी एक शाम थी और मैं समुद्रके किनारे खड़ा था, समुद्र बहुत पीछेकी ओर हट गया था और वहां एक गांव था जहां मैंने पत्थरके घोड़े देखे। घोड़े गिनतीमें संभवतः चार थे, वे काले पत्थरके थे, और उनसे ऊपर, अलग एक सफेद घोड़ा था जो शायद संगमरमरका था पर उसपर कई रंग चमक रहे थे।

यह तब हुआ जब समुद्र हट गया था?

जी हां।

यह यहांकी बात है या कहींकी भी? मेरा अभिप्राय यह है कि वह समुद्र कहीं औरका था या यहींका? क्या तुम यहांके समुद्रके किनारे खड़े थे?

यह 'टेनिस ग्राऊंड'की बात है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओह, तुम 'टेनिस ग्राउंड'से देख रहे थे।

जी हां, मैं वहांसे प्रकाश-स्तंभ भी देख सकता था।

प्रकाश-स्तंभ !
चार काले घोड़े और एक सफेद घोड़ा !

संख्या निश्चित नहीं है।

ओह !

सफेद घोड़ा एक ही था !

अवश्य ही।

संभवत: यह बात पांडिचेरीके भविष्यसे संबंध रखती है। यदि तुम घोड़ोंकी संख्या याद रख सकते तो इससे कुछ संकेत मिल सकता। तूफान कभी आया था न ?

जी हां, तूफान !

और समुद्र इसके बाद पीछे हटा।

जी हां।

आह, यह प्रतीकात्मक है।

तब आकाश बहुत निर्मल था।

(शेष आवरण ३ पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो जीवन लक्ष्यहीन होता है वह सुखहीन भी होता है।

तुम्हारा लक्ष्य होना चाहिये उच्च और विशाल, उदार और उन्मुक्त और फिर तुम्हारा जीवन तुम्हारे लिये और दूसरोंके लिये भी बहुमूल्य हो जायगा।

— श्रीमां

सहारनपुर सर्विस स्टेशन

पैट्रोल पम्प, देहरादून रोड

सहारनपुर–२४७००१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

A happy beginning
a good continuation
and no end —
an endless progression

14-5-57

New Horizon Sugar Mills
(Pvt.) Ltd.

PONDICHERRY

Telegram : SAKAR
Phone : Town Office : 26780
Factory : 24423 24424

P.O. Box 29
Pondicherry
S. India

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"Live in His Being, Shine with His Light,
Act with His Power, Rejoice with His Bliss."

The Mother

With Best Compliments from:

Auroplast India Limited

Manufacturers of HDPE/PP Circular Woven Sacks

Administrative Office:

77, 'ATLANTA', NARIMAN POINT, BOMBAY-400 021

Phones: 240277, 240367 *Telex:* 011-4104 AEPL IN

Gram: AUROSACK, BOMBAY

Works:

PLOT No. G. 1/3 MIDC AREA, BOISAR,

DIST. THANE MAHARASHTRA

Phones: 682, 491, 591 *Telex::* 132-219 APPL IN

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिथ्यात्व

प्रश्न—मिथ्यात्वसे पिंड छुड़ानेका क्या तरीका है?

उत्तर—अगर हर आदमी अपना कर्तव्य पूरा करे और मिथ्यात्वको त्यागता चले तो सारे संसारके लिये असुरकी पकड़में से बच निकलना आसान होगा। लेकिन अगर तुम हर चीजमें तोड़-मरोड़ करते हो, तुम कुटिल रहो तो काम बहुत कठिन हो जाता है। केवल झूठ बोलना ही मिथ्यात्व नहीं है। यह तो सबसे मामूली चीज है। किसी रूपमें, किसी अंगमें असुरका प्रभाव स्वीकारना मिथ्यात्व है। अगर तुम उससे चिपके रहो और उसमें मजा लो तो भला उससे कैसे पिंड छुड़ा सकते हो? तुम कहते हो कि तुम्हें मिथ्यात्वके प्रभावमें कष्ट सहना पड़ता है, कि ऐसी चीजें हैं जिनसे तुम घृणा करते हो और उनसे छुटकारा पाना चाहते हो, तुम बराबर 'ना, ना, ना' कहते रहते हो, फिर भी वे तुमसे चिपकी रहती हैं। लेकिन, वास्तवमें, यदि तुम मिथ्यात्वको जानो तो उसे क्षण-भरके लिये भी नहीं रख सकते, उसके साथ रह सकना असंभव हो जाता है और तुम उसे तुरंत छोड़नेके लिये बाधित होते हो। लेकिन बात ऐसी नहीं है, तुम्हारे अंदर कोई भाग उसे चाहता है और उसमें रस लेता है। तुम कहते हो कि बहुधा तुम्हें सुनायी देता है कि अमुक काम मत करो, पर साथ ही तुम्हारे अंदर कोई चीज उसे निमंत्रण देती है। अगर तुम पहली आवाजकी बात सुनो और उसके अनुसार चलो तो वह ज्यादा सशक्त हो जायगी और तुम्हारी रक्षा करेगी। एक और तरीका भी है और वह है मिथ्यात्वके समर्पणका। तुम उसे भगवान्‌की भेंट कर दो और उनसे कहो: "इसे शुद्ध कर दीजिये। इसका मतलब यह नहीं है कि भगवान् तुम्हारे लिये सब कुछ कर देंगे। तुम्हें हर क्षण प्रार्थना करनी होगी, समर्पण करना होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
Registered with the Registrar of Newspapers for Ind
No. R. N. 18135/70
REGD. No. M. 87

हां, तूफानके बाद आकाश निर्मल ही होता है।

मैं इस विषयमें निश्चयपूर्वक तो कुछ नहीं कह सकती, क्योंकि इसमेंसे कुछ बातें छूट गयी है, किंतु संभवतः इसका संबंध पांडिचेरीके भविष्यसे हो। देखेंगे।

किंतु आप बिना स्वप्नके भी तो पांडिचेरीका भविष्य बता सकती हैं।

स्वप्नके बिना? (हंसती हैं) आह!

ठीक है, अभी तो हम तूफानसे घिरे हैं, जब समुद्र पीछे हटेगा तब देखेंगे। (हंसी)।

(एक और बालक) मुझे भी एक स्वप्न आया था कि मैं आपके पास आया और आपने आशीर्वाद-स्वरूप मुझे तीन फूल दिये: "मानसिक-निष्कपटता", "समर्पण" और तीसरा शायद था "स्थिर मन"।

यह बहुत अच्छा है, यह बहुत आवश्यक है (हंसी)। यह सत्य है। अब तुम्हें मनको स्थिर करनेके लिये, उसमें समर्पण लाने और पूर्णतया निष्कपट बनानेके लिये प्रयत्न करना चाहिये। यह तो बहुत अच्छा है। यह तुम्हारे लिये एक कार्यक्रम है, अब तुम्हें इसीपर एकाग्र होना चाहिये।

अच्छा, तो मेरे बच्चो, मेरा ख्याल है अब हम समाप्त करते हैं।

(क्रमशः)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकालय
गु० कां० विश्वविद्यालय
हरिद्वार

अखिल भारतीय पत्रिका

अग्निशिखा

अक्तूबर १९८८

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
अग्निशिखा अक्तूबर १९८८ वर्ष १९, अंक ३, पूर्णांक २११

विषय-सूची

संदेश १

'संपादकीय' : उत्तर कौन देगा ? अनुबेन २

दैनन्दिनी ३

'योगके तत्त्व' पर माताजीके साथ प्रश्नोत्तर :

२ जून १९५४ ६

९ जून १९५४ १४

१६ जून १९५४ २८

सोसायटी समाचार आ० ३

आपका अग्निशिखा/पुरोधाका चंदा ... में समाप्त हो रहा है। कृपया अग्निशिखाके १० और पुरोधाके १४ शीघ्र भेजें अन्यथा अगला अंक वी.पी.पी. से जायगा। वी.पी.पी. लौट आनेसे हमें बहुत हानि होती है। अलग अनुस्मारक नहीं भेजा जायगा। कृपया चेक न भेजें। चाहें तो १७५ और २२५ एक साथ या किस्तोंमें देकर अग्निशिखा और पुरोधाके या ४०० देकर दोनोंके आजीवन सदस्य बन सकते हैं।

श्रीअरविंद सोसायटीकी मासिक पत्रिका

संपादक : रवींद्र, अनुबेन

प्रकाशक : श्रीअरविंद सोसायटी, पांडिचेरी-६०५००२

मुद्रक : अमियरंजन गांगुली, श्रीअरविंद आश्रम प्रेस, पांडिचेरी-६०५००२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

61078
पुस्तकालय
गु० कां० विश्वविद्यालय
हरिद्वार

उद्‌बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि

संदेश

It is always a mistake to complain about the circumstances of our life, for they are the outward expression of what we are ourselves.

With my blessings.

The Mother

अपने जीवनकी परिस्थितियोंके बारेमें शिकायत करना हमेशा गलत होता है क्योंकि वे, हम भीतरसे जो कुछ हैं उसीकी बाहरी अभिव्यक्ति होती हैं।

मेरे आशीर्वाद सहित।

—श्रीमां

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संपादकीय :

उत्तर कौन देगा ?

अभी कुछ सप्ताह हुए हमारे शहरसे आधे घंटेकी बस यात्राने हमें विचारों और चिन्ताओंमें डुबा दिया।

हर बस-स्टापपर कण्डक्टर घंटी बजाता और यात्री चढ़ते रहते। यह देख कर आश्चर्य हुआ कि सारी सीटें भर गई हैं फिर भी बस रुकती है और यात्री छड़ पकड़ कर खड़े रह कर जानेके लिये तैयार हैं।

खैर इसके बाद घटी वह अशोभनीय घटना जिसे देख कर भी विश्वास करना कठिन था। एक पुलियाके पास एक पुलिसका आदमी खड़ा था। कण्डक्टरने सीटी बजा कर बस रुकवाई और जितने यात्री खड़े थे उन सबसे उतरनेको कहा। सब चुपचाप उतर गये बस आगे चल पड़ी। पुलिया और पुलिसको पार करके वह फिर रुक गई और उतारे गये यात्री दौड़कर फिर बस पर सवार हो गये।

पूछनेपर पता चला कि अतिरिक्त यात्रियोंको बसमें चढ़ाना कानून के विरुद्ध है और पकड़े जानेपर बस चालकपर जुर्माना हो सकता है।

हमने सहानुभूतिवश यह माना कि इस दिशामें बसें शायद आसानी से आती न होंगी लेकिन जब पता लगा कि हर आधे घंटेके बाद बसें इस मार्गपर आती रहती हैं तब भारतीय मानसके इस बेकारके अनुशासन-भंगपर बड़ा आश्चर्य हुआ। इसका अर्थ यही हुआ कि हमारी जनता अपने चुने प्रतिनिधियों द्वारा बनाये कानूनको मान देना नहीं जानती, कि हम न जागरूक नागरिक हैं, न हमें अपने राष्ट्रसे विशेष प्रेम है !

इन विचारोंसे उबरनेसे पहले एक फरासीसी महिलासे मुलाकात हुई। बातचीतके दौरान उन्होंने बताया कि यह उनकी प्रथम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारत-यात्रा है। वे कहने लगीं कि उनकी समझमें बिल्कुल नहीं आता कि जनता इतनी अधिक अनुशासनहीन क्यों है!

इस प्रश्नका उत्तर कौन देगा?

मैं, आप या सारे भारतीय?? हमें, लिखकर, बोलकर नहीं, अपने कार्यद्वारा, अपनी अनुशासन-परायणताके द्वारा उत्तर देना होगा।

—अनुवेन

दैनन्दिनी

अक्तूबर

१. जो प्रेम भगवान्‌की ओर जाता है उसके लिये भगवान्‌के पास हमेशा एक विलक्षण उत्तर होता है और यही उत्तर तुम्हें वह शांति, वह हर्ष तथा सामंजस्य देगा जिसके लिये तुम अभीप्सा करते हो।

२. केवल नीरव-निश्चलतामें ही सच्ची प्रगति की जा सकती है।

३. केवल नीरव-निश्चलतामें ही तुम गलत गतिविधिको सुधार सकते हो; केवल नीरव-निश्चलतामें ही तुम किसीकी सहायता कर सकते हो।

४. भागवत कृपा सबके लिये समान रूपसे विद्यमान है, लेकिन हर एक अपनी सचाई और निष्कपटताके अनुसार उसे ग्रहण करता है। यह बाहरी परिस्थितियोंपर नहीं बल्कि सच्ची अभीप्सा तथा उद्घाटनपर निर्भर है।

५. तुम्हें केंद्रीय अभीप्साको बनाये रखना चाहिये जो हमेशा सच्ची और निष्कपट होती है और अस्थायी असफलताओंके बावजूद मार्गपर स्थिरतासे बढ़ते रहना चाहिये, तब अनिवार्य रूपसे परिवर्तन होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६. जब कभी तुम कठिनाइयोंका सामना करते हो और उनपर विजय पा लेते हो, तो यह चीज वह नया आध्यात्मिक उद्घाटन तथा नयी विजय लाती है।

७. जो चीज हमारे अंदर है उसीको हम दूसरोंमें भी पाते हैं। अगर हम हमेशा अपने चारों तरफ कीचड़ पायें तो वह इस बातका प्रमाण है कि हमारे अंदर कहींपर कीचड़ है।

८. हमारी योग्यता हमारे अपने अतिक्रमणके प्रयासकी मात्रामें निहित है और अपने-आपका अतिक्रमण करनेका अर्थ है भग भगवान्को प्राप्त करना।

९. जब तुम सचमुच बदल जाओगे तब, तुम्हारे चारों ओरकी चीजें बदल जायेंगी।

१०. विरोधी शक्तियोंको जगत्में केवल इसी कारण सहा जाता है कि वे मनुष्यकी निष्कपटताकी कसौटी होती हैं। जिस दिन मनुष्य सर्वांगीण रूपसे सच्चा और निष्कपट बन जायेगा, ये चीजें चली जाएंगी, क्योंकि तब उनके बने रहनेका कोई कारण न रहेगा।

११. भगवान्से प्रेम करने और धरतीपर उनकी सेवा करनेका सबसे अच्छा तरीका है अथक, स्पष्टदर्शी शुभ-चिन्ता जो सभी व्यक्तिगत प्रतिक्रियाओंसे मुक्त हो।

१२. जो कुछ भी होता है, हमें पाठ सिखानेके लिये होता है। जबतक हम अपने अहंकारसे छुटकारा नहीं पा लेते तबतक कोई शांति नहीं हो सकती; न हमारे लिये, न औरोंके लिये।

१३. अहंकारके बिना जीवन एक अद्भुत चमत्कार हो उठता है।

१४. अपने अंदर रहना सीखो, हमेशा अंदरसे क्रिया करना, माताजीके साथ निरंतर ऐक्य द्वारा क्रिया करना सीखो।

१५. एक आंतरिक सत्ता और अंतर्तम सत्ता है जिसे हम चैत्य कहते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। जब तुम ध्यान करते हो, तो आंतरिक सत्ताके अंदर प्रवेश करनेका प्रयास करते हो।

१६. श्रद्धा, भगवान्के प्रति निष्ठा, समादर, प्रेम, पूजा और आराधना–जो अपने आपमें महान् हैं–बाहरी सत्तामें विकसित होती हैं— हालांकि ये भी अंदरसे आती हैं—लेकिन सिद्धि तभी पायी जा सकती है जब आंतरिक सत्ता अदृष्ट वस्तुओंके विषयोंमें अपने अंतर्दर्शन और भावनाद्वारा जाग्रत् हो।

१७. एक बार तुम भगवान्को पा लो तो स्वभावतः तुम उन्हें सभी चीजोंमें और सब जगह देखोगे।

१८. केवल वर्तमान जीवनमें साहसके साथ सभी कठिनाइयोंका सामना करने, उन्हें पराजित करनेका प्रण ही तुम्हारे अभीष्ट (भगवान्-के साथ) ऐक्यको पानेका निश्चित साधन है।

१९. सभी परिस्थितियोंमें अपने ऊपर मुस्कुराना, अपने दुःखों और मोहभंगों, महत्त्वाकांक्षाओं और पीड़ाओं, क्रोध और विद्रोहपर मुस्कुराना—यह स्वयं अपने-आपपर विजय पानेका कितना शक्तिशाली अस्त्र है।

२०. प्रभो, मुझे मानसिक निष्कपटता प्रदान कर जो अपने साथ भौतिक शांति लाती है।

२१. प्रभो, अपनी समस्त सत्ताके साथ मैं तेरे प्रति पूर्णतया निष्ठा-वान् होना चाहती हूं।

२२. मैं प्रार्थना करती हूं कि मेरे चारों ओर प्राणिक सामंजस्य और पूर्ण शुद्धि रहे।

२३. प्रभो, मुझे सच्ची भक्ति प्रदान कर, ऐसी भक्ति जो अपने-आपको शब्दोंमें नहीं, क्रियामें अभिव्यक्त करे।

२४. पहली आवश्यकता यह है कि किसीके बारेमें निन्दात्मक ढंगसे सोचनेसे परहेज करो।

2

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२५. तुम्हारे अंदर सहानुभूतिपूर्ण दृष्टिकोण होना चाहिये और तुम्हें अपने साथियोंके साथ सहयोग देना सीखना चाहिये।

२६. जिन लोगोंके हाथमें शक्ति है, वे अपनी महत्तासे फूले रहें तो वह सच्चे कार्यमें बाधा देते हैं।

२७. जब हम इच्छाओंसे परे चले जाएंगे तब हमें शक्ति प्राप्त होगी।

२८. सबसे पहले अपनी आंतरिक सत्ताके बारेमें सचेतन होओ, फिर सोचो और क्रिया करो।

२९. जो बुद्धिमान्, ध्यान-परायण, अध्यवसायी हैं और निरंतर अपने आपसे संघर्ष करते हैं, वे निर्वाणको प्राप्त होते हैं।

३०. उत्साहसे भरपूर रहना बहुत अच्छी बात है, कार्यमें पवित्र होना भी अति आवश्यक है, सोच विचार कर काम करना उत्तम है, परंतु लोग बहुधा ऐसा नहीं कर पाते।

३१. मेधावी मनुष्यको उत्साह, अप्रमाद, संयम द्वारा अपने लिये ऐसे दीपका निर्माण करना चाहिये जिसे कोई बाढ़ डुबा न पाये।

'योगके तत्त्व'पर माताजीके साथ प्रश्नोत्तर

(गतांकसे आगे)

२ जून १९५४

आज कोई प्रश्न नहीं है ? . . . मैं सोच रही थी कि आज ध्यान किया जाय।

ध्यान न कर सकनेके क्या कारण हैं ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्योंकि तुमने ध्यान करना नहीं सीखा।

तुम्हारे अंदर अचानक यह विचार आता है: "चलो, आज हम ध्यान करेंगे।" तुमने पहले कभी नहीं किया। तुम बैठ जाते हो और कल्पना करने लगते हो कि तुम ध्यान करना शुरू कर रहे हो। किंतु ध्यान भी उसी प्रकार सीखनेकी चीज है जिस प्रकार व्यक्ति गणित अथवा पियानो बजाना सीखा करता है। किंतु यह ऐसे ही नहीं सीख लिया जाता! ध्यान करनेके लिये पालथी मारकर और दोनों हाथोंको गोदमें रखकर बैठना ही पर्याप्त नहीं है। तुम्हें ध्यान करना सीखना होगा। ध्यान कैसे किया जाय इसके लिये सर्वत्र कई प्रकारके नियम दिये गये हैं।

जब तुम बहुत छोटे थे तब जैसे तुम्हें, उदाहरणके लिये, बैठना सिखाया गया था, वैसे ही कुछ न सोचना अथवा चुपचाप बैठना या किसी वस्तुपर एकाग्र होना अथवा अपने विचारोंको इकट्ठा करना सिखाया जाता, अथवा ध्यान करनेके समान ही अन्य कई बातें, जिन्हें व्यक्तिको सीखना चाहिये; जब तुम्हें सीधा खड़ा होने, अर्थात्, चलने, बैठने, खाने आदिकी—तुम्हें कई बातें सिखायी जाती हैं, किंतु तुम उसके प्रति सचेतन नहीं होते, क्योंकि वे बहुत ही छोटी अवस्थामें सिखायी जाती हैं—शिक्षा दी गयी थी, तभी यदि तुम्हें ध्यान करना भी सिखाया गया होता तो बादमें तुम जिस दिन भी ध्यान करनेका निश्चय करते, उसी दिन सहज भावसे ध्यान कर पाते, किंतु तुम्हें यह शिक्षा मिली नहीं। तुम्हें इस प्रकारकी कोई भी शिक्षा नहीं मिली। वस्तुतः, तुम्हें बहुत कम बातें सिखायी जाती हैं; तुम्हें सोना भी तो सिखाया नहीं जाता। लोग सोचते हैं कि बस बिस्तरपर लेट जाओ और तुम सो जाओगे, किंतु यह सत्य नहीं है। व्यक्तिको सोना उसी प्रकार सीखना चाहिये जिस प्रकार वह खाना, या कोई और कार्य सीखता है। यदि वह नहीं सीखता तो स्वभावतया वह इसे बुरी तरह करेगा। या उसे सीखनेमें वर्षों लगेंगे, और उन सब वर्षोंमें, जब वह उसे ठीक ढंगसे नहीं करता,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसके साथ बहुत-सी घटनाएं घट सकती हैं। तब बहुत कष्ट सहने बाद, बहुत गलतियां करनेके बाद, बहुत-सी मूर्खताएं करनेके बा और जब व्यक्ति बूढ़ा भी हो जाता है और बाल सफेद हो जाते तब वह कुछ सीखना शुरू करता है। किंतु जब तुम काफी छो थे तब यदि तुम्हारे माता-पिता या संरक्षक तुम्हें यह सिखाने कष्ट करते कि किस कामको कैसे किया जाय, उसे करनेका ठी और उचित ढंग क्या है तो तुम उन सब गलतियोंसे बच जाते तुमने इन सब वर्षोंमें की हैं। यही नहीं कि तुम गलतियां करते है कोई तुमसे यह भी नहीं कहता कि ये गलतियां हैं। अतः, तुम आश्चर्य होता है कि तुम बीमार पड़ गये या थक गये। तुम जानते ही नहीं कि जो तुम करना चाहते हो, उसे कैसे किया जा तुम्हें कभी शिक्षा ही नहीं मिली। कई बच्चोंको कुछ भी न सिखाया जाता और इसलिये उन्हें अति साधारण बातोंको, प्रारंभि बातोंको भी सीखनेमें, उदाहरणके लिये, साफ रहना सीखनेमें क वर्ष लग जाते हैं।

यह सच है कि अधिकतर तो माता-पिता यह सब सिखा ही न पाते क्योंकि वे स्वयं इसे नहीं जानते। कारण, उन्हें भी यह किसीने नहीं सिखाया था। अतएव वे भी कुछ नहीं जानते... यह जाननेके लिये कि जीवनको कैसे जीना चाहिये, वे स्वयं ही उ भर टटोलते रहते हैं। इसलिये स्वभावतया ही वे तुम्हें जी सिखानेमें असमर्थ हैं, वे स्वयं ही नहीं जानते। पर यदि तुम्हें स्वयं सीखना पड़े तो वर्षोंके अनुभवसे ही तुम उसे सीख सको और वह भी तब, जब तुम्हें उस विषयपर सोचना होगा। य न सोचो तो कभी न सीख सकोगे।

ठीक ढंगसे जीना एक कठिन कला है, और यदि व्यक्ति बहु छोटी उम्रमें ही सीखना और प्रयत्न करना शुरू नहीं करता तो उसे भली प्रकार कभी नहीं सीख सकता। अपने शरीरको स्व और मनको शांत रखने और हृदयमें सद्भावना संजोनेकी क

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आवश्यक है;—मैं सुख-आरामसे या उचित ढंगसे जीनेके लिये अति आवश्यक है;—मैं सुख-आरामसे या उचित ढंगसे जीनेकी बात यहां नहीं कह रही, मैं केवल, किसी विशेष ढंगसे जीनेकी बात यहां नहीं कह रही, मैं केवल, उचित ढंगसे जीनेकी बात कह रही हूं—, हां तो, मेरे विचारमें, ऐसे व्यक्ति बहुत नहीं हैं जो बच्चोंको यह बातें सिखानेकी परवाह करते हैं।

वस?

मां, क्या हमें पढ़ाईके अतिरिक्त कुछ और काम भी करना चाहिये?

कोई और काम? यह तुम्हारे ऊपर निर्भर है। यह प्रत्येक व्यक्तिपर निर्भर करता है। और इसपर कि वह क्या चाहता है। यदि तुम साधना करना चाहते हो तो स्पष्ट ही तुम्हें कम-से-कम, चाहे आंशिक रूपमें ही, कोई ऐसा काम करना चाहिये जिसमें तुम्हारा स्वार्थ न हो, दूसरे शब्दोंमें, जो केवल अपने लिये ही न किया गया हो। अध्ययन करना तो बहुत ठीक है, यह अत्यंत आवश्यक है, बल्कि अनिवार्य है, किंतु यह उस शिक्षाका केवल एक अंग है, जिसके विषयमें मैं अभी कुछ देर पहले तुम्हें बता रही थी तथा जिसे तुम्हें अपनी छोटी अवस्थासे ही पाना चाहिये। कारण, जब तुम बड़े हो जाते हो तो यह सब सीखना कहीं अधिक कठिन हो जाता है, एक ऐसी आयु होती है जब कि वह आवश्यक अध्ययन कर सकता है जो उसके अंदर नींवका काम करता है, साथ ही, यदि व्यक्ति साधना करना चाहता है तो उसे कोई ऐसा काम भी करना चाहिये, जिसमें उसका केवल निजी हेतु ही न हो। कुछ निःस्वार्थ काम भी करना चाहिये, क्योंकि यदि वह पूर्णतया अपनेमें ही व्यस्त रहेगा तो वह कछुएके समान एक प्रकारसे अपने ही खोलमें बंद रहेगा और वैश्व-शक्तियोंके प्रति नहीं खुलेगा। एक छोटी-सी निःस्वार्थपूर्ण क्रिया, एक छोटा-सा कार्य जिसमें व्यक्तिका अपना कोई अहंभावयुक्त हेतु नहीं होता, एक ऐसी वस्तुके लिये द्वार खोल देता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है जो उसके अपने क्षुद्र और छोटे-से व्यक्तित्वसे एकदम अलग है।

व्यक्ति साधारणतया अपने घोंघेमें ही बंद रहता है, और वह दूसरे घोंघोंके बारेमें तभी जानता है जब उसे कोई आघात लगे या संघर्ष हो। किंतु इस शक्तिकी जो हर समय घूमती रहती है और प्राणियोंकी इस पारस्परिक निर्भरताकी चेतना बहुत कम देखनेमें आती है। वस्तुतः यह साधनाकी एक अनिवार्य अवस्था है।

मां, क्या व्यक्ति भगवान्‌के लिये अध्ययन नहीं कर सकता?

इसका अर्थ . . . ?

क्या व्यक्ति अपने लिये अध्ययन न करके भगवान्‌के लिये अध्ययन कर सकता है, भागवत कार्यके लिये अपने-आपको तैयार कर सकता है?

हां, यदि तुम इस भावनाके साथ अध्ययन करो कि तुम्हें उसका यंत्र बननेके लिये अपना विकास करना है। सचमुच, यह एक बिलकुल ही अलग भावनासे किया जाता है, है न?—बिलकुल अलग भावनासे। तब सबसे पहले तो ऐसे विषय ही नहीं रहेंगे जिन्हें तुम पसंद करते हो, न ही वे जिन्हें तुम पसंद नहीं करते, ऐसी कक्षाएं भी नहीं होंगी जो तुम्हें उबा देती हैं या नहीं उबातीं, न ही ऐसी वस्तुएं जो तुम्हें कठिन लगती हैं या कठिन नहीं लगतीं, ऐसे अध्यापक भी नहीं जो तुम्हें प्रीतिकर लगते हैं या नहीं लगते—यह सब तब तत्काल समाप्त हो जायगा। तब व्यक्ति एक ऐसी अवस्थामें प्रवेश करता है जिसमें जो भी हो उसे वह भगवान्‌के कार्यके लिये अपने-आपको तैयार करनेके अवसरके रूपमें लेता है, और तब सब कुछ रोचक हो जाता है। स्वभावतया ही यदि कोई ऐसा कर रहा है तो यह बिलकुल ठीक है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपने 'बुलेटिन'में "मनको शिक्षा देनेकी" बात कही है, उसका अर्थ यह है कि व्यक्ति इसीलिये अपने-आपको शिक्षित करता है, भगवान्‌के लिये ही वह जीवन धारण करता है, और अध्ययन भी करता है। तो क्या वह भगवान्‌के लिये किया गया कार्य नहीं है?

हां, हां, हां। यदि इस उद्देश्यसे किया जाय तो यह बहुत अच्छा है। किंतु उसका उद्देश्य यही होना चाहिये। उदाहरणार्थ, जब व्यक्ति जीवनके गहन नियमोंको समझना चाहता है, भगवान्‌द्वारा भेजे गये किसी भी संदेशको ग्रहण करनेकी सामर्थ्य प्राप्त करना चाहता है, यदि वह अभिव्यक्तिके गुप्त रहस्योंमें प्रवेश पाना चाहता है तो इस सबके लिये एक विकसित मनकी आवश्यकता होती है; अतएव व्यक्ति इसी संकल्पके साथ अध्ययन करता है। किंतु तब उसे अध्ययनके लिये चुनाव करनेकी आवश्यकता नहीं पड़ती, क्योंकि तब कोई भी वस्तु, जीवनकी एक छोटी-सी परिस्थिति भी शिक्षक बन जाती है, वह तुम्हें कुछ-न-कुछ सिखा सकती है, वह सोचना और कार्य करना भी सिखाती है। (बल्कि मैंने शायद ठीक यही कहा भी था), एक अज्ञानी बालकके विचार भी तुम्हें एक ऐसी वस्तुको समझनेमें सहायता दे सकते हैं जिसे तुम पहले नहीं समझे थे। तुम्हारी वृत्ति तब इतनी भिन्न होती है कि वह सदा किसी खोजकी, प्रगतिके अवसरकी, किसी गलत चेष्टाके शोधनकी, एक पग आगे बढ़नेकी प्रतीक्षामें रहती है। वह एक तरहसे ऐसे चुम्बकका कार्य करती है जो चारों ओरसे प्रगतिके अवसरको अपनी ओर खींच लेती है। छोटी-से-छोटी वस्तु भी तुम्हें प्रगतिके मार्गपर चला सकती है। चूंकि तुम्हारे अंदर प्रगति करनेकी चेतना और संकल्प होते हैं, प्रत्येक वस्तु तुम्हारे लिये विकास करनेका साधन बन जाती है और फिर तुम विकास करनेकी इस चेतना और संकल्पको सब वस्तुओंपर प्रक्षिप्त कर सकते हो।

और यह तुम्हारे लिये ही नहीं, उन सब लोगोंके लिये भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लाभकारी है जो तुम्हारे इर्द-गिर्द हैं और तुमसे संबंध रखते हैं।

अब हम स्कूलकी कक्षाका प्रश्न लेते हैं। जैसे केवल एक अनुशासित, आज्ञा न माननेवाला और दुर्भावना रखनेवाला बच्चा सारी कक्षाको अस्तव्यस्त कर सकता है—और इसलिये कभी-कभी उसे कक्षासे बाहर निकालना पड़ता है, क्योंकि कक्षामें उसकी उपस्थिति ही कक्षाको पूरी तरहसे अव्यवस्थित करनेके लिये काफी है—इसी प्रकार यदि किसी विद्यार्थीकी वृत्ति बिलकुल ठीक हो, उसमें सब कुछ सीखनेकी संकल्प शक्ति हो, तो बिना एक शब्द बोले या कोई संकेत दिये भी वह उसके लिये सीखनेका अवसर बन जाती है—कक्षामें ऐसे बालककी उपस्थिति उससे उल्टा प्रभाव उत्पन्न कर सकती है; और पूरी कक्षाको शिक्षाके क्षेत्रमें ऊंचा उठा सकती है। यदि वह चेतन रूपसे सीखने और ठीक रास्तेपर चलनेकी तीव्र अभीप्सा रखता है तो उसका प्रभाव दूसरोंपर भी पड़ सकता है...। यह सच है कि आजकल जो वस्तुस्थिति है उसमें बुरा उदाहरण अच्छे उदाहरणसे अधिक संक्रामक होता है। बुरे उदाहरणका अनुसरण व्यक्ति सरलतासे कर लेता है, अच्छेका उतना नहीं। किंतु अच्छा उदाहरण भी उपयोगी तो होता ही है, जब कक्षामें एक सच्चा विद्यार्थी केवल इसीलिये हो कि वह कुछ सीखना चाहता है, और इसके लिये वह प्रयत्न भी करता है, सीखनेके प्रत्येक अवसरमें गहरी रुचि लेता है—तो यह बात एक ठोस वायुमंडल पैदा कर देती है।

तुम यह सहायता पहुंचा सकते हो।

मां, यह कार्य करनेमें कई लोग अपनी सनकोंकी संतुष्टिके लिये बहुत-सा पैसा नष्ट कर देते हैं, ऐसा क्यों होता है?

केवल पैसा ही नष्ट नहीं होता!

ऊर्जा, चेतना हजार दर्जे अधिक, प्रत्युत **असीम** रूपमें नष्ट होती है। यदि यह अपव्यय न होता... तो मेरे विचारमें यहां आश्रम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही न होता! एक सेकंड भी ऐसा नहीं जाता, जब यह अपव्यय नहीं होता। कभी-कभी तो अवस्था इससे भी बुरी होती है। यहां लोगोंको एक ऐसी आदत पड़ गयी है—मैं आशा करती हूं कि वह चेतन नहीं है;—कि व्यक्ति अधिक-से-अधिक 'चेतना', 'ऊर्जा' ग्रहण-कर लेता है और फिर उसे व्यक्तिगत संतुष्टियोंके लिये प्रयुक्त करता है; ऐसा वस्तुतः प्रति मिनट हो रहा है। यदि यह समस्त ऊर्जा, समस्त चेतना जो लगातार तुमपर उंडेली जा रही है, सच्चे उद्देश्यके लिये, भागवत कार्यकी तैयारीके लिये प्रयुक्त की जाती तो हम मार्गपर बहुत आगे बढ़ गये होते, उससे कहीं अधिक आगे जहां अब हैं। किंतु प्रत्येक व्यक्ति थोड़े-बहुत चेतन रूपमें, सहज प्रेरणा-वश तो अवश्य ही इतनी चेतना और शक्ति आत्मसात् कर लेता है जितनी कर सकता है और ज्यों ही वह इस ऊर्जाको अपने अंदर अनुभव करने लगता है, वह उसे अपने व्यक्तिगत कार्योंमें अपनी संतुष्टियोंके लिये खर्च कर लेता है।

यह कौन सोचता है कि सारी शक्ति जो यहां है, धन-शक्तिसे अधिक बड़ी एवं मूल्यवान् है; जो शक्ति चेतन और सतत रूपमें निरंतर इतने धैर्यके साथ दी जा रही है केवल एक उद्देश्यके लिये —अर्थात्, भागवत कार्यकी पूर्तिके लिये—उसे व्यर्थमें न खर्च किया जाय,—ऐसा कौन सोचता है? यह कौन समझता है कि विकास करना, वस्तुओंको और अधिक अच्छी तरह समझने और जीवनको अच्छी तरह जीनेके लिये तैयारी करना व्यक्तिका पवित्र कर्तव्य है? कारण, व्यक्ति भागवत शक्तिके सहारे, भागवत चेतनाके सहारे जीता है और फिर अपने व्यक्तिगत स्वार्थमय उद्देश्योंकी पूर्तिके लिये उसे खर्च करता है।

जब कुछ हजार रुपये खर्च हो जाते हैं तो तुम्हें धक्का लगता है, पर तब नहीं जब . . . चेतना और शक्तिकी अजस्र धाराएं अपने सच्चे उद्देश्यसे विमुख कर दी जाती हैं!

यदि व्यक्ति पृथ्वीपर कोई भागवत कार्य करना चाहता है तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसके पास मनों धैर्य और सहनशक्ति होनी चाहिये, व्यक्तिको शाश्वततामें रहना सीखना चाहिये और प्रत्येक व्यक्तिकी चेतनाके उदय होनेकी प्रतीक्षा करनी चाहिये––सच्ची ईमानदारी क्या है इस विषयकी चेतनाकी।

९ जून, १९५४

(वर्षाके कारण कक्षा व्यायामशालामें हुई थी।)

माताजी "योगके तत्त्व"का ग्यारहवां अध्याय "रूपांतर" पढ़ती हैं जिसके अंतमें आता है:

"प्र०––जब कोई साधक आध्यात्मिक सत्यके प्रतीकवाला स्वप्न देखता है तो क्या इसका यह अर्थ नहीं होता कि उसकी प्रकृतिका रूपांतर हो रहा है?

उ०––आवश्यक नहीं है। इससे यह पता चलता है कि वह साधारण लोगोंकी अपेक्षा ज्यादा सचेतन है, लेकिन स्वप्न प्रकृतिका रूपांतर नहीं करते।"

अगर तुम कोई पुस्तक पढ़ो तो वह तुम्हें अपना रूपांतर करनेमें सहायता देगी, लेकिन पुस्तक रूपांतर नहीं करेगी। स्वप्न एक संकेत है। वह तुम्हें, तुम्हारे अंदर जो कुछ हो रहा है उसका ठीक-ठीक चित्र देता है, तुम्हारी आंतरिक अवस्था और तुम्हारे चारों ओरकी अवस्थाका। इन संकेतोंसे तुम वह कर सकते हो जो तुम्हारे रूपांतरके लिये जरूरी है। लेकिन स्वयं स्वप्न तुम्हारा रूपांतर न करेगा।

अब . . . व्यक्ति हमेशा एक ही बात कहता है . . .। उसकी कथनी और करनीमें अंतर होता है। मैं यह वाक्य तुम्हारे आगे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सौ बार पढ़ सकती हूं: इसमें कुछ वाक्य हैं, तुम जानते होगे ... मैं तुमसे यह बात बहुत बार कह चुकी हूं, बहुत बार, बहुत बार और वे (श्रीअरविंद) इसे इतने स्पष्ट रूपसे कहते हैं, कहते हैं न? ये चीजें क्या हैं? (माताजी इन वाक्योंको खोजनेके लिये पन्ने पलटती हैं) मैं उन्हें तुम्हारे आगे दोहराऊंगी, मैं उन्हें तुम्हारे आगे सैकड़ों बार दोहराऊंगी, लेकिन जबतक तुम यह निश्चय न कर लो (अचानक ध्वन्यांकन यंत्रसे चटकनेकी आवाज आती है, माताजी हंसती हैं और कहती हैं): हम ही बिजलियां पैदा कर रहे हैं! (हंसी) ओह! यह कहां है? (एक बालकसे) तुम्हें मालूम है? (माताजी पृष्ठ पलटती जाती हैं और वाक्यको पाकर उसे फिरसे पढ़ती हैं) यह रहा! ...

"मन अपने ही विचारोंसे चिपटा हुआ!" देखो! मैंने यह बात कितनी बार कही है! ... "प्राण अपनी ही इच्छाओंको पसंद करता हुआ"! और तब मन प्राणका साथी बन जाता है और इच्छाओंको बनाये रखनेके लिये प्रशंसनीय तर्क, व्याख्या और औचित्य प्रतिपादित करता है। ये चीजें उसके लिये बहुत उपयोगी हैं। मैंने लोगोंको यह कहते सुना है कि इच्छाओंकी पूर्ति ही उनसे पिंड छुड़ानेका सबसे अच्छा तरीका है। वह इसका एक सिद्धांत बना लेते हैं। तुम अपनी इच्छाओंको तुष्ट करते चलो और तब स्वभावतः दूसरी आ जाती हैं—हां, इच्छाएं एक-दूसरेका स्थान बड़ी आसानीसे लेती रहती हैं और तुम इच्छाओंकी तुष्टिमें लग जाते हो और यह सोचते हो कि तुम उनसे पिंड छुड़ा रहे हो। इसमें तुम्हें कम-से-कम सौ जीवन तो लग ही जायेंगे।

और फिर, अंतमें, आदतें! ... यहां एक बड़ा सुन्दर-सा वाक्य है जो मुझे पसंद आया—जिसमें श्रीअरविंदसे पूछा गया है: "शरीर अपनी आदतोंसे चिपटा रहे का क्या अर्थ है? शरीरकी वे कौन-सी आदतें हैं जिन्हें उसे निकाल फेंकना चाहिये?" यह है वह घिनौनी भयंकर पसंद उस भोजनके लिये जिसे तुम बहुत छोटी अवस्थामें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खाया करते थे, जिसे तुम उस देशमें खाया करते थे जहां तुमने जन्म लिया था और जिसके बारेमें तुम्हें ऐसा लगता है कि वह न मिले तो खाने लायक कुछ है ही नहीं, तुम अपने-आपको दुःखी और दयनीय मानने लगते हो!

पता नहीं, मेरा ख्याल है कि यहां एक दर्जन आदमी भी ऐसे न होंगे जिन्होंने आश्रममें आकर यह कहे बिना आश्रमका भोजन खाया हो: "ओह! यह बहुत कठिन है, मुझे इस भोजनकी आदत नहीं, बहुत कठिन है!" और कितने लोग, कितने सैंकड़ों लोग अपना-अपना खाना पकाते हैं क्योंकि वे आश्रमका खाना खा नहीं सकते! (माताजी पुस्तक स्टूलपर पटक देती हैं और बोलना जारी रखती हैं) और फिर वे इसे न्यायोचित ठहराते हैं! यहींपर वे विचार आने लगते हैं: "मेरा स्वास्थ्य! मैं इसे हजम नहीं कर पाता!" यह सब उनके सिरमें ही होता है। इसमें सत्यका एक शब्द भी नहीं होता। **इसमें एक शब्द भी सच्चा नहीं है।** यह एक निरंतर असत्य है जिसमें हर एक निवास करता है। और वस्तुतः मैं तुम्हें बता सकती हूं कि मैं क्या सोचती हूं। तुम जन-साधारणकी भीड़से जरा भी आगे नहीं बढ़े हो!

मैं उन लोगोंको अपवाद-रूप रखती हूं जो ऐसे नहीं हैं—वे बहुत, बहुत, बहुत ही विरल हैं। उन्हें उंगलियोंपर गिना जा सकता है। और सब-के-सब, सब, सभी इसे न्यायसंगत ठहराते हैं: "मेरे बेचारे बच्चे! उन्हें ऐसा भोजन खानेकी आदत न थी। वे कैसे काम चलायेंगे? वे भोजनके इस परिवर्तनके कारण मर जायेंगे!" वास्तवमें, मैं उन्हें इसका एक इलाज बता सकती हूं। जहाजमें बैठो या रेल पकड़ो और दुनियाके चारों ओर कई चक्कर लगाओ। तुम हर देशमें उस देशका भोजन खानेके लिये बाधित होते हो और ऐसा कई बार कर लेनेके बाद तुम अपनी मूर्खता समझ जाओगे!... यह मूर्खता है! भयानक तमस्! तुम पेटकी आदतोंसे इस तरह बंधे होते हो! (माताजी हाथोंकी कुछ गति करती हैं)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अक्तूबर १९८८

अब मेरे मनमें जो बात थी वह कह ली ! तुम प्रश्न पूछ सकते हो।

(मौन)

कोई प्रश्न नहीं है ?

माताजी, आपने "प्रार्थना और ध्यान"में कहा है कि जो होना होगा वह होगा। तो फिर हम निजी प्रयास क्यों करें ?

जो होना होगा, होगा। तुम जानते हो मेरा मतलब क्या था . . . यह कि संसारके आरंभसे ऐसी भविष्यवाणियां होती आयी हैं कि एक नयी धरती और नयी मानवजाति आयेगी और भगवान् धरतीपर अभिव्यक्त होंगे। तो मैं कहती हूं, जो होना है वह अवश्य होगा; जिस चीजकी भविष्यवाणी की गयी है वह उपलब्ध होगी। तो बात यूं है, यही बात है। यह कोई छोटी-मोटी बिलकुल व्यावहारिक व्याख्या नहीं है, बिल्कुल नहीं !

(कुछ देर मौनके बाद) किसीको कुछ नहीं पूछना ? मैंने एक ही बारमें सब प्रश्नोंको समाप्त कर दिया ! (हंसी)

मधुर मां, जिन लोगोंने यह भविष्यवाणी की थी, क्या वे . . .

वे वही लोग हैं जो उसे चरितार्थ करेंगे, मेरे बच्चे ! जिन्होंने यह भविष्यवाणी की थी वे ही उसे चरितार्थ करेंगे, वे शताब्दियोंसे उसके लिये काम करते आ रहे हैं। हां तो ?

लेकिन, मैं कहना चाहता था क्या उन्हें भी वही दृष्टि प्राप्त थी जो श्रीअरविंदको प्राप्त है ? अतिमानस ?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैंने जो कहा है उसे तुम समझ गये होते तो यह प्रश्न न पूछते! बस? हम यहां सुरक्षित हैं, वर्षा नहीं हो रही, आरामकी जगह है। क्या यह तुम्हारे अंदर कुछ और जाननेकी इच्छा नहीं जगाती? क्यों? या तुम फिरसे दो टूक जवाब पानेसे डरते हो? (हंसी)

चैत्य पुरुषका क्या काम है?

चैत्य पुरुषका क्या काम है? तुम चाहते हो कि उसके पास कुछ काम हो? तुम ठीक-ठीक क्या कहना चाहते हो? उसकी क्या भूमिका है? ओह! बहुत अच्छा। हम इस तरह कह सकते हैं कि वह बिजलीके तारकी तरह है जो जेनेरेटरको बत्तीके साथ जोड़ता है। अगर कोई कुछ समझा हो तो यह बताये कि मैंने क्या कहा!

जेनरेटर कौन-सा है और बत्ती कौन-सी है? (हंसी)

लो यह रहे! तो जेनेरेटर कौन-सा है और बत्ती कौन-सी? ठीक यही तो बात है। जेनेरेटर क्या है, और बत्ती क्या है? या यूं कहें कौन जेनेरेटर है और कौन बत्ती?

भगवान् जेनरेटर हैं और शरीर बत्ती।

यह शरीर है, यह दृश्य सत्ता है।

तो यही उसका व्यापार है। इसका अर्थ यह है कि अगर जड़-तत्त्वमें चैत्य न होता तो वह भगवान्‌के साथ सीधा संपर्क न जोड़ पाता। सौभाग्यवश, जड़में इस चैत्य उपस्थितिके कारण ही जड़ और भगवान्‌में सीधा संपर्क हो सकता है और सभी मनुष्योंसे कहा जा सकता है: "तुम भगवान्‌को अपने अंदर लिये हुए हो, तुम्हें बस अपने अंदर प्रवेश करना है और तुम उन्हें पा जाओगे।" यह मनुष्यों-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के लिये, वल्कि धरतीके वासियोंके लिये बहुत ही विशेष बात है। मनुष्यके अंदर चैत्य ज्यादा सचेत हो उठता है, ज्यादा सुगठित और ज्यादा सचेतन और स्वतंत्र भी होता है। वह मनुष्योंमें ही व्यक्तित्व लाभ करता है। लेकिन यह धरतीकी विशेषता है। यह अधिकतर-निश्चेतन और अंधकारमय जड़-तत्त्वके साथ सीधा, विशेष और मुक्ति-दायक मेल है, ताकि वह फिरसे क्रमशः भागवत चेतना, भागवत सत्ता और अंतमें स्वयं भगवान्की ओर खुल सके। चैत्य पुरुषकी उपस्थिति ही मनुष्यको एक असाधारण सत्ता बना देती है—मैं उससे यह बात बहुत ज्यादा नहीं कहना चाहती, क्योंकि वैसे ही वह अपने बारेमें बहुत कुछ सोचता है; उसकी अपने बारेमें इतनी ऊंची राय है कि उसे प्रोत्साहन देनेकी जरूरत नहीं! फिर भी, यह एक तथ्य है—यहांतक कि विश्वके अन्य लोकोंकी ऐसी सत्ताएं भी हैं जिन्हें लोग अर्ध-देव या देवता कहते हैं, उदाहरणके लिये, जिसे श्रीअरविंद अधिमानस कहते हैं, वे भी धरतीपर भौतिक शरीर धारण करनेके लिये बहुत उत्सुक रहते हैं, ताकि चैत्यका अनुभव कर सकें। उनके अंदर चैत्य नहीं होता। निश्चय ही, इन सत्ताओं-में ऐसे बहुत-से गुण होते हैं जो मनुष्यमें नहीं होते, लेकिन उनके अंदर इस दिव्य सत्ताका अभाव होता है जो बहुत अपवाद रूप और विशेष है और एक ऐसा तथ्य है जो धरतीके सिवाय और कहीं नहीं है। इन सब उच्चतर लोकोंके वासियोंमें—उच्चतर मन, अधिमन तथा अन्य लोकोंके वासियोंमें चैत्य सत्ता नहीं होती। हां, प्राण जगत्की सत्ताओंमें भी चैत्य नहीं होता, लेकिन उन्हें इसका दुःख नहीं है, उन्हें उसकी चाह भी नहीं होती। उनमें केवल बहुत ही विरल सत्ताएं, जो अपवादरूप होती हैं, जो परिवर्तित होना चाहती हैं, वे देर लगाये बिना झट भौतिक शरीर धारण कर लेती हैं। वरना दूसरोंको इसकी चाह नहीं होती। यह चैत्य सत्ता उन्हें बांधती है और एक ऐसे शासनके अधीन कर देती है जिसे वे नहीं चाहतीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेकिन यह एक तथ्य है और मुझे यह कहना पड़ता है कि यह ऐसा है कि मनुष्यका यह एक अपवादिक गुण है कि उसके अंदर चैत्य सत्ता होती है; लेकिन सच पूछा जाय तो वह उससे बहुत लाभ नहीं उठाता। वह इसके साथ जैसा व्यवहार करता है उससे ऐसा नहीं लगता कि वह इस गुणको बहुत, बहुत वांछनीय मानता हो। ठीक ऐसा ही! वह इसकी अपेक्षा मनके विचारों, प्राणकी इच्छाओं और शरीरकी आदतोंको ज्यादा पसंद करता है।

पता नहीं तुममेंसे कितनोंने 'बाइबल' पढ़ी है। वह पढ़नेमें बहुत रोचक नहीं है और इसके अतिरिक्त वह बहुत लंबी है। फिर भी 'बाइबल'में एक कहानी है जिसे मैंने हमेशा बहुत पसंद किया है। दो भाई थे। अगर मैं भूल नहीं कर रही तो—इसाओ और जैकब। हां, तो इसाओ बहुत भूखा था। बहरहाल, यही कहानी है, है न?—मेरा ख्याल है कि वह शिकारी या ऐसा ही कुछ था। हां, तो कहानी आगे चलती है। वह बहुत भूखा घर लौटा। उसने जैकबसे कहा: "मैं बहुत भूखा हूं।" वह इतना भूखा था कि उसने कहा: "सुनो, यदि तुम अपना यह शोरबा दे दो (जैकब कोई स्टू बना रहा था), यदि मुझे अपना शोरबेका बरतन दे दो तो मैं तुम्हें अपना जन्माधिकार दे दूंगा।" तुम जानते हो, व्यक्ति इस कहानीको बिलकुल ऊपरी अर्थोंमें ले सकता है, लेकिन इसका एक बहुत गंभीर अर्थ है। जन्माधिकार, यह है भगवान्का बेटा होनेका अधिकार। तो वह खानेके बदले यह दिव्य अधिकार दे देनेके लिये बिलकुल तैयार था क्योंकि वह किसी ठोस, भौतिक चीजके लिये भूखा था। यह एक बहुत पुरानी कहानी है, पर है चिरंतन सत्य।

कुछ और पूछो।

मां, आश्रम लंबे समयसे चला आ रहा है और आप कहती हैं कि जिन लोगोंने कुछ किया हो वे उंगलियोंपर गिने जा सकते हैं...।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं, नहीं, मैंने यह नहीं कहा (हंसी)। मैं सिर्फ भोजनकी बात कर रही थी। मैं उनकी बात कह रही थी जो यहां आये और जिन्होंने शुरू नहीं किया, समझे, जिन्होंने . . . कहानी बहुत मनोरंजक है। ऐसे लोग हैं जो सद्भावनासे भरे हुए हैं—इसके अतिरिक्त, मेरा ख्याल है, मैंने 'बुलेटिन' में कहीं लिखा है—उनकी सद्भावना इतनी उमड़ती हुई होती है कि उन्हें हर चीज, भोजन भी, पूर्ण मालूम होता है। जबतक वे अपनी चैत्य चेतनामें रहते हैं उन्हें हर चीज बहुत अच्छी लगती है। जब वह उतरने लगती है तो पुरानी आदतें उभरनी शुरू होती हैं, समझ रहे हो, जब चैत्य चेतना नीचे उतरती है तो पुरानी आदतें अपने स्थानपर वापिस चढ़ जाती हैं और तब वे कहना शुरू करती हैं: "अजीब बात है! मुझे यह चीज पसंद थी पर अब पसंद नहीं है। यह खाना बिगड़ गया है।" यह बीचका काल है और फिर, कुछ समय बाद, अपने स्वभावके अनुसार थोड़ा-बहुत लजाते हुए वे कहते हैं (माताजी फुसफुसाकर कहती हैं): "क्या मैं अपना निजी भोजन नहीं पा सकता? क्योंकि . . . पता नहीं, मेरा पेट हजम नहीं कर रहा।" (हंसी) हां, मैं कहती हूं कि आश्रमके लोगोंमें, मुझे पक्का विश्वास नहीं है, लेकिन ऐसे लोग बहुत, बहुत कम हैं जिन्होंने यह नहीं किया, और ऐसे जिन्होंने अपने-आपसे कहा हो: "ओह! मेरे लिये सब समान है। मुझे जो मिलता है वही खा लेता हूं। मैं इसकी परवाह नहीं करता।" ऐसे लोग सचमुच उंगलियोंपर गिने जा सकते हैं।

तुम्हें चीजको बहुत स्पष्टताके साथ देखना चाहिये, समझे, कुछ ऐसे हैं जो कहनेकी हिम्मत नहीं करते, बहुत-से ऐसे हैं जिनमें कुछ कहनेकी हिम्मत नहीं होती। जबतक कि वह कुछ अस्वस्थ न हो जायें या सचमुच उनके पेटमें दर्द न हो या वे यह न सोचें कि उनके पेटमें दर्द है और डाक्टरके पास न जायें। और डाक्टर उनसे कहता है: "यह या वह लेकर देखो"—ठीक वैसी चीजें जिन्हें खानेके वे अभ्यस्त थे। डाक्टर उनसे पूछना शुरू करता है: "तुम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहले क्या खाया करते थे?" (हंसी) "तुम यह खानेके अभ्यस्त थे न?" (हंसी) इस तरह। तब स्वभावतः वे तुरंत कहते हैं: "हां, हां, हां, शायद इससे मुझे लाभ होगा!" (हंसी)

तो अब! (माताजी प्रश्न करनेवाले बच्चेकी ओर देखती हैं)

मेरा मतलब है, क्या सब प्रयास बेकार हैं?

मेरे बच्चे, मैं आशा करती हूं ऐसा नहीं है! भोजनका प्रश्न केवल एक प्रश्न है। मैं यह नहीं कह सकती कि यह गौण है क्योंकि यह बहुत लाक्षणिक है—यह बिलकुल, इसका संबंध अत्यंत भौतिक चेतनासे है और उस दृष्टिसे यह भौतिक स्थितिको बहुत भली-भांति प्रकट करता है। लेकिन सचमुच यह बेचारा शरीर! तुम्हें उसके साथ थोड़ा धीरज रखना चाहिये। शरीर मुझे निरुत्साहित नहीं करता—यदि मुझे निरुत्साहित किया जा सकता हो—यह तो प्राण है! ओह, वास्तवमें अपने साथी मनके साथ, ये दोनों पाजी मिल-कर, एक-दूसरेका सहारा लेते हुए, बहाने बनाते हुए और तुम्हारे सामने तुम्हारी कठिनाइयोंका ऐसा बढ़िया चित्र बनाते हुए कि उनकी बात न्यायोचित ठहरे—वह सचमुच भयंकर है! इसी दृष्टिसे श्रीअरविंदने एक छोटा-सा नियम लिखा था जो कुछ समयतक हमारे यहां सब जगह लगा रहा करता था। मेरा ख्याल है कि अब वह गायब हो गया है या लोग उसके इतने अभ्यस्त हो गये हैं कि अब उसकी ओर देखतेतक नहीं। वह था: "ऐसे व्यवहार करो मानों माताजी हमेशा तुम्हें देख रही हों", और श्रीअरविंदने लिखा: "क्योंकि वे, वास्तवमें, हमेशा उपस्थित हैं।" फिर भी यह भौतिक आंखें... "नहीं, नहीं, नहीं, वे नहीं हैं", इसलिये पहली सहजवृत्ति होती है चीजोंको छिपानेकी। न केवल व्यक्ति वह सब करता है जो वह मेरे आगे न करेगा, साथ ही चूंकि वह श्रीअरविंदके वाक्यके दूसरे अंशपर बिलकुल विश्वास नहीं करता, यानी मैं भले

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भौतिक रूपसे उपस्थित न रहूं, फिर भी शायद मैं वस्तुस्थितिको जानती हूं। इस तरह पहली सहजवृत्ति है छिपानेकी और जैसे ही कोई उस मार्गपर बढ़ता है कि वह चोर-बालूमें धंसनेके जैसा हो जाता है। वह नीचे, नीचे, नीचे धंसता जाता है। वह तुम्हें पकड़कर निगल जाती है। वह तुम्हें इस तरह नीचे घसीटती है कि उसमेंसे बाहर निकलना कठिन हो जाता है। चीजोंमें सबसे बुरी चीज है: "बशर्ते कि माताजी न जान पायं!" तो चीज इस तरह शुरू होती है और यही अंत है...। हां, मैं आशा करती हूं कि तुममेंसे बहुत अधिक लोग ऐसे नहीं हैं जो झूठ बोलते हों, फिर भी, सामान्यत: मोड़का अंत यहीं होता है! तो, तुम समझ रहे हो न, यह ऐसी मूर्खताओंमेंसे है जिनका जवाब नहीं—मैं तुमसे कुछ कहनेवाली हूं—क्योंकि मैं तुमसे दंड-मुक्तिके भावके साथ कह सकती हूं, अगर तुम न भी चाहो कि हो, तो भी यह जरूर होगा!

लोग सवेरे आशीर्वादके लिये आते हैं या, तुम जानते हो, जब रातको मैं निरीक्षणके लिये जाती हूं, मैं सब जगह चक्कर लगाती हूं। हर एक व्यक्तिके पास जाती हूं। दोनों हालतोंमें, सवेरे भी जब वे फूल लेने आते हैं, मैं बस उनपर एक नजर डालती हूं। उनके सिरोंके चारों ओर कुछ होता है, कभी-कभी तो वह इतना स्पष्ट होता है मानों वे कह रहे हों: "यह बात तो, वास्तवमें, मैं आपसे कभी न बताऊंगा।" वे मुझसे कहते हैं: "मैं आपसे यह, और यह, और वह कभी न कहूंगा।" समझे, वे मुझे यह कहते हुए सब कुछ बता देते हैं कि वे नहीं बतायेंगे। यह कहते हुए, "मैं यह नहीं कहूंगा", वे कह देते हैं।

मां, जब हम कुछ ऐसी चीज करते हैं जिसे हम आपसे छिपाना चाहते हैं, तो जब हम आपके पास आते हैं और आप हमें देखती हैं तो ऐसा लगता है कि आप कुछ नहीं जानतीं, क्यों? (हंसी)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(माताजी हंसते हुए) ऐसा लगता है कि मैं . . . मैं, सुनती हूं, हां? मैं ऐसे सुनती हूं मानों मैं कुछ नहीं जानती। है न? यह ऐसा ही अच्छा है। कभी-कभी मैं "आह! ओह!" भी करती हूं मानों मुझे कुछ भी पता न था। हां, तो मेरे बच्चे, इस सबका कुछ और ही कारण है। मैं इसे पहले ही कई बार समझा चुकी हूं।

जब मैं लोगोंसे मिलती हूं और उनकी ओर ध्यान देती हूं, तो मैं चाहती हूं—मैं नहीं कहती कि यह सदा संभव होता है। फिर भी,—मैं उनके अंदर उनकी चैत्य सत्ताको, उनके आदर्शको, वे जो करना चाहते हैं, वे जो बनना चाहते हैं उसे देखना चाहती हूं, उसे रखनेके लिये बाहर तलपर लाती हूं। मेरा सारा काम यही है, मैं जो देखती हूं उसे हमेशा बाहर लाती हूं। अतः यह काम करते समय, उन उदाहरणोंको छोड़कर जिनमें मैं जानती हूं कि लोग अपने बारेमें थोड़े-बहुत सचेतन हैं, मुझे हमेशा लोगोंकी बाहरी चेतनाकी अवस्थाके बारेमें पूरा विश्वास नहीं होता; और जब मैं प्रश्न पूछती हूं तो मैं जो जानती हूं उसमें तथा जिसके बारेमें वे सचेतन हैं उसमें फर्क देखने के लिए पूछती हूं; और यह तो मैं हमेशा करती रहती हूं। इससे ऐसा लगता है मानों मैं नहीं जानती, है न? मैं यह जाननेके लिये पूछती हूं: "तुम्हें कैसा लग रहा है? तुम क्या सोचते हो? तुमने क्या अनुभव किया है? क्या . . . ?" तुम जानते हो, यह तुम्हारी चेतनाकी अवस्थाका स्पष्ट चित्र पानेके लिये होता है।

अपने बारेमें तुम जो जानते हो और तुम्हारे बारेमें जो मैं जानती हूं, इन दोनोंमें बहुत बड़ा फर्क होता है। मैं तुम्हारे बारेमें जो जानती हूं, वह स्पष्ट रूपमें वह है जो तुम्हें होना चाहिये। बाहरी तौरपर व्यक्ति देखता है कि लोग कैसे हैं, लेकिन यह केवल एक बाहरी घटना होती है, समझे? इन दोनोंके बीच मानसिक और प्राणिक क्षेत्र हैं और मानव दृष्टिसे ये सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण हैं, और तुम्हें जो होना चाहिये उसकी चेतना वहांपर प्रतिबिंबित होनी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहिये, ताकि तुम उसे चरितार्थ कर सको। परंतु हर व्यक्ति अपने बारेमें जो जानता है, वह जिसके बारेमें सक्रिय रूपसे सचेतन है, और जो उसकी सत्ताका सत्य है, इन दोनोंके बीच बहुत अधिक दूरी होती है। यह मेरे लिये बहुत कठिन होता है। यह बीचका क्षेत्र बहुत ज्यादा मेघाच्छन्न होता है। मेरे लिये यह मिथ्यात्वका क्षेत्र है, जिसे मैं मिथ्यात्व कहती हूं। अंगरेजीमें दो शब्द हैं "फाल्सहुड" (मिथ्यात्व) और "लाइ" (झूठ)। तो यह मिथ्यात्व-के अर्थमें है। जिस अर्थमें लोग झूठ बोलते हैं यह उस अर्थमें झूठ नहीं है। यह उसका क्षेत्र है जो सत्य नहीं है। यह वह नहीं है जो सत्ताके सत्यका अनुभव होता है, फिर भी यही वह क्षेत्र है जिसके बारेमें आदमी लगभग ऐकांतिक रूपमें सचेतन होता है। ऐसे लोग बहुत ही कम हैं जिन्हें इस बातका आंतरिक बोध होता है कि वे क्या होना चाहते हैं, वे क्या करना चाहते हैं, उनकी सत्ताका सत्य क्या है। ऐसे लोग बहुत नहीं हैं। या फिर यह बोध आता है, ढक जाता है। अचानक कौंधता है और फिर बादल छा जाते हैं। मैं जो प्रश्न पूछती हूं वे हमेशा इस तलीय चेतनाकी अवस्था जानने के लिये होते हैं। मेरे लिये यह बिलकुल वास्तविक नहीं होती, कुछ ऐसी चीज है जो सत्य नहीं है!

तुम्हारे दैनिक जीवनके पाशविक तथ्य और तुममेंसे हर एकको जो होना चाहिये उसके बारेमें मेरे आगे जो चित्र रहता है उनमें बहुत ज्यादा विरोध है। मैं अपनी चेतनाकी सारी शक्तिके साथ उस चित्रको बनाये रखती हूं ताकि तुम उसे चरितार्थ कर सको—और यही तुम्हारा अपना रूप है, यही तुम्हारा अपनापन है। वह अज्ञानभरी सत्ता, मूर्ख और कपटभरी, और कभी-कभी बेईमान सत्ता जिसे तुम अपना-आपा कहते हो, तुम नहीं हो।

सुनो, मैं साधारण मानव विचारोंके अनुसार बिल्कुल जवान नहीं हूं। मैं काफी वृद्ध हूं। बिलकुल बचपन से ही मैंने चीजोंका अवलोकन करना बंद नहीं किया। जब मैं बहुत छोटी थी तो मुझे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कभी बातें न करनेके लिये झिड़कियां मिलती थीं। मैं इसलिये न बोलती थी क्योंकि मैं अपना सारा समय अवलोकनमें बिताती थी। मैं अपना समय अवलोकनमें लगाती थी, मैं हर चीजको अंकित कर लेती थी। जो भी सीख सकूं सीखती थी। मैंने कभी सीखना बंद नहीं किया। लेकिन अब भी मुझे आश्चर्य होता है। अचानक मैं अपने-आपको ऐसी ऐंठी-मरोड़ी, कपटपूर्ण, अंधेरी गतियोंको देखते हुए पाती हूं कि मैं अपने-आपसे कहती हूं: "यह संभव नहीं है। ऐसी चीज भी है?" वास्तवमें अब भी जो चीजें मेरे आगे आती हैं उनके बारेमें अब भी मैं अपने-आपसे कहती हूं: "यह संभव नहीं है! क्या संसारमें इस तरहकी चीजें होती हैं?" और फिर भी मैंने बहुत अधिक संख्यामें लोग देखे हैं। मैंने बहुत छोटी अवस्थासे ही लोगोंको ध्यानसे देखना शुरू किया था। मैंने बहुत-से देश देखे हैं। दूसरोंको जो सलाह देती हूं उसे अपने-आप किया है। हर एक देशमें, उसे भली-भांति समझ सकनेके लिये, उस देशका जीवन जिया है। बाहरी सत्तामें मुझे सीखनेसे अधिक रुचिकर कोई और चीज नहीं लगी।

तो अब भी मुझे ऐसा लगता है कि मैं कुछ नहीं जानती। इस जगत्में और मानव चेतनामें ऐसी चीजें हो सकती हैं जो मेरी पहुंचके परे हैं! मैं नहीं समझ पाती कि यह कैसे संभव है।

जहांतक मेरा सवाल है, जब कोई इतना मुड़ा, ऐंठा हुआ हो कि उसे पहचाना भी न जा सके तो मुझे ऐसा लगता है—मुझे हमेशा ऐसा लगता है—प्रकट होनेका प्रयास करनेवाली इस चेतनाको पकड़कर पूरी तरह विकृत कर दिया गया है। और कोई इस अवस्थातक कैसे पहुंच सकता है, कोई इस बिंदुतक जा ही कैसे सकता है—यह मैं अभीतक नहीं समझ पायी।

तो यह बात है! यह तुम्हें निरुत्साहित करनेके लिये नहीं है। केवल यह बतानेके लिये है कि मैं कभी-कभी प्रश्न क्यों करती हूं। मैं किसी छोटे-से बच्चेसे भी प्रश्न पूछ सकती हूं। मुझे हमेशा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगता है कि हम कुछ सीख सकते हैं, हमेशा। हमेशा कुछ-न-कुछ और चीज बनी ही रहती है। अब भी कुछ और है। मैं सभी चीजें देखती हूं और मैंने तुम्हें बताया है कि जब और सब सोते हैं तो मैं निरीक्षणके लिये निकलती हूं। यह मेरे लिये बहुत सुविधा-जनक है, क्योंकि सोते समय आदमी वही होता है जो वह है। हां, तो मैं चारों ओर जाती हूं। मैं निरीक्षण करती हूं और सब प्रकार-की चीजें देखती हूं! तुम कल्पना भी नहीं कर सकते कि क्या-क्या देखती हूं। लेकिन हर बार जब मेरे लिये संभव होता है, मैं पूछती हूं, बहुत-से प्रश्न पूछती हूं, ताकि जो कुछ देखा है उसपर नियंत्रण रख सकूं। मैंने यह काम बरसों, बरसों, बरसों किया है। मैंने इस तरह रातोंको सचेतन रूपमें शायद १९०४ में काम करना शुरू किया था, यानी पचास वर्ष पहले और मैंने उसे बंद नहीं किया। और, अब भी, जो देखती हूं उसके बारेमें निश्चय करनेके लिये मैं हमेशा व्यावहारिक प्रश्न करती रहती हूं ताकि नियंत्रण कर सकूं, और मैं कभी नहीं जानती। (टेप रेकार्डर जोरकी आवाज करने लगता है जो माताजीका ध्यान खींचती है। वे कहती हैं: "समाप्त? वह नहीं चलना चाहता", और फिर अपनी बात आगे चलाती हैं): मुझे उस तरहका विश्वास नहीं हुआ, जैसा सामान्यत: लोगोंको होता है जब वे मानते हैं कि वे जानते हैं और यह कि उनकी भूल हो नहीं सकती और यह मानी हुई बात है।

संसार निरंतर रूपांतरमें है। अगर मैं हजार वर्षतक धरतीपर रहूं तो भी बिना रुके सीखती जाऊंगी और मुझे विश्वास है कि मैं हमेशा कोई नयी बात सीखूंगी, क्योंकि जो बात कल सत्य थी वह आज सत्य नहीं है और जो आज सत्य है वह कल सत्य न रहेगी। और आखिर, पता नहीं कि कहीं जगत्‌का यही हेतु तो नहीं है कि व्यक्ति ब्योरेवार अपने-आपको जाननेके लिये अपने-आपको वस्तु-निष्ठ रूपमें देखे। ब्योरेकी बहुत-सी बातें हैं, ये बहुत लंबे समयतक चल सकती हैं और फिर अप्रत्याशित भी होती हैं!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो यह लो, टेप पूरी हो गयी। अब हम बंद कर सकते हैं। देर हो गयी है।

शुभरात्रि।

१६ जून, १९५४

माताजी 'योगके तत्त्व' पुस्तकका बारहवां अध्याय पढ़ती हैं: "विपत्तियां और प्रगति"।

"प्र०--क्या दूसरोंके बारेमें हमारे विचारोंका चाहे वे अच्छे विचार हों या बुरे, उनपर कोई असर पड़ता है?

उ०--हां, असर होता है।

प्र०--क्या एक व्यक्तिकी कामनाएं, उसके संदेह इत्यादि दूसरेमें जा सकते हैं?

उ०--कोई भी चीज एकसे दूसरेमें जा सकती है। यह सारे संसारमें सारे समय होता रहता है।"

किसीके पास कोई प्रश्न है?

मधुर मां, जिस तरह हम और चीजोंको ग्रहण करते हैं उसी तरह भगवान्को भी ग्रहण क्यों नहीं करते?

"और चीजों"से तुम्हारा क्या मतलब है?

प्रश्न ठीक तरह नहीं किया गया है। क्या तुम कहना चाहते हो कि . . . यह जो बात चल रही है वह है उन प्रभावोंकी जो एक व्यक्तिसे दूसरेतक जाते हैं? क्या तुम्हारा मतलब इससे है? हम जितनी आसानीसे, उदाहरणके लिये, पड़ोसीकी दुर्भावनाको ग्रहण करते हैं उसी तरह भगवान्को भी क्यों नहीं करते? क्या तुम यही कहना चाहते थे?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह इसलिये, क्योंकि दोनों एक ही स्तरकी नहीं हैं। पड़ोसीकी दुर्भावना या सद्भावना एक ही स्तरकी बातें हैं जब कि भगवान् एक अलग ही जगत्के हैं। यही कारण है। अगर तुम रूपक चाहो तो यह लो: जो कुछ तुम्हारे साथ समतल रेखामें है उसे बड़ी आसानीसे ग्रहण किया जाता है। लेकिन जो सब शीर्ष-कोण, यानी, ऊपरसे आता है वह बहुत ज्यादा कठिन होता है। सबसे पहले व्यक्तिको ऊपरकी ओर ताकना चाहिये, अपने भीतर, और फिर अपने-आपको खोल देना चाहिये ताकि वह उतर सके। जब कि दूसरे तरीकेमें . . . व्यक्ति यूं ही विचरता रहता है। नहीं समझे?

और दुर्भाग्यवश, नीचे फिसल जाना, गिर पड़ना ऊपर उठनेकी अपेक्षा कहीं अधिक आसान है। जो शक्ति तुमको ऊपर उठाती है, उसको प्रत्युत्तर देनेकी अपेक्षा उस प्रभावको प्रत्युत्तर देना आसान है जो तुम्हें नीचेकी ओर खींचता है। क्या चढ़नेकी अपेक्षा उतरना ज्यादा सरल नहीं होता? यदि तुम किसी विशेष स्थानपर खड़े हो और तुमको किसी चट्टानपर चढ़ना है तो यह उस स्थितिसे कहीं अधिक कठिन है जिसमें तुम अपने-आपको नीचे उतरनेके लिये फिसलने दो, है न?

मधुर मां, जब हम भगवान्को प्राप्त कर लेते हैं तो क्या हमारे शत्रु नहीं रहते?

ओह, अवश्य! क्यों? मेरा विचार है कि बात ठीक उल्टी है।

क्या यह विरोधी शक्तियोंकी वजहसे होता है?

हां, निश्चय ही। पृथ्वी विरोधी शक्तियोंसे और उन व्यक्तियों-से भरपूर है जो इन विरोधी शक्तियोंको प्रत्युत्तर देते हैं। साधारणतः व्यक्ति जितना अधिक भगवान्को प्राप्त करता है उसके अनुपातमें उसके आस-पास शत्रुओंकी संख्या भी बढ़ती जाती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्या वे भगवान्‌के विरुद्ध क्रिया करते हैं ?

ओह, हां ! कम-से-कम वे कोशिश करते हैं। मुझे मालूम नहीं वे सफल हो पाते हैं या नहीं, लेकिन वे कोशिश तो जरूर करते हैं। वे प्रयत्न करते हैं, हमेशा प्रयत्न करते हैं, हमेशा प्रयत्न करते आये हैं।

क्यों ? भगवान्‌ने तो कभी किसीको हानि नहीं पहुंचायी।

(हंसते हुए) तुम सोचते हो कि व्यक्ति दूसरोंके विरुद्ध केवल तभी काम करता है जब उन्होंने हानि पहुंचायी हो ? सामान्यतः इसके ठीक विपरीत होता है। क्या तुम मुझे यह बता सकते हो कि बलवान् क्यों केवल दुर्बलोंके साथ ही अपनी शक्तिका उपयोग करते हैं ? यह बात नहीं है कि दुर्बलोंने उन्हें हानि पहुंचायी हो। वे ऐसा केवल इसलिये करते हैं क्योंकि उनके पास शक्ति है और वे अपने मतलबके लिये उसका प्रयोग करना चाहते हैं, और दुर्बलोंको इस शक्तिका हुकुम माननेके लिये विवश करना चाहते हैं। अतएव वे उनको मारते हैं। मौका पाते ही उनके साथ बुरा व्यवहार करते हैं। दुर्बलोंकी किसी भूलके कारण नहीं, बल्कि अपने ही मनोरथके लिये, अपनी कामनाओंकी पूर्तिके लिये वे अपनी शक्तिका उपयोग करना चाहते हैं।

उदाहरणके लिये, मान लो, विश्वमें ऐसी शक्तियां हैं जो शासन करनेकी आदी हैं, जैसे धरापर शासन करनेवाली कुछ आसुरिक शक्तियां। वे अपना अधिकार खोना नहीं चाहतीं। इसलिये जो भी व्यक्ति उनपर ऐसी शक्ति प्रक्षिप्त करता है जो उनको पीछे हटनेके लिये विवश कर सकती है, वे उसपर अपनी पूरी-पूरी शक्तिके साथ आक्रमण करती हैं। अपनी शक्तिको बनाये रखनेके लिये वे ऐसा करती हैं। लेकिन यह इसलिये नहीं, क्योंकि वे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लोग . . . मूलतः, इसलिये नहीं, इसलिये नहीं कि वे दुष्ट या दुरात्मा हैं। इसका कारण यह है कि वे जिस शक्ति और प्रकाशका प्रतिनिधित्व करती हैं वह उस शक्तिसे ठीक उल्टी है जिसका प्रतिनिधित्व अन्य शक्तियां करतीं हैं।

मधुर मां, कहा जाता है कि असुरोंमें भी भगवान्‌का अंश होता है।

स्वभावतः !

अगर ऐसा है तो जब भगवान् असुरसे लड़ते हैं तो असुरमें विद्यमान भगवान् क्या करते हैं ?

वे फिरसे भगवान्‌में समा जाते हैं। लेकिन तुम्हें यह कहानी मालूम ही है ! जैसा रामायणमें है, भगवान् उसे फिरसे अपनेमें समा लेते हैं। इस अर्थमें वह कहानी बिल्कुल सच्ची है।

असुरमें विद्यमान भगवान् अगर अपने-आपको खींच लें तो असुर विलीन हो जायगा, है न ? मेरा मतलब उस भगवान्‌से है जो असुरमें विद्यमान है।

मैं ऐसे लोगोंको जानती हूं जिन्होंने अपनी चैत्य सत्ताको निकाल दिया है और फिर भी जी रहे हैं। तर्क-संगत दृष्टिसे ऐसा प्रतीत होता है कि चैत्य पुरुषके बिना व्यक्ति मर जायगा, लेकिन फिर भी वे जीते रहते हैं। और शायद जगत्‌की इन आसुरिक शक्तियोंको विलीन करनेके लिये भगवान्‌को अंततः अपनी पूरी सृष्टिको ही अपने अंदर खींच लेना पड़ेगा क्योंकि ये आसुरिक शक्तियां सृष्टिके बिल्कुल मूलमें हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो फिर रूपांतर तबतक नहीं हो सकता जबतक कि भगवान् अपने-आपको भगवान्‌के अंदर खींच न ले।

वह क्यों, वह तो प्रलय है! वह रूपांतर नहीं, बल्कि पृथ्वीका विघटन है। कहा जाता है कि छः सृष्टियां थीं, यानी, विश्वके छः मूर्त्त रूप थे। जानते हो शास्त्रोंमें बताया गया हैं कि विश्व छः बार भगवान्‌में वापस समा चुका है। लेकिन कहते हैं कि यही अंत है। यह स्पष्ट है कि यह एक अंत तो है ही, लेकिन यह समाप्ति नहीं है। चूंकि सृष्टिमें किसी चीजका अभाव था इसलिये उसे वापिस खींच लेना और दोबारा बनाना जरूरी था। और कहा यह जाता है कि हमारी वर्तमान सृष्टि सातवीं है और सातवीं होने-के नाते यही वास्तविक है, यानी, अंतिम है। इसे फिरसे खींच नहीं लिया जायगा। यह अधिकाधिक पूर्ण होती जायगी, इसका रूपांतर होता रहेगा ताकि इसे खींच लेनेकी आवश्यकता न पड़े।

यह किस हदतक सच है?

हम लोग देख लेंगे।

लेकिन क्या सचमुच पिछली छः बार ऐसा हुआ था?

पिछली छः बार? हां, यह सच है। क्रम भी दिया गया है। वह क्रम जिसमें...। क्योंकि प्रत्येक सृष्टि अमुक गुणोंपर खड़ी की गयी है। और इन गुणोंका क्रम भी दिया गया है। मैं उन्हें जानती हूं, मैंने उन्हें कहीं लिख रखा है। लेकिन अभी वे मेरे पास नहीं हैं। इसलिये मैं तुम्हें बता नहीं सकती, मैं भूल कर बैठूंगी। लेकिन किसी दिन वह कागज ला सकती हूं जिसपर यह लिखा हुआ है। मैं सिर्फ इतना ही जानती हूं कि इस बार सृष्टि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संतुलनपर आधारित है। लेकिन एक विशेष संतुलनपर क्योंकि यह प्रगतिशील संतुलन है। हमारी वर्तमान सृष्टिका गुण गतिहीन संतुलन नहीं है। वह संतुलन है। इसलिये कहा जाता है कि इस सृष्टिमें, अगर प्रत्येक वस्तु ठीक अपने स्थानपर हो, पूर्ण संतुलन-में हो तो बस कहीं कोई अशुभ न रहेगा। अशुभ आखिर है ही क्या? वह है चीजोंका संतुलनमें न होना! ऐसी कोई चीज नहीं जो अपने-आपमें बुरी हो, केवल उसकी स्थिति गलत है, वह सच्ची स्थितिमें नहीं है।

तब असुरोंकी क्या स्थिति है?

फिरसे भगवान्‌में समा जाना। चार प्रधान असुर थे। उन चारोंमेंसे दो तो परिवर्तित हो चुके हैं। वे भागवत कार्यमें भाग ले रहे हैं। लेकिन बाकी दो अबतक अच्छी तरह डटे हुए हैं। लेकिन आखिर कबतक डटे रहेंगे? देखा जायगा। इसलिये उनके सामने चुनाव है: परिवर्तित होकर, यानी, अपनी जगह लेकर, पूर्ण समग्रतामें संतुलित रहना, अथवा विलीन हो जाना, अपने मूल-में पुनः निमग्न हो जाना।

उनमेंसे एक ऐसा है जिसने प्रायः परिवर्तित होनेकी कोशिश तो की है, लेकिन सफल नहीं हो पाया। जब उसे कोशिश करनी पड़ी तो यह उसे बहुत अप्रिय लगा। इसलिये उसने किसी और समयके लिये स्थगित कर दिया।

दूसरा तो कोशिश करनेसे भी इंकार करता है। जगत्‌में उसने अपने लिये एक बहुत, बहुत ही महत्त्वपूर्ण स्थान सुरक्षित कर लिया है, क्योंकि अनभिज्ञ लोग उसे "राष्ट्रोंका स्वामी" कहते हैं। (वास्तवमें अभी कुछ देर पहले मैं उन शक्तियोंकी बात कर रही थी जो पृथ्वीपर शासन करती हैं और अपने शासनको बिल्कुल नहीं छोड़ना चाहतीं। वे उससे पूरी तरह संतुष्ट हैं)। यह बात

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं है कि वह यह न जानता हो कि एक दिन तो उसका अंत आयगा जरूर, परंतु फिर भी वह यथासंभव उसे स्थगित करता जाता है।

लेकिन चूंकि उनके परिणाम मानवीय नहीं होते, इसलिये यह काफी लंबे अरसेतक इस तरह चला सकता है! है न? वे तबतक बने रहेंगे जबतक उन्हें धरापर कहीं कोई ऐसी मानव चेतना मिलती रहेगी जो उनके प्रभावका प्रत्युत्तर देनेके लिये तैयार हो। इससे तुम समस्याकी कल्पना कर सकते हो! और फिर, वे व्यष्टिके द्वारा नहीं बल्कि राष्ट्रोंके द्वारा अपने प्रभावको बनाये रखते हैं।

वे दो शक्तियां कौन-सी हैं जो परिवर्तित हो चुकी हैं?

क्या तुम जानते हो कि चार असुर कौन-कौनसे हैं?

नहीं, मैं नहीं जानता।

क्या तुम यह जानते हो कि इन चार असुरोंका मूल क्या है? (दूसरे बालकसे) कौन जानता है?

आपने कक्षामें एक बार बताया था।

हां, निश्चय ही! मैं ठीक इसीलिये तुमसे पूछ रही हूं, यह देखनेके लिये कि मैं जो कुछ बताती हूं वह तुम्हें याद रहता है या नहीं!

आपने कहा था कि चार दिव्य शक्तियां थीं: प्रेम, प्रकाश, सत्य और मृत्युका उल्टा।

और क्या?

(दूसरा बालक, हंसते हुए) जीवन!

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ओह!

फिर ये चार शक्तियां भगवान्‌से अलग होकर मिथ्यात्वमें परिवर्तित हो गयीं।

हां, बात कुछ-कुछ ऐसी है! हां, कुछ ऐसी ही।

प्रकाश या चेतना, आनंद या प्रेम, जीवन और सत्य।

फिर प्रकाश या चेतना अंधकार और निश्चेतनामें परिवर्तित हो गये। प्रेम या आनंद घृणा और दुःख बन गये; सत्य मिथ्यात्व बन गया और जीवन मृत्यु। हां, पहली दो... लेकिन ठीक उन्हीं स्थितियोंमें नहीं। पहली शक्ति परिवर्तित हो चुकी है और काम कर रही है, लेकिन उसने मानव शरीर धारण करनेसे साफ इंकार कर दिया है। उसका कहना है कि उसका कार्य सीमित हो जाता है। हो सकता है कि किसी दिन वह शरीर धारण कर ले, लेकिन अभी तो वह इंकार कर रही है। दूसरी शक्ति परिवर्तित हो चुकी है और अपनी ही इच्छासे विलीन हो गयी है। अपने मूलमें समा गयी है। बाकी दो अच्छी तरह डटी हैं।

मृत्युकी शक्तिने जन्म लेनेकी कोशिश की। लेकिन वह परिवर्तित न हो सकी। उसने जन्म लेनेका प्रयत्न किया। यह बहुत ही विरल है। लेकिन वह आंशिक देहधारण था, पूर्ण नहीं, पूर्ण देहधारण उनके लिये बहुत कठिन है। मानव देह बहुत छोटी होती है, और मानव चेतनाएं बहुत ही छोटी।

रही बात दूसरेकी, उसके तो अनेक निर्गत अंश हैं, जो किन्हीं मानव शरीरोंमें बहुत क्रियाशील हैं, और जिन्होंने धराके आधुनिक इतिहासमें बहुत बड़ी भूमिका निभायी है!

क्या असुर आपसमें झगड़ते नहीं?

हां, जरूर हां! जरूर! ठीक उन मनुष्योंकी तरह जो आसुरिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रभावमें होते हैं। वे आपसमें सबसे भयानक शत्रु होते हैं। हमें कहना चाहिये कि यह एक वरदान है, क्योंकि अगर उनमें समझौता होता तो चीजें कहीं अधिक कठिन हो जातीं। शायद यह इसलिये है क्योंकि जगत्‌में संतुलनके विधानका शासन है। यह उनके प्रभाव-की शक्तिको घटानेके लिये होता है। फिर भी . . .

मिथ्यात्वके स्वामीका सचमुच बहुत ही ज्यादा प्रभाव है। यह है जो तुम्हें छूतकी बीमारीकी तरह वशमें कर लेता है। उससे भी बढ़कर !

मधुर मां, क्या मिथ्यात्वने देह धारण करनेकी कोशिश नहीं की?

उसने निर्गत अंशोंको धरापर भेजा था, लेकिन मैं नहीं सोचती कि यह परिवर्तित होनेके उद्देश्यसे था। बहरहाल, वह सफल तो नहीं हुआ।

लेकिन विरोधी शक्तियोंके लिये मनुष्य आकर्षणका केंद्र क्यों है? वह तो इतना सीमित है!

हां, लेकिन साधारणतः वे एक ही व्यक्तिपर क्रिया नहीं करतीं बल्कि भौतिक वातावरणको वशमें करनेकी कोशिश करती हैं। तुम समझे? और मनुष्योंको वशमें किये बिना भौतिक वातावरणपर काबू पाना संभव नहीं है, क्योंकि मनुष्यमें ही उच्चतम भौतिक शक्ति अभिव्यक्त होती है। जहांतक परिवर्तनके लिये मानव शरीर धारण करनेकी बात है . . . उसका उत्तर काफी सरल है। क्योंकि मनुष्य-में चैत्य सत्ता होती है, और ऐसा कोई असुर नहीं जो शाश्वत काल तक इस चैत्य सत्ताके प्रभावका प्रतिरोध कर सके, चाहे वह समर्पण करनेसे भरसक इनकार क्यों न करे और अपने-आपको और जोरसे क्यों न बांध ले। ठीक वही उनके अस्तित्वका विरोध है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मधुर मां, श्रीअरविंदने कहा है कि मनुष्य मानव प्रेमसे भागवत प्रेममें जा सकता है।

वे उस मानव प्रेमकी बात कर रहे थे जो भक्तिके रूपमें, भगवान्‌के के लिये भक्तिकी एक शक्तिके रूपमें अभिव्यक्त होता है। और वे यह भी कहते हैं कि शुरू-शुरूमें भगवान्‌के प्रति तुम्हारा प्रेम मानव प्रेमके सभी लक्षणोंके साथ पूरा मानव प्रेम ही होता है। इसके अतिरिक्त उन्होंने इसका बड़ा अच्छा वर्णन किया है। लेकिन अगर तुम डटे रहो और अपेक्षित प्रयास करो तो तुम जिस वस्तुसे प्रेम करते हो उसके साथ तादात्म्यद्वारा इस मानव प्रेमको दिव्य प्रेममें परिवर्तित करना असंभव नहीं है। उन्होंने यह नहीं कहा है कि दो व्यक्तियोंके बीचका प्रेम दिव्य प्रेममें बदल सकता है। ऐसी बात बिलकुल नहीं है। उन्होंने हमेशा ठीक इसके विपरीत कहा है। उन्होंने इस व्यक्तिकी बात की है जिसने उनसे भक्तिके बारेमें पूछा था, समझे ? भगवान्‌के प्रति साधकके प्रेमके बारेमें। पहले-पहल तुम्हारा प्रेम पूर्ण रूपसे मानव होता है :—यहांतक कि वे उसे व्यापारिक अदला-बदली कहते हैं। यदि तुम प्रगति करो तो तुम्हारा प्रेम भागवत प्रेममें, सच्ची भक्तिमें परिवर्तित हो जायगा।

(क्रमशः)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Selfishness kills the soul; destroy it. But take care that your altruism does not kill the souls of others.

SRI AUROBINDO

*
**

Assam Tea Warehousing Corporation

Registered and approved Ware House

at Gauhati (Assam)

H. O. 8, Camac Street, Room No. 7

Shantiniketan Building

CALCUTTA - 700 017

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

A happy beginning
A good continuation
and no end —
an endless progression

14-5-57

New Horizon Sugar Mills (Pvt.) Ltd.

PONDICHERRY

Telegram : SAKAR
Phone : Town Office : 26780
Factory : 24423 24424

P.O. Box 29
Pondicherry
S. India

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"Live in His Being, Shine with His Light,
Act with His Power, Rejoice with His Bliss."

The Mother

With Best Compliments from:

Auroplast India Limited

Manufacturers of HDPE/PP Circular Woven Sacks

Administrative Office:

77, 'ATLANTA', NARIMAN POINT, BOMBAY-400 021

Phones: 240277, 240367 *Telex:* 011-4104 AEPL IN

Gram: AUROSACK, BOMBAY

Works:

PLOT No. G. 1/3 MIDC AREA, BOISAR,

DIST. THANE MAHARASHTRA

Phones: 682, 491, 591 *Telex::* 132-219 APPL IN

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोसायटी समाचार

८.८.८८ एक विशेष दिन था। इस संख्याका खास गुह्य अर्थ होता है—गुह्य रूपायन, दोहरी सुरक्षा और दोहरी अभिव्यक्ति। उस दिन माताजीके कमरेका विशेष दर्शन हुआ था।

पं. कार्तिक कुमारने विद्यालय-प्रागंणमें सितार बजायी।

१५ अगस्त—श्रीअरविंदका ११६ वां जन्म दिन था, उस दिन उनके कमरेके दर्शन और समाधिके चारों ओर ध्यान तथा शामको मार्च पास्टका कार्यक्रम था। श्रीअरविंदका एक संदेश बांटा गया जिसमें वे कहते हैं, "हमारे योगका सारतत्त्व और शिखर है दिव्य प्रेम, सौंदर्य और आनन्दको धरतीपर उतारना। लेकिन मैंने हमेशा यह अनुभव किया है कि जबतक उसके सहारे, उसकी नींव और उसके रक्षकके रूपमें दिव्य सत्य भी अपनी शक्तिके साथ न आये, जिसे मैं अतिमानस कहता हूं—तब तक यह असंभव है।"

८ से २१ अगस्त तक "नवीन चेतनाके लिये नवीन शिक्षा" विषयक प्रदर्शनी हुई।

पांडिचेरीकी शैक्षिक यात्रा—गुजरातके वल्लभ विद्यानगर विश्व विद्यालयने १९८७ में अपने विद्यार्थियोंकी शैक्षिक यात्राकी व्यवस्था की थी जिसमें वे आश्रमका परिचय प्राप्त कर लें। सोसायटीने उनके लिये आश्रम देखने-भालने और श्रीअरविंदकी शिक्षाका परिचय पानेकी व्यवस्था की थी। इस वर्ष भी उनके पच्चीस विद्यार्थियोंके आनेकी योजना है। इसी तरह भावनगर केंद्रने भी कुछ विद्यार्थियोंको आश्रमका परिचय देनेकी योजना बनायी थी।

सोसायटीका वार्षिक अधिवेशन १२ से १४ अगस्त तक हुआ।

सोसायटीके संयुक्त सचिव श्री गोपाल भट्टाचार्यने यूरोप और अमरीकाका भ्रमण किया और वहांके अनेक अधिवेशनोंमें भाग लिया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Registered with the Registrar of Newspapers for Ind
No. R. N. 18135/70
REGD. No. M. 87

प्रभात पोद्दारने ऊर्जा और ग्रामीण जीवसंबंधी अंतर्राष्ट्री सभामें भाग लिया।

श्रीअरविंदकी पुस्तक "वेद-रहस्य" का मराठी अनुवाद छप क तैयार हो गया है और पुणेमें उसका ग्रंथ-विमोचन हुआ। जि रस हो वे इसे 'शब्द' से खरीद सकते हैं।

अमरेली, काकिनाडा, औरंगाबाद, बीजापुर, मद्रास, कलकत्ता, न दिल्ली आदि स्थानोंसे समारोहोंके समाचार आये हैं।

घोषणाएं--२१ से २५ नवंबर १९८८ तक सोसायटीकी ना परिषद्की ओरसे "आत्म-परिपूतकी ओर" विषयक सेमिनार होगा। स मित्रों और सदस्योंको इसमें भाग लेनेका निमंत्रण है। जो आना चाह हों वे कोआर्डिनेटर वीमेन्स कौंसिल, श्रीअरविंद सोसायटी, पांडिचेरी साथ पत्र-व्यवहार करें। रहनेकी व्यवस्थाके लिये सोसायटीके ए मोडेशन सेक्शनसे पत्र-व्यवहार करें। पेशगी ५० रुपये भेजना न भूलें

मध्य प्रदेश सोसायटीके सदस्योंका वार्षिक अधिवेशन २७ से अक्तूबर तक इन्दौरमें होगा। जो इसमें भाग लेना चाहते हों डा. बी. एल. गुप्ता, श्रीअरविंद सोसायटी ३६१, एम. जी. रोड इंदौ ४५२००२ से पत्र-व्यवहार करें।

क्रियात्मक विज्ञान शोध संस्थान--यह संस्थान सौर ऊर्जा, स गृह निर्माण, पवन चक्की आदि अनेक वैज्ञानिक क्षेत्रोंमें शोध का कर रहा है। जिन लोगों या संस्थाओंको इस प्रकारके कामोंमें हो वे कोआर्डिनेटर, श्रीअरविंद इंस्टीटयूट आफ एप्लाइड साइंटिफि रिसर्च, अकादमी हाउस, १२ मारवाड़ी स्ट्रीट, पांडिचेरी-६०५००१ पत्र-व्यवहार करें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अखिल भारतीय पत्रिका

पुस्तकालय
गु० कां० विश्वविद्यालय
हरिद्वार

अग्निशिखा

नवंबर १९८८

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अग्निशिखा नवंबर १९८८ वर्ष १९, अंक ४, पूर्णांक २२०

विषय-सूची

सन्देश १

संपादकीय : . . . .शक्तिरूपेण संस्थिता अनुबेन २

दैनन्दिनी ४

'योगके तत्त्वपर' पर माताजी के साथ प्रश्नोत्तर

१६ जून १९५४ ८

२३ जून १९५४ ११

३० जून १९५४ २५

सोसायटी समाचार आ० ४

प्रिय पाठक,

आपने देखा ही होगा कि पुरोधा और अग्निशिखाकी छपाई को कुछ ज्यादा अच्छा करने की कोशिश की गयी है, अग्निशिखाका आवरण भी बदला जा रहा है। देशमें हर चीजका दाम बढ़ता जा रहा है, उसीके अनुसार कागज, छपाई आदि का खर्च भी बहुत बढ़ गया है। हम वार्षिक चन्दा नहीं बढ़ाना चाहते, इससे बहुत-से लोगों को असुविधा होगी। जो अपनी खुशीसे अधिक दे सकते हों अवश्य दें।

अपने खर्चको संतुलित करनेके लिये आजीवन सदस्यताका शुल्क ४०० की जगह ५०० (पुरोधा २७५, अग्निशिखा २२५) कर रहे हैं। कृपया नये आजीवन सदस्य बनानेके लिये प्रयास करें ताकि पत्रिकाएं चलती रहें। पुराने आजीवन सदस्य भी अगर आजके शुल्कके अनुसार अपने चन्देकी पूर्ति कर सकें तो बड़ी कृपा होगी।

—संपादक

धन्यवाद।

श्रीअरविंद सोसायटीकी मासिक पत्रिका

संपादक : रवींद्र, अनुबेन

प्रकाशक : श्रीअरविंद सोसायटी, पांडिचेरी-६०५००२

मुद्रक : अमियरंजन गांगुली, श्रीअरविंद आश्रम प्रेस, पांडिचेरी-६०५००२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उद्‌बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि

संदेश

वर्तमान कठिनाइयोंसे बाहर आनेका एकमात्र उपाय

संसारकी वर्तमान अवस्थामें, तुम जानते हो, परिस्थितियां हमेशा कष्टकर होती हैं, सारा संसार संघर्ष और विरोधकी स्थितिमें है। सत्य और प्रकाशकी शक्तियां जो अभिव्यक्त होना चाहती हैं और वे सब जो बदलना नहीं चाहते, वे सब जो भूतकालका प्रतिनिधित्व करते हैं, वे जो स्थिर हो चुके हैं, कठोर बन गये हैं, जानेसे इंकार करते हैं, इन सबमें संघर्ष और द्वंद्व चल रहा है। स्वभावतः प्रत्येक व्यक्ति अपनी कठिनाइयोंको अनुभव करता है और उसे एक जैसे अवरोधोंका सामना करना पड़ता है।

तुम्हारे लिये एक ही रास्ता है। वह है सर्वांगीण, पूर्ण और बिना शर्त आत्म-समर्पणका रास्ता। इससे मैं कहना यह चाहती हूं कि तुम्हें न केवल अपनी गतिविधियों, कार्य और महत्त्वाकांक्षाओंका परित्याग करना होगा बल्कि अपने भावोंका भी परित्याग करना होगा; इस अर्थमें कि तुम जो कुछ करो, वह कुछ भी क्यों न हो सब केवल भगवान्‌का हो। इस तरह तुम अपने-आपको आसपासकी मानव प्रतिक्रियाओंसे ऊपर अनुभव करोगे—केवल उनसे ऊपर ही

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं, बल्कि भागवत कृपाकी दीवारद्वारा सुरक्षित अनुभव करोगे। जब तुम्हारे अंदर कामनाएं न रह जायेंगी, आसक्तियां न रहेंगी, जब तुम मानव सत्ताओंसे पुरस्कार पानेकी आवश्यकताको छोड़ दोगे-यह जानकर कि एकमात्र पाने योग्य पुरस्कार परम प्रभुसे आनेवाला पुरस्कार है और वह कभी निराश नहीं करता–जब तुमने बाह्य सत्ताओं और चीजोंकी आसक्तिको छोड़ दिया हो, तो तुम अपने हृदयमें इस उपस्थिति, इस शक्ति, इस कृपाको अनुभव करोगे जो सदा तुम्हारे साथ रहती है।

कोई और उपाय नहीं है बिना अपवाद के, सभीके लिये, यही एकमात्र उपाय है। वे जो कष्ट पाते हैं, उन सबसे भी मुझे यही बात कहनी है, "सारा कष्ट इस बातका संकेत है कि तुम्हारा समर्पण संपूर्ण नहीं है।" फिर जब, इस तरह, एक धमाका हो तो यह कहने की जगह "ओह, यह बुरा है।" या "परिस्थिति कठिन है।" तुम कहोगे, "मेरा समर्पण पूर्ण नहीं हुआ।" तुम भागवत कृपाको अनुभव करोगे जो तुम्हारी सहायता करती है, पथ-प्रदर्शन करती है। फिर एक दिन तुम उस शांतिमें प्रवेश करोगे जिसे कुछ भी परेशान न कर पाएगा। सारी विपरीत शक्तियोंको, विरोधी गतिविधियोंको, आक्रमणोंको, गलतफहमियोंको, दुर्भावनाओंको, उस स्मितसे प्रत्युत्तर दोगे जो भागवत कृपामें पूर्ण विश्वास रखनेसे आता है। यही एक-मात्र उपाय है, दूसरा विकल्प है ही नहीं।

यह संसार संघर्ष, क्लेश, दुःख-दर्द, कठिनाइयों और तनावका संसार है; यह उसीसे बना है। वह बदला नहीं है, बदलनेमें उसे अभी कुछ समय लगेगा। प्रत्येकके लिये इसमेंसे निकल आनेकी संभावना है। परम कृपाकी उपस्थितिका सहारा लेकर, उसपर आश्रित रहकर ही तुम बाहर निकल सकते हो, यही बाहर निकलनेका उपाय है...

—माताजी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संपादकीय :

...शक्तिरूपेण संस्थिता

स्त्री-स्वातंत्र्य, स्त्री, पुरुषके समान अधिकार, ये नये युगके चिंतनकी मौलिक चीजें मानी जाती हैं। वास्तवमें स्त्री-स्वातंत्र्यके लिये पुकार महाभारतमें द्रौपदीके समयसे चली आ रही है। अगर इस युगमें कुछ नया है तो सदियोंसे चर्चा बनी इस समस्याका समाजद्वारा न केवल अपना अनुमोदन वल्कि स्त्रियोंको प्रोत्साहित करके इसे कार्यान्वित करना।

स्त्रियां भी नारी शक्ति, भगवतीके अंशके रूपमें अपने पूरे गौरव और शक्तिसे समाजके इस अनुमोदनको सार्थक बनाती हैं। आजकी नारीके लिये अबला शब्द असंगत प्रतीत होता है क्योंकि जब और जहां उसे अवसर दिया जाता है, वह अपने-आपको प्रचण्ड दुर्गा-शक्तिका अंश प्रमाणित करती है।

इस प्रसंगमें एक ताजी घटनाका स्मरण हो आया। महानगरी बम्बईमें किसी अच्छे परिवारकी लड़की अपने मित्रोंके साथ सिनेमाके अन्तिम शोमें गयी थी। इतनी देरसे फिल्म देखने जानेमें क्या बुद्धिमानी है यह तर्क अभिभावकोंके मनमें कौंध सकता है किंतु उसका दूसरा पक्ष भी है जिसे युवतियां प्रस्तुत करेंगी, "लड़के जा सकते हैं तो हम क्यों न जायें?" खैर, उचित था या अनुचित उसका निर्णय हर व्यक्ति अपने ढंगसे करेगा लेकिन नयी पीढ़ीको कोई रोक नहीं सकता। युवती और उसके मित्रोंने घर पहुंचनेके लिये एक टैक्सी ली और एक-एक कर उसके मित्र अपने-अपने घरपर उतर गये। जब लड़की अपने घरके सामने उतरने लगी तो ड्राइवरने चाकू दिखाकर उसे घरमें जाकर तिजोरी खोलनेका आदेश दिया। उस समय शायद रातके दो बजे होंगे। घरवाले सो रहे थे और लड़कीने ड्राइवरकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज्ञा मानकर घरका दरवाजा खोला। एक कमरेमें पहुंचकर बोली, "चाबी दूसरे कमरेमें है।" दोनों उसी तरह दूसरे कमरेमें पहुंचे। लड़की आगे-आगे और चाकू हाथमें लिये ड्राइवर पीछे-पीछे। चाबी उठाकर उसने कहा, "तिजोरी इसके पीछे है।" जैसे ही वे उस कमरेमें गये कराटे जाननेवाली उस लड़कीने ड्राइवरके पेटपर एक जोरदार लात जमायी। चारों खाने चित गिरते ही चाकू उसके हाथसे छिटककर गिर गया। बिजलीकी तेजीसे लड़कीने चाकू हाथमें उठा लिया और ड्राइवरको हुकुम दिया कि कमरेमें बने स्नानागारमें घुस जाय। मरता क्या न करता! चुपचाप चला गया, लड़कीने बाहरसे चिटकनी लगाकर पुलिसको फोन किया, अबतक घरवाले भी जग चुके थे। बेचारा ड्राइवर जानता न था कि लड़की कराटे सीख चुकी है। यह आजकी जाग्रत स्त्री-शक्तिका चित्र है जिसका स्वागत करना चाहिये। भले इसमें कई दोष क्यों न हों क्योंकि कुछ भटककर ही स्त्रियां अपनी स्वाधीनताका उपयोग करना सीखेंगी।

संसारकी प्रगतिके लिये यह आवश्यक है कि उसका पराधीन आधा अंग भी स्वाधीन हो, अपना निर्णय अपने-आप ले सके।

आज स्त्री-शक्ति, दुर्गाकी प्रचण्ड विजयिनी शक्तिके रूपमें उभर रही है। हम उसका स्वागत करते हैं।

या देवी सर्वभूतेषु शक्तिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः॥

—अनुबेन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दैनन्दिनी

नवंबर

१. तुम्हें सीखना चाहिये, सीखनेसे लगाव होना चाहिये, हमेशा सीखते रहना चाहिये, बेकार चीजोंसे संतुष्ट होकर या बेकार काम करके अपना समय नष्ट न करना चाहिये।

२. भगवान्के साथ एक होनेके दो तरीके हैं, एक है हृदयमें एकाग्र होना और इतनी गहराईमें जाना जहां उनकी उपस्थिति मिल जाय।

३. दूसरा है अपने-आपको उनकी बाहुओंमें डाल देना, छोटा बच्चा जैसे अपनी मांकी गोदसे चिपट जाता है उसी तरह वहां पूर्ण समर्पणके साथ चिपट जाना।

४. साहसी बनो और अपने बारेमें अधिक न सोचो। तुम दुःखी और असंतुष्ट इसलिये रहते हो क्योंकि तुम अपने छोटे-से अहंकारको अपनी तन्मयताका केंद्र बना लेते हो।

५. अगर तुम अपना काम पूरी सचाईके साथ, भगवान्के चरणोंमें अर्पित भेंटके रूपमें करो तो काम उतना ही लाभ पहुंचायेगा जितना ध्यान।

६. अगर तुम पूरी सचाईके साथ भागवत इच्छाको व्यक्त करनेके लिये कर्म करो तो बिना अपवादके सभी कर्म निःस्वार्थ हो सकते हैं।

७. भौतिक स्तरपर अनुशासनके बिना कुछ भी चरितार्थ करना असंभव है। अगर तुम्हारा हृदय सतत, नियमित रूपसे धड़कनेके कड़े अनुशासनके आगे न झुके तो तुम्हारा धरतीपर जिन्दा रहना संभव न होगा।
जिन लोगोंने महान् उपलब्धियां पायी हैं, वे बहुत अनुशासनमें रहनेवाले थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

८. तुम्हें शांतिको अधिकाधिक अपने अंदर बुलाना चाहिये और उसे अपने शरीरके कोषाणुओंमें प्रविष्ट होने देना चाहिये। तब अनाड़ीपनके सुझावोंका कोई असर न होगा।

९. जब तुम किसीके बारेमें कुछ अच्छी बात नहीं सोच सकते तो उसके बारेमें सोचो ही मत।

१०. कोई चीज कठिन है, इसका यह मतलब तो नहीं है कि तुम्हें उसे छोड़ देना चाहिये। इसके विपरीत, चीज जितनी कठिन हो उतना ही, उसे सफलताके साथ पूरा करनेका तुम्हारे अंदर संकल्प होना चाहिये।

११. अगर तुम डटे रहो तो निश्चय ही सफल होओगे। रही बात मेरी सहायता की, तो तुम विश्वस्त रहो, वह हमेशा तुम्हारे साथ है। तुम्हारी पुकार व्यर्थ नहीं जाती।

१२. क्षुब्ध होना तुम्हारी भूल होगी, कोई चीज मनमाने ढंगसे नहीं की जाती, चीजें तभी चरितार्थ होती हैं जब वे किसी आंतरिक सत्यकी अभिव्यक्ति हों।

१३. केवल भगवान् ही स्वस्थ कर सकते हैं। हमें केवल उन्हींकी सहायता और उन्हींका सहारा खोजना चाहिये। हमें केवल उन्हींपर सारी आशा लगानी चाहिये।

१४. तुम अपने-आपको स्थिर विश्वास से खोलो, भागवत कृपापर विश्वास रखो और तुम अपनी सभी कठिनाइयोंको पार कर जाओगे।

१५. चिन्ता न करो, बस अपने अंदर सदा चीजोंको अच्छी तरह करनेका संकल्प रखो।

१६. जैसे ही अहंकार समर्पण करता और अपनी गद्दी छोड़ता है वैसे ही भय गायब हो जाता है और उसकी जगह लेता है एक निश्चल विश्वास कि कुछ भी असंभव नहीं है।

१७. तुम्हें आशा है, यह ठीक है, आशा ही सुखद भविष्यका निर्माण करती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१८. तुम्हारे अंदर भय बिलकुल न होना चाहिये, विजय उसीकी होती है जो भयहीन है, तुम्हारा पथ-प्रदर्शन करने और तुम्हारी रक्षा करनेके लिये मैं हमेशा तुम्हारे साथ हूं।

१९. विश्वस्त रहना तथा जीवित-जाग्रत श्रद्धा रखना अच्छा है।

२०. तुम्हें डरना न चाहिये। नींदमें भी तुम्हें मेरी याद बनाये रखनी चाहिये, अगर कोई खतरा हो तो सहायताके लिये मुझे पुकारना चाहिये। तुम देखोगे कि दुःस्वप्न गायब हो जाते हैं।

२१. सचेतन सत्ता बननेका, स्वयं बननेका एक ही मार्ग है और वह है भागवत आत्माके साथ एक होना जो सबमें विद्यमान है।

२२. हमेशा सतत शुभेच्छाकी स्थितिमें रहना—इसे अपना नियम बना लो, किसी चीजसे परेशान न हो और किसीकी परेशानीका कारण न बनो, जहांतक हो सके, किसीको कष्ट न पहुंचाओ।

२३. दूसरोंके दोषोंको, उन्होंने क्या किया है और क्या नहीं किया इसे मत देखो। तुमने स्वयं जो कुछ किया है और नहीं किया है केवल उसीको देखो।

२४. चाहे चंदन हो या धूप, जूही हो या कुमुदिनी, इन सबकी सुगंधोंसे सदाचारकी सुगंध उत्तम है।

२५. धूप और चंदनमें जो सुगंध है वह अल्प मात्रा में है। परंतु सच्चरित मनुष्यसे जो गंध निकलती है, वह सर्वोत्तम होती है और देवताओंतक फैलती है।

२६. जो कुछ तुम होना चाहते हो, उसीपर पूर्ण रूपसे एकाग्र होओ और जो कुछ तुम नहीं होना चाहते उसे यथा-संभव भूल जाओ।

२७. मनुष्य स्वयं अपने प्रयाससे अपने-आपको मनुष्यसे बड़ा नहीं बना सकता लेकिन वह अपने अंदर कार्य करनेके लिये भागवत सत्य और उसकी शक्तिका आह्वान कर सकता है।

२८. हम धरतीपर प्रगति करने और अपने-आपको उत्तरोत्तर जीवनों-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में अधिक पूर्ण बनानेके लिये हैं। जो कुछ हम इस बार नहीं कर सके उसे अगली बार करेंगे और इस बार हम जो भी प्रगति कर लेंगे वह हमें सहायता देगी।

२९. मनुष्योंको जो कठिनाइयां होती हैं उनका कारण होता है, अपनी क्रियाओंपर और, दूसरोंकी क्रियाओंपर अपनी प्रतिक्रियाओंपर नियंत्रणका अभाव।

३०. तुम्हें अपने स्वभाव और अपनी दुर्बलताओंके अनुसार अपने लिये अनुशासन बनाना चाहिये जिसका तुम बिना हेर-फेरके अनुसरण कर पाओ। उदाहरणके लिये कभी झगड़ा न करो, जब कोई कुछ अप्रिय बात कहे या अप्रिय चीज करे तो कभी उत्तर न दो। जब तुम सहमत न हो तो बहस मत करो। चीजें या लोग वैसे न हों जैसे तुम चाहते हो तो कभी झल्लाओ मत।

'योगके तत्त्व'पर माताजीके साथ प्रश्नोत्तर

(गतांकसे आगे)

१६ जून १९५४

ऐसा क्यों होता है कि कभी-कभी हमें अमुक अध्यायके लिये विशेष अभिरुचि होती है? उदाहरणके लिये, सचाई या अभीप्साके अध्यायके लिये?

तुम्हारा मतलब है उसे पढ़नेकी इच्छा? शायद इसलिये कि उसमें जो लिखा है उसकी तुम्हें जरूरत है! अगर तुम्हें किसी चीजके लिये आकर्षण है तो साधारणतः उसका अर्थ यह होता है कि तुम्हें इसे पढ़नेकी आवश्यकता है। और जो चीज तुम्हें सुननी चाहिये ठीक वही तुम्हारे पास आती है। तुम इसका उपयोग विशुद्ध

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भौतिक रूपमें भी कर सकते हो, जिसके बारेमें मैंने तुम्हें बहुत बार बताया है। देखो, तुम एकाग्र होते हो—अगर तुम्हारे सामने कोई कठिनाई है या तुम सहायता पाना चाहते हो तो तुम एकाग्र होते हो और फिर पुस्तकमें एक पृष्ठ-चिह्न रखते हो। तब तुम ठीक वही चीज पाते हो जो तुम्हारी मांगका उत्तर है। यह सबसे अधिक भौतिक साधन है। लेकिन यदि मन ठीक दशामें हो तो, स्वभावतः, शीर्षक पढ़ते ही मन कह उठता है: "ओह, मैं यही पढ़ना चाहता हूं।" अंदर क्या है यह जाने बिना ही वह यह कह सकता है, क्योंकि उसे महसूस होता है कि उसके प्रश्न या आवश्यकताका उत्तर पानेके लिये यही पढ़ना चाहिये। ऐसे लोग हैं जिन्होंने प्रगति करनेकी जरा भी कोशिश नहीं की, फिर भी उनमें यह शक्ति है। कोई-न-कोई हमेशा उनको किताब देने आता है और कारण जाने बिना ही उनसे कहता है: "लो, यह किताब पढ़ो, तुमको इसमें रस आयगा।" अथवा किसी घरमें प्रवेश करते ही उन्हें मेजपर कोई किताब पड़ी दिखायी देगी—और वह ठीक वही चीज होगी जो वे पढ़ना चाहेंगे। यह काफी हदतक आंतरिक अभीप्साकी तीव्रतापर निर्भर है। अगर तुम तीव्र अभीप्साकी अवस्थामें बहुत सच्चे हो तो बस, तुम्हारे इर्द-गिर्द सारी चीजें, प्रत्यक्ष या परोक्ष रूपसे अभीप्सामें मदद करनेके लिये, सुव्यवस्थित कर दी जायेंगी, यानी, या तो तुमसे प्रगति करवानेके लिये, किसी नयी चीजके संपर्कमें लानेके लिये, या फिर तुम्हारे स्वभावमेंसे एक ऐसी चीजको उखाड़ फेंकनेके लिये मदद करेंगी जिसे विलुप्त हो जाना चाहिये। यह काफी अद्भुत है। अगर तुम सचमुच अभीप्साकी तीव्रताकी अवस्थामें होओ तो ऐसी कोई परिस्थिति नहीं जो इस अभीप्साको चरितार्थ करनेके लिये तुम्हारी सहायता करने न आये। हर एक चीज मदद करने आती है, हर एक चीज, मानों कोई ऐसी पूर्ण और निरपेक्ष चेतना विद्यमान है जो तुम्हारे चारों ओर चीजोंको संगठित कर रही है। लेकिन हो सकता है कि अपने बाह्य अज्ञानमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होनेकी वजहसे तुम उसे पहचान न पाओ, शुरू-शुरूमें दीखनेवाली परिस्थितियोंका विरोध करो, शिकायत करो, और उन्हें बदलनेकी कोशिश करो। लेकिन कुछ देर बाद, जब तुम थोड़े समझदार बन जाओ, जब उस घटनामें और तुममें कुछ दूरी हो तो तुम अनुभव करोगे कि वह ठीक वही चीज थी जो आवश्यक प्रगतिके लिये जरूरी थी। और जानते हो, वह संकल्प है परम सद्भावना जो तुम्हारे चारों ओर चीजोंको सुव्यवस्थित करती है। और तब भी जब तुम शिकायत करते हो और ग्रहण करनेके बदले विरोध करते हो, ठीक उसी वक्त वह सबसे प्रभावशाली रूपमें काम करती है।

मैंन एक छोटा वाक्य लिखा है जो 'बुलेटिन', अगले 'बुलेटिन' में आयेगा। अब मुझे ठीक शब्द तो याद नहीं, फिर भी कुछ-कुछ ऐसा है: "अगर विश्वासके साथ तुम भगवान्‌से कहो, 'मैं केवल आपको चाहता हूं', तो भगवान् सारी परिस्थितियोंको इस तरह व्यवस्थित कर देंगे कि तुम सच्चे होनेके लिये विवश हो जाओगे।" सत्तामें कोई चीज ... अभीप्सा ... और फिर व्यक्ति हर क्षण सैकड़ों फुटकर चीजें चाहता है, है न ऐसा? कभी-कभी कोई चीज आती है—साधारणत: सब कुछ अस्तव्यस्त कर देनेके लिये—वह रास्तेमें बाधा बनकर खड़ी हो जाती है और तुम्हें अपनी अभीप्साको चरितार्थ करनेसे रोकती है। हां, तो ऐसे समय भगवान् अपने-आपको प्रकट किये बिना आयेंगे, तुम उन्हें देख न पाओगे, तुम्हें कोई आभासतक न मिलेगा। और वे सब परिस्थितियोंको इस तरह सुव्यवस्थित कर देंगे कि जो कुछ तुम्हें केवल भगवान्‌का ही होनेसे रोकता है वह अनिवार्य रूपसे तुम्हारे पथसे हटा दिया जायगा। फिर जब सब कुछ हटा दिया जाता है तो तुम शिकायत करने और रोने बैठ जाते हो। फिर बादमें अगर तुम सच्चे हो और अपने ऊपर सीधी दृष्टि डाल सकते हो ... तुमने भगवान्‌से कहा है, तुमने कहा है: "मैं केवल आपको ही चाहता हूं", वे तुम्हारे पास रहेंगे, बाकी सब कुछ चला जायगा। यह सचमुच उच्चतर कृपा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

केवल तुम्हें यह पूरे विश्वासके साथ कहना चाहिये। मैं यह नहीं कह रही कि तुम्हें सर्वांगीण रूपसे कहना चाहिये, क्योंकि अगर तुम सर्वांगीण रूपसे कहो तो कार्य पूरा हो जाता है। जो चीज आवश्यक है वह यह है कि तुम्हारी सत्ताका एक अंश, वास्तवमें केन्द्रीय संकल्प विश्वासके साथ कहे: "मैं केवल आपको ही चाहता हूं", तो केवल एक बार यह कहना पर्याप्त है। उसमें कम या अधिक समय लगता है, कभी-कभी तो वर्षों लग जाते हैं, लेकिन तुम लक्ष्यतक जरूर जा पहुंचते हो।

लेकिन व्यक्तिमें तो कितनी ही प्रकारकी अपूर्णताएं होती हैं?

हां? अपूर्णताएं जितनी अधिक होंगी, उतना ही अधिक समय भी लगेगा। जितनी अधिक आसक्तियां होंगी उतना ही अधिक समय लगेगा।

लेकिन लक्ष्य सुनिश्चित है!

२३ जून, १९५४

माताजी 'योगके तत्त्व' पुस्तकमेंसे तेरहवां अध्याय पढ़ती हैं—"सेक्स-भोजन-निद्रा":

"प्र०—क्या बहुत कम आहार लेना इंद्रियोंको नियंत्रित करनेमें सहायता देता है?

उ०—नहीं, वह उनको केवल भड़का देता है—मिताहार सबसे अच्छा है। जो लोग उपवास करते हैं वे आसानीसे बहुत उत्तेजित हो जाते हैं और संतुलन खो सकते हैं।

प्र०—अगर व्यक्ति केवल निरामिष आहार ले तो क्या इससे इंद्रियोंके संयममें सहायता मिल सकती है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उ०––इससे तुम मांस खानेवालोंकी कुछ कठिनाइयोंसे बच सकते हो लेकिन अपने-आपमें यह पर्याप्त नहीं है।"

और कोई प्रश्न ?

अगर व्यक्ति मांस खाये तो क्या होता है ?

तुम एक कहानी सुनना चाहते हो ? मैं स्वीडनकी एक युवतीको जानती थी जो साधना करती थी। वह आदत और पसंद, दोनोंके अनुसार निरामिषभोजी थी। एक दिन उसे कुछ मित्रोंने निमंत्रण दिया। भोजनमें चूजा परोसा गया। वह बातका बतंगड़ न बनाना चाहती थी, उसने चुपचाप चूजा खा लिया। लेकिन बादमें, रातके समय अचानक उसने अपने-आपको एक टोकरीमें पाया, उसका सिर ढक्कनके बीच अटक गया था और उसे बहुत जोरसे झकझोरा, झकझोरा, झकझोरा जा रहा था। सचमुच उसकी अवस्था दयनीय और दुःखदायक थी। फिर उसने अपने-आपको उल्टा पाया, सिर नीचे और पैर हवामें, और उसे दोबारा झकझोरा, झकझोरा, झकझोरा जा रहा था . . . (हंसी) वह बड़ी दयनीय दशामें थी। फिर अचानक किसीने उसके शरीरमेंसे कुछ चीजें खींचकर निकालनी शुरू कीं। इससे उसे बहुत अधिक दर्द हो रहा था। कुछ देर बाद हाथमें चक्कू लिये कोई आया और उसकी गर्दन काट दी। वह जाग पड़ी। खुद उसने मुझे यह सब सुनाया था। उसने यह भी कहा कि इतना भयावह दुःस्वप्न उसने कभी नहीं देखा था। सोनेसे पहले उसने कुछ नहीं सोचा था। उस बेचारे चूजेकी चेतना उसमें पैठ गयी थी और उसने स्वप्नमें जो कुछ अनुभव किया था वह वही पीड़ा थी जो चूजेने अनुभव की थी जब उसे बाजार ले जाया गया, बेचा गया, उसके पंख निकाले गये और उसकी गर्दन काट दी गयी ! (हंसी)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यही होता है! यानी, कम या अधिक मात्रामें तुम मांसके साथ उस पशुकी थोड़ी-बहुत चेतना भी निगल जाते हो जिसे तुम खाते हो। यह बहुत गंभीर बात नहीं है, लेकिन यह हमेशा बहुत सुखद नहीं होती। और यह स्पष्ट है कि पशुसे ज्यादा मनुष्यकी तरफ होनेमें यह तुम्हारी बहुत सहायता नहीं करती! यह सुस्पष्ट है कि आदिम मानव, जो आत्माकी अपेक्षा पशुके ज्यादा नजदीक थे—ऐसा लगता है कि वे कच्चा मांस खाते थे जो पके मांसकी अपेक्षा कहीं अधिक पौष्टिक होता है। वे जानवरको मार डालते थे, उसे फाड़-कर टुकड़े-टुकड़े करके खा लेते थे। और वे बहुत शक्तिशाली होते थे। और इसी कारण उन दिनों उनकी आंतोंमें आन्त्रपुच्छका वह टुकड़ा ज्यादा बड़ा था जो उस कच्चे मांसको हजम करनेमें सहायता देता था। उसके बाद आदमीने पकाना शुरू किया। उसने देखा कि उस तरह चीजें ज्यादा स्वादिष्ट लगती हैं और उसने पका मांस खाना शुरू कर दिया। क्रमशः वह आन्त्रपुच्छ छोटा होता गया और बेकार हो गया। इसलिये अब तो वह बोझमात्र रह गया है जो कभी-कभी बीमारी पैदा करता है।

कहनेका मतलब यह कि अब शायद यह खाना छोड़कर कुछ कम पाशविक चीज लेनेका समय आ गया है! यह नितांत रूपसे प्रत्येक व्यक्तिकी चेतनाकी अवस्थापर निर्भर है। लेकिन साधारण आदमी-के लिये, जो साधारण जीवन बिताता हो, जिसके क्रिया-कलाप साधारण हों, जो अपनी रोटी कमानेके बारेमें, अपने-आपको स्वस्थ रखने और अपने कुटुम्बकी देखभाल करनेके सिवाय और किसी चीजके बारेमें न सोचता हो, उसके लिये मांस खाना हितकर है, उसके लिये कुछ भी खा लेना ठीक है, ऐसी कोई भी चीज जिससे उसे लाभ होता हो।

लेकिन यदि कोई व्यक्ति इस साधारण जीवनसे उच्चतर जीवनमें जाना चाहता हो तो समस्या मजेदार बनने लगती है! और फिर, यदि उच्चतर जीवनतक पहुंचनेके पश्चात् वह अपने-आपको रूपांतरके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिये तैयार करनेकी कोशिश करे तो वह बहुत महत्त्वपूर्ण बन जाती है। क्योंकि ऐसे आहार अवश्य हैं जो शरीरको सूक्ष्म बनानेमें मदद कर सकते हैं। ऐसे भी हैं जो उसे पशुताकी अवस्थामें रखते हैं। लेकिन यह चीज केवल उसी विशिष्ट समयपर ही बहुत महत्त्वपूर्ण बनती है, उससे पहले नहीं। और उस क्षणतक पहुंचनेसे पहले और बहुत चीजें करनी हैं। निश्चय ही, अपने शरीरको शुद्ध बनानेकी बात सोचनेसे पहले अपने मनको शुद्ध करना और अपने प्राणको शुद्ध करना अधिक अच्छा है।

क्योंकि तुम चाहे शारीरिक दृष्टिसे इस बातकी पूरी-पूरी सावधानी बरतो कि किसी ऐसी चीजको आत्मसात् न किया जाय जो शरीरको सूक्ष्म बनानेमें सहायता न देती हो, फिर भी अगर तुम्हारा मन और प्राण कामना, निश्चेतना, अंधकार और काम इत्यादिकी अवस्थामें ही रहे तो इससे कोई लाभ नहीं होगा। केवल होगा यह कि तुम्हारा शरीर दुर्बल बन जायगा, आंतरिक जीवनसे बिल्कुल विच्छिन्न, और एक दिन बीमार पड़ जायगा।

तुम्हें शुरू करना चाहिये अंदरसे। मैं तुम्हें पहले भी एक बार बता चुकी हूं। तुम्हें ऊपरसे शुरू करना चाहिये। सबसे पहले उच्चतरको शुद्ध बनाओ, फिर निचलेको शुद्ध करो। मैं यह नहीं कह रही कि तुम्हें शरीरकी सब तुच्छ चीजोंमें डूबे रहना चाहिये। नहीं, मैं तुमसे यह नहीं कह रही। यह मत समझ बैठो कि यह कामनाओंपर नियंत्रण न रखनेकी एक सलाह है! नहीं, बात ऐसी बिल्कुल नहीं है। मेरे कहनेका मतलब यह है कि अगर तुम अपने मन और प्राणमें पहलेसे ही छोटे-से देवदूत नहीं हो तो शरीरमें देवदूत बननेकी कोशिश मत करो। क्योंकि इससे शरीर साधारण ढंगसे अलग, और ही ढंगसे अस्तव्यस्त हो जायगा। लेकिन यह अधिक अच्छे ढंगका होगा। हमने उस दिन कहा था न कि सबसे महत्त्वपूर्ण चीज है संतुलनको बनाये रखना। अच्छा, तो संतुलन बनाये रखनेके लिये यह जरूरी है कि हर चीज साथ-साथ प्रगति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करे। तुम्हें अपनी सत्ताके एक अंशको अंधकारमें छोड़कर दूसरेको प्रकाशमें लानेकी कोशिश नहीं करनी चाहिये। तुम्हें इस बातके लिये बहुत सावधानी बरतनी चाहिये कि कोई कोना अंधकारमें न रह जाय। तो बस।

पहले आश्रममें अंडे क्यों वर्जित थे? लेकिन अब तो दिये जाते हैं।

अंडे निषिद्ध थे?

मुझे मालूम नहीं। हमें तो यही बताया गया था।

ओह! लोग बहुत कुछ कहते हैं, लेकिन जो कुछ वे कहते हैं उसके लिये मैं जिम्मेदार नहीं हूं। (हंसी) मुझे याद नहीं कि किसी-को स्वास्थ्यकी दृष्टिसे अंडेकी जरूरत हुई हो और मैंने देनेसे इंकार किया हो! लेकिन अगर लोग केवल लालचसे और सुखके लिये मुझसे कोई चीज मांगें तो मैं हमेशा साफ इंकार कर देती हूं, यह बात जैसी पहले थी वैसी अब भी है। अब जानते हो, कुछ चीजों-की स्वीकृति केवल स्वास्थ्यकी दृष्टिसे, शारीरिक संतुलनकी दृष्टिसे दी जाती है, हर चीजकी अनुमति दी जाती है। जिसे मांसकी आवश्यकता हो उसे मैंने कभी मांस देनेसे इंकार नहीं किया। ऐसे लोग थे जो मांस इसलिये खाते थे क्योंकि उनके लिये जरूरी था। लेकिन अगर कोई केवल अपनी इच्छा पूरी करनेके लिये मुझसे कोई चीज मांगने आये तो मैं साफ 'ना' कह देती हूं, चाहे वह कुछ भी क्यों न हो, आइस-क्रीमके लिये भी! (हंसी)

जब व्यक्ति अंडा खाता है तो क्या वह अंदरके चूजेको भी नहीं खा जाता?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चूजेकी चेतना तबतक बनी नहीं होती। हां, निश्चय ही तुम्हें इस बातका ख्याल रखना चाहिये कि चूजा आकार लेने लगे उससे पहले ही ताजा अंडा खाया जाय।

मधुर मां, अगर हम चूजेकी यंत्रणाके शिकार बन सकते हैं तो चुकंदर और गाजरके भी क्यों नहीं?

मेरा ख्याल है कि चूजा चुकंदरसे कहीं अधिक सचेतन है। (हंसी) लेकिन मुझे तुम्हें अपना अनुभव सुनाना चाहिये। हां, मैं यह सोच रही थी कि यह कोई साधारण बात नहीं।

टोकियोमें मेरे पास एक बगीचा था। और इस बगीचेमें मैं खुद सब्जियां उगाया करती थी। मेरा बगीचा काफी बड़ा था और बहुत-सी तरकारियां पैदा होती थीं। इसलिये रोज सुबह पौधोंको सींचनेके बाद मैं टहलने निकलती थी। मैं चारों ओर घूमा करती थी ताकि खानेके लिये कोई सब्जी चुन सकूं। और कल्पना करो! कई तरकारियां ऐसी थीं जो मुझसे कहा करती थीं: "नहीं, नहीं, नहीं, नहीं, नहीं, . . ." और फिर कुछ ऐसी थीं जो पुकारती थीं। मैं उन्हें दूरसे देखती और उन्हें यह कहते हुए सुनती: "मुझे लो, मुझे लो, मुझे लो!" इसलिये काम बहुत आसान होता था। जो चाहती थीं कि उन्हें लिया जाय, मैं उन्हींको लेती थी और जो न चाहती थीं उन्हें छूतीतक न थी। मैं सोचा करती थी कि यह कोई असाधारण चीज है। मुझे अपने पौधोंसे बहुत प्यार था, मैं उनकी देख-भाल किया करती थी, उन्हें सींचते, साफ करते समय मैंने उनमें बहुत-सी चेतना डाली थी। इसलिये मुझे लगता था कि उनमें शायद कोई विशेष क्षमता थी।

लेकिन फ्रांसमें भी यही चीज थी। दक्षिण फ्रांसमें भी मेरा एक बगीचा था जहां मटर, मूली, गाजर लगाया करती थी। उनमेंसे कुछ ऐसी थीं जो सुखी थीं, जो चाहती थीं कि उन्हें तोड़कर खाया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाय; और कुछ ऐसी थीं जो कहा करती थीं: "नहीं, नहीं, मुझे मत छुओ!" (हंसी)

मधुर मां, वे इस तरह क्यों कहा करती थीं?

इसका ठीक पता लगानेके लिये मैंने परीक्षण किया। और परिणाम हमेशा एक-सा नहीं आया। कभी-कभी तो इसलिये कि पौधा खाने लायक न था; वह अच्छा न था, सख्त था या कड़वा था, खाने लायक न था। कभी-कभी वह तैयार न होता था, उसका समय न होता था। वह पका न था। एक-दो दिन प्रतीक्षा करके, दो-एक दिन बाद वह मुझसे कहता: "मुझे लो, मुझे लो, मुझे लो!" (हंसी)

पहले जमानेमें, भगवान्को प्राप्त करनेके लिये साधु अपने शरीरको जान-बूझकर कष्ट देते थे।

तो फिर वे "साधु" नहीं थे! (हंसी) इससे कोई लाभ नहीं होता। केवल घमंड आता है, आध्यात्मिक घमंड। बस, और कुछ नहीं। लेकिन इससे भगवत्प्राप्ति तो हर्गिज नहीं होती!

लेकिन कहा जाता है कि वे उच्चतम स्तरकी साधना करते थे और जो कुछ चाहते थे उसे पा लेते थे।

यह केवल कहा जाता है। बहुत कुछ कहा जाता है।

क्या कुत्ते मनुष्यकी अपेक्षा ज्यादा वफादार नहीं होते?

निश्चय ही! क्योंकि वफादार होना उनका स्वभाव है। और उनमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानसिक जटिलताएं नहीं होतीं। मनुष्योंको जो चीज निष्ठापूर्ण होने-से रोकती है, वह है उनकी मानसिक जटिलता। अधिकतर मनुष्य निष्ठापूर्ण इसलिये नहीं होते क्योंकि उन्हें धोखा खानेका भय रहता है। तुमको मालूम है धोखा खानेका क्या मतलब है? उन्हें छले जानेका, शोषित होनेका भय होता है। उन्हें भय होता है... उनकी वफादारीके पीछे अभी एक बड़ा अहम् कम या ज्यादा छिपा बैठा रहता है और सौदाबाजी तो हमेशा रहती ही है, कम या अधिक सचेतन रूपसे, लेन-देनका वह भाव रहता है। व्यक्ति अपने-आपको किसीके प्रति अर्पित कर देता है लेकिन हमेशा, चाहे वह अपने-आपसे कहे या न कहे, उसके बदलेमें किसी चीजकी आशा करता है। तुम निष्ठावान् हो लेकिन यह भी चाहते हो कि दूसरे भी निष्ठावान् हों। यानी, तुम चाहते हो कि वे तुम्हारी देखभाल करें, कि वे तुम्हारे साथ मधुर रहें, और सबसे बढ़कर, यह कि कोई तुम्हारी निष्ठाका लाभ उठानेकी कोशिश न करे। इस तरहकी जटिलताएं कुत्तेमें बिल्कुल नहीं होतीं, क्योंकि उसका मन अभी बहुत अल्प विकसित होता है। उसके पास तर्कणाकी वह अद्भुत क्षमता नहीं होती जो मनुष्यके पास है, एक ऐसी क्षमता जिसकी वजहसे वह इतनी सारी मूर्खताएं कर बैठता है।

केवल बात यह है कि व्यक्ति पीछेकी ओर लौट नहीं सकता। वह फिरसे कुत्ता नहीं बन सकता। इसलिये तुम्हें उच्चतर मानव बनना होगा और उच्चतर स्तरपर कुत्तेके उस गुणको बनाये रखना होगा। यानी, अर्ध-सचेतन निष्ठा या हर हालतमें सहजबोधकी वफादारीके स्थानपर, एक ऐसी आवश्यकताके स्थानपर जो उसे बांधे रखती है, एक संकल्पित और सचेतन वफादारी होनी चाहिये, जो विशेष रूपसे हर प्रकारके अहंभावके परे हो। एक बिंदु है जहांपर सब सद्गुण मिलते हैं: वह एक ऐसा बिंदु है जो अहम्से परे रहता है। अगर हम इस निष्ठाको लें, अगर हम भक्तिको लें, अगर हम प्रेमको और सेवाके अर्थको लें, इस प्रकारकी सब चीजोंको लें, जब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ये सब चीजें अहंके स्तरसे परे हों तो एक बिंदुपर आ मिलती हैं। इस अर्थमें कि वे अपने-आपको दे देती हैं और बदलेमें किसी चीज-की प्रत्याशा नहीं करतीं। और अगर तुम एक कदम और ऊपर उठो तो कर्तव्य और त्यागकी भावनाके साथ करनेकी जगह एक तीव्र आनंदके साथ करते हो, एक ऐसे आनंदके साथ जो अपना पुरस्कार अपने ही अंदर लिये रहता है, जिसे बदलेमें किसी चीजकी आवश्यकता नहीं होती क्योंकि, वह अपना आनंद अपने अंदर वहन करता है। लेकिन फिर, इसके लिये तुम्हें काफी ऊपर उठना चाहिये, और अपने ही ऊपर केंद्रित नहीं रहना चाहिये क्योंकि सबसे बढ़कर यही चीज है जो तुम्हें सबसे नीचे खींचती है। उस प्रकारकी . . . आत्म-दयासे भर-पूर वह सहानुभूति, जिसमें व्यक्ति अपने-आपको फुसलाता हुआ, सहलाता हुआ कहता है: "बेचारा मैं!" वह सचमुच भयानक चीज है। और व्यक्ति जाने बिना ही निरंतर यह करता रहता है! इस तरह अपने ऊपर ही केंद्रित होना, एक प्रकारकी गिरानेवाली आत्म-करुणा है, जिसमें व्यक्ति अपने-आपसे दयाभरी आवाजमें कहता है: "कोई मुझे नहीं समझता! कोई मुझसे प्रेम नहीं करता! किसीको मेरी परवाह नहीं जब कि उन्हें होनी चाहिये!" इत्यादि, और इस तरह व्यक्ति कहता चला जाता है . . . यह तो सचमुच भयावह है, यह तुम्हें तुरत एक गढ़ेमें खींच लेती है।

तुम्हें इस सबसे बहुत परे चले जाना चाहिये, इसे बहुत पीछे छोड़ देना चाहिये ताकि तुम सचमुच निष्ठाका आनंद, आत्म-समर्पणका आनंद ले सको जो इस बातकी जरा भी परवाह नहीं करता, नहीं, बिल्कुल नहीं करता, किसी प्रकार नहीं करता कि उसे अच्छी तरह लिया जा रहा है या नहीं, कि उसे उचित प्रत्युत्तर मिलता है या नहीं। तुम जो करते हो उसके बदलेमें किसी चीजकी आशा न रखो, किसी भी चीजकी नहीं, और यह तपस्या या त्यागकी भावनासे नहीं, बल्कि इसलिये कि तुम जिस चेतनामें हो उसका आनंद अनुभव कर रहे हो, और तुम्हारे लिये वह काफी है। वह उस सबसे कहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अधिक अच्छा है जो तुम्हें बदलेमें मिल सकता है, चाहे वह किसी भी व्यक्तिसे क्यों न मिले। लेकिन वह तो बात ही दूसरी है। इन दोनोंके बीच अनेक सोपान हैं।

माताजी, आपने कहा था कि आधी रातसे पहले सोनेसे सबसे ज्यादा आराम मिलता है...

शारीरिक दृष्टिसे, हां।

क्यों ?

आह ! वह तो मैंने निजी अनुभवसे कहा था और फिर वह... इसके बारेमें "क्यों" नहीं हुआ करता, होता है क्या ? यह बात हर एकको अपने लिये ढूंढ़नी या नहीं ढूंढ़नी होगी। लेकिन मैंने ऐसे लोगोंसे सुना है जिन्हें भू-रसायनमें रस है, कि कुछ किरणें हैं—(पवित्रकी ओर मुड़ते हुए) है न बात ठीक ? तुम उनके बारेमें जानते हो ? सूर्यकी ऐसी किरणें हैं जो वातावरणमें आधी राततक सक्रिय रहती हैं, और दूसरी किरणें वे हैं जो उसके बाद सक्रिय होती हैं; पहले प्रकारकी तुम्हें शक्ति प्रदान करती हैं और दूसरी प्रकारकी खींच लेती हैं। लेकिन इस तरहकी बहुत-सी चीजें हैं; कम-से-कम यह, तुम समझ रहे हो, ऐसी बात है जिसके बारेमें हम सुनते हैं या पुस्तकोंमें पढ़ते हैं। उसीके आधारपर मैं तुम्हें यह सुनाये दे रही हूं, इसका जो भी मूल्य हो। मैं कुछ नहीं जानती। कोई ऐसा व्यक्ति जो इस विषयको अच्छी तरह जानता हो, ज्यादा अच्छी तरह समझा दे सकेगा। (हंसते हुए) लेकिन कुछ ऐसी चीजें हैं जो व्यवहारमें सच्ची हैं। इसका कारण मैं नहीं बता सकती। शायद वे केवल व्यक्तिगत चीजें ही हों ! फिर भी, कुछ ऐसा ही अनुभव मैंने औरोंसे भी सुना है। उदाहरणके लिये, तुम समुद्रमें जाते हो और कुछ देर उसमें रहते हो तो बड़े शक्तिशाली बनकर निकलते हो ! तुम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समुद्रमें जाते हो, घंटों रहते हो तो बिल्कुल थककर निकलते हो! गरम पानीके स्नानके साथ भी यही बात है। तुम गरम पानीसे स्नान करते हो; तुम बहुत थके हुए हो, तुम गरम पानीमें घुसते हो, और ज्यादा-से-ज्यादा क्षण-भर रहते हो, उसमें रहकर बाहर निकल आते हो तो बड़ा ताजा लगता है। तुम उसमें पंद्रह मिनट रह लो और फिर बाहर आओ तो सारी शक्ति, सारी ऊर्जा खो बैठते हो; कुछ नहीं रहता, ऐसा लगता है मानों तुम चू गये हो। मैं तुम्हें यह सुना रही हूं, लेकिन पूरे अधिकारके साथ कारण नहीं बता सकती, फिर भी यह तथ्य तो है ही। बात ऐसी है। अपने लिये मेरे पास एक व्याख्या है लेकिन वह केवल मेरे लिये ही ठीक है, दूसरोंके लिये ठीक नहीं है। इसलिये बेकार है।

निद्राके उन सोपानोंके विषयमें, जिनके बारेमें यहां कहा गया है, यदि व्यक्ति अपनी रातोंके बारेमें सचेत है तो वह कुछ ही मिनटोंमें उन्हें पार कर सकता है। इसके लिये व्यक्तिको घंटोंकी निद्राकी जरूरत नहीं पड़ती, समझे? यदि वह सचेतन है तो कुछ मिनटोंमें ही सभी सोपानोंसे गुजर सकता है। सबसे पहले, अगर तुम अपनी रातोंके प्रति सचेतन बन जाओ, गहरी निद्रामें जानेसे पहले, जब तुम उस अवस्थामें हो जब तुम शिथिल होने लगते हो, अपनी नसोंको शिथिल बना देते हो—मैं तुम्हें यह पहले समझा चुकी हूं, तुम अपनी सभी नसोंको शिथिल कर देते हो, और अपने-आपको जाने देते हो.. यूं...जानते हो—अच्छा तो उस क्षण तुम्हें बड़ी सावधानीसे हर प्रकारके मानसिक क्रिया-कलापको शिथिल करना चाहिये, शांत, यथासंभव शांत कर देना चाहिये और जबतक मन काफी प्रशांत न हो जाय तबतक सोना नहीं चाहिये। इस तरह तुम उत्तेजनाकी एक दीर्घ और व्यर्थकी अवधिसे बच निकलते हो जो बहुत थकानेवाली होती है। अगर तुम सोनेसे पहले मनको शिथिल और पूर्ण रूपसे शांत कर लो तो तुम्हारी निद्रा तुरंत बहुत शांतिपूर्ण और बहुत स्फूर्तिदायक होगी। स्वभावतः, तुम्हारा प्राण क्षुब्ध नहीं होना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहिये, क्योंकि तब, वह तुम्हें सब प्रकारके स्थानोंपर ले जायगा और तुमसे सब प्रकारकी मूर्खताएं करवायेगा। और परिणाम यह होगा कि सोनेसे पहले तुम जितने थके थे उससे कहीं अधिक थककर उठोगे।

लेकिन अगर तुम सचेतन हो तो अपने प्राणको शांत करनेके बाद, जब तुम अपनी स्थूल चेतनासे निकलकर सूक्ष्मतर चेतनामें पैठने लगते हो तो तुम अपने प्राणको सुला देते हो या उससे कहते हो: "अब विश्राम करो, एकदम चुप रहो"; फिर अपने मानसिक क्रिया-कलापमें प्रवेश करो और मनसे कहो: "विश्राम करो, एकदम चुप-चाप रहो।" फिर उसे भी सुला दो। फिर मनसे निकलकर एक उच्चतर क्षेत्रमें आते हो। वहां, यदि तुम्हें रस आये, उदाहरणके लिये, यदि तुम पहली बार वहां गये हो तो देख सकते हो कि वहां क्या हो रहा है, तुम अनुभव कर सकते हो, चीजें सीख सकते हो (कभी-कभी बहुत मजेदार चीजें सीखी जा सकती हैं); और फिर कभी-कभी तुम अमुक सामान्य अवस्थाके प्रति सचेतन हो सकते हो, दूसरे लोगों और वस्तुओंके बारेमें विचार पा सकते हो। यह मजेदार है! और बादमें, अगर तुमको यह सब काफी लगे तो तुम कहते हो: "चुप रहो, सो जाओ, हिलो मत।" फिर उसे भी सुलाकर एक और उच्चतर चेतनामें उठते हो; इस तरह चलते चले जाते हो जब-तक कि तुम एक ऐसी स्थितितक नहीं पहुंच जाते जहां तुम रूपोंकी सीमापर हो; मैं भौतिक रूपोंकी बात नहीं कर रही; सभी रूपोंकी सीमापर, स्वाभावतः विचारके रूपसे बहुत ऊपर। सभी स्पन्दनों और रूपोंकी सीमापर, पूर्ण शांतिमें, जिसे सच्चिदानन्द कहा जाता है। और जब तुम वहां होते हो तो सब कुछ रुक जाता है, सभी स्पंदन शांत हो जाते हैं, और यदि तुम वहां मात्र तीन मिनट भी रह लो तो भी जब अपने शरीरमें लौटोगे तो अपने-आपको बिल्कुल विश्रांत, ताजा और शक्तिशाली पाओगे मानों घंटोंकी नींद ले चुके हो! यह एक ऐसी चीज है जो सीखी जा सकती है। मैं यह नहीं कहती कि यह एक रातमें ही सिद्ध हो जायगी। थोड़ी मेहनत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और थोड़ा अध्यवसाय जरूरी है! लेकिन फिर भी ... तुमको यह सीखना ही चाहिये। और जब तुम बहुत चिंतित और क्लांत हो, बहुत ... उदाहरणके लिये, जब किसी एक या दूसरे रूपमें विरोधी शक्तियोंने तुमपर आक्रमण किया हो, और तुम बहुत थके हुए हो, उस समय अगर तुम इस प्रक्रियाका सचेतन रूपसे अनुसरण करो तो कुछ ही मिनटोंमें सब कुछ गायब हो जायगा। यह सीखने लायक चीज है। केवल तुमको बहुत, बहुत, बहुत अध्यवसायी होना चाहिये क्योंकि ... जरा ठहरो, मैं तुम्हें उसके बारेमें कुछ और बताऊंगी।

जब मैंने गुह्य ज्ञानका अध्ययन शुरू किया तो मैं इस बातके प्रति सजग हुई—ठीक जब अपनी रातोंपर काम कर रही थी ताकि उनको सचेतन बना सकूं—तब मुझे इस बातका भान हुआ कि सूक्ष्म-भौतिक और सबसे अधिक भौतिक प्राणके बीच एक छोटा-सा क्षेत्र है, बहुत छोटा, जो दोनों क्रिया-कलापोंके बीच सचेतन कड़ीके रूपमें काममें आनेके लिये पर्याप्त विकसित नहीं था। अतएव, स्थूलतम भौतिक प्राणकी चेतनामें जो कुछ होता था वह सूक्ष्मतम भौतिककी चेतनामें ठीक-ठीक अनूदित न हो पाता था। कुछ रास्तेमें गुम हो जाता था क्योंकि वह वास्तविक रूपमें शून्य तो नहीं, किंतु अर्धचेतन अवश्य था, जो पर्याप्त विकसित न था। मैं जानती थी कि एक ही उपाय था, और वह यह कि उसे विकसित करनेके लिये मेहनत की जाय। मैंने काम करना शुरू किया। मेरा ख्याल है कि यह फरवरीके आस-पासकी बात है। एक महीना बीत गया, दो महीने, तीन महीने, चार महीने बीत गये, लेकिन कोई परिणाम नहीं। मैं आगे बढ़ती गयी। पांच महीने, छः महीने बीत गये ... जुलाईका अंत या अगस्तका आरंभ था ...। पैरिस छोड़कर, यानी, वह घर छोड़कर जिसमें मैं रहती थी, मैं देहातमें रहने चली गयी। वह समुद्र तटपर एक छोटा-सा स्थान था जहां मैं अपने मित्रोंके साथ रहने लगी। उनका एक छोटा बगीचा था। अब उस बगीचेमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक लान था—लान क्या होता है यह तुम्हें मालूम ही होगा?—घास, जहां कुछ फूल थे और उनके चारों ओर कुछ पेड़। वह अद्‌भुत जगह थी, बहुत शांत, बहुत नीरव। मैं घासपर लेटी थी, यूं, अपने पेटके बल, कुहनियां घासपर टिकाये, और अचानक उस प्रकृतिका सारा जीवन, सूक्ष्म भौतिक और स्थूल भौतिक प्राणके बीचके उस क्षेत्रका सारा जीवन, जो प्रकृति और पौधोंमें बहुत सजीव होता है, वह सारा क्षेत्र अचानक, एकाएक, बिना संक्रमणके एकदम सजीव, तीव्र, सचेतन और अद्‌भुत बन गया। और यह परिणाम था, था न? उन छः महीनोंके घोर परिश्रमका परिणाम था जिसका कोई फल न दिखायी दिया था। मैंने कुछ ध्यान नहीं दिया था; लेकिन इस तरहकी एक परिस्थिति और, लो—परिणाम आ गया! यह ऐसा ही है जैसे अंडेमें चूजा जो काफी समयसे मौजूद था, परंतु मनुष्य उसे देख नहीं पाता और सोचता है कि उसमें चूजा है भी या नहीं, और तब सहसा 'टिक'! एक छोटा सूराख हो जाता है, जानते हो, सब कुछ फट जाता है और बड़ी शानसे चूजा निकलता है! वह अब बिल्कुल तैयार है, लेकिन तैयार होनेमें उसे कितना समय लगा! बात ऐसी ही है। जब तुम अपने अंदर कोई चीज तैयार करना चाहते हो तो ऐसे ही होता है जैसे अंडेमें चूजा। हो सकता है कि इसके लिये तुम्हें बहुत समयकी जरूरत हो, लेशमात्र परिणामके बिना, बिना आशा खोये, मेहनत जारी रखते हुए, नियमित रूपसे, मानों शाश्वत काल तुम्हारे आगे है, और सबसे बढ़कर, इस तरह तुम्हें रहना चाहिये मानों तुम परिणामके बारेमें बिल्कुल उदासीन हो। तुम कार्य इसलिये कर रहे हो क्योंकि तुम उसे कर रहे हो। और फिर, एकाएक एक दिन वह फूट पड़ता है और तुम अपने कार्यका पूरा परिणाम अनुभव करते हो जो तुम्हारे सामने है।

लेकिन तुम समझते हो न, आदमी इसके बारेमें, रातोंके प्रति सचेतन होनेके बारेमें, नींदमें होनेवाली क्रियाओंपर नियंत्रण रखने और इस तरहकी दूसरी चीजोंके बारेमें बड़ी आसानीसे बातें करता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है, लेकिन इस सबके लिये मैंने अभी तुम्हें जिस प्रकारके कामके बारेमें बतलाया है उस प्रकारके बहुत-से छोटे-छोटे काम करने होंगे। यह परिणाम पानेके लिये ऐसे बहुत-से कामोंकी जरूरत होती है। जब एक पूरा हो जाता है तो तुम अनुभव करते हो कि एक औरकी जरूरत है और यह इसी तरह चलता रहता है। यहां-तक कि एक भले-से दिन तुम ऐसा कर सकते हो, जैसा मैंने कहा। तुम अपने अंदरकी सब चीजोंको शांत करके, यहांतक कि सब प्रकार-की क्रियाओंसे निकलकर परम विश्रामकी अवस्थामें सचेतन रूपसे प्रवेश करते हो। यह कष्ट उठाने योग्य है।

तो लो, बस अब।

और कोई प्रश्न? नहीं?

तो बस, समाप्त?

३० जून, १९५४

वर्षाके कारण कक्षा जिम्नास्टिक्सके कमरेमें हुई।
माताजी 'योगके तत्त्व' पुस्तकके चौदहवें और अंतिम अध्यायमेंसे पढ़ती हैं। शीर्षक है "कुछ व्याख्याएं"।

योगमें गुह्य शक्तिका क्या स्थान है?

अति-भौतिक स्तरोंकी सूक्ष्म शक्तियोंको पहचानना और उनका उपयोग करना योगका एक अंग है।

'गुह्य प्रयास' और 'गुह्य शक्ति'का अर्थ क्या है?

यह प्रसंगपर निर्भर है। सामान्यतः इसका अर्थ होगा प्रकृतिकी रहस्यमय शक्तियोंका उपयोग करनेकी शक्ति और इन शक्तियोंद्वारा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किया गया प्रयास। लेकिन किसी और प्रसंगमें 'गुह्य'का अर्थ कुछ और भी हो सकता है।

क्या प्रत्येक योगीको इस 'गुह्य' प्रयासमेंसे गुजरना पड़ता है?

नहीं, हर एकमें इसके लिये क्षमता नहीं होती। जिनमें क्षमता नहीं है, उनको तबतक प्रतीक्षा करनी चाहिये जबतक कि उन्हें यह क्षमता प्रदान न की जाय।

किताब समाप्त हो गयी!

मधुर मां, यहां श्रीअरविंद गुह्य प्रयासकी बात करते हुए कहते हैं कि जिनमें यह क्षमता नहीं है उन्हें तबतक प्रतीक्षा करनी चाहिये जबतक कि उन्हें वह क्षमता दी न जाय। क्या वे उसे अभ्यासके द्वारा प्राप्त नहीं कर सकते?

नहीं, यानी, अगर वह अंतर्निहित है तो अभ्यासके द्वारा उसे विकसित किया जा सकता है। लेकिन अगर तुम्हारे अंदर वह गुह्य शक्ति नहीं है तो तुम भले ही पचास वर्षोंतक प्रयास करते रहो, तुम कहीं नहीं पहुंच पाओगे। सभीमें गुह्य शक्ति नहीं हो सकती। यह वैसी ही बात है जैसे तुम मुझसे पूछो कि सब लोग संगीतज्ञ हो सकते हैं? सब लोग कलाकार बन सकते हैं? सब लोग... कुछ ऐसे लोग हैं जो बन सकते हैं, और कुछ ऐसे हैं जो नहीं बन सकते। यह तो स्वभावकी बात है।

गुह्यवाद और रहस्यवादमें क्या भेद है?

ये चीजें एक समान बिल्कुल नहीं हैं। रहस्यवाद एक ऐसी शक्तिके साथ कम या अधिक भावात्मक संबंध है जो हमें दिव्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रतीत होती है। किसी अदृश्य चीजके साथ जो भगवान् है या जिसे हम भगवान् समझते हैं, उसके साथ एक प्रकारका बहुत ही भावात्मक, बहुत ही भावोत्तेजक और बहुत ही तीव्र संबंध है रहस्यवाद।

गुह्यवाद ठीक वही है जिसका श्रीअरविंदने वर्णन किया है: वह है अदृश्य शक्तियोंका ज्ञान और उन्हें संचालित करनेकी शक्ति। वह एक विज्ञान है। पूर्ण रूपसे एक विज्ञान है। मैं हमेशा गुह्यवादकी तुलना रसायनसे किया करती हूं; क्योंकि यह उसी प्रकारका ज्ञान है जैसे रसायन ज्ञान भौतिक चीजोंके लिये होता है, उसी प्रकार यह भी एक ज्ञान है। यह अदृश्य शक्तियोंका, उनके विविध स्पंदनोंका, उनके आपसी संबंधोंका, उन्हें मिला-जुलाकर जो संगठन बनाये जा सकते हैं उनका, और उस शक्तिका ज्ञान है जिसका हम उनपर प्रयोग कर सकते हैं। यह पूर्ण रूपसे वैज्ञानिक है। और इसे एक विज्ञानके रूपमें ही सीखना चाहिये, यानी हम गुह्यवादका अभ्यास किसी भावप्रधान या धुंधली और अस्पष्ट चीजके रूपमें नहीं कर सकते हैं। तुम्हें इसके लिये उसी तरह काम करना चाहिये जैसे रसायनके लिये करते हो। सभी नियम सीखने चाहियें और कोई सिखानेवाला न हो तो उन्हें अपने-आप ढूंढ़ निकालना चाहिये। लेकिन उन्हें ढूंढ़नेके लिये कुछ खतरा मोल लेना पड़ता है। इसमें कुछ संयोग रासायनिक संयोगोंके बराबर ही विस्फोटक हैं।

क्या इस जीवनमें गुह्यवाद जरूरी है?

इस जीवनमें? यह इसपर निर्भर है कि तुम क्या करना चाहते हो। तुम्हारा मतलब है योग-जीवनमें? बिल्कुल जरूरी नहीं है। इसके अतिरिक्त, जैसा कि वे कहते हैं, ऐसे बहुत-से लोग हैं जिन्हें यह देन नहीं मिलती, जिनमें यह क्षमता नहीं होती। ऐसे बहुत-से लोग हैं जो छोटी-से-छोटी अनुभूति होते ही, छोटी-से-छोटी, उदाहरणके लिये, अपने शरीरसे जरा-सा बाहर निकलते ही आतंकित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो उठते हैं। और सचमुच इसका इलाज करना बहुत मुश्किल है। अगर व्यक्तिमें प्रबल संकल्प-शक्ति और महान् आत्म-संयम हो तो यह ठीक हो सकता है। लेकिन बहुत-से लोग अपनी सत्ताकी अवस्थाओंसे अलग नहीं हो सकते। अगर वे अलग करें तो कोई चीज है जो ठीक नहीं, और इससे उनके शरीरको कष्ट होता है। जब कि दूसरे ऐसे हैं जो निकल पड़ते हैं, घूमते-फिरते हैं और फिर लौट आते हैं। उनके लिये यह बिल्कुल स्वाभाविक है। साधारणतः जिन्हें इसमें रस है——जबतक कि वह केवल एक प्रकारका मानसिक कुतूहल ही न हो——लेकिन जिनको इसमें रस होता है उनमें साधारणतः प्रतिभा भी होती है। हो सकता है कि उन्हें इसके बारेमें मालूम न हो, लेकिन उन्हें सिखाया जा सकता है। लेकिन ये ऐसी चीजें हैं जो सावधानीसे की जानी चाहिये। उदाहरणके लिये, ...मैं तुम्हें एक उदाहरण देती हूं: ज्यों ही तुम अपने शरीरसे बाहर निकलते हो, चाहे वह जरा-सा और वह भी केवल मानसिक रूपमें क्यों न हो, तो मनका वह अंश चला जाता है जो उसकी क्रियाका संचालन करता है। और स्वतःचालित मनका वह अंश जो अमुक गतिविधियां और अमुक ग्रंथियोंके स्राव उत्पन्न करता है, वह पूरा स्वतःचालित भाग उस सचेतन, सोचनेवाले भागकी रक्षाके बिना और नियंत्रणके बिना रह जाता है। हां तो, वातावरणमें हमेशा बहुत सारी छोटी-छोटी, बहुत छोटी सत्ताएं रहती हैं जो साधारणतः मानव विघटनसे जन्म लेती हैं और शारीरिक जीवाणुओंके समान होती हैं। ये एक प्रकारके प्राणिक जीवाणु होते हैं। वे ज्यादा प्रत्यक्ष होते हैं और उनमें अपनी इच्छा-शक्ति होती है। हम यह नहीं कह सकते कि वे दुष्ट होते हैं, परंतु उनमें शरारत भरी होती है। ये सत्ताएं अपना मनोरंजन करना चाहती हैं और वह भी औरोंको तंग करके। तो जैसे ही वे देखती हैं कि व्यक्ति पर्याप्त रूपसे सुरक्षित नहीं है वे उसके यांत्रिक मनको अपने कब्जेमें कर लेती हैं और व्यक्तिपर हर प्रकारकी, बिल्कुल अप्रिय चीजें ले आती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। उदाहरणके लिये, कुछ लोग समाधिमें अपनी जीभ निगल लेते हैं। और अगर वे सावधानी न बरतें तो इससे उनका दम घुट जाता है। दूसरे अपनी जीभ काट लेते हैं और कभी-कभी इससे बहुत कष्ट होता है। इस प्रकारकी बहुत-सी चीजें हो सकती हैं। इसलिये, साधारणतः, तुम्हें तबतक समाधिमें हर्गिज न जाना चाहिये जबतक कि तुम्हारे पास ही कोई ऐसा व्यक्ति न हो जो तुम्हारी रखवाली कर सके, शुद्ध भौतिक रूपसे रखवाली नहीं, बल्कि... एक ऐसी सचेतन शक्तिके साथ रखवाली कर सके जो इन छोटी-छोटी सत्ताओंको उन स्नायविक केंद्रोंपर कब्जा करनेसे रोक सके जिन्हें सचेतन सत्ताका संरक्षण प्राप्त नहीं है। यह एक सामान्य नियम है। इससे भी बड़े खतरे हैं। जब तुम शरीरसे पूरे भौतिक रूपमें निकल जाते हो और बस एक जरा-सी कड़ीका-सा संबंध रह जाता है, उससे बढ़कर कुछ नहीं रहता—समझ रहे हो न, तो वह प्रकाशके एक धागे जैसा संपर्क होता है जो गयी हुई सत्ताको बची हुई सत्ताके साथ जोड़ता है—अगर यह कड़ी सुरक्षित रहे तो कुछ नहीं होता। लेकिन यदि वह सुरक्षित न रहे तो ऐसी विरोधी शक्तियां हो सकती हैं जो केवल शरारतसे भरी ही नहीं, बल्कि दुर्भावनासे भी भरपूर होती हैं, वे आकर इस संबंधको काट सकती हैं, और तब एक बार संबंध टूट जाय तो तुम भरसक प्रयास कर लो, फिर भी अपने शरीरमें लौट नहीं पाओगे।

व्यक्ति मर जाता है?

हां, कुछ समय बाद। मतलब यह कि यह सब मजाक बिल्कुल नहीं है, समझे न? यह मनोरंजनके लिये या केवल मनबहलावके लिये की जानेवाली चीज नहीं है। इसे ठीक उसी ढंगसे, अपेक्षित परिस्थितियोंमें बहुत सावधानीके साथ करना चाहिये। लेकिन एक चीज बिलकुल, बिलकुल अनिवार्य है, अगर तुम्हारे अंदर जरा भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डर है तो तुम्हें इस गुह्य विज्ञानको छूनातक न चाहिए। उदाहरण के लिये, अगर तुम सपनोंमें भयंकर चीजें देखते हो और तुम्हें डर लगता है तो तुम्हें गुह्यवादका अभ्यास नहीं करना चाहिये। इसके विपरीत, तुम्हें अत्यधिक डरावने स्वप्न दिखायी दें और फिर भी तुम एकदम शांत रहो, यहांतक कि कभी-कभी तुम्हारा मनोरंजन होता हो, तुम्हें बहुत मजा आता हो, अगर तुम इस सबको संभाल सको और हर परिस्थितिमेंसे, कठिनाईसे बाहर निकलना जानते हो तो इसका मतलब होगा कि तुम्हारे अंदर क्षमता है, और तुम अभ्यास कर सकते हो। कुछ लोग अपने सपनोंमें बहुत बहादुर योद्धा होते हैं। जब वे दुश्मनोंके सामने आते हैं तो उनको लड़ाई करना आता है। उनको केवल अपनी रक्षा करनी ही नहीं आती, बल्कि जीतना भी आता है। वे जोश, शक्ति और साहससे भरपूर होते हैं। ऐसे लोग ही गुह्यवादके असली उम्मीदवार हैं। लेकिन जो लोग अपने बिलमें घुसते हुए चूहेकी तरह तुरंत अपने शरीरमें लौट आते हैं उन्हें गुह्यवाद छूनातक न चाहिये और फिर तुम्हारे अंदर अपार धैर्य भी चाहिये। क्योंकि जिस प्रकार रासायनिक चीजोंको संभाल सकनेके लिये बरसों लग जाते हैं, जिस प्रकार छोटी-से-छोटी नयी चीजका आविष्कार करनेके लिये, किसी दृश्य परिणाम के बिना बहुत समयतक काममें लगे रहना पड़ता है, उसी प्रकार गुह्यवादमें भी बिना कोई अनुभूति प्राप्त किये बरसों प्रयासमें लगे रहना पड़ सकता है। और यह बहुत ही ऊबाऊ और नीरस बन जाता है। और मनुष्यमें उस प्रकारका प्रत्यक्षवादी और व्यावहारिक भौतिक-मानसिक तो रहता ही है जो तुमसे कहता रहता है, "तुम प्रयास क्यों करते हो? तुम स्पष्ट देख रहे हो कि इसमें कुछ नहीं है, यह सब कहानियोंसे बढ़कर कुछ नहीं है। तुम व्यर्थमें क्यों काम करते हो? तुम अपना समय बरबाद कर रहे हो। इसमें कुछ भी नहीं है, ये सब कल्पनाएं हैं।" जब उनके आधारमें कुछ न हो तो श्रद्धा-विश्वासको बनाये रखना बहुत कठिन होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मधुर मां, क्या साधारण चेतनाके लिये धार्मिक क्रियाएं जरूरी हैं?

धार्मिक क्रियाएं? मुझे नहीं मालूम! धार्मिक क्रियाओंसे तुम्हारा क्या मतलब है?

जप आदि।

ओह! ये चीजें! अगर तुम्हें इनसे सहायता मिलती हो तो ठीक है। अगर तुम्हें सहायता नहीं मिलती तो यह केवल . . . यह उन पूर्णतः सापेक्ष चीजोंमेंसे एक है जो पूरी तरह परिस्थितियोंपर निर्भर हैं। यह पूर्ण रूपसे सापेक्ष है। इसका मूल्य तुम्हारे ऊपर होने-वाले असरपर निर्भर है और वह उसी हदतक होता है जिस हदतक तुम उसपर विश्वास करते हो। अगर वह तुम्हें एकाग्रचित्त होनेमें सहायता देता है तो अच्छा है। साधारण चेतना उसका अनुसरण केवल अंधविश्वासद्वारा करती है, वह इस विचारसे करती है: "अगर मैं ऐसा करूं, अगर मैं सप्ताहमें एक बार मंदिर या गिरजाघर जाऊं, अगर मैं प्रार्थना करूं तो मेरे लिये बहुत शुभ चीज होगी।" यह, यह एक अंधविश्वास है, और जगत्‌में सब जगह फैला हुआ है, लेकिन आध्यात्मिक दृष्टिसे इसका कोई मूल्य नहीं है।

मां, उदाहरणके लिये, सालमें अमुक दिन लक्ष्मी-पूजा होती है, महाकाली-पूजा होती है, यह सब . . .

यह इसलिये होता है क्योंकि तुम्हें मजा आता है, मेरे बच्चो!

लेकिन, उन दिनों तो आप आशीर्वाद भी देती हैं।

हां, क्योंकि इससे तुम्हारा मनोरंजन होता है! (हंसी) हैं?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आप हमें केवल हमारे मनोरंजनके लिये आशीर्वाद देती हैं?

अच्छा चलो, तुम्हें उससे प्रसन्नता होती है। मैंने "मनोरंजन" कहा था, वह... निरादरकी बात थी। लेकिन वह है इसलिये कि तुम्हें प्रसन्नता मिलती है।

उदाहरणके लिये, महाकालीकी पूजाके दिन...

हां, हां, काली कभी-कभी तीन दिन पहले ही आ जाती हैं तो कभी चार दिन बाद, या फिर सालके किसी और समय। वह अनिवार्य रूपसे ठीक उसी दिन नहीं होतीं। कभी-कभी तुम्हें खुश करनेके लिये मैं जरा उन्हें बुला लेती हूं... (हंसी) जो भी हो, मैं इन सब चीजोंपर विश्वास करनेवाली नहीं हूं।

सभी धार्मिक कीर्तिस्तंभोंमें, ऐसे कीर्तिस्तंभोंमें जो लोगोंकी दृष्टिमें... जो सबसे महान् धर्म माने जाते हैं—चाहे वे फ्रांसमें हों या किसी और देशमें हों या जापानमें हों—और वे कभी एक ही प्रकारके मंदिर न थे, न गिरजाघर थे, और न एक ही देवता थे। फिर भी हर जगह मेरा अनुभव लगभग एक ही रहा, फर्क नाममात्रको था। मैंने देखा कि गिरजाघरमें जो भी केंद्रित शक्ति थी वह पूर्ण रूपसे भक्तोंपर, भक्तोंकी श्रद्धापर निर्भर थी। और उस शक्तिमें भी जैसी कि वह सचमुच थी और जैसी वे अनुभव करते थे उसमें भी भेद था। उदाहरणके लिये, फ्रांसके सबसे सुन्दर गिरजाघरोंमेंसे एकमें, एक ऐसा गिरजाघर जो कलाकी दृष्टिसे सचमुच इतना भव्य है कि शानदार कल्पनाकी सीमातक जा पहुंचता है, उसके सबसे पवित्र स्थानमें मैंने एक दीर्घाकार, काली प्राणिक मकड़ी देखी, उसने अपना जाल बनाकर सब जगह फैला रखा था। उसमें वह उन सब शक्तियों और भक्तिपूर्ण प्रार्थनाओंको पकड़कर आत्मसात् कर लेती थी जो लोगोंकी भक्तिसे पैदा होती थी। वह कोई सुखद दृश्य नहीं था। जो लोग वहां थे और प्रार्थना कर रहे थे वे एक दिव्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्पर्शका अनुभव कर रहे थे, उन्हें अपनी प्रार्थनाओंके फलस्वरूप नाना प्रकारके वरदान मिल रहे थे। और, फिर भी, वहां जो चीज थी वह यह थी। लेकिन लोगोंमें श्रद्धा थी, वह श्रद्धा जो इस बुरी चीजको अच्छीमें बदल सकती थी, क्योंकि उनमें श्रद्धा थी। इसलिये अगर मैं सचमुच वहां गयी होती और उनसे कहती : "तुम समझते हो कि तुम भगवान्से प्रार्थना कर रहे हो ? एक बड़ी प्राणिक मकड़ी तुम्हारी शक्तियोंसे पोषित हो रही है !" तो यह बहुत हितकर बात न होती। और अधिकतर, प्रायः सभी जगह यही होता है। वहां एक प्राण-शक्ति रहती है, क्योंकि ये प्राणिक सत्ताएं मानव भावनाओंके स्पंदनोंसे पलती हैं। ऐसे बहुत कम लोग हैं, बहुत ही कम, उनकी संख्या न के बराबर है, जो सच्ची धार्मिक भावनाके साथ गिरजाघर या मंदिर जाते हैं, यानी, किसी चीजके लिये प्रार्थना करने या भगवान्से कुछ मांगनेके लिये नहीं बल्कि अपने-आपको अर्पित करनेके लिये, कृतज्ञता प्रकट करनेके लिये, अभीप्सा और आत्मसमर्पण करनेके लिये जाते हैं। मुश्किलसे लाखोंमें एक ऐसा होता है। इसीलिये उनमें इस वातावरणको बदलनेकी शक्ति नहीं होती। हो सकता है कि जिस क्षण ऐसे लोग वहां होते हैं उस समय वे इस चीजको पार करने, भेदने, कहीं पहुंचकर किसी दिव्य चीजका स्पर्श पानेमें सफल हो जाते हों। लेकिन बहुत बड़ी संख्यामें जो लोग केवल अंधविश्वासके कारण, अहंकारद्वारा और कुतूहलवश जाते हैं, वे ही इस प्रकारका वातावरण बना देते हैं और जब तुम किसी मन्दिर या गिरजाघरमें जाते हो तो तुम इसी वातावरणमें सांस लेते हो। केवल इतना जरूर है कि चूंकि तुम बड़ी सद्भावनाके साथ जाते हो इसलिये तुम कहते हो : "ओह ! कितनी शांत जगह है !" यह खेदकी बात है लेकिन है ऐसी ही। मैं तुमसे कहती हूं, मैंने सब जगह जान-बूझकर थोड़ा-बहुत परीक्षण किया है। शायद उसे कुछ ऐसे छोटे-छोटे स्थान मिले होंगे, जैसे कभी-कभी गांवका कोई छोटा-सा गिरजाघर जहां एक छोटा-सा कोना था, बहुत शांत, बहुत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नीरव, बहुत निःशब्द, जहां अभीप्सा थी, लेकिन यह बहुत विरल है ! मैंने इटलीके सुन्दर गिरजाघर देखे हैं जो बहुत भव्य हैं। वे इन प्राणिक सत्ताओंसे भरपूर थे और साथ ही आतंकसे भरपूर थे। मुझे याद है, वेनिसके एक महामंदिर (वेसिलिका) में मैंने एक चित्र बनाया था और जब मैं काम कर रही थी तब 'पाप स्वीकार-कक्ष'में एक पादरी किसी गरीब महिलाका 'पाप-स्वीकार' सुन रहा था। वह सचमुच भयावह दृश्य था ! मुझे मालूम नहीं कि पादरी कैसा था, उसका चरित्र कैसा था। वह दिखायी नहीं देता था (तुम जानते हो न, कि ये पादरी दिखायी नहीं देते, वे एक कोठरी-में बंद रहते हैं और एक जालीमेंसे 'पाप-स्वीकार' सुनते हैं)। पादरीके ऊपर एक ऐसी शोषक और अंधकारपूर्ण शक्ति थी, और वह बेचारी महिला भयकी इतनी बुरी अवस्थामें थी कि देखनेसे सचमुच दुःख होता था। और ये सब लोग मानते हैं कि ये पवित्र चीजें हैं। लेकिन यह उन विरोधी प्राण-शक्तियोंका एक जाल है जो अपने-अपने पोषणके लिये इन सब चीजोंका उपयोग करती हैं। इसके अतिरिक्त, अदृश्य लोकमें प्राणिक सत्ताओंके सिवाय शायद ही किसीको पूजा करवाना प्रिय है। जैसा कि मैंने कहा, इन्हें यह अच्छा लगता है क्योंकि इससे इन्हें महत्त्व मिलता है। वे घमंडसे फूल उठती हैं और बहुत खुश होती हैं। और अगर उन्हें ऐसे लोगोंका एक दल मिल जाय जो उन्हें पूजता हो तब तो वे पूरी तरह संतुष्ट हो जाती हैं।

लेकिन अगर तुम किसी एक सच्ची दिव्य सत्ताको लो तो यह ऐसी चीजको बिल्कुल पसंद नहीं करती। उन्हें अपनी पूजा करवाना अच्छा नहीं लगता। नहीं, उन्हें इससे कोई विशेष खुशी नहीं होती! हमें यह नहीं सोचना चाहिये कि वे संतुष्ट हैं, क्योंकि उनमें घमंड नहीं होता। घमंडके कारण भी हमें पूजा करवाना अच्छा लगता है। अगर हमारे अंदर घमंड नहीं है तो हमें पुजना अच्छा नहीं लगता। और उदाहरणके लिये, अगर वे एक अच्छा इरादा, एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अच्छी भावना, या एक निष्काम क्रिया, या उत्साह या आनंद, आध्यात्मिक आनंद देखें तो ये चीजें उनके लिये प्रार्थना, आराधना या पूजाओंसे अनंतगुना अधिक मूल्य रखती हैं...।"

मैं तुम्हें विश्वास दिलाती हूं कि मैं तुमसे जो कह रही हूं वह बहुत ही गंभीर बात है: अगर तुम एक सच्चे देवताको कुर्सीपर बिठा दो और जबतक तुम्हारी पूजा चलती रहे तबतक वहीं बैठे रहनेके लिये बाधित करो तो शायद तुम्हें पूजा करते हुए देखकर उनका मनोरंजन तो हो, लेकिन निश्चय ही उन्हें किसी प्रकारका संतोष तो नहीं मिलता। बिल्कुल नहीं। तुम्हारी पूजासे न तो वे फूल उठते हैं, न प्रसन्न होते हैं और न उनकी महिमा ही बढ़ती है। इस विचारको निकाल देना चाहिये। आध्यात्मिक और भौतिक लोकोंके बीच एक पूरा-का-पूरा प्राणिक शक्तियोंका प्रभाव-क्षेत्र है, और यही वह क्षेत्र है जो इन चीजोंसे भरपूर है, क्योंकि ये सत्ताएं उसपर जीती हैं, उससे संतुष्ट होती हैं और यहां उन्हें तुरंत महत्त्व मिल जाता है। और उनमेंसे जिसके सबसे ज्यादा विश्वासी, भक्त और आराधक होते हैं वही सत्ता सबसे खुश होती है और सबसे ज्यादा फूल उठती है, लेकिन हम कल्पना भी कैसे कर सकते हैं कि देवताओंको यह पसंद होगा... देवता... मैं सच्चे देवताओंकी बात कर रही हूं, अधिमानसके देवताओंकी भी, यद्यपि वे अभीतक कुछ-कुछ... ऐसे वैसे हैं... ऐसा लगता है कि उन्होंने बहुत-से मानवीय दोष अपना लिये हैं, खैर, इसके बावजूद उनकी चेतना सचमुच उच्चतर होती है—उन्हें इन चीजोंसे जरा भी खुशी नहीं होती। सच्चे हितका, बुद्धिमानी, निस्स्वार्थताका या सूक्ष्म समझदारीका या एकदम सच्ची अभीप्साकी क्रिया उनके लिये एक छोटी-सी धार्मिक पूजाकी अपेक्षा अनंतगुना ऊंची है। अनंतगुना! दोनोंमें कोई तुलना नहीं! धार्मिक क्रियाएं! उदाहरणके लिये, ऐसी कितनी ही सत्ताएं हैं जिन्हें काली कहा जाता है—और जिन्हें कम या अधिक भयंकर रूप दिये जाते हैं—ऐसी कितनी ही हैं जिन्हें घरोंमें गृहदेवताके रूपमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्थापित किया गया है,——ये सब भयंकर प्राण-शक्तिसे भरपूर होती हैं! मैं ऐसे लोगोंको जानती थी जो अपने घरमें प्रतिष्ठित कालीसे इतना डरते थे कि छोटी-से-छोटी भूल करते ही कांप उठते थे, क्योंकि जब उनपर महाविपत्तियां टूट पड़तीं तो वे मानते थे कि उन्हें कालीने ही भेजा है। ऐसा विचार ही एक भयंकर चीज है। मैं इन सत्ताओंको जानती हूं। मैं उन्हें अच्छी तरह जानती हूं, लेकिन ये प्राणकी सत्ताएं हैं, प्राणकी रचनाएं जिन्हें रूप दिया है मनुष्यके मनने, और रूप भी कैसा! और यह सोचना कि मनुष्य इतनी भयावह और विकराल चीजोंकी पूजा करते हैं! और तिसपर ये बिचारे देवता जिनके बारेमें यह धारणा...

इस दृष्टिकोणसे यह बहुत अच्छा है कि कुछ समयके लिये मानव-जाति इस धार्मिक वातावरणसे बाहर निकल आये जो भयसे और उस अंधे आत्म-समर्पणसे भरपूर है जिसका विरोधी शक्तियोंने भयंकर रूपसे अनुचित लाभ उठाया है। इस दृष्टिकोणसे मनुष्योंको अंध-विश्वाससे मुक्त करनेके लिये इंकार और प्रत्यक्षवादका युग एकदम अनिवार्य है। इन सब चीजोंसे, भयंकर प्राण-शक्तियोंके प्रति घृणित समर्पणसे बाहर निकलकर ही हम सच्ची आध्यात्मिक ऊंचाइयोंतक उठ सकते हैं और तब सत्यकी शक्तियों, वास्तविक चेतना, और सत्य शक्तिके सहायक और सच्चे यंत्र बन सकते हैं।

और ऊपर उठनेके लिये इन सब चीजोंको दूर, बहुत दूर छोड़ देना होगा।

मां, उस दिन आपने कहा था कि रातके समय आप सब जगह घूमती हैं, तो आश्रममें जो कुछ हो रहा है उसके बारेमें आपको मालूम ही होगा...

मैं पुलिसवालेकी तरह हूं!

(शेष आवरण ३ पर)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

A happy beginning
a good continuation
and no end —
an endless progression

14-5-57

New Horizon Sugar Mills
(Pvt.) Ltd.

PONDICHERRY

Telegram : SAKAR	P.O. Box 29
Phone : Town Office : 26780	Pondicherry
Factory : 24423 24424	S. India

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"Live in His Being, Shine with His Light,
Act with His Power, Rejoice with His Bliss."

The Mother

With Best Compliments from:

Auroplast India Limited

Manufacturers of HDPE/PP Circular Woven Sacks

Administrative Office:

77, 'ATLANTA', NARIMAN POINT, BOMBAY-400 021

Phones: 240277, 240367 *Telex:* 011-4104 AEPL IN

Gram: AUROSACK, BOMBAY

Works:

PLOT No. G. 1/3 MIDC AREA, BOISAR,
DIST. THANE MAHARASHTRA

Phones: 682, 491, 591 *Telex::* 132-219 APPL IN

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

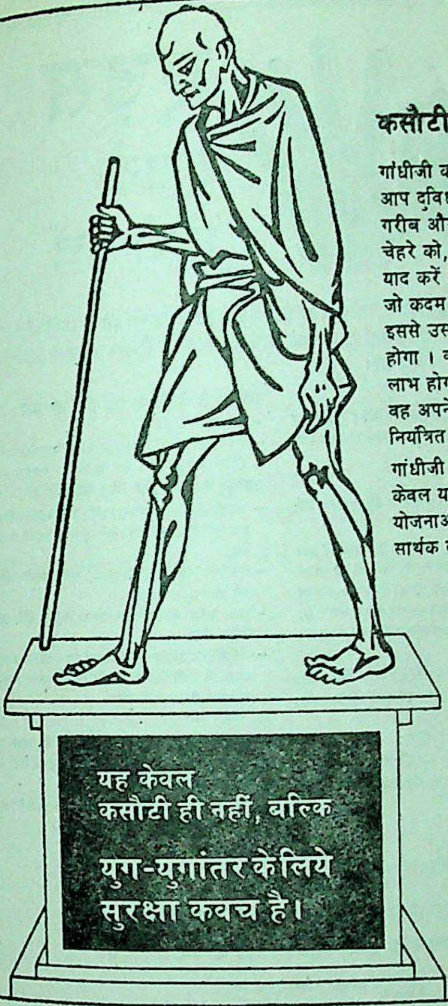

कसौटी

गांधीजी कहते थे : "जब कभी आप दुविधा में हों..... सबसे गरीब और कमजोर आदमी के चेहरे को, जिसे आपने देखा हो, याद करें और स्वयं से पूछें कि जो कदम आप उठाने जा रहे हैं इससे उस आदमी का कुछ भला होगा । क्या इससे उसे कुछ लाभ होगा? क्या इस कार्य से वह अपने जीवन और भाग्य को नियंत्रित कर सकेगा?"

गांधीजी ने महसूस किया कि केवल यही कसौटी हमारी योजनाओं और कार्यक्रमों को सार्थक बना सकती है ।

davp 88/364

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एड्स इससे कैसे बचें

एड्स एक खतरनाक रोग है और यह अभी तक ला-इलाज है। बहुत सी जनता इससे भयभीत है तथा इसके बारे में बहुत सी अफवाहें हैं। लेकिन कोई भी स्वयं को इससे बड़ी आसानी से बचा सकता है। इसलिए आइए, हम कुछ आधारभूत बातों पर गौर करें।

एड्स क्या है?

एड्स "एक्वायर्ड ईम्यूनो-डेफिसिएन्सी सिन्ड्रोम" का संक्षिप्त शब्द है। यह विषाणुओं से होता है जो शरीर की स्वाभाविक सुरक्षा प्रणाली को नष्ट कर देते हैं।

यह रोग कैसे फैलता है?

एड्स के विषाणु इस रोग से ग्रस्त व्यक्ति के रक्त या वीर्य के जरिए किसी व्यक्ति के शरीर में पहुंच सकते हैं।

अधिकांश मनुष्यों को एड्स के विषाणु इस रोग से ग्रस्त व्यक्ति के साथ यौन-सम्बन्ध स्थापित करने से लग जाते हैं। शेष व्यक्तियों को नशीली दवाओं के सेवन करने वाले व्यक्तियों को लगी सुई से ही प्रायः इंजेक्शन लगवाने के जरिए एड्स रोग लगता है। केवल कुछ थोड़े से ही मामलों में इस रोग से ग्रस्त व्यक्ति के रक्त-आधान (ट्रांसफ्यूजन) के माध्यम से यह रोग फैलता है।

जो व्यक्ति विषाणु ले आते हैं, वास्तव में वे सभी एड्स रोग के शिकार नहीं होते। बल्कि जिस किसी व्यक्ति के विषाणु है वह उन्हें दूसरों पर छोड़ सकता है। फिर भी वे पूर्णतया स्वस्थ अनुभव करते हैं।

इन कामों से आपको एड्स नहीं होता

- सामान्य सम्पर्क जैसे हाथ-मिलाने, छूने और गले मिलने से।
- तरण-तालों में स्नान करने, जल-पान गृहों और अन्य सार्वजनिक स्थानों पर बैठकर खाने-पीने से।
- खांसने, छींकने और थूकने से।
- वस्त्र पहनने से।
- संडास पर बैठने, द्वार-दस्ता पकड़ने, भोजन, गिलासों और प्यालों का प्रयोग करने से।

आप एड्स के शिकार नहीं होते जब आप

- रक्त-दान करते हैं।
- अपने डाक्टर, दंत चिकित्सक या किसी अन्य स्वास्थ्य रक्षक कार्यकर्ता से इंजेक्शन लगवाते हैं या अन्य किसी प्रकार का उपचार कराते हैं।

आपको बचने के लिए क्या करना चाहिए?

- अजनबी के साथ यौन-सम्बन्ध स्थापित न करें क्योंकि इसमें सदैव जोखिम बना रहता है। आपको मालूम नहीं कि शायद अजनबी इस रोग से पीड़ित हो।
- गुदा मैथुन (अप्राकृतिक यौन-सम्बन्ध)- इसमें अत्यधिक जोखिम है और इससे बचना चाहिए।
- जितने अधिक लोगों से यौन-सम्बन्ध स्थापित करेंगे, उतना अधिक जोखिम होगा।
- नशाखोरों की इंजेक्शन सुइयों का इस्तेमाल न करें। जो नशाखोर नशीली दवाओं के आदी हो जाते हैं और इसे नहीं त्याग सकते, उन्हें इसे ध्यानपूर्वक नोट कर लेना चाहिए।

याद रखें

एड्स एक ऐसा रोग है जिसके बारे में जोखिम नहीं उठाना चाहिए व ला-इलाज है। एड्स पर नियंत्रण पाना स्वयं व्यक्ति पर निर्भर करता है।

अधिक जानकारी के लिए

आप सहायक महानिदेशक (एड्स), स्वास्थ्य सेवा महानिदेशालय, निर्माण भवन, नई दिल्ली-110011 को लिख सकते हैं।

आप एड्स का उपचार नहीं कर सकते।
लेकिन आप इससे निश्चित रूप से बच सकते हैं।

केन्द्रीय स्वास्थ्य शिक्षा ब्यूरो,
स्वास्थ्य सेवा महानिदेशालय, कोटला रोड,
नई दिल्ली-2 द्वारा जारी

davp 88/349 Hindi

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो मां, आप जो पहलेसे ही जानती हैं और जो भौतिक रूपसे जानती हैं उसमें क्या फर्क है? कहनेका मतलब, यह जरूरी क्यों है कि सब . . .।

क्या तुम मानते हो कि मैं सब जगह जा सकती हूं और सब कुछ देख सकती हूं?

दुर्भाग्यवश मेरे केवल एक सिर, दो हाथ और दो पैर हैं और इसलिये इसमें बहुत समय लगेगा। मैं अपना समय सब जगह दौड़नेमें ही बिता दूंगी।

नहीं। **कहनेका मतलब, चूंकि आप पहलेसे ही जानती हैं कि आश्रममें क्या हो रहा है तो हर एक विभागाध्यक्षको आपके पास सूचना देनेके लिये आनेकी क्यों जरूरत है?**

नहीं, नहीं, वे मुझे सूचना देने नहीं आते? वे आते हैं मुझसे आज्ञा लेने। ये दोनों एक ही नहीं हैं। और अगर मैं उन्हें रात-को आदेश दूं तो वे मेरी बात सुन नहीं पाते या अगर संयोगवश कुछ सुन भी लें तो हो सकता है कि ठीक उल्टा ही हो। वे अपनी कल्पनाके अनुसार मनमानी करेंगे। नहीं, कोई सूचना नहीं। वह इसलिये कहते हैं क्योंकि वे जो कहना चाहते हैं उसे कहनेमें उनको खुशी होती है। अगर मैं उनसे तुरत कह दूं: "ठीक है! मुझे मालूम है! मुझे मालूम है!" . . . कभी-कभी जब मैं जल्दीमें रहती थी तो इस तरह कहती थी। लेकिन इससे उन्हें जोरका धक्का लगता है और वे सोचते हैं, "इन्हें कैसे मालूम हो सकता है जब कि इन्होंने मुझसे पूछातक नहीं?" उनके अनुसार केवल वे ही मुझे ठीक-ठीक सूचना दे सकते हैं। अगर वे मुझे न समझायें तो मुझे कुछ मालूम ही न होगा। वे यही सोचते हैं इसलिये उन्हें समझाने देना पड़ता है। कभी-कभी अगर बहुत समय लग रहा हो और मेरे पास ज्यादा समय न हो तो मैं उनसे कहती हूं, "ठीक है, ठीक है, मैं जानती हूं, चलो विषयपर आओ, तुम क्या जानना चाहते हो?" तो इससे वे बहुत विक्षुब्ध हो जाते हैं।

(क्रमशः)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Registered with the Registrar of Newspapers for India
No. R. N. 18135/70
REGD. No. M. 873

सोसायटी समाचार

नया प्रकाशन (अंग्रेजी) फ्लावर्स एंड देअर सिग्निफिकेंस

फूलों के आध्यात्मिक प्रतीकके बारेमें विजय पोद्दार द्वारा प्रकाशित एक सचित्र सुन्दर-सी पुस्तक; मूल्य २५ रु.; डाक व्यय अतिरिक्त. शब्द, श्रीअरविंदाश्रम पांडिचेरीमें प्राप्य है।

वीडियो कैसेट–सोसायटीने फूलों के बारेमें एक अंग्रेजी वीडियो कैसेट तैयार किया है जिसमें फूलोंके रंगीन चित्र, माताजीके दिये हुए उनके प्रतीक दिये गये हैं। मूल्य २००, विक्रय कर ८ रु.। जो लोग डाकसे मंगाना चाहें वे नव-विहान, द्वारा शब्दको २२८ का ड्राफ्ट भेज सकते हैं।

एक और वीडिओ कैसेट उपलब्ध है जिसमें श्रीअरविंदकी जीवनी, श्रीअरविंदाश्रम, नूतन शिक्षा-पद्धति और फूलोंकी मूक भाषा पर चार डाक्यूमेंटरी तैयार की गयी हैं, अभी यह अंग्रेजीमें ही तैयार है जिसका दाम, विक्रय कर आदि मिलाकर ५२० रु. पड़ेगा परंतु अन्य भारतीय भाषाओंमें भी इसे तैयार करनेकी कोशिश की जा रही है, विक्रय कर आदि मिला कर इसका दाम संभवतः ४१६ पड़ेगा। जो लोग जिस भाषा में लेना चाहें उसकी सूचना श्री महादेविया, श्रीअरविंद सोसायटी, पांडिचेरी-६०५००२ को दे दें तो आवश्यकताके अनुसार कैसेट तैयार करनेमें सुविधा रहेगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

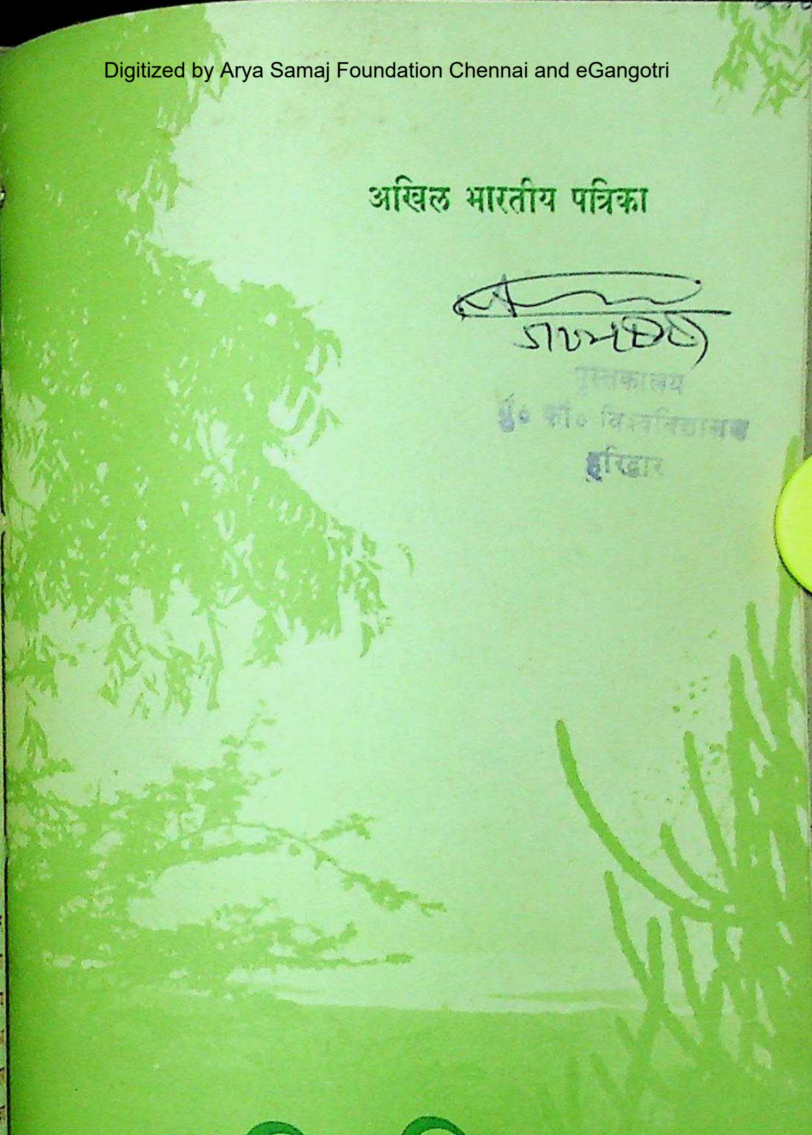

अखिल भारतीय पत्रिका

पुस्तकालय
गु० कां० विश्वविद्यालय
हरिद्वार

अग्निशिखा

दिसंबर १९८८

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अग्निशिखा दिसंबर १९८८ वर्ष १९, अंक ५, पूर्णांक २२१

विषय-सूची

संदेश		१
संपादकीय : एकाग्रता	अनुबेन	३
(२) पाठकोंसे		४
दैनन्दिनी		५
'योगके तत्त्व' पर माताजीके साथ प्रश्नोत्तर		१०
श्रीअरविंदका शरीर-त्याग		१६
ऋषिवर बोले—समान लक्ष्य		२६
गीर्वाण-वाणी		३०
अमृत-बिन्दु		३१
दाता		३३
सोसायटी समाचार		आ० ३

चंदा मासिक रु. १० वार्षिक रु. २२५

श्रीअरविंद सोसायटीकी मासिक पत्रिका

संपादक : रवींद्र, अनुबेन
प्रकाशक : श्रीअरविंद सोसायटी, पांडिचेरी-६०५००२
मुद्रक : अमियरंजन गांगुली, श्रीअरविंद आश्रम प्रेस, पांडिचेरी-६०५००२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकालय
गु० कां० विश्वविद्यालय
हरिद्वार

उद्‌बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि

संदेश

भारत की सच्ची नियति के लिये वर्तमान संकट

इस समय भारतके अपने लिये गहरे निर्णयका विषय उपस्थित है चूंकि कई लुभावनी दिशाओंका अनुसरण करके वह संभवतः अन्य राष्ट्रोंकी तरह ऐसा राष्ट्र बन सकता है जो समृद्ध वाणिज्य और उद्योगका विकास कर पाये, सामाजिक और राजीनीतिक जीवन-का एक सबल संगठन बना पाये, विशाल सैन्य बल, उच्च कोटिकी सफलताके साथ सत्ताकी राजनीतिका प्रयोग कर पाये, अपने हितों और विजयोंकी उत्साहके साथ रक्षा और वृद्धि करे, यहांतक कि संसारके बड़े खंडपर आधिपत्य जमा पाये, लेकिन इस स्पष्टतः गौरवशाली प्रगतिके बावजूद अपने स्वधर्मसे वंचित रहकर, अपनी आत्माको गंवा बैठे। तब पुरातन भारत और उसकी संस्कृति पूरी तरह विलीन हो जाएगी और हमारे पास रह जाएगा एक ऐसा राष्ट्र जो और राष्ट्रों जैसा होगा और यह न हमारे लिये; न संसार के लिये हितकर होगा। यह समस्या भी खड़ी हो सकती है कि भारत हानिरहित रूपसे बाह्य जीवनमें समृद्ध हो जाये किन्तु अपनी

*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समृद्ध, सघन और स्थिर आध्यात्मिक अनुभूतियों और ज्ञानसे हाथ धो बैठे। अगर भारत इस समय अपनी आध्यात्मिक विरासतको उसी क्षण बाहर फेंक दे जब बाकी संसार उसकी आध्यात्मिक सहायता और उद्धारक प्रकाशकी ओर अधिक-से-अधिक मुड़ रहा है तो वह नियतिका क्रूर व्यंग्य होगा। यह न होना चाहिये और निश्चय ही न होने दिया जायेगा किन्तु हम यह नहीं कह सकते कि यह खतरा नहीं है। अवश्य अन्य बहुत-सी और कठिन समस्याओंका सामना यह राष्ट्र कर रहा है या जल्दी ही उसे उनका सामना करना पड़ेगा, यह बात निःसंदेह है कि हमारी जीत होगी लेकिन अगर हमें भारतकी सच्ची नियतिको चरितार्थ करना है तो हमें अपने-आप से इस तथ्यको छिपाना न चाहिये कि बहुत वर्षोंकी पराधीनता और उसके जकड़नेवाले, दुर्बल करनेवाले प्रभावके बाद आंतरिक और बाह्य मुक्ति और परिवर्तन, महान् आंतरिक और बाह्य प्रगति आवश्यक हैं।

*

और इस संदिग्ध परिस्थिति से दोमेंसे एक ही परिणाम आ सकता है; या तो भारतका बौद्धिककरण, औद्योगीकरण ऐसा हो कि भारतको पहचानना असंभव हो जाये और भारत ही न रहे या फिर संसारके एक चरणमें वह नेता होगा। अपने उदाहरणसे और सांस्कृतिक फैलाव से पश्चिमकी नयी प्रवृत्तियोंकी सहायता करेगा और मानव जातिको आध्यात्मिक बना देगा। यही मूलभूत और मार्मिक प्रश्न है। क्या वह आध्यात्मिक उद्देश्य जिसका भारत प्रतिनिधित्व करता है यूरोपकी जीत पाएगा और पश्चिमके लिये अनुकूल रूपोंका सृजन कर पाएगा या फिर यूरोपीय बौद्धिकवाद और वाणिज्यवाद हमेशाके लिये भारतीय संस्कृतिका अन्त कर देगा?

—श्रीअरविंद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संपादकीय :

एकाग्रता

इस समय सारे संसारकी आंखें ओलम्पिक प्रतियोगिताओंके परिणामोंपर लगी हैं और भारतका नागरिक अपने राष्ट्रकी असफलता और पराजयसे हताश और स्तब्ध रह गया है। बात है भी खेद और चिंताकी, किंतु इससे भी अधिक हमें अपने-आपसे पूछना चाहिये कि आखिर ऐसी स्थिति का कारण क्या है! भारत आबादीके हिसाब से संसारमें दूसरे स्थानपर है इसलिये क्षमताके अभावका प्रश्न नहीं उठता, न ही चुनाव करनेमें कोई असुविधा होनी चाहिये। हाथी-सा विशाल देश किस दलदलमें फंस कर ऐसा असहाय और दुर्बल वन गया है?

उत्तर शायद सब जानते हैं फिर भी आत्म-परीक्षणके इस क्षणमें उसे दुहराना अच्छा होगा। सबसे महत्त्वपूर्ण दोष है उन लोगोंका जो खिलाड़ियोंको चुनते समय राष्ट्र-हितका न सोचकर परिवार-हित, मित्र-हित आदिकी बात सोचते हैं।

दूसरा उतना ही बड़ा दोष खिलाड़ियोंका है जो न नियंत्रणमें रहते हैं और न खेल-समितिके शिविरोंमें पूरे अनुशासनसे अपने शरीर और मनको तैयार करते हैं। उनमें भी देश-प्रेम सर्वोपरि नहीं रहता। हां, जब ओलम्पिक जैसे खेलोंमें हारते हैं तब दुःखी अवश्य होते हैं किन्तु उससे अपने हृदयमें उस अग्निको नहीं जगा पाते जिसके सामने कुछ भी, कोई भी न टिक पाये।

हमने देखा कि भारतकी इस दुर्दशाके कारण हैं–

१–अधिकारियोंमें देश-प्रेमकी कमी, अनासक्तिकी कमी।

२–खिलाड़ियोंमें अनुशासन-हीनता, संयमका अभाव।

३–अंतिम दिनतक स्पोर्ट्स बॉडीमें धांधली, पूरा कुहराम। वे ठीक नहीं कर पाते कि कौन जाएगा और कौन नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह अंधेर केवल सरकारी संस्थाओंमें नहीं सारे भारतमें फैला हुआ है; कहीं भी देखें, वाणिज्यमें, शिक्षामें, नगरपालिकामें, मकान निर्माणमें, अर्थात् हमारे सारे व्यापारोंमें यही अंधेर फैला है।

इतना कहकर हम चुप नहीं रह सकते क्योंकि इसमें हमने कोई नयी बात नहीं कही है। इन समस्याओंका कोई हल ढूंढ़ना है।

अभी कुछ दिन पहले श्रीमाताजीकी वाणी पढ़ते समय उनका एक वाक्य मानों हमारी सभी समस्याओंका समाधान देता प्रतीत हुआ उन्होंने कहा कि मनुष्यकी सभी अक्षमताओंका इलाज है "एकाग्रता"। हम अपनी एकाग्रताको जितना बढ़ाएंगे उतना ही हमारा काम अच्छा होगा, उसकी मात्रा बढ़ेगी और माताजीका कहना है कि धीरे-धीरे ऐसी एकाग्रता प्राप्त की जा सकती है जिसके सामने कोई भी टिक न पाएगा।

तो हमारा मंत्र और प्रयास होना चाहिये

एकाग्रता,
अधिक एकाग्रता,
सर्वजयी एकाग्रता।

—अनुवेन

(२)

पाठकोंसे

आजकल हिन्दी प्रकाशनकी अवस्था शोचनीय है। दिल्लीसे काशी, बनारससे बिहारतकके प्रकाशकोंका यही रोना है कि पुस्तकोंके दाम बहुत बढ़ते जा रहे हैं और उन्हें खरीदना असंभव होता जा रहा है। बात है भी ठीक। हमने कुछ वर्ष पहले हिन्दी शब्द सागरका १७ रुपयोंमें खरीदा था और बढ़ते-बढ़ते आज उसका दाम १२१ हो गया है और वह भी ज्यादा नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

माताजी और श्रीअरविंदकी पुस्तकें सस्ते दामोंमें देनेकी मांग चारों ओरसे आती है लेकिन सस्ती पुस्तकें छापना हमारे लिये एक तरहसे अभिशाप हो गया है। पुस्तक-प्रकाशनका मजा तभी है जब पुस्तकें निकलती रहें, झाड़ पोंछकर आलमारियोंमें भर कर न रखनी पड़ें।

कागज, स्याही, बिजली—छपाईके लिये जरूरी चीजें हैं। दाम कैसे बढ़ रहे हैं यह तो सभी जानते हैं। डाक-व्यय भी किसीसे पीछे नहीं है। इन सबके ऊपर तुर्रा यह कि सामान्य पाठक मांगता है सस्ती पुस्तक और पुस्तक विक्रेता अपनी दुकानमें सस्ती पुस्तक रखनेसे बिदकता है। उसका कहना है कि पुस्तक सस्ती हो या मंहगी उसकी देखभाल तो करनी ही पड़ती है, उसके लिये गोदाममें जगहकी जरूरत होती है, उसे बेचनेके समय बिल बनाना पड़ता है। पचास रुपयेकी पुस्तकपर भी हमें ये खर्च करने पड़ते हैं और दो रुपयेकी पुस्तकपर भी। पचासकी पुस्तकपर भी हमें कमीशन देना पड़ता है और पांच की पुस्तकपर भी। अब बतलाइये आपकी दो चार रुपयेकी पुस्तकपर हमें क्या मिलेगा जो हम इसे रखें और बेचें या इसके लिये प्रयास करें—हां बहुत बड़ी संख्यामें बिक रही हों तो फिर भी कोई बात है।

हम पाठकोंकी सस्ती पुस्तककी मांग पूरी करनेके लिये पुस्तकें सस्ते दामपर देनेकी कोशिश करते हैं लेकिन परिणाम क्या होता है ? पुस्तककी दो हजार प्रतियां निकलनेमें दस वर्षसे ऊपर लग जाते हैं और इधर कागज खराब होने लगता है।

जिन लोगोंको माताजी और श्रीअरविंदके साहित्यको हिन्दीमें पाने या वितरण करनेकी इच्छा है हम उनसे यह जानना चाहेंगे कि ऐसी स्थिति में वे हमें क्या करनेकी सलाह देते हैं—और उससे भी बढ़कर यह कि वे अपने-आप इस दिशामें क्या कर सकते हैं ताकि इस साहित्यका प्रसार हो सके; जिन्हें लगता है कि उज्ज्वल भविष्यकी चाबी श्रीअरविंद और माताजीके हाथमें है, कि उनका संदेश मानव मात्रका कल्याण करेगा उन्हें इस दिशामें कुछ तो करना ही चाहिये।

2

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक पाठकको उत्तर

अभी कुछ दिन पहले एक सहृदय पाठक का पत्र मिला जिसमें वे अपना आक्रोश और दुःख प्रकट करते हैं कि अग्निशिखा जैसी उच्च स्तरीय पत्रिकाके जुलाई संपादकीयमें बस यात्राकी भीड़ और किसी फ्रेंच महिलाका भारतीयोंकी अनुशासनहीनतापर टिप्पणीका उल्लेख किया गया था।

हमें अत्यंत खुशी हुई कि हमारे पाठक इतनी रुचिसे पत्रिका पढ़ते हैं, उसपर मनन करते हैं।

आगे बढ़नेसे पहले हमें कुछ स्पष्टीकरण करना चाहिये।

यह बात सच है कि अग्निशिखाका निर्माण माताजी और श्रीअरविंदकी शिक्षा और योगको जनतातक पहुंचानेके लिये हुआ है किंतु साथ ही हमारा उद्देश्य जीवनकी छोटी-मोटी विसंगतियोंकी ओर जनताका ध्यान खींचना भी है। जैसा कि हमारे पाठक जानते हैं, श्रीअरविंदका दृष्टिकोण इतना विशाल और व्यापक है कि उनके योग-में समस्त जीवनका समावेश होता है। उनकी दृष्टिमें कला, साहित्य, समाज-शास्त्र और गृहस्थ जीवन, सब योगके साधन हो सकते हैं।

हम इसी दृष्टि से जीवनको देखनेकी कोशिश करते हैं।

भारत श्रीअरविंदके अंतर्दर्शनमें विशिष्ट स्थान रखता है क्योंकि भागवत आदेशके अनुसार इस युगमें भारतको सारे संसारका नेतृत्व करनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ है। जब हम यह जानते हैं तब स्वाभाविक रूपसे भारतमें घटती प्रत्येक छोटी-बड़ी घटना अत्यंत महत्त्वपूर्ण बन जाती है। बसमें जानबूझकर भीड़ करना, कानून-का उल्लंघन करना, ये सब सामान्य घटनाएं हो सकती हैं किन्तु जब हम संसारमें भारतकी भूमिकाको याद करते हैं तो यह गंभीर समस्या बन जाती है। माताजीने कहीं लिखा है कि अनुशासनके बिना कोई भी महत्त्वका, महान् कार्य नहीं हो सकता। इस पृष्ठभूमिमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतके नागरिकों का प्रत्येक सामूहिक कार्य उनका, भारतीय चरित्र-का चिह्न बन जाता है और इसलिये उसका महत्त्व बहुत होता है। हम समझते हैं कि अपने पाठकोंको जाग्रत करना, चेताना हमारा कर्तव्य है। बड़ी घटनाएं तो सभी देखते हैं, छोटी रोजमर्राकी बातोंकी ओर ध्यान नहीं जाता "ऐसा तो होता ही है" कहकर इनकी अव-हेलना कर दी जाती है। हमारे पाठक हमारे दृष्टिकोणको समझकर, उसपर मनन करते हुए, सच्चे और सुयोग्य भारतीय, भारत माताकी सच्ची संतान बननेका यत्न करेंगे।

—अनुवेन

दैनन्दिनी

दिसंबर

१. तुम्हारे हृदयकी नीरवतामें भगवान् तुमसे बोलेंगे और तुम्हारा पथ-प्रदर्शन कर तुम्हें लक्ष्यकी ओर ले जाएंगे। लेकिन उसके लिये तुम्हें भागवत करुणा और प्रेममें पूरा विश्वास होना चाहिये।

२. भगवान् तुम्हारे हृदयमें बैठे हैं, सचेतन रूपसे तुम्हारे अंदर निवास करते हैं।

३. छोटे बच्चोंको अच्छे स्वास्थ्य, शारीरिक शक्ति और संतुलन पर गर्व करना सिखाना चाहिये। सौंदर्यके महत्त्वपर भी जोर देना चाहिये।

४. छोटे बच्चेको सौंदर्यके लिये अभीप्सा करनी चाहिये, दूसरोंको रिझानेके लिये या उनकी सराहना पानेके लिये नहीं बल्कि स्वयं सौंदर्यके लिये उसे अभीप्सा करनी चाहिये; क्योंकि समस्त भौतिक जीवनका आदर्श होना चाहिये सौन्दर्यको चरितार्थ करना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. गणेश वह शक्ति है जो ज्ञानकी शक्तिद्वारा विघ्नोंको हटाती है।
६. कार्तिकेय विरोधी शक्तियोंपर विजयका प्रतीक हैं। ये नाम मनुष्यके दिये हुए हैं लेकिन इन देवोंका अस्तित्व है।
७. भगवान्‌के रूपमें कृष्ण आनंद, प्रेम और भक्तिके स्वामी हैं, अवतारके रूपमें वे ज्ञान और कर्मके ऐक्यको अभिव्यक्त करते हैं और उसके द्वारा पार्थिव विकास को आनंद, प्रेम और भक्तिसे भगवान्‌के साथ ऐक्यकी ओर ले जाते हैं।
८. सृजनात्मक, आध्यात्मिक उपलब्धिकी पूर्णताके लिये जीवन अनिवार्य है, किंतु वह जीवन जो मुक्त हो, रूपांतरित हो, उच्चाशयी हो, सामान्य मानसिकता से पूर्ण मानव-पशु जीवन नहीं, आसुरिक या दानवीय जीवन नहीं, वह जीवन भी नहीं जिसमें दिव्य और अदिव्य घुल-मिल गये हों।
९. प्रेम और ज्ञान ही भगवान्‌के रूप नहीं हैं, उनका शक्ति रूप भी है।
१०. तुम जो भी काम करो, उसे पूरी सचाईके साथ करना, जितना पूर्ण हो सके उतना पूर्ण करना, यह भगवान्‌की सेवा करनेके उत्तम उपायोंमें एक है।
११. भागवत कृपा सक्रिय वास्तविकता है जो हमारी नियतिका युगों-से पथ-प्रदर्शन करती आयी है।
१२. अपने अंदर की सृजनात्मक वास्तविकताको जाननेके लिये तुम्हें अपने अंदर गहराईमें जाना चाहिये और अपनी सत्ताके शाश्वत तत्त्वको पाना चाहिये।
१३. स्वार्थपरताको ठीक करना सापेक्ष रूपसे सरल है क्योंकि सब जानते हैं वह क्या है। अगर तुम सचमुच चाहो और कृत-संकल्प हो तो उसे पकड़ कर ठीक करना सरल है।
१४. जो कुछ करो, जिन तरीकोंका प्रयोग करो और चाहे तुमने उनमें बहुत कौशल और शक्ति प्राप्त की हो, फिर भी परिणाम भगवान्‌के हाथोंमें सौंप दो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१५. तुम हमेशा प्रयास कर सकते हो, किंतु तुम्हारे प्रयत्नका फल देना या न देना भगवान्‌के ऊपर निर्भर है।

१६. पृथ्वीपर कठिन घड़ियां आती हैं ताकि वे मनुष्यको अपनी क्षुद्र स्वार्थपरतापर विजयी होनेके लिये बाधित करें और वे सहायता और प्रकाशके लिये पूरी तरह भगवान्‌की ओर मुड़ें।

१७. अगर तुम मानव जातिकी सहायता करना चाहो तो करने लायक काम एक ही है; वह है अपने-आपको पूर्ण रूपसे हाथोंमें लो और भगवान्‌के अर्पित हो जाओ।

१८. अवसाद तीव्र अहंकारका चिह्न है। जब तुम पाओ कि वह तुम्हारे पास आ रहा है, अपने-आपसे कहो "मुझे अहम्‌की बीमारी लगी है, मुझे अपनी चिकित्सा करनी होगी।"

१९. उत्साहकी क्षमता, ऐसी चीज है जो तुम्हें अपने दुःखद, क्षुद्र छोटे-से अहम्‌से बाहर निकाल फेंकती है और उदार कृतज्ञता, जो कृतज्ञता व्यक्त करते हुए छोटे-से अहम्‌से उछल पड़ती है—ये दो अत्यंत मजबूत उत्तोलक हैं जिनसे तुम अपनी चैत्य सत्तामें स्थित भगवान्‌के साथ संबंध जोड़ सकते हो।

२०. तुम्हें हंसना चाहिये, हमेशा हंसना चाहिये। भगवान् हंसते हैं, उनकी हंसी कितनी अच्छी है, कितनी, अच्छी, कितनी प्रेम भरी है!

२१. सबसे अच्छी बात यह है कि अपने-आपको न बड़ा मानो न छोटा, न तो बहुत महत्त्वपूर्ण, न नगण्य क्योंकि हम अपने-आपमें कुछ भी नहीं हैं। हममें केवल वह बननेकी चाह होनी चाहिये जो भगवान्‌की इच्छा चाहती हो।

२२. दुर्बल होनेके विचारको ही क्यों स्वीकार किया जाय? यह बात बुरी है।

२३. शांत रहो, क्षुब्ध न होओ, याद रखो कि हमारे जीवनकी परिस्थितियां बिल्कुल सामान्य नहीं हैं! भागवत शक्तिपर भरोसा रखो, वह सब कुछ व्यवस्थित कर देगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२४. भय बुरा सलाहकार है—वह चुम्बककी तरह काम करता है और हम जिससे डरते हैं उसे आकर्षित करता है।

२५. दुःखी मत होओ। तुम्हें धैर्यसे लैस होना चाहिये और परम विजयपर विश्वास रखना चाहिये।

२६. जब तुम अन्तरके भगवान्‌के साथ एक होते हो तो तुम सभी चीजोंके साथ गहराइयोंमें एक हो जाते हो।

२७. दूसरोंके साथ रहते हुए तुम्हें हमेशा दिव्य उदाहरण होना चाहिए।

२८. तुम्हें औरोंके लिये एक अवसर होना चाहिये जो उन्हें भागवत जीवनको समझने और दिव्य जीवनके मार्गपर चलनेके लिये दिया गया हो।

२९. माताजीके प्रति स्वयंको हमेशा खुला रखो, उन्हें हमेशा याद रखो, उनकी शक्तिको अपने अंदर कार्य करने दो।

३०. तुम्हें केवल अपने प्रयासोंपर निर्भर नहीं रहना चाहिये बल्कि भगवान्‌के साथ संपर्क स्थापित करने और उनकी शक्ति और उपस्थितिके प्रति ग्रहणशील होना चाहिये।

३१. सहनशीलता और नमनीयता, प्रसन्नता, निर्भीकता ऐसी चीजें हैं जिनकी भौतिक प्रकृतिकी परीक्षाओंमें खास जरूरत होती है।

'योगके तत्त्व'पर माताजीके साथ प्रश्नोत्तर

(गतांकसे आगे)

३० जून १९५४

उदाहरणके लिये, मां, अगर हमने कुछ किया...

खराब काम।

हां।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कभी-कभी अच्छा भी, हैं ?

नहीं, अधिकतर खराब। तब हम अपने-आपसे कहते हैं: "माताजी तो जानती हैं।" इसकी जगह क्या आपके पास आकर कह देना बेहतर नहीं होगा ?

हां! क्योंकि यहां . . . इस बातका ख्याल रखो कि अगर तुमने कुछ खराब काम किया है, अगर तुमने कोई ऐसा काम किया जिसके बारेमें तुमको मालूम था कि नहीं करना चाहिये, उदाहरणके लिये, तुम कहते हो: "माताजी तो जानती ही हैं तो उनसे कहनेका कोई अर्थ नहीं," तो तुम उसे अपने अंदर डाल लेते हो। तुम उसपर बड़ी सावधानीसे दरवाजा बंद कर देते हो, और फिर उसे अपने हृदयमें या कहीं और संजोये रखते हो। उसके विपरीत, अगर तुम उसका विचारतक न करो . . . तुम्हें बेचैनी होती है, कोई चीज अंदर बल खाती है, वह प्रिय नहीं है . . . "अच्छा, मैं माताजीको बताने-वाला हूं।" शुरू करते वक्त बहुत बड़ा प्रयास करना पड़ता है, है न! गलेमें कुछ अटकने लगता है, जीभ सूख जाती है, शब्द ढूंढ़ना मुश्किल हो जाता है—सचमुच पता नहीं लगता कि कैसे क्या किया जाय—आह! लेकिन अब तुम संकल्प कर चुके हो, बहुत प्रयास करते हो—तुम शब्दोंको एक-एक करके खींच निकालते हो, इस तरह, बहुत मेहनतके साथ आखिर कह देते हो, यथासंभव ठीक-ठीक कहते हो। मेरे बच्चे, उससे एक द्वार खुल जाता है इतना बड़ा, और मैं सीधी चैत्य पुरुषमें प्रवेश कर सकती हूं, बस, तुमने जो सच्चाईके साथ प्रयास किया है उसीमें होकर। और तब, जब मैं प्रवेश करती हूं तो अंदर मैं सारा प्रकाश, सारी शक्ति, सारी इच्छा-शक्ति, सारी चेतना, सारा संकल्प उंडेल देती हूं ताकि जो किया है उसे दोबारा न कर पाओ। जिस प्रकार प्यालेमें ज्यादा डालनेसे वह छलक उठता है, उसी प्रकार बहुत कुछ छलककर गिर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाता है लेकिन फिर भी थोड़ा-बहुत बच रहता है। और तब यह चीज "थोड़ा-बहुत" ही काम करती है। और अगर तुम इस प्रयास-को फिर-फिर करो, जबतक कि तुम यह अनुभव न करने लगो कि ...तो मेरे पास कहनेके लिये कुछ नहीं है क्योंकि छिपानेके लिये कुछ नहीं बचा !—तब सब कुछ बहुत अच्छा हो जाता है। तुमने बहुत प्रगति कर ली है।

मधुर मां, कक्षामें जब हम आपसे प्रश्न पूछते हैं, तो कभी-कभी प्रश्न बहुत आसानीसे आते हैं, यंत्रवत्, और कभी-कभी संकोच होता है...

जानते हो, अधिकतर प्रश्न बुरी तरह पूछे जाते हैं, क्योंकि तुम यह नहीं जानते कि तुम क्या जानना चाहते हो। मेरे कहनेका मतलब यह है कि तुम्हें इस बातका ठीक ज्ञान नहीं होता कि तुम क्या जानना चाहते हो। तुम्हारे सिरमें शब्दोंका एक समूह होता है, विचारकी वह सचेतनता नहीं जो स्पष्ट होनेकी कोशिश करती है। वे केवल शब्द ही हैं जो तुम्हारे दिमागमें एक-दूसरेसे टकराते रहते हैं, जिन्हें तुम उस क्रममें नहीं रख पाते जिससे तुम उनका अर्थ समझ सको। इसलिये तुम आसानीसे व्यक्त नहीं कर पाते, क्योंकि तुम सोचते नहीं। प्रश्न विचारसे नहीं आता। वह एक प्रकारकी यांत्रिक चीज है जो दिमागसे आती है। तुम जिस अनुभूतिको यथार्थ रूपसे व्यक्त करना चाहते हो या अपने दिमागमें जिस विचार-को क्रममें रखना चाहते हो उसके बारेमें यदि तुम्हारी चेतना स्पष्ट हो तो तुम उसे बहुत स्पष्ट रूपसे व्यक्त कर सकते हो और तब उसके साथ-ही-साथ तुम्हारा दिमाग भी उत्तर पानेके लिये तैयार रहता है। लेकिन अगर केवल शब्दोंकी टक्करके साथ—शब्द इसी तरह आते हैं, है न, तुम तीन-चार शब्दोंको जोड़ते हो, फिर विचार-को प्रस्तुत कर देते हो... मैं उत्तर देती हूं क्योंकि मैं सोचती हूं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि कुछ लोग तो होंगे ही . . . कि कहीं, किसी दिमागमें बात घुस जायगी। लेकिन अन्यथा, अधिकतर, मैं जो बोलती हूं दिमाग उसे समझनेके लिये भी तैयार नहीं होता। पूछनेसे पहले अच्छी तरह विचार करना चाहिये और तुम जो पूछना चाहते हो उसपर अच्छी तरह एकाग्र होना चाहिये, उसे स्पष्ट रूपसे देखना चाहिये। अन्यथा, मनका वह अंश जो समझता है वह नहीं पूछता। वह केवल एक सतह है जो निरंतर गतिमें रहती है, उन शब्दोंकी गतिविधिमें जो एक-दूसरेके साथ कम या अधिक अच्छा संबंध रखते हैं, जो एक साथ आते हैं, जाते हैं, गुजरते हैं और वही सतह बोलती है, वही पूछती है, लेकिन वास्तवमें वह कुछ समझ नहीं पाती।

कितनी बार मैंने तुम्हें वही-की-वही बातें बतलायी हैं और अगर कभी मैं तुमसे उनके बारेमें एक सप्ताह बाद भी पूछ लूं तो वे तुम्हें याद नहीं होतीं! कितनी बार तुम मुझसे एक ही प्रश्न पूछते हो, क्योंकि तुमने प्रश्न तो कर दिया था लेकिन तुम उत्तरको समझ पानेकी अवस्थामें नहीं थे। कोई चीज अंदर नहीं टिकती—केवल शब्द आते-जाते रहते हैं। बस। यह ठीक वैसा ही है जैसे तुम एक पाठ कंठस्थ करते हो: उसमें केवल शब्द ही इस तरह आते-जाते हैं। कोई चीज, कोई भी चीज अंदर नहीं पैठती, सच्चे विचार-में कहीं भी स्थापित नहीं होती। तब कोई असर नहीं होता और तुम्हारी समझमें कुछ नहीं आता। प्रमाण यह है कि कितनी ही बार मैंने तुमसे पूछा है, मैंने कहा है: "लेकिन निश्चय ही मैं तुम्हें यह बता चुकी हूं।" तुम्हें यादतक नहीं होता।

ऐसा बहुधा हुआ है न—लेकिन प्रायः यह बहुत छोटे बच्चोंके साथ होता है—यहांतक कि तुम्हारे साथ भी ऐसा हुआ है कि किसीने मुझसे पूछा और मैंने उत्तर दिया है। दूसरा व्यक्ति दूसरे शब्दोंमें फिर वही पूछता है। अगर मैंने जो कुछ कहा है वह तुमने सुना होता तो तुम देखते कि तुम जो पूछ रहे हो उसका उत्तर मैं दे चुकी हूं। यह सब इसी तरह चलता है, जानते हो, बिल्कुल इसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तरह, एकदम सतही विचार। कोई चीज अंदर नहीं पैठती, आंतरिक बुद्धिमें स्थापित नहीं होती। इसीलिये तुम प्रश्न नहीं कर पाते: क्योंकि तुम सोचते नहीं . . . केवल शब्द खेलते रहते हैं।

माताजी, एक अंतिम प्रश्न। कल खेल-कूदका दिन है इसलिये . . .

अब अगर हम एक छोटी-सी अंधविश्वास भरी प्रार्थना करें कि वर्षा न हो। (हंसी) लेकिन जानते हो, बादलोंमें, हवामें छोटी-छोटी सत्ताएं होती हैं, ये सत्ताएं प्राणके क्षेत्रकी हैं। वे पूर्ण रूपसे दुष्ट नहीं होतीं, वे बहुधा बहुत नटखट होती हैं। अधिकतर वे प्रकृतिके विशाल और सामान्य नियमोंका पालन करती हैं, लेकिन ऐसी सत्ताएं हैं जो कुछ स्वतंत्र होती हैं और जिनके कारण स्थानीय वर्षाएं होती हैं इत्यादि। शायद (मैं कह चुकी हूं कि इन छोटी सत्ताओंको प्रार्थनाएं बहुत अच्छी लगती हैं), शायद इसलिये अगर हम उनसे कहें: "मैं तुमसे विनती करता हूं, थोड़ी-सी दया करो, कल हमारा उद्घाटन है, शरारत मत करो। अगर बरसनेकी इच्छा हो तो शामतक ठहर जाओ, आकर हमारे छोटे-से अधिवेशनमें बाधा मत डालो," तो शायद कुछ असर हो जाय।

तुम्हें याद है, जब वर्षाका अभाव था तब लोगोंने हमसे कहा था कि अगर हम प्रार्थना करें तो वर्षा होगी? और उस दिन हमें खूब मजा आया था वर्षाको बुलानेमें—फिर वर्षा हुई थी, याद है? बादमें सचमुच वर्षा हुई थी। हां तो, बात ऐसी है। यह प्राणका क्षेत्र है।

अब तुम जो कहना चाहते थे कहो!

माताजी, जिस दिन कोई प्रतियोगिता होती है उस दिन हम आपको ज्यादा पुकारते हैं। माताजी, तो लेकिन क्या . . .

हां, हां, मेरे बच्चो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो माताजी, क्या अपने निजी उद्देश्यको पूरा करनेके लिये आपको बुलाना बुरा नहीं है?

निजी उद्देश्य? तुम इसीके लिये तो यहां हो। अगर तुम यथा-संभव अच्छे-से-अच्छा करनेके लिये पुकारो तो इसमें कोई हर्ज नहीं है। लेकिन यह सच है, जानते हो, कि जब मैं वहांसे, अधिवेशनके अंतमें लौटती हूं तो मैं एकदम चूर हो जाती हूं। मुझे विश्राम लेना पड़ता है....वह खींचता है, कभी-कभी तो भयंकर रूपसे खींचता है। यहां पहली दिसंबर और दूसरी दिसंबरको जो कार्यक्रम होते हैं या इसी तरहके कार्यक्रम, वे खींचते हैं, खींचते हैं, खींचते हैं... फिर कुछ मिनट बाद वह ठीक हो जाता है। वह कोई गंभीर चीज नहीं होती लेकिन यह सच है कि वह खींचता है।

लेकिन मुझे कोई आपत्ति नहीं है। इसके विपरीत, स्वयं मैं ही तुमसे कहती हूं: "मेरे बच्चो, अगर तुम कोई कठिन चीज कर रहे हो तो मुझे पुकारो, मुझे पुकारो।" इसलिये नहीं कि तुम पहले आ जाओ या तुम्हें विजय प्राप्त हो बल्कि इसलिये कि तुम्हारे साथ कोई अप्रिय चीज न होने पाये। मुझे इसलिये पुकारो ताकि तुम जो कर रहे हो वह यथासंभव अच्छे-से-अच्छा हो। बड़प्पन दिखानेके लिये नहीं बल्कि अच्छी तरह करनेकी खुशीके लिये। और फिर, तुम उस चीजको निवेदनके रूपमें करनेके लिये भी मुझे पुकार सकते हो। तब वह बहुत अच्छी होती है।

मधुर मां, खींचनेके अतिरिक्त बुलानेका कोई और तरीका नहीं है?

है, मेरे बच्चे। लेकिन वह बहुत ज्यादा कठिन है। हां, एक और तरीका है, एक सच्चा तरीका है... वह ज्यादा कठिन है।

लेकिन यह भी ठीक है। मुझे इससे कोई शिकायत नहीं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनुभव पानेकी अपेक्षा मुझे यह ज्यादा पसंद है। जब मैं लोगोंको देखती हूं तो उस छोटे बादलको देखना, यह महसूस करना कि कोई दुर्घटना होनेवाली है, कि कुछ होगा, और रक्षा करनेके लिये उसे भेजना, और अपने-आपको उस व्यक्तिके सामने पाना जो बंद और अचेतन है, और जिसे यह दृढ़ विश्वास है कि वह स्वयं ही अपनी रक्षा करनेमें समर्थ है...और फिर, दुर्घटनासे न बचा पाना! यह हो चुका है! मेरे लिये यह बहुत ज्यादा अप्रिय है।

मुझे बुलाया जाना पसंद है...।

हां, तो कल वर्षा न हो, है न?

पुनर्दर्शनाय।

श्रीअरविंदका शरीर-त्याग

श्रीअरविंदने ५ दिसंबर, १९५० को १ बजकर २६ मिनटपर रात्रिमें महासमाधि ले ली। श्रीमाताजीने ७ दिसंबरको एक संदेश-में बतलाया कि जबतक श्रीअरविंदका कार्य पूरा न होगा तबतक वे पृथ्वीको छोड़ेंगे नहीं। पूरे १११ घंटेतक श्रीअरविंदके शरीरमें दिव्य ज्योतिकी प्रभा बनी रही। मालूम होता था कि मर्त्यमें अमरत्व उतर आया है, शरीर कंचनकी तरह अपनी सहज आभा बनाये हुए था, उसमें किसी प्रकारका विकार हुआ ही नहीं था। माताजीने १४ दिसंबरको जो संदेश दिया उसमें कहा:

"श्रीअरविंदके लिये दुःखी होना श्रीअरविंदका अपमान करना है। श्रीअरविंद हम लोगोंके साथ हैं—पहलेकी तरह सजीव और सचेतन, वे हम लोगोंको छोड़कर जा नहीं सकेंगे। हम उनकी उपस्थितिको पहलेकी तरह, पहलेसे भी अधिक जाग्रत् और जाज्वल्यमान अनुभव करते हैं। वे सदा हमारे साथ हैं, जो कुछ हम कर रहे हैं, सोच रहे हैं, अनुभव कर रहे हैं, सबके द्रष्टाके रूपमें।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वस्तुतः, किसी भी योगीकी मृत्यु—जिसे हम सामान्यतया "मृत्यु" कहते हैं—होती ही नहीं। उसकी चेतना भौतिक शरीरकी मर्यादासे अधिक होती है और जब वह सशरीर होता है तब भी वह इस दैहिक आवरणसे बहुत ऊपर और महान् होता है। वह मनुष्य-जातिके लिये जो कार्य करता है वह भी मूलतः उस की स्वतंत्र और विशाल आत्मा का कार्य होता है—उस आत्माका जो सनातन भगवान्‌की असीम एकतामें पूर्णतया सजग रूपमें अमरत्वका भोग करती है और जिसके लिये वास्तवमें जीवन और मृत्यु, दोनों स्वांग मात्र हैं। श्रीअरविंद जैसे योगीश्वरके संबंधमें तो "मृत्यु" शब्दका प्रयोग बिल्कुल ही असंगत है, क्योंकि यह सब जानते हैं कि अतिमानसकी रूपांतरकारी शक्ति उनके शरीरके प्रत्येक अणुमें कार्य कर रही थी और उसका प्रभाव केवल आध्यात्मिक ही नहीं, भौतिक भी था। श्रीअरविंदके बारेमें यह कभी नहीं कहा जा सकता कि उनको वृद्धावस्था या किन्हीं भौतिक कारणोंसे शरीर छोड़ना पड़ा।

यह सचमुच आध्यात्मिक विश्वके लिये महान् घटना है कि जब संसारमें श्रीअरविंदके संबंधमें जाननेकी उत्सुकता अधिकाधिक बढ़ रही थी और उनकी योग-साधना की ओर संसारके साधक मुड़ रहे थे, प्रवृत्त हो रहे थे तो श्रीअरविंदने एकाएक समाधि ले ली। पर श्रीअरविंद सदासे ऐसी लीला करते आये थे। उनके लिये यह कोई नयी बात नहीं थी। आई. सी. एस. को त्यागकर बड़ौदाकी नौकरी-की, और जब बड़ौदेमें उनकी ख्याति विस्तार और ऊंचाईपर थी, उन्होंने उसे ठुकराकर बंगालमें राजनीतिक फकीरका जीवन बिताना अधिक पसंद किया और वहां जेलमें उन्हें भगवत्साक्षात्कार हुआ, और फिर वे अखिल भारतीय नेता बन गये। फिर एक रातको सहसा वे गंगा पारकर चन्दननगर और फिर वहांसे पांडिचेरी पहुंचते हैं और अज्ञात जीवन बिताने लगते हैं। यहांसे उनकी आध्यात्मिक ज्योति विकीर्ण होकर सारे संसारपर छा ही जाना चाहती है कि वे सदाके लिये समाधि ले लेते हैं। कीर्ति, श्री, सदा हाथ जोड़े उनके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पीछे-पीछे चलती रही, परंतु उन्होंने पीछे मुड़कर कभी उनकी ओर निहारा तक नहीं। यह तो सच है कि इस महान् त्यागका वरण वे सदा हमारे लिये करते रहे और उनकी महासमाधि भी मानवताके महान् कल्याणके लिये ही है। अपनी महान् और चिर-अमर कृति 'सावित्री'में वे सांकेतिक रूपमें इस घटनाका वर्णन करते हैं:

"मृत्यु संग एकाकी निकट विनाश छोरके,
अप्रतिम महिमा उसकी अंतिम रौद्र दशामें,
करना होगा पार उसे ही निपट अकेले
काल परिधिमें भीषण जोखिम-भरे सेतुको
और पहुंचना शीर्ष बिंदुपर जगत् नियतिके,
जहां मनुज हित सब जीता या हारा जाय।
उस नीरव भीषणतामें खोई एकाकी,
निर्णयकारी घड़ी जहांपर जगत् नियतिमें,
आत्माका अतिक्रमण पार मानवी समयके,
जब वह खड़ी अकेले होती मृत्यु सामने,
या जब वह है प्रभुके सम्मुख खड़ी अकेले
पृथक् अतीव हताश छोरपर नीरवताके,
एकाकी निज आत्मा मृत्यु भाग्यके संगमें,
जैसे काल मध्य वह और अकाल मध्यमें,
किसी प्रान्त सीमाके क्षेत्र तीर पर है वह,
जब सत्ता हो बाध्य अन्तको या फिर जीवन
पुनः करे निर्माण जिन्दगीकी आकृतिको,
एकाकी वह बने विजयिनी या पराजिता।
उस बेलामें पहुंच न पाय मदद मानवी,
कुंडल कवच, किरीट युक्त देवता प्रभामय
नहीं खड़े हो सकते उसका पक्ष ग्रहण कर,
देव लोकके हेतु लगाओ नहीं पुकारें,
क्योंकि अकेली वह कर सकती है निज रक्षा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसी हेतु उतरी है शांत शक्ति अभिप्रेरित;
उसमें है चेतन संकल्प धरे मानव तन
केवल वही बचा सकती है निजको, जगको।

यह स्पष्ट ही माताजीकी ओर संकेत है और इस संकेतको हम सभी पूरी तरह, अच्छी तरह समझ रहे हैं।

नवंबर १९५० का "सिद्धि दिवस"का दर्शन श्रीअरविंदका अंतिम दर्शन था। श्रीअरविंद और माताजी सिंहासनपर विराजमान थे। हजारों दर्शनार्थी माल्यपुष्पसहित शांतिपूर्वक पंक्ति बांधे दर्शनोंके लिये आते जा रहे थे। सारा कार्यक्रम बड़े आनंदके साथ संपन्न हुआ। पहली और दूसरी दिसंबरको स्कूलका वार्षिकोत्सव था। खूब धूम-धाम और चहल-पहल रही। पर कौन जानता था कि ठीक इसके बाद ही एक महान् दुःखांत अभिनय होनेवाला है? श्रीअरविंदको इस उत्सवकी आनंद-समाप्तिका जब समाचार मिला तो वे बहुत प्रसन्न हुए और पूछा : "अच्छा, समाप्त हो गया?"

श्वास रुक जाने और हृदयकी गति बंद हो जानेके केवल आधा घंटा पहले श्रीअरविंदने अपने शांत करुणामय नेत्र खोले, पासवाले डाक्टरका नाम पुकारा और पानी पिया। चिकित्सा-संबंधी इतिहास-में मूत्रविष-संचारकी यह सबसे अनोखी मूर्छा थी। ५ दिसंबरको श्रीअरविंदने महासमाधि ले ली। पर लगभग चार दिनतक उनका दिव्य शरीर ज्योतिर्मय पुंजसे आलोकित यथापूर्व सुन्दर और स्वर्ण-वर्णिम बना रहा। माताजीने एक घोषणा के साथ समाधि-क्रिया-को अनिश्चित कालके लिये स्थगित कर दिया। वह प्रसिद्ध घोषणा यह है :

"श्रीअरविंदको आज समाधि नहीं दी जा रही। उनका शरीर अतिमानस प्रकाशके घनीभूत पुंजसे इतना परिपूर्ण है कि उसमें विकार के चिह्न कहीं भी दिखायी नहीं दे रहे। जब तक शरीर ठीक अवस्थामें रहेगा तबतक वह इसी तरह शय्यापर लेटी अवस्थामें रहेगा।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और वह कई दिनतक अतुल महिमामयी शांतिमें वैसा ही अक्षुण्ण रहा। सहस्रों लोगोंने उनके दर्शन किये। अंतमें ९ दिसंबरको शामके ५ बजे उनकी देह शीशमकी लकड़ीके बक्सेमें रख दी गयी। इसमें चांदीकी पर्त तथा रेशमी कपड़ेका अस्तर लगा हुआ था, फिर बक्सको अत्यधिक सादगीके साथ किसी मतके धार्मिक कर्मकाण्डके बिना प्रांगणके बीचों-बीच विशेष रूपसे तैयार किये गये समाधिस्थलमें उतार दिया गया।

श्रीअरविंदके महाप्रयाणकी यह सारी घटना एक महत्त्वपूर्ण और विचारपूर्वक किये गये संघर्षकी पराकाष्ठा थी। श्रीअरविंदको पहलेसे इसका आभास मिल गया था। पिछले दो वर्षोंसे वे भविष्यकी योजनाओंके बारेमें कुछ मौन-से हो चले थे। उसी नवंबरमें उनको एक गुजराती ज्योतिषीकी भविष्यवाणी पढ़कर सुनायी गयी थी। इस ज्योतिषीने लिखा था: "१९५० में सूर्य और चंद्रमा योग है और चंद्रमा बाहरवें ग्रहका अधिपति है, इसलिये संभव है कि इस वर्ष श्रीअरविंद अपने-आप इस शरीरको छोड़ दें।" १९६४ के बारेमें भी वैसी कुछ भविष्यवाणी उसने की थी जब श्रीअरविंद तिरानवे वर्ष पूरे कर चुके होते। यह सुनकर श्रीअरविंदने हाथ ऊपर उठाकर कुछ हंसीमें कहा: "ओह, तिरानवे वर्ष!" श्रीअरविंदने इन भविष्योक्तियोंको मनगढ़ंत न मानकर कहा: "इस व्यक्तिको सत्यका कुछ ज्ञान अवश्य है।" तब किसीने प्रश्न किया: "इस वर्ष शरीर छोड़ देनेकी वाणीमें तो कोई सार नहीं है, है न? निश्चय ही ऐसा करनेका तो आपका विचार नहीं है?"

अपने धीर-गंभीर भावमें उन्होंने प्रत्युत्तरमें केवल एक ही रहस्यमय शब्द कहा: "क्यों?"

यह शब्द सबको आश्चर्यमें डाल देनेवाला था, क्योंकि वे यही आशा करते थे कि अतिमानसके अधिकाधिक अवतरणके फलस्वरूप श्रीअरविंदके जीवनका असाधारण रूपसे लंबा हो जाना उनके कार्य-क्रमका ही एक भाग है। इस बीच एक आश्चर्यजनक घटना यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुई कि जो लोग उनकी सेवामें रहते थे, उनके कमरेमें काम करते थे उनके प्रति वे सहसा अत्यधिक वात्सल्यमय हो उठे। वे उनको जता देना चाहते थे कि उन सबकी सेवाओंका उनकी दृष्टिमें बड़ा मान है। उनका यह प्रेम-प्रदर्शन अत्यंत मधुर और आनन्ददायक होते हुए भी उसमें आसन्न विदाईकी तीखी गंभीरता अस्पष्ट रूपसे दिखायी पड़ती थी, यद्यपि उस समय इस रहस्यको कोई न पकड़ पाया।

एक तीसरी आश्चर्यजनक घटना भी यहां दी जा सकती है। एक बार एक साधकको श्रीअरविंदके मुखसे एक बड़ी अजीब-सी बात सुनायी पड़ी: इस साधकका कार्य था कि जो कुछ श्रीअरविंद पत्र या पुस्तक रूपमें लिखवायें उसे लिपिबद्ध कर ले। वे पिछले कई वर्षोंसे "सावित्री" लिखवानेमें संलग्न थे। असीम महिमामय पर सहज था "सावित्री" विषयक उनका परिश्रम। इस महाकाव्यके निर्माण में दिव्य दृष्टि और अनुभवके साथ-साथ इसी कोटिका धैर्य भी उनमें विद्यमान था। यहांतक कि पिछले दिनों वे इसकी ग्यारहवीं या बारहवीं आवृत्ति में लगे हुए थे। पर एकाएक इस महान् प्रयाणके कोई दो महीने पहले उन्होंने अपने लेखकको यह कहकर चौंका दिया:

"सावित्री"का काम अब मुझे शीघ्र समाप्त कर देना चाहिये।"

यहां एक और बातका भी उल्लेख किया जा सकता है। श्रीअरविंद की बीमारीके दिनोंमें एक युवक हर रोज सवेरे माताजीसे श्रीअरविंद-का हाल पूछा करता था। ३ दिसंबरको माताजीने कहा: "आई हैव गिवन अप।"—(मैंने छोड़ दिया है।) स्वभावतः वह इसका अर्थ न समझ पाया, लेकिन आगे पूछने की हिम्मत न हुई। पांच तारीखको उसका अर्थ सामने आ गया। एक दिन बातों-ही-बातोंमें माताजीने उससे कहा भी: "मैंने तुमसे कहा था।"

श्रीअरविंदके योग और दर्शनका सार है वह गतिशील चेतना जिसे "अतिमानस" (सुप्रामेण्टल) कहते हैं। श्रीअरविंदका लक्ष्य यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

था कि अतिमानसको अवतरित कराकर एक नयी मानवताकी सृष्टि की जाय जो उच्च आत्मपूर्णताका आनंद ले और प्रत्येक क्षेत्रमें दिव्य जीवन यापन करे। इसी लक्ष्यको लेकर उन्होंने अपने-आपको तथा माताजीको अतिमानसिक स्थिति तक उठा कर नयी मानव जातिके लिये प्रारंभिक केंद्र तैयार करनेका प्रयत्न किया। रोगोंसे मुक्ति, इच्छित आयु, शरीरके व्यापारोंमें परिवर्तन—सब अतिमानसिक अवस्था-के अंतिम फल हैं। निश्चय ही इन सबका काम मनुष्यके अंदर की दिव्य प्रकृतिको मूर्त्त रूप देना है। यह फल ही पृथ्वीपर अतिमानसिक जीवनको पूर्णतः सुरक्षित बना सकता है। इसकी प्राप्तिके लिये योगीको अंतमें निश्चेतनाकी दृढ़ चट्टानसे निबटना पड़ता है, क्योंकि यह निश्चेतना ही प्रच्छन्न भगवान्का अंधकारमय आधार है और यहींसे विकास का स्वरूप प्रारंभ होता दीखता है।

श्रीअरविंद और माताजी मनुष्यजातिके रूपमें मानव चरित्रकी युग-युग की कठिनाइयां अपने ऊपर लेकर पिछले पच्चीस वर्षोंसे निश्चेतनकी इस चट्टानके साथ जूझ रहे हैं। १९३५ में, एक पत्रमें श्रीअरविंद लिखते हैं:

"मैं अपने निजके लिये कुछ भी नहीं कर रहा, क्योंकि मुझे अपने लिये न मोक्षकी आवश्यकता है, न अतिमानसिक सिद्धिकी। यहां मैं इस सिद्धिके लिये जो यत्न कर रहा हूं वह केवल इसलिये कि पार्थिव चेतनामें इस कामका होना आवश्यक है और यदि यह पहले मेरे अंदर न हुआ तो औरोंमें भी न हो सकेगा।"

उनका समस्त अतिमानव-योग सचमुच ही एक महान् सेनापतिका युद्ध था—उन शक्तियोंके विरुद्ध जिनके साथ अबतक किसी आत्म-वेत्ताने युद्ध नहीं किया था। १९३५ के एक और पत्रसे उनके विचार इस संबंधमें और स्पष्ट हो जाते हैं:

"मैं व्यक्तिगत महानता प्राप्त करनेके लिये अतिमानसको नीचे उतारनेकी कोशिश नहीं कर रहा। मैं मानवीय अर्थोंमें महानता या क्षुद्रता, किसीको महत्त्व नहीं देता। यदि मनुष्यकी बुद्धि मुझे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसलिये मूर्ख समझती है कि जो कार्य श्रीकृष्णने नहीं किया उसे मैं करनेका प्रयत्न कर रहा हूं तो इसकी मुझे परवाह नहीं। अतिमानसका अवतरित होना भगवान्‌की इच्छा है या नहीं, मैं इस अवतरणका मार्ग खोल देने या कम-से-कम इसको अधिक संभव कर देनेके लिये भेजा गया हूं या नहीं—ये प्रश्न भगवान्‌के और मेरे बीच हैं। चाहे लोग मेरी हंसी उड़ायें, मेरी धृष्टताके लिये समस्त विपत्तियोंका पहाड़ भी मेरे ऊपर टूट पड़े तो भी मैं आगे बढ़ता ही जाऊंगा, या तो मेरी विजय होगी या मेरी मृत्यु। इसी भावनासे मैं अतिमानसकी खोजमें निकल पड़ा हूं, अपने लिये या औरोंके लिये किसी प्रकारकी महानता प्राप्त करनेकी अभिलाषा से नहीं।"

यह है आत्म-त्यागका ज्वलंत साहस, एक योद्धा योगीका सजीव चित्र जो अपने लक्ष्यके निकट पहुंचनेके लिये सब प्रकारके कष्ट सहनेको तैयार है। उनका मूल मंत्र यह अवश्य है: "विजय या मृत्यु", पर उनकी मनःस्थिति ऐसी है कि वह इससे भी अधिक साहसी मंत्रका प्रयोग कर सकती है: "विजयके लिये मृत्यु।"

एक कुशल योद्धाकी भांति ही श्रीअरविंदने अपना अभूतपूर्व बलिदान करनेका निश्चय किया। इसके सिवाय उनके महाप्रयाणका कोई अर्थ ही नहीं हो सकता। उनके सामने दो प्रश्न थे—अतिमानसको न उतार पहले भौतिक चेतनाको तैयार करना अथवा अतिमानसको उतार कर भौतिक चेतनाको शीघ्र तैयार करना और इस तरह रूपांतरके कार्यको सुकर बनाना। इसी अंतिम उद्देश्यसे उन्होंने अपना बलिदान कर दिया। और यहां भौतिक चेतनाके प्रतिनिधिके रूपमें माताजीको रूपांतरका कार्य सिद्ध करनेके लिये छोड़ गये। इस कार्यके हो जानेपर माताजीके द्वारा इस पृथ्वीपर मनुष्यजातिके लिये एक दिव्य जीवनकी नींव पड़ जायगी जो समय आनेपर फूले-फलेगा। १९३४ के एक पत्रमें वे लिखते हैं:

"जो भार मेरे ऊपर है उसे केवल भगवत्प्रेम ही सह सकता है। और जिन्होंने भी अपना सर्वस्व त्याग कर पृथ्वीको अंधकारमेंसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निकालकर भगवान्‌की ओर ले जानेका एकमात्र लक्ष्य बना लिया है उन सबको यह भार उठाना ही पड़ता है।"

५ दिसंबरके सवेरेसे १११ घंटेतक वे अपने कमरेकी एक सादी शय्यापर लेटे रहे—उस कमरेमें जहां उन्होंने अपने जीवनके बीस वर्षसे अधिक आध्यात्मिक प्रयोगमें बिताये थे। आध्यात्मिक रूपमें "भव्य और श्रीयुक्त"—केवल ये ही शब्द उनके शरीरकी उस समय की छविका वर्णन करनेमें समर्थ हैं—श्वेत दाढ़ी और चौड़े ललाटपर लहराते हुए श्वेत केशोंसे भरा चेहरा, बंद शांत आखें, चौड़े रन्ध्रों-वाली उन्नत नासिका, दृढ़ होंठ जिनके कोनोंपर परमानन्दकी छाया थी, चौड़े चिकने स्कंध, विशाल वक्षपर मोड़कर रखी गयी बाहें, एकके ऊपर एक रखे हुए मृदुल, कलामय पर समर्थ हाथ, एक बड़ी जरीके किनारेकी रेशमी चादरसे ढका हुआ, पौरुषपूर्ण पुष्ट शरीरका निचला हिस्सा, राजसी ढंगसे फैले हुए चरण जो यह याद दिला रहे थे कि उन्होंने अपने पवित्र चरणोंके स्पर्शसे उनासी वर्षोंतक इस पृथ्वीको धन्य तथा सनाथ किया है। कमरेका वातावरण मनुष्य को पवित्र और उज्ज्वल बना देनेवाली शक्तिसे ओतप्रोत था। आज श्रीअरविंद अपने अनुयायियोंके साथ एकाएक नवीन रूपमें घनिष्ठ-से हो उठे और उन्होंने प्रत्यक्ष रूपमें उनको अपनी विशाल सत्तामें समेट लिया।

यह असंदिग्ध रूपसे कहा जा सकता है कि श्रीअरविंद, जो हमारा पथ-प्रदर्शन करते थे, जिनसे हम प्रेम करते थे, अब भी अपना कार्य कर रहे हैं और उनकी अमृतमयी आश्वासनमयी वाणी अब भी स्पष्ट सुनायी पड़ रही है: "मैं यहीं हूं! मैं यहीं हूं! (आइ एम हीयर! आइ एम हीयर!) "माताजीके इस कथनमें कि श्री-अरविंदके लिये शोक करना अपमानजनक है, क्योंकि वे यहीं हमारे पास हैं, सचेतन और सजीव—एक मूर्तिमान् सत्य प्रतीत होता है। १७ दिसंबरके सुन्दर संदेशमें भी यही सत्य जाज्वल्यमान है। यह माताजीकी आत्माकी उस गहराईसे निकला था जहां

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीअरविंद और वे एक हैं—सर्वथा एक। संदेश इस प्रकार है:

"प्रभो, आज सवेरे तूने मुझे इस बातका आश्वासन दिया है कि तू तबतक हमारे साथ रहेगा जबतक तेरा कार्य पूरा नहीं हो जाता—केवल उस चेतनाके रूपमें ही नहीं जो हमें मार्ग दिखाती और प्रकाश देती है, बल्कि कर्मके क्षेत्रमें एक सक्रिय सत्ताके रूपमें भी तू सदा हमारे पास रहेगा। तूने असंदिग्ध शब्दोंमें यह वचन दिया है कि तू अपनी समस्त सत्ताके साथ यहां वर्तमान रहेगा और जबतक यह पृथ्वी रूपांतरित नहीं हो जाती तबतक तू इसके वातावरणको नहीं छोड़ेगा। ऐसी कृपा कर कि हम तेरी इस अद्भुत उपस्थितिके योग्य बनें और अबसे हमारे अंदरकी हर एक चीज तेरे महान् कार्यकी पूर्तिके लिये अधिकाधिक पूर्ण आत्मसमर्पण करनेके संकल्पपर ही केंद्रित रहे।"

२४ अप्रैल १९५१, को जब समुद्र-तटपर डा. श्यामाप्रसाद मुखर्जीके सभापतित्वमें "श्रीअरविंद स्मारक विश्व-विद्यालय केंद्र"[1] का अधिवेशन हुआ तो उसका उद्घाटन करते हुए माताजीने कहा था:

"श्रीअरविंद हमारे बीच मौजूद हैं और अपनी सृजनशील प्रतिभाकी पूरी शक्तिके साथ विश्वविद्यालयके इस आयोजनकी देख-रेख कर रहे हैं। वर्षोंसे वे ऐसे विश्व-विद्यालयके बारेमें भावी मानवजातिको अतिमानसिक प्रकाशके लिये तैयार करनेके सर्वोत्तम साधनके रूपमें सोचा करते थे, उस अतिमानसिक प्रकाशके लिये जो आजके विशिष्ट व्यक्तियोंको पृथ्वीपर नया प्रकाश, नयी शक्ति और नया जीवन अभिव्यक्त करनेवाली नयी जातिमें रूपांतरित कर देगा। उन्हीं श्रीअरविंदके नाम पर मैं इस विशेषाधिवेशनका उद्घाटन करती हूं जो कि उनके विशेष प्रिय आदर्शको चरितार्थ करनेके उद्देश्यसे होने जा रहा है।"

—स्व. श्रीभुवनेश्वरनाथ मिश्र माधव

---

[1] अब इसका नाम 'श्रीअरविंद अंतर्राष्ट्रीय शिक्षा-केंद्र' हो गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऋषिवर बोले :

समान लक्ष्य

बातचीत गंभीर वातावरणमें चल रही थी। विषय यह था कि जब भारतमें स्त्री और पुरुषको समान रूपसे देखा गया है, जब आत्माके कहा गया है, 'त्वं स्त्री, त्वं पुमानसि, त्वं कुमार उत वा कुमारी' तो फिर ऐसा क्यों है कि महावीर, बुद्ध, शंकरसे लेकर आजतक जितने भी वीतराग, अभीप्सु साधु पुरुष हुए हैं वे सबके सब पुरुष थे। हमने कहीं नहीं सुना कि अमुक नारियोंने घर-द्वार छोड़कर साधनाके लिये वनकी राह ली। इतिहासमें विदुषी नारियोंकी बात तो मिलती है पर वे भी अपने पतियोंके अधीन रहती थीं।

ऋषिवरके प्रांगणकी सभी लड़कियां इस विषयपर जोर-जोरसे बोल रही थीं और इसके लिये पुरुष समाजको उत्तरदायी ठहरा रही थीं। बेचारा सुधाकर इनके सामने अकेला पड़ गया था। वह अपने स्वभावसे हार माननेको तैयार न था और इतनी सारी युक्तियोंका उत्तर उससे बन न पड़ रहा था। ऋषिवर अभीतक चुपचाप बैठे इस वाद-विवादका रस ले रहे थे। अब उन्हें बोलना ही पड़ा।

उन्होंने कहा, "यह बात बिल्कुल ठीक है कि हमारे साधनाके इतिहासमें ऐसी स्त्रियां बहुत कम हुई हैं जिन्होंने भगवान्के लिये घर-द्वार छोड़ा या संन्यास लिया हो लेकिन इसका यह मतलब नहीं है कि उन्होंने भगवान्को पानेकी कोशिश नहीं की या अपने प्रयास में सफलता नहीं पायी। भारतमें इस्लाम या ईसाई धर्मोंकी तरह भगवान्को पानेका बस एक ही निश्चित मार्ग निर्धारित नहीं किया गया है। यह नहीं कहा गया है कि जो इस मार्गपर न चले वह काफिर। यहां तो यही मान्यता रही है कि हर एकको भगवान् मिल सकते हैं, जो जिस रास्तेसे जाना चाहे जा सकता है। भगवान् उसे वहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर आकर मिलेंगे। सिद्धार्थको राजपाट छोड़कर वनमें जाना पड़ा लेकिन राजा जनक राजसभामें राजकाज संभालते हुए भी उच्चतम अनुभूतियां पा गये और औरोंको ब्रह्मज्ञान देनेके योग्य माने गये। शैव एक तरहसे साधना करते हैं, वैष्णव दूसरी तरहसे और तांत्रिक इन सबसे अलग अपना मार्ग बनाते हैं। सबका अपना-अपना मार्ग है। 'जाकी रही भावना जैसी, प्रभु मूरत देखी तिन तैसी।'

"इसी तरह भारतकी परंपरासे यह मालूम होता है कि नारीकी साधनाके लिये घर-त्याग और वन-गमनका मार्ग नहीं अपनाया गया। नारी घरमें बैठकर, घर-गृहस्थीका काम संभालती हुई अपने पतिको ही परमेश्वर मानती थी। नहीं, इसमें हंसीकी बात नहीं है। अगर कोई पत्थर, मिट्टी या काठकी मूर्तियोंमें भगवान्का आह्वान करके उन्हें पा सकता है तो फिर नारी पतिमें ही क्यों भगवान्को नहीं पा सकती? तुमने वह कहानी अवश्य सुनी होगी जिसमें एक छोटेसे बच्चेने एक बड़े साधुसे उसकी पूजाकी मूर्ति मांग ली। साधु अपनी मूर्ति न देना चाहता था, उसने सड़कसे एक पत्थर उठा, कर बालकको दे दिया और पूजाके मंत्र वगैरह सिखानेकी जगह, पत्थरको नहला कर, भोग लगानेका आदेश देकर चला गया। बच्चेने पत्थरके आगे अपने खानेके रोट रख दिये और कहा, 'लो इसमेंसे खाओ।' एक दिन, दो दिन, तीन दिन बीत गये। रोट जैसे-के-तैसे पड़े रहे और बच्चेकी भूख बढ़ती गयी। आखिर उससे न रहा गया। वह लट्ठ लेकर खड़ा हो गया और बोला, 'लो भगवान्; अब मैं और नहीं सह सकता। मेरी आंतें कुलमुला रही हैं, अब सीधी तरहसे खानेके लिये आ जाओ, खुद भी खाओ, और मुझे भी खाने दो नहीं तो यह रहा लट्ठ, अभी तुम्हारे टुकड़े-टुकड़े कर दूंगा।' यह बात इतनी वेदनाके साथ क्रोध मिली भाषामें कही गयी थी कि पत्थरमेंसे भगवान् प्रकट हुए, भक्तके साथ टिक्कड़ खाये और उसे आशीर्वाद देकर, बार-बार आनेका वचन देकर चले गये। ऐसी अनेक कहानियां देशके कोने-कोनेमें चलती हैं जिनका मतलब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह निकलता है कि तुम उत्कट प्रेमके साथ भगवान्को बुलाओ तो वे जरूर आते हैं।

"इस तरह भारतमें यह परंपरा रही है कि नारी अपने पतिको ही भगवान् मानती रही है और घर द्वारके काम काजको ही साधना। कौन कह सकता है कि अगर यह सब सच्चे भावसे किया जाय तो इससे भगवान्की प्राप्ति नहीं हो सकती? भगवान् भावको देखते हैं बाहरी रूपको महत्त्व नहीं देते।" सुधाकर बीचमें बोल पड़ा, 'लेकिन इस परंपराका आरंभ कैसे हुआ?'

मंजुलाने अपनी बुद्धि लड़ाते हुए कहा, 'हमारे समाजमें एक जमाने से पुरुषोंकी प्रधानता रही है। शायद पुरुषोंने यह नियम बनाया होगा कि नारीका त्राण इसीमें है कि वह पतिकी सेवा करे और घर-द्वार संभाले। श्रद्धा प्रधान नारीने इस बातको सिर आंखोंपर रखा और यह परंपरा चल पड़ी। कइयोंको इसमें अभीष्टकी प्राप्ति भी हो गयी इसलिये इसपर प्रामाणिकताकी मुहर लग गयी। पिछले दिनों मैं महाराष्ट्रकी ओर गयी थी वहां एक बड़ी मजेदार कहानी सुनी। आपकी आज्ञा हो तो सुनाऊं।'

ऋषिवरने कहा, "हां, हां, अवश्य सुनाओ।" मंजुलाने कहानीकी भूमिका बांधते हुए कहा, 'महाराष्ट्रमें एक बहुत बड़े सन्त हो गये हैं तुकाराम। वे सूर, तुलसी, कबीर आदिकी श्रेणीके थे। बचपन-में ही उनकी शादी हो गयी पर उन्होंने गृहस्थ जीवनमें कभी रस नहीं लिया। गुड़िया बेचारी घरका काम-धाम करती और फिर एक पहाड़ीपर बैठे पतिदेवके लिये रोटीके टिक्कड़ और लोटा भर पानी लेकर तपती धूपमें कंकड़ों, पत्थरोंकी चुहल सहती हुई, कांटोंकी गुदगुदीसे चिढ़ती हुई ऊपर जाती, तुकाके पेटकी आग बुझाकर फिर वापिस आती और घरके चूल्हे चक्कीमें लग जाती।

'एक दिन जीजाई—तुकारामकी पत्नीका यही नाम था—रोजकी तरह खाना लेकर जा रही थी कि एक मोटेसे बबूलके कांटेको शरारत सूझी और वह उसके पैरमें धंस गया। खूनकी धार बह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उठी। रोटी पानी सब धरती माताके अर्पण और स्वयं जीजाई मूर्छित। आह! क्या दृश्य रहा होगा। वह समयपर न पहुंची तो तुकारामके पेटमें चूहे कूदने लगे। विट्ठलको भक्तके कष्टकी जानकारी मिलते देर न लगी, वे सीधे जीजाईके पास जा पहुंचे। जीजाईने देखा, वही काला कलूटा जिसने उसके पतिको भरमा रखा है उसके आगे खड़ा है। उसने गुस्सेसे मुंह फेर लिया। वह काला उस तरफ आ गया। जीजाईने उससे बचनेके लिये इधर-उधर सब तरफ मुंह किया पर उससे पिंड न छुड़ा सकी। थककर आंखें बन्द कीं तो वह नटखट उसके अंदर विराजमान दीखा। उसने जबर्दस्ती जीजाईका पांव अपनी गोदमें रख लिया और कांटा आसानी से निकाल बाहर किया। अब दोनों रोटी, पानीके बरतन लेकर तुकारामके पास जा पहुंचे। बरतन भरे हुए थे और तीनोंने मिलकर उदर पूर्ति की।

'भोजन समाप्त हो गया। विट्ठल चले गये। अब तुकारामको ख्याल आया यह गंवार नारी तो उनसे कहीं अधिक भाग्यवान् है। उसीके कारण भगवान् इस तरह प्रकट हुए।'

ऋषिवरने कहा, "मंजुला तुम्हारी कहानी मजेदार है। घटनाके रूपमें ठीक इस तरह हुआ था या नहीं इसका कोई मूल्य नहीं। मूल्य है इसके पीछेकी भावनाका। शायद नारीके लिये इसी प्रकारकी साधना उन दिनों उपयुक्त रही होगी। भगवान्को पाना मानव जीवनका लक्ष्य रहा है। यहां नर और नारीके मार्ग भले अलग-अलग रहे हों पर लक्ष्यमें कोई भेद नहीं रहा। आजके मूल्य आजके लिये ठीक हो सकते हैं लेकिन आजसे कुछ शताब्दियों पहलेके जीवनपर उन्हें लादना ठीक न होगा। भविष्यके बारेमें तो आजके मूल्योंके आधारपर कुछ कहना और भी अनुचित होगा, मूल्य दिनपर दिन बदल रहे हैं। हम बस इतना कह सकते हैं कि उस जमानेमें ऐसा रिवाज था, वह उचित था या अनुचित था यह कहना हमारे लिये संभव नहीं। उसके लिये दिव्य दृष्टि होनी चाहिये।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गीर्वाण वाणी

ओंकार-पाठं मनसे प्रतिक्षणं
प्रशिक्षयन्ती स्वयमेव शिक्षिता।
'सोऽहं' पदं प्राप्य विमुक्तमाना,
लल्लाऽहमाकाशगतं प्रपन्ना ॥१॥

इस मनको प्रतिपल ओंकार पढ़ाती रही, उसे पढ़ाते-पढ़ाते मैं स्वयं शिक्षित हो गयी। 'सोऽहम्' पदको प्राप्त करनेके लिये 'अहम्' को गला दिया तब कहीं जाकर मैं लल, प्रकाश-स्थानतक पहुंच सकी।

अध्यागताऽहं बहुजन्मजातं
पीतं मया सिन्धुजलं प्रभूतम्।
मांसादनं बहुविधा लील व्यधायि
पश्चाच्च चिन्तनपरा तदभिन्नरूपा ॥२॥

मैंने कई जन्म लिये, कभी छककर सिन्धुका जल पिया, कभी मांस आदिका भी भक्षण किया, कभी संसारके रंगमंचपर तरह-तरहकी लीलाएं कीं,—किन्तु अंततः पाया कि मैं तो उसीकी अभिन्न-रूपा लल हूं।

अस्मिन्नहो भौतिककायमध्ये
स्थितं हि पंचेन्द्रिय-मेष-वृन्दम्।
तस्मै त्वया ज्ञान-कणास्तु देया
हत्वा पुर्नदिव्यपदं प्रयाति ॥३॥

रे व्यग्र प्राणी! अपनी पंचभूत कायामें स्थित पंचेन्द्रियों रूपी मेषों (नर भेड़ों) को तू अध्यात्मज्ञानका दाना (खाद्य) खिला और तत्पश्चात् उनका वध कर। इसीसे तुझे परम-पदकी प्राप्ति हो जाएगी, अन्यथा ऐसा न करनेपर कोई लाभ न होगा।

('लल्द्यद' से साभार)
(भुवनवाणी प्रेस लखनऊसे प्रकाशित)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अमृत बिन्दु

क्या प्रीति ईर्ष्याकी ही एक पुत्री या दासी मात्र है? यदि कृष्ण चंद्रावलीसे प्यार करते हैं तो फिर मुझे भी उससे क्यों प्यार न करना चाहिये?

*

चूंकि तू केवल भगवान्से ही प्यार करता है इसलिये यह दावा करनेके लिये तैयार हो जाता है कि उन्हें दूसरोंकी अपेक्षा तुझसे ही प्यार करना चाहिये; परंतु यह झूठा दावा है और न्याय तथा वस्तुओंके स्वभावके विपरीत है। क्योंकि भगवान् एकमेव हैं और तू अनेकमेंसे एक। तू अपने हृदय और आत्मामें सर्वभूतके साथ एक बन जा, तब उनके प्यार करनेके लिये एकमात्र तेरे सिवा और कोई बच ही न जायगा।

*

मेरा झगड़ा तो उन लोगोंके साथ है जो इतने मूर्ख हैं कि मेरे प्रेमीसे प्यार नहीं करते, उनके साथ नहीं जो मेरे साथ उनके प्रेममें हिस्सा बंटाते हैं।

*

भगवान् जिनसे प्यार करते हैं उन्हें देखकर आनंद मना; और जिनसे प्यार करनेका दिखावा नहीं करते, उनपर तरस खा।

*

क्या तू अनीश्वरवादीसे घृणा करता है क्योंकि वह भगवान्से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्यार नहीं करता? तब क्या तुझसे भी घृणा करनी चाहिये क्योंकि तू भगवान्से पूरी तरह प्यार नहीं करता।

*

विशेष रूपसे एक चीज ऐसी है जिसमें संप्रदाय और मठ-मंदिर शैतानको आत्म-समर्पण कर देते हैं, और वह है उनका अभिशाप। जब पुरोहित अभिशापपूर्ण मंत्रोंका गान करता है तो मैं शैतानको ही प्रार्थना करते हुए देखता हूं।

*

इसमें संदेह नहीं कि जब पुरोहित अभिशाप देता है तो वह भगवान् ही प्रार्थना करता है; पर वह क्रोध तथा अंधकारका भगवान् होता है जिसे वह अपने शत्रुके साथ-साथ अपने-आपको भी समर्पित कर देता है; कारण, वह जिस तरह भगवान्के समीप उपस्थित होता है उसी तरह वह भी उसे ग्रहण करते हैं—**ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्।**

*

शैतानने मुझे तब तक बहुत अधिक परेशान किया जबतक मैंने यह नहीं जान लिया कि वास्तवमें भगवान् ही मेरी परीक्षा ले रहे हैं। और उसका सारा परिताप मेरी आत्मामेंसे सदाके लिये निकल गया।

*

मैं शैतानसे घृणा करता था और उसकी परीक्षाओं तथा उत्पीड़नोंसे घबड़ा उठा था; मैं नहीं कह सकता कि उसके बिदाईके शब्दोंमें इतनी मिठास क्यों थी कि जब कभी वह वापस आता और अपने-आपको मेरे प्रति समर्पित करता तो प्रायः बड़े कष्टके साथ ही मैं उसे अस्वीकार कर पाता था। फिर मुझे पता चला कि वास्तवमें वह तो स्वयं कृष्ण थे जो मुझसे छलना कर रहे थे और तब मेरी घृणा ठहाकेमें बदल गयी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दाता

राजा रन्तिदेवने घर-बार छोड़ दिया और जंगलमें रहने लगे। उन्होंने अपना धन-धान्य गरीबोंमें बांट दिया था और जंगलमें सीधा-सादा जीवन बिता रहे थे। उनके पास अपने और अपने परिवारके लिये बस उतना ही था जितना जीवन-निर्वाहके लिये जरूरी था।

एक बार अड़तालीस घंटेके उपवासके बाद उनके लिये दूध-भात पकाया गया। एक गरीब ब्राह्मण उनकी झोंपड़ीके दरवाजेपर आया और उनसे खाना मांगा। रन्तिदेवने आधा भात उसे दे दिया, उसके बाद ही एक शूद्र सहायताकी मांग करता हुआ आ पहुंचा और रन्तिदेवने बचे हुए भातमेंसे आधा उसे दे दिया।

अब एक कुत्तेका भौंकना सुनायी दिया। गरीब जानवर बहुत भूखा मालूम होता था। रन्तिदेवने बाकी भात उसे दे दिया। अन्तमें राजाके दरवाजेपर सहायता मांगता हुआ एक चांडाल आ पहुंचा। रन्तिदेवने दूध और शक्कर उसे देकर अपने-आप उपवास किया।

अब आये चार देवता और उन्होंने कहा, "रन्तिदेव, तुमने हम चारोंको भोजन दिया था क्योंकि हम ही ब्राह्मण, शूद्र, चांडाल और कुत्तेका रूप धारण करके आये थे। हम तुम्हारी प्रेमभरी भावनाकी सराहना करते हैं।"

इस तरह एक सद्हृदय सभी मनुष्योंके साथ, यहांतक कि पशुओं-के साथ भी ऐसे व्यवहार करता है मानों वे सब एक ही परिवारके, एक ही मानवजातिके सदस्य हों।

क्या हमें हर रोज ऐसे लोग नहीं मिलते जो हमसे कम जानते हैं! बहुत बार हम उन्हें भोजन, वस्त्र, व्यायाम, व्यापार और आमोद-प्रमोदके बारेमें उपयोगी बातें बता सकते हैं। जैसे भूखेको रोटी देना हमारा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कर्तव्य होता है उसी तरह इन्हें ज्ञान देना भी हमारा कर्तव्य है। अज्ञानी अपने-आपको नुकसान पहुंचाता है, वह अपने चारों ओरके लोगोंको भी नुकसान पहुंचाता है जैसे बुरे बंसीवालेने किया था। तुमने यह कहानी नहीं सुनी ?

एक ब्राह्मण किसी देहातमें गया। वहां एक पीपलके पेड़से आती आवाजने उसे चौंका दिया। उस आवाजने चार बार कहा, "इस तालाबमें मत नहाओ, संध्या-वन्दन मत करो, खाना मत खाओ और यहांसे जाओ मत।"

ब्राह्मणने कहा, "तुम कौन हो जो मुझे ऐसे निर्दोष काम करनेसे मना कर रहे हो।" पीपलके पेड़से आवाज आयी, "मैं ब्रह्म राक्षस हूं। पिछले जन्ममें मैं ब्राह्मण था और संगीतके बारेमें सब कुछ जानता था। लेकिन मैं अपनी विद्या औरोंको देनेसे कतराता था। मैं अपना ज्ञान अपने अंदर ही छिपाये रहता था। इसीलिये मुझे ब्रह्म राक्षस बनना पड़ा और हर रोज मुझे एक आदमीको नाद स्वरम् बजाते हुए सुनना पड़ता है और मैं बता नहीं सकता कि वह कितनी बुरी तरह बजाता है। सचमुच भयंकर स्थिति होती है वह। कितनी इच्छा होती है कि बाहर निकलकर उसके हाथसे नाद स्वरम् छीन लूं और उसे फूंक मारना और उंगलियां चलाना सिखाऊं, लेकिन यह संभव नहीं है और मुझे उससे भयंकर राग सुनने पड़ते हैं।"

"यहां पूरी कहानी सुनानेका अवसर नहीं है। हां, एक उपाय निकल आया और तकलीफमेंसे छुट्टी हो गयी। लेकिन देखो, अपने आस-पासके लोगोंके बुरे काम, बुरे गान या बुरी कलासे कितनी तकलीफ हो सकती है।"

अगर कोई भूखा है तो उसे किस चीजसे मदद मिल सकती है? भोजनसे।

अगर कोई प्यासा है तो उसे कौन-सी चीज सहायता दे सकती है? पानी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अगर कोई काम, कला या संगीतसे अनभिज्ञ है तो उसे किस चीज से मदद मिल सकती है? ज्ञानसे ।

भूखेको रोटी, प्यासेको पानी और अज्ञानीको ज्ञान देना अच्छा है।

पांडुके पांचों पुत्र, वीर पांडव, एक ऐसे महलमें ठहराये गये जो पहली नजरमें आरामदेह और सुन्दर लगता था। लेकिन वह उनके शत्रु पुरोचनने बनवाया था। इसकी दीवारें, फर्श आदि लाखके बने थे। विचार यह था कि जब यह लोग सो रहे हों तो मकानमें आग लगा दी जाय और उन पांचोंसे छुटकारा पाया जाय जिनसे वह घृणा करता था।

यह चालाकी भरी बात थी। उसने अपने बुरे उद्देश्यके लिये अपनी मकान बनानेकी कला और षड्यंत्र रचनेकी बुद्धिका उपयोग किया।

उस महलमें एक आदमी आया जो खान खोदनेमें होशियार (खनिक) था। उसने चुपकेसे पांडवोंसे कहा, "आपके एक मित्रने मुझे भेजा है ताकि मैं आपकी सेवा कर सकूं। मैं एक खनिक हूं। राजकुमार, मैं जानता हूं कि आपका शत्रु पुरोचन आपको जला कर (जिन्दा ही) भस्म कर देना चाहता है।"

तब सबसे बड़े भाई युधिष्ठिरने कहा, "अपनी खोदनेकी विद्याका उपयोग करके एक ऐसी सुरंग बना दो, मित्र, जिसमेंसे होकर बाहर जाया जा सके। यहां दरवाजेपर चाहे सन्तरी लगे हों पर तुम्हारी सुरंग हमें यहांसे सुरक्षित रूपसे बाहर कर दे।"

खनिकने लाक्षा गृहके बीचमें ही सुरंग खोदनी शुरू की। जब कभी पुरोचन मकान देखने आता तो वह सुरंगके मुंहको तख्तों और कालीनोंसे ढका पाता। इस तरह धोखेबाज आदमी धोखा खा गया।

आखिर उन पांचों राजकुमारोंको सूचना दी गयी कि सुरंग तैयार है और इस मकानसे जंगलके एक सुन्दर स्थानपर निकलती है।

एक रात राजकुमारोंने लाक्षा गृहमें आग लगा दी और अपनी मां कुन्तीको लेकर सुरंगमेंसे होकर निकल पड़े। रास्ता अंधेरा पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुरक्षित था। जब बलवान् भीमने देखा कि उसके साथी काफी तेज नहीं चल पा रहे तो उसने मांको कंधेपर बिठाया, दो भाइयोंको भुजाओंमें और दोको कमरपर लिया और हवाकी गति से दौड़ पड़ा। उसे रोकना असंभव था। वे सब जलकर मरनेसे बच गये।

पुरोचनकी दुष्टताको खनिककी बुद्धिने हरा दिया। खनिकने अपनी कलाका अपने लिये खजाने खोदनेमें उपयोग नहीं किया। उसने दूसरोंके लिये सुरंग खोदी। उसने अपने ज्ञानसे दूसरोंकी मदद की। उसने अपने विज्ञानमें हिस्सा बंटाया।

दुनियाके बड़े-से-बड़े आदमी भी अपने-आपमें सब कुछ नहीं जानते। हमें एक-दूसरेसे सीखना चाहिये, आदमीको आदमीसे, राष्ट्रको राष्ट्रसे, एक देशवालोंको दूसरे देशवालोंसे और हर मनुष्यको, हर जातिको जो वह जानता है वह चीज दूसरोंको सिखानेमें खुशी होनी चाहिये।

पश्चिमके लोगोंने पूरबवालोंको भौतिक विज्ञान, यांत्रिकी, अर्थशास्त्र आदि विद्याएं दीं...

पूरबवालोंने हमेशा पश्चिमको दर्शन, नीति आदि का ज्ञान दिया।

भारतने औरोंको चारों वेदोंका ज्ञान दिया, बुद्धकी वाणी और अपनी धार्मिक पुस्तकोंका ज्ञान दिया।

एक बच्चा भी ज्ञान दे सकता है। एक बच्चा दूसरे बच्चेको क ख ग सिखा सकता है! एक बच्चा दूसरेको हल्के हिसाब सिखा सकता है, पूरब, पच्छिम, उत्तर, दक्खिनका परिचय दे सकता है, गांठ बांधना, कोई खेल खेलना या बीज बोना सिखा सकता है।

हम सब ही दाता बन सकते हैं। एक पवित्र पुस्तकमें कहा गया है, "लेनेकी अपेक्षा देना ज्यादा धन्य है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अमूल्य उपहार

प्रिय बंधु,

आप जानते हैं कि पुरोधा और अग्निशिखा नामक दो मासिक पिछले २६ और १९ वर्षसे नियमित रूपसे प्रकाशित हो रहे हैं और मुख्यतः माताजी तथा श्रीअरविंदकी शिक्षाका प्रचार प्रसार करनेके लिये सर्मपित हैं।

इनकी सदस्यता का फॉर्म आपकी सेवामें भेजा जा रहा है, इनकी आजीवन सदस्यताका शुल्क केवल ५०० रुपये है। (२२५ अग्नि-शिखाके लिये और २७५ पुरोधाके लिये) इसका अर्थ यह है कि बढ़ती हुई कीमतोंके बावजूद ये पत्रिकाएं बिना किसी अतिरिक्त व्ययके आपके पास पहुंचती रहेंगी। आप चाहें तो किस्तोंमें दे सकते हैं। आपके परिवार और मित्रोंको माताजी, श्रीअरविंदकी शिक्षा, उनके संदेश तथा उनकी जीवनीके बारेमें जानकारी मिलती रहेगी।

हमें विश्वास है कि आप ड्राफ्ट द्वारा यह रकम संपादक पुरोधा एवं अग्निशिखा, पांडिचेरीके नाम भेज कर हिन्दी पाठकोंतक इस संदेशको भेजनेके कामको प्रोत्साहन देंगे, अपने मित्रोंको भी इसके लिए प्रेरित करेंगे। जन्मदिन, नववर्ष, विवाह आदि शुभ अवसरोंपर यह एक अमूल्य उपहार होगा।

जो लोग पहलेसे ही आजीवन सदस्य हैं वे अगर ५०० की बकाया रकम भेज दें तो पत्रिकाकी सहायता होगी।

धन्यवाद।

भवदीय

संपादक पुरोधा एवं अग्निशिखा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"Live in His Being, Shine with His Light,
Act with His Power, Rejoice with His Bliss."

The Mother

With Best Compliments from:

Auroplast India Limited

Manufacturers of HDPE/PP Circular Woven Sacks

Administrative Office:

77, 'ATLANTA', NARIMAN POINT, BOMBAY-400 021

Phones: 240277, 240367 *Telex:* 011-4104 AEPL IN

Gram: AUROSACK, BOMBAY

Works:

PLOT No. G. 1/3 MIDC AREA, BOISAR,
DIST. THANE MAHARASHTRA

Phones: 682, 491, 591 *Telex::* 132-219 APPL IN

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

A happy beginning
a good continuation
and no end —
an endless progression

14-5-57

New Horizon Sugar Mills (Pvt.) Ltd.

PONDICHERRY

Telegram : SAKAR
Phone : Town Office : 26780
Factory : 24423 24424

P.O. Box 29
Pondicherry
S. India

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तपेदिक के विरुद्ध अभियान

1. यदि आपको लगातार दो हफ्तों से भी अधिक समय से खांसी है या थूक में खून आता है, तो हो सकता है, आपको फेफड़ों की तपेदिक हो।

2. अपने नजदीकी प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, औषधालय या तपेदिक केन्द्र पर स्वयं की, विशेष कर अपने थूक की, जांच कराएं।

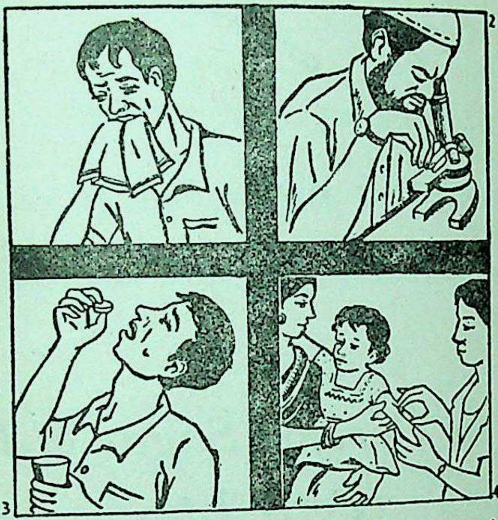

3. तपेदिक का इलाज किया जा सकता है, बशर्ते डाक्टर द्वारा बताई गई दवाइयां नियमित रूप से निर्धारित अवधि तक ली जाएं।

4. बचाव हमेशा इलाज से बेहतर है। इसलिए अपने बच्चे को बी.सी.जी. का टीका लगवाएं।

केन्द्रीय स्वास्थ्य शिक्षा ब्यूरो (स्वास्थ्य सेवा महानिदेशालय)
स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय,
कोटला रोड, नई दिल्ली- 110002

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोसायटी समाचार

१७ दिसंबरको श्रीअरविंदके पवित्र अवशेष आंध्र-प्रदेशके पेनजेन्द्र नामक स्थानपर चम्पकलालजीके हाथसे प्रतिष्ठित किये जायेंगे। उसके बाद दो दिन सभा होगी।

वीमेन्स काउंसिलकी मासिक पत्रिका "अवेकनिंग टु द ब्यूटी ऑफ द फ्यूचर" और यूथ काउंसिलकी "टुडे एंड टुमॉरो"की भारतमें १५ रुपये वार्षिक और विदेशोंमें ५१ रु. वार्षिक न्यौछावर निश्चित की गयी है।

१५ अगस्तको सोसायटीकी बहुत-सी शाखाओं और अनेक केंद्रोंमें श्रीअरविंदका जन्म दिन मनाया गया। गुलबर्गा केंद्रने कन्नड़में एक पुस्तक "मेरी मां, तुम्हारी मां" प्रकाशित की है, मूल्य ५ रु.। मद्रास शाखाने श्रीअरविंदके स्वाधीनता दिवसके संदेशपर चर्चा करनेके लिये विद्यार्थियोंके कई अधिवेशन किये, देहरादूनमें इस संदेशके बारेमें अखबारोंमें काफी चर्चा रही। सिलीगुड़ीमें सोसायटीके पाठ मंदिरने विद्यार्थियोंके लिये "स्वदेश और श्रीअरविंद" विषयपर निबंध-लेखन-की प्रतियोगिता करवाई। सिन्द्री शाखाने ढाई घंटेका मजेदार कार्यक्रम आयोजित किया और माताजी तथा श्रीअरविंदके उद्धरणोंके साथ एक पत्रिका भी प्रकाशित की। पटियालाके युवा संघने एक सप्ताहका कार्यक्रम रखा जिसमें चित्रोंकी प्रदर्शनी, योगके बारेमें भाषण हुआ। मद्रास वानोली निलयमने "आजके जमानेमें श्रीअरविंद" पर पी. पी. नारायण का भाषण प्रसारित किया।

मनोज दासने कलकत्तेके श्रीअरविंद भवनमें श्रीअरविंदके गीता-प्रबंध के बारेमें पांच भाषण दिये और उत्तर-बंगाल विश्व विद्यालयमें दो भाषण दिये।

कृपया अपना सोसायटी सदस्यताका चंदा शीघ्र ही (सदस्यता यसंख्या देते हुए) भेजनेकी व्यवस्था करें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
Registered with the Registrar of Newspapers for India
No. R. N. 18135/70

REGD. No. M. 8731

प्रिय पाठक,

आपने देखा ही होगा कि पुरोधा और अग्निशिखाकी छपाई को कुछ ज्यादा अच्छा करने की कोशिश की गयी है, अग्निशिखाका आवरण भी बदला जा रहा है। देशमें हर चीजका दाम बढ़ता जा रहा है, उसीके अनुसार कागज, छपाई आदि का खर्च भी बहुत बढ़ गया है। हम वार्षिक चन्दा नहीं बढ़ाना चाहते, इससे बहुत-से लोगों को असुविधा होगी। जो अपनी खुशीसे अधिक दे सकते हों अवश्य दें।

अपने खर्चको संतुलित करनेके लिये आजीवन सदस्यताका शुल्क ४०० की जगह ५०० (पुरोधा २७५, अग्निशिखा २२५) कर रहे हैं। कृपया नये आजीवन सदस्य बनानेके लिये प्रयास करें ताकि पत्रिकाएं चलती रहें। पुराने आजीवन सदस्य भी अगर आजके शुल्कके अनुसार अपने चन्देकी पूर्ति कर सकें तो बड़ी कृपा होगी।

धन्यवाद।

— संपादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उद्‌बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि

गु० कां० वि...
हरिद्वार
91249

अग्निशिखा

अखिल भारतीय पत्रिका

फरवरी १९८

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अग्निशिखा फरवरी १९८९ वर्ष १९, अंक ७, पूर्णांक २२३

विषय-सूची

सन्देश——मनुष्य का पहला कर्तव्य १

'संपादकीय'——अन्वेषण २

दैनन्दिनी ५

मानसिक शिक्षा ८

सोसायटी समाचार ३१

आपका अग्निशिखा/पुरोधा का चंदा ... में समाप्त हो रहा है। कृपया अग्निशिखा के १० और पुरोधा के १४ शीघ्र भेजें अन्यथा अगला अंक वी. पी. पी. से जायगा। वी. पी. पी लौट आने से हमें बहुत हानि होती है। अलग अनुस्मारक नहीं भेजा जायगा। कृपया चेक न भेजें। चाहें तो २२५ और २७५ एक साथ या किस्तों में देकर अग्निशिखा और पुरोधा के या ५०० देकर दोनों के आजीवन सदस्य बन सकते हैं।

अग्निशिखा वार्षिक १०.०० आजीवन २२५.००

श्रीअरविंद सोसायटी की मासिक पत्रिका

संपादक : रवींद्र, अनुबेन

प्रकाशक : श्रीअरविंद सोसायटी, पांडिचेरी-६०५००२

मुद्रक : अमियरंजन गांगुली, श्रीअरविंद आश्रम प्रेस, पांडिचेरी-६०५००२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकालय
गु० कां० विश्वविद्यालय
हरिद्वार
91249

सन्देश

मनुष्य का पहला कर्तव्य

अपने विकसनशील विकास-क्रम में वैश्व जीवन का प्रथम महान् परिश्रम था शरीर की अभिज्ञता के साथ मानसिक और प्राणिक अहम् को बांध देना; क्योंकि भौतिक तत्त्व से सचेतन व्यक्ति का सृजन करने के लिये उसे यही साधन मिला था। इसी वैश्व जीवन को दिव्य सिद्धि तक पहुंचाने के लिये एक शर्त, आवश्यक साधन है सीमित करनेवाले इस अहम् का विघटन : क्योंकि केवल इसी तरह सचेतन व्यक्ति अपने परात्पर या सच्चे "व्यक्ति" को पा सकता है।

—श्रीअरविन्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादकीय :

अन्वेषण

श्रीअरविन्द ने कहीं लिखा है कि संसार अपने महापुरुषों को जानता, पहचानता है किन्तु महानतम व्यक्ति को न वह पहचान सकता है, न जान पाता है।

आधुनिक समय विज्ञान का, तकनीकी ज्ञान का है इसलिये वैज्ञानिकों का बड़ी उमंग से स्वागत होता है। मैडम क्यूरी और उनके पति की खोज का जोर-शोर से स्वागत हुआ था किन्तु अन्य क्षेत्रों में किये गये अन्वेषणों को जल्दी से मान्यता प्राप्त नहीं होती।

हमारी दृष्टि में एक अन्य क्षेत्र में अपना समस्त जीवन बिताकर एक नारी-विभूति ने विलक्षण प्रयोग करके बहुत कुछ खोजा है किन्तु संसार उनसे प्रायः अपरिचित रहा है। जिस क्षेत्र में ये प्रयोग हुए हैं, वह है मनुष्य का आन्तरिक जगत् और वैश्व शक्तियों का मनुष्य पर प्रभाव; व्यक्ति और समष्टि का आपस में टकराव और सौहार्द।

इतने बड़े, विस्तृत क्षेत्र में छलांग लगाने का साहस किया था एक नारी ने जिसका नाम है मीरा। हां, वे मीरा होते हुए भी भारतीय न थीं। जन्म लिया था यूरोप की रंगीन नगरी पैरिस में, पालन-पोषण भी वहीं हुआ और वहीं उच्चस्तरीय शिक्षा-दीक्षा हुई।

मीरा को बचपन से आत्म-निरीक्षण का शौक था। उसे अपने आन्तरिक जगत् में इतनी रुचि थी कि जब पांच वर्ष की थी तब से घंटों स्थिर बैठ कर उसीमें लीन रहती।

इसी खोज में वह भारत आयीं और श्रीअरविन्द से मिलीं। दोनों ने देखा कि उनके अनुभव और खोज एक ही क्षेत्र के हैं इसलिये उन्होंने साथ मिलकर अन्वेषण करने का निर्णय किया।

अब हम उनके अन्वेषण के कुछ अंश देखें। मनुष्य द्वारा चीजों को देखने के विषय में वे कहती हैं :

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"एक ऐसा मुहूर्त आता है जब हम बस इतना ही कर सकते हैं कि वर्णन कर दें, परन्तु उस समय हमारे लिये निर्णय लेना असम्भव हो जाता है। . . . हम वस्तुओं को उसी तरह देख सकते हैं जैसी कि वे हैं—पारस्परिक सम्बन्ध में वे जैसी हैं और अपने स्थान पर जैसी हैं, वैसी तो हम देखते हैं, किन्तु उस ज्ञान के साथ देखते हैं कि वे अभी जहां हैं और जहां उन्हें होना चाहिये, उसमें अन्तर है। (क्योंकि बस यही संसार में सबसे बड़ी अव्यवस्था है)"।

मनुष्य और भगवान् के विषय में वे कहती हैं :

"मानव-प्राणियों के बीच भी, जो वर्तमान समय में पृथ्वी पर सबसे अधिक सचेतन प्राणी हैं, बहुत बड़ी संख्या में ऐसे लोग हैं जो गुप्त रूप से भगवान् की ओर आकर्षित होते हैं, पर वे इस विषय में कुछ भी नहीं जानते और फिर कुछ लोग ऐसे भी हैं जो जान-बूझकर इस आकर्षण को अस्वीकार करते हैं। सम्भवतः उनकी अस्वीकृति के अन्दर कोई ऐसी चीज होती है जो तैयारी करती रहती है, परन्तु वह न तो स्वेच्छा से होती है, न ज्ञानपूर्वक।"

अन्वेषण करते-करते उन्होंने देखा कि मन से परे जो जगत् है उसको नीचे उतारना सम्भव है और उस जगत् के उतरने से संसार की कई समस्याएं हल हो जाएंगी लेकिन उसको स्वीकार करने के लिये मनुष्य को भी तैयार होना पड़ेगा। मनुष्य के विभिन्न व्यक्तित्वों में जो संघर्ष चलते रहते हैं, उनमें सामंजस्य लाकर, इन व्यक्तित्वों के पीछे छिपे सच्चे व्यक्तित्व के चारों ओर अपने विभिन्न व्यक्तित्वों को सुन्दर ढंग से व्यवस्थित करके ही मनुष्य अपने-आपको उस नये जगत् के लिये तैयार कर सकता है। उस जगत् को वे अतिमानस कहती हैं उन्होंने पाया कि मानव शरीर, जैसा कि वह अब है उसे धारण करने में असमर्थ होगा। उन्होंने घोषणा की कि अपने आन्तरिक जगत् को बदलने के बाद मनुष्य को शरीर का रूपान्तर करना होगा। वे कहती हैं, "जरा कल्पना करो। तुम ने तो कभी उसके (रूपान्तर) बारे में सोचा भी नहीं, सोचा है क्या ? . . . तुम पूरी तरह शरीर पर आश्रित हो : अगर तुम्हारा हृदय सेकण्ड के हजारवें हिस्से के लिये रुक जाय, तो तुम गये और वही तुम्हारा अन्त होगा। सारी शरीर-रचना कार्य करती है स्वचालित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यन्त्र की तरह, वह तुम्हारी सचेतन इच्छा के बिना कार्य करती है ... किसी अंग के बिना तुम्हारा काम नहीं चल सकता; कम-से-कम पूरी तरह नहीं।

"रूपान्तर का अर्थ यह है कि इस शुद्ध रूप से भौतिक व्यवस्था का स्थान विभिन्न स्पन्दनों वाली शक्ति को एकत्र करने की व्यवस्था ले लेगी। ये स्पन्दन उन अवयवों का स्थान लेंगे और वह केन्द्र सचेतन ऊर्जा का केन्द्र होगा जो सचेतन इच्छा से चलेगा और ऊपर से आती हुई किसी उच्चतर क्षेत्र की गति के द्वारा निर्देशित होगा। न पेट होगा, न हृदय; रक्त संचार आदि, कुछ न होगा। उनका स्थान ले लेगा स्पन्दनों का एक दल और हमारे अंग जिस प्रतीक का प्रतिनिधित्व करते हैं उसके स्थान पर वह आयेगा क्योंकि हमारे अवयव ऊर्जा के केन्द्रों के भौतिक प्रतीक मात्र हैं।"

ये बातें हमें कपोल कल्पना-सी लग सकती हैं किन्तु माताजी अपने सारे जीवन की साधना, अनुभूति और अन्वेषण के आधार पर यह कहती हैं, इसलिये इनकी बातों की हम अवहेलना नहीं कर पाते।

फरवरी के पुनीत महीने की २१ वीं तारीख को उन्होंने पृथ्वी पर अवतरण किया था। उन्हींको सम्बोधित कर संस्कृत के प्रकाण्ड पंडित श्री कपाली शास्त्री ने लिखा था :

नरकुलशक्तिम् नवयुगयुक्ताम्
अबलामतिकृतबन्धनमुक्ताम् ।
आदधते गुरुमहसे लसते नम नम
नारीवरवेषभृते ॥

"नये युग को लानेवाली, मनुष्यों के समूह की शक्ति जो निर्बल तथा मतिहीन को बन्धनों से मुक्त करती है उसे प्रणाम। गुरु की यह शोभायमान ज्योति जिसने उत्तम नारी का रूप धारण किया है उसे प्रणाम।"

हम कम-से-कम उनकी बतायी राह पर चल कर देख सकते हैं कि जीवन कितना बदल सकता है।

—अनुवेन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दैनन्दिनी

फरवरी

१. मैं आशा करती हूं कि यह नया महीना तुम्हारे लिये वह उपलब्धि लायेगा जिसके लिये तुम इच्छा करते हो—सुखद स्थिरता, अपरिवर्तन-शील शान्ति, प्रकाशमय नीरवता।

मेरी यही इच्छा है और यही मेरा आशीर्वाद।

२. हे प्रभु, प्रभु, तेरी महिमा अनन्त है, तेरा सत्य अद्‌भुत है और तेरा सर्व-शक्तिमान् प्रेम संसार को बचा लेगा।

३. तेरी ओर मुड़ना, तेरे साथ एक होना, तेरे भीतर और तेरे लिये जीना, यह परम आनन्द, अमिश्रित आनन्द और अक्षर शान्ति है।

४. हे प्रभु, अकल्पनीय प्रभा, सारी पृथ्वी पर तेरा सौन्दर्य फैल जाय, प्रत्येक हृदय में तेरा प्रेम प्रज्ज्वलित हो और तेरी शान्ति सब पर शासन करे।

५. तेरे विधान, प्रेम के इस विधान द्वारा मैं अधिक-से-अधिक सर्वांगीण रूप से जीना चाहती हूं; मैं अपने-आपको अबाध रूप से समर्पित करती हूं।

६. अवर्णनीय शान्ति में मेरी सारी सत्ता आनन्दातिरेक से भर उठी है।

७. हे दिव्य स्वामी, हमारा समस्त जीवन, विचार, प्रेम, हमारी सारी सत्ता तेरी है।

८. तू, जिसे मैं समझ नहीं पाती, मैं उसकी परम शुद्ध भक्ति के मौन में पूजा करती हूं।

९. हे प्रभु, वर दे कि सारी परछाइयां छितर जायें और मैं तेरा निरन्तर और शान्तिपूर्ण सेवक बन पाऊं।

१०. तू ही है जो हमें प्रकाश देता है, शक्ति देता है, तू ही हमारे अस्तित्व का कारण और लक्ष्य है।

११. हे दिव्य स्वामी, उदात्त मित्र, अद्‌भुत गुरु, मैं गभीर नीरवता में तेरी वन्दना करती हूं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१२. शाश्वत शान्ति और नीरवता में अभिव्यक्त होते हैं। अगर तुम अपने आपको किसी चीज से विक्षुब्ध न होने दो तो शाश्वत अभिव्यक्त होंगे।

१३. हे दिव्य गुरु, आज का दिन तेरी इच्छा के प्रति हमारे अधिक समर्पित होने का, तेरे कार्य के लिये अपने-आपको अधिक पूर्ण रूप से उपहार-स्वरूप देने का, अपने-आपको भुलाने का, अधिक प्रकाश और अधिक प्रेम लाने का दिन हो।

१४. हमारे अन्दर से समस्त अहम् को दूर कर, सारी क्षुद्रताओं, लोभ और अन्धकार को उखाड़ फेंक, हम तेरे प्रेम से प्रदीप्त हो उठें, हम संसार में तेरी मशालें बनें।

१५. हे प्रभु, शाश्वत स्वामी, तू मेरा प्रकाश और मेरी शान्ति है, मेरे चरणों को मार्गदर्शन दे, मेरी आंखें खोल दे, मेरे हृदय को प्रकाशित कर। मुझे उस राह तक ले जा जो सीधी तुझ तक ले जाय।

१६. तू ही जीवन का रस और समस्त कार्यों का कारण है, हमारे विचारों का लक्ष्य है।

१७. मां की बांहों में रहते बच्चे की भांति, गुरु के चरणों में उत्साही शिष्य की भांति मैं विश्वास के साथ अपने-आपको तुझे सौंपती हूं, तेरी विजय में पूर्ण विश्वस्त रहकर तेरे मार्गदर्शन को समर्पित होती हूं।

१८. तू ही वह पूर्णता है जिसे हमें पाना है, समस्त चमत्कार है जिसे हमें चरितार्थ करना है, समस्त गौरव है जिसे हमें अभिव्यक्त करना है।

१९. इस माया के संसार पर, इस निराशाजनक दुःस्वप्न पर, तूने अपने दिव्य सद्वस्तु का वरदान रखा है; और जड़-भौतिक का अणु-अणु तेरी परम सत्ता का कुछ अंश धारण किये रहता है।

२०. ओह ! वर दे कि सारे आंसू पोंछे जायें, समस्त दुःखों से मुक्ति मिले, सारे सन्ताप दूर हो जायें, प्रत्येक हृदय में शान्त अचंचल प्रसन्नता निवास करे और प्रत्येक मन को शक्तिमान् निश्चिति मजबूत बनाये।

२१. सौन्दर्य और प्रेम के दिव्य विधान, परम मुक्तिदाता ! तेरी शक्ति के आगे कोई अवरोध नहीं रहता। केवल हमारा अन्धापन हमें तेरी निरन्तर विजय के आश्वासक दृश्य को देखने से रोकता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२२. वर दे कि जो तुझे खोजते हैं वे तुझे पायें और जो दुःखी हैं, क्योंकि उन्हें पता नहीं कि उपचार कहां है, उनकी धुंधली चेतना की कठोर पपड़ी को चीरकर तेरा जीवन उनमें प्रवेश करे।

२३. हमें हमेशा सिखाते रहो,
हमें अधिक प्रकाश दो।

२४. शाश्वत काल के लिये हम तेरे हैं।

२५. हे प्रभु, प्रेम के दिव्य स्वामी, तू ही शाश्वत विजेता है और जो पूर्ण रूप से तेरे अनुकूल हैं, जो केवल तेरे लिये और तेरे द्वारा जीते हैं वे सारे विजय पा कर ही रहेंगे।

२६. हे प्रभु, तू ही वास्तविक है, अन्य सब भ्रम है; क्योंकि जब हम तेरे अन्दर निवास करते हैं तब हम सब देखते और समझते हैं। तेरे पूर्ण ज्ञान से कुछ भी नहीं भाग सकता किन्तु सब एक और ही रूप लेते हैं।

२७. तू वह अलंघनीय अवरोध है जिसे पाप, अन्धकार और दुर्भावना की अति के विरुद्ध खड़ा किया गया है। तू सभी सम्भव और भावी पूर्णताओं के लिये प्रत्येक हृदय में जीवित जाग्रत् आशा है।

२८. हे दिव्य प्रेम के स्वामी, शाश्वत गुरु, तू हमारे जीवन का पथ-प्रदर्शन करता है। हम केवल तेरे लिये और तेरे द्वारा जीना चाहते हैं।

—*—

'सत्य-चेतना' की दृष्टि से सब कुछ ठीक वैसा ही चल रहा है जैसा चलना चाहिये।

*

शान्त रहो और अपने-आपको विश्वास तथा स्थिरता के साथ अर्पित करो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मानसिक शिक्षा

सामान्यतः समस्त शिक्षा, समस्त संस्कृति, इन्द्रियों की सुरुचि और म का परिष्करण मनोभावों, कामनाओं, और आवेशों को शुद्ध करने के सब अच्छे तरीकों में से है। इन चीजों को निकाल देना उन्हें शुद्ध नहीं कर दे उन्हें शुद्ध करने का सबसे निश्चित तरीका है उन्हें शिक्षित करना, बौद्धि बनाना, सुसंस्कृत बनाना। प्रगति और वृद्धि के लिये अधिकतर सम्भ विकास देना, एक प्रकार से दृष्टि में सामंजस्य और यथार्थता का भाव प्रा करना—यह सत्ता की संस्कृति का एक भाग है, उसकी शिक्षा का भाग है यह उस तरह है जैसे लोग अपनी बुद्धि को शिक्षित करते हैं, जो सीखते हैं पढ़ते हैं, सोचते हैं, तुलना करते, अध्ययन करते हैं। इन लोगों का म विस्तृत होता है और ये लोग उनकी अपेक्षा बहुत विस्तृत और समझदार हो हैं जिन्हें मानसिक शिक्षा नहीं मिली, जिन में थोड़े-से तुच्छ विचार होते हैं जो बहुधा उनकी चेतना में एक दूसरे के विपरीत होते और उन पर पूरी त शासन करते हैं क्योंकि उनके पास बस यही तो होते हैं और वे सोचते हैं कि ये अनोखे विचार हैं जिन्हें उनके जीवन को पथ दिखाना चाहिये। लोग बहुत ज्यादा संकीर्ण और सीमित होते हैं जब कि जो प्रशिक्षित और पढ़े-लिखे होते हैं—इससे कम-से-कम उनके मन विस्तृत होते हैं और देख सकते हैं, विचारों में तुलना कर सकते हैं और देख सकते हैं कि स सम्भव विचार दुनिया में मौजूद हैं और सीमित संख्या के थोड़े-से विचारों साथ बंधे रहना और उन्हें सत्य की ऐकान्तिक अभिव्यक्ति समझना तुच्छ और बेतुकापन है।

उच्चतर विकास के लिये चेतना को तैयार करने के लिये शिक्षा निश्चय सबसे अच्छे साधनों में से एक है।

—मा

२३ फरवरी १९५५

लेकिन तर्क-संगत शिक्षा का अर्थ होता है मुख्य रूप से तीन ची पहली, मनुष्यों को यह सिखाना कि जिन तथ्यों के आधार पर उन्हें नि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करना है उनका अवलोकन कैसे करें और उन्हें ठीक तरह कैसे जानें। दूसरी, उन्हें सफल रूप में भली-भांति सोचना सिखाया जाय, तीसरी, उन्हें उनके अपने तथा व्यापक भले के लिये अपने ज्ञान और विचार का प्रभावकारी रूप से उपयोग करना सिखाया जाय। समाज की तर्क-संगत व्यवस्था की नागरिकता के लिये जरूरत होती है अवलोकन और ज्ञान की क्षमता, समझ और मूल्यांकन की क्षमता, कार्य करने की क्षमता और उच्च चरित्र की क्षमता की। इन कठिन आवश्यकताओं में से किसी की भी व्यापक कमी असफलता का निश्चित स्रोत है।

—श्रीअरविन्द

बुद्धि एक ऐसा अंग है जो कई प्रकार के कार्य-समूहों से मिलकर बना है। इन्हें दो मुख्य भागों में बांटा जा सकता है। दाहिने हाथ की क्रियाएं और व्यापार, और बाएं हाथ की क्रियाएं और व्यापार। दाहिने हाथ की क्रियाएं व्यापक, सृजनात्मक और सांश्लेषिक होती हैं; बाएं हाथ की क्रियाएं आलोचनात्मक और विश्लेषणात्मक होती हैं। दाहिने हाथ की चीजें हैं मूल्यांकन, कल्पना, स्मृति, अवलोकन; बाएं हाथ की चीजें हैं तुलना और तर्क। आलोचनात्मक क्षमताएं विवेक करती, तुलना करती, व्यापक नियम बनाती, परिणाम निकालती, अनुमान करती, निष्कर्ष निकालती हैं। वे तर्क-बुद्धि के संघटक हैं। दाहिने हाथ की क्षमताएं समझती, आज्ञा देती, अपने ही अधिकार से निर्णय या मूल्यांकन करती, ग्रहण करती, धारण करती और काम लेती हैं। दाहिने हाथ का मन ज्ञान का स्वामी है, बायां हाथ उसका दास है। बायां हाथ केवल ज्ञान के शरीर को छूता है, दाहिना हाथ उसकी अन्तरात्मा को भेदता है। बायां हाथ अपने हाथ को जाने हुए सत्य तक ही सीमित रखता है, दाहिना हाथ उसे पकड़ता है जो अभी तक पकड़ में नहीं आ रहा या अनिश्चित है। मानव बुद्धि की पूर्णता के लिये दोनों जरूरी हैं।

—श्रीअरविन्द

मन की सच्ची शिक्षा, वह जो मनुष्य को उच्चतर जीवन के लिये तैयार करेगी उसके मुख्य पांच पक्ष होते हैं। सामान्यतः ये पक्ष एक दूसरे के बाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आते हैं लेकिन अपवादिक लोगों में वे बारी-बारी से या एक साथ भी आ सकते हैं। संक्षेप में वे पांच पक्ष या अवस्थाएं ये हैं :

१—एकाग्रता की शक्ति का विकास, ध्यान देने की क्षमता।

२—विस्तार, विशालता, जटिलता और समृद्धि की क्षमताओं का विकास।

३—विचारों का किसी केन्द्रीय विचार या उच्चतर आदर्श या ऐसे श्रेष्ठ आलोकमय विचार के चारों ओर संगठन जो जीवन में पथ-प्रदर्शक का काम करेगा।

४—विचारों का नियन्त्रण, अवांछनीय विचारों का त्याग ताकि अन्त में तुम केवल उन्हीं चीजों के बारे में सोचो और तभी सोचो जब और जो तुम चाहते हो।

५—मानसिक नीरवता का विकास, पूर्ण अचंचलता, सत्ता के उच्चतर क्षेत्रों से आनेवाली प्रेरणा का अधिकाधिक पूर्ण रूप से ग्रहण।

१९५१ —माताजी

तुम जीवन में चाहे कुछ भी करना चाहो, एक चीज एकदम अनिवार्य है और **हर चीज** के आधार में है। वह है ध्यान को एकाग्र करने की क्षमता। अगर तुम चेतना और ध्यान की किरणों को एक बिन्दु पर इकट्ठा कर सको और इस एकाग्रता को अध्यवसायी इच्छा-शक्ति के साथ बनाये रख सको तो **कोई भी चीज** —फिर चाहे वह कोई क्यों न हो, अत्यन्त जड़-भौतिक विकास से लेकर उच्चतम आध्यात्मिक वस्तु तक—कोई भी चीज उसका प्रतिरोध नहीं कर सकती। लेकिन इस अनुशासन का अनुसरण सतत रूप से, कहा जा सकता है, निर्विकार अविचलित तरीके से किया जाना चाहिये। यह नहीं कि तुम सारे समय एक ही चीज पर एकाग्र रहो—मेरा मतलब यह नहीं है। मेरा मतलब है एकाग्र होना सीखने से।

और भौतिक रूप से अध्ययन, खेल-कूद, सभी भौतिक या मानसिक विकास के लिये यह निरपेक्ष, अनिवार्य है। व्यक्ति का मूल्य उसकी एकाग्रता के मूल्य के अनुपात में होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और आध्यात्मिक दृष्टिकोण से तो यह और भी ज्यादा महत्त्वपूर्ण है। ऐसा कोई आध्यात्मिक विघ्न नहीं है जो भेदन करती हुई एकाग्रता की शक्ति का प्रतिरोध कर सके, उदाहरण के लिये, चैत्य सत्ता का शोध, आन्तरिक भगवान् के साथ ऐक्य, उच्चतर स्तरों के प्रति उद्घाटन—ये सब तीव्र तथा आग्रही एकाग्रता शक्ति द्वारा प्राप्त हो सकते हैं—लेकिन तुम्हें सीखना होगा कि यह कैसे किया जाय।

मानव बल्कि अतिमानव क्षेत्र में भी ऐसी कोई चीज नहीं है जिसके लिये एकाग्रता की शक्ति चाबी नहीं है।

—माताजी

२३ जुलाई १९५८

मन के पहले गुण, जिन्हें विकसित करना जरूरी है, वे हैं जिन्हें अवलोकन के समूह में गिना जा सकता है। हम कुछ चीजों को ध्यान से देखते और कुछ की अवहेलना करते हैं। जिन्हें हम ध्यान से देखते हैं उनका भी अवलोकन कम ही करते हैं। एक सरसरी अर्द्ध-एकाग्र दृष्टि से हम चीज का एक सामान्य बोध ही पाते हैं। जरा ज्यादा ध्यान से देखें तो उसके इर्द-गिर्द की चीजों से, उसका स्थान, उसका रूप, उसकी प्रकृति भिन्न रूप ले लेती है। अवलोकन की क्षमता की पूर्ण एकाग्रता हमें वह पूरा ज्ञान देती है जिसे किसी भी विषय के बारे में तीन मुख्य इन्द्रियां इकट्ठा कर सकती हैं और अगर हम छुएं और चखें तो हम वस्तु की प्रकृति और गुणों के बारे में वे सारी सूचना पा सकते हैं जो हमें पांचों इन्द्रियां दे सकती हैं...। अध्यापक को जो पहली चीज करनी चाहिये वह है विद्यार्थियों का ध्यान एकाग्र करने की आदत करवाना।

हम एक फूल का उदाहरण दे सकते हैं। उस पर एक सरसरी नजर डालने की जगह, गन्ध, रूप और रंग का एक आकस्मिक संस्कार लेने की जगह उसे फूल को जानने के लिये प्रोत्साहित करना चाहिये—उसे अपने मन में ठीक-ठीक छटा, विशेष चमक, गन्ध की यथार्थ तीव्रता, रूप में रेखा और आकार के सौन्दर्य को बिठा लेना चाहिये। उसका स्पर्श उसकी बनावट और विशेषता का विश्वास दिलाये। उसके बाद फूल के अंग-प्रत्यंग को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अलग करके उसकी बनावट का अध्ययन अवलोकन की उसी सावधानी के साथ किया जाय। यह सारा एक कठिन कार्य के रूप में नहीं बल्कि रुचिकर विषय के रूप में किया जाय, सीखनेवाले की क्षमता के अनुसार बुद्धिमत्ता से व्यवस्थित प्रश्न किये जाएं जो उसे एक के बाद एक चीज का अवलोकन करने, उसके बारे में खोज करने के लिये प्रेरित करें, यहां तक कि वह लगभग बिना जाने ही सारे विषय पर अधिकार पा जाय।

—श्रीअरविन्द

कोई चीज विद्यार्थी को याद करवाने के लिये बार-बार रटवानी न चाहिये। यह स्मरण-शक्ति को प्रशिक्षित करने का यान्त्रिक, बोझिल और नासमझी का तरीका है। बच्चे के हाथ में एक जैसा ही परन्तु अलग फूल दिया जाय और उसे प्रोत्साहित किया जाय कि वह उसे वैसी ही सावधानी से देखे और उसकी समानताओं और भिन्नताओं पर ध्यान दे। अगर इस अभ्यास को दोहराया जाय तो स्वभावतः स्मरण-शक्ति प्रशिक्षित हो जायगी। इतना ही नहीं, साम्य और वैषम्य देखने के मानसिक केन्द्र भी विकसित होंगे। सीखनेवाले को चीजों की समानता और असमानता देखने की आदत हो जायगी। अध्यापक को इस क्षमता और अभ्यास को पूर्ण रूप से विकसित करने के लिये पूरा ध्यान देना चाहिये। साथ ही जाति और वर्ग के नियम भी मन में बैठने लगेंगे और बालक के विकसित होते हुए मन के कौशल सहित अनुसरण और पथ-प्रदर्शन द्वारा वैज्ञानिक आदत, वैज्ञानिक मनोवृत्ति और वैज्ञानिक जानकारी के आधारभूत तथ्य भी थोड़े ही समय में उसके स्थायी साधनों का भाग बन जाएंगे। फूलों, पत्तों, पौधों, पेड़ों का अवलोकन और उनकी तुलना वनस्पति विज्ञान की नींव रख देंगे।

इसी तरह तारों का अवलोकन, ज्योतिष का, मिट्टी-पत्थर आदि का अवलोकन भौमिकी कीट-पतंग और पशुओं का अवलोकन कीट-शास्त्र और प्राणी-शास्त्र की नींव रख सकते हैं। कुछ समय बाद मन पर सूत्रों और किताबी नियमों का बोझा डाले बिना मजेदार अवलोकन द्वारा रसायन का आरम्भ किया जा सकता है। ऐसा कोई वैज्ञानिक विषय नहीं है जिस पर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पूर्ण, स्वाभाविक अधिकार की तैयारी इस तरह अवलोकन, तुलना, स्मरण और भिन्न वर्गों की वस्तुओं के मूल्यांकन के इस प्रशिक्षण द्वारा बचपन में ही न की जा सकती हो।

—श्रीअरविन्द

निःसन्देह रूप से जो चीज बच्चों की मानसिक प्रगति में सब से ज्यादा बाधक होती है वह है उनके विचारों का छितराव . . . वे सभी उपाय जो एकाग्रता की क्षमता को विकसित करते हैं, खेलों से लेकर पुरस्कारों तक, अच्छे हैं और आवश्यकता तथा परिस्थितियों के अनुसार उनका उपयोग किया जा सकता है। लेकिन सब से अधिक जरूरी है मनोवैज्ञानिक क्रिया और सर्वोत्कृष्ट विधि है, जो कुछ तुम उसे सिखाना चाहते हो उसमें रस पैदा करो, काम के लिये चाह, प्रगति के लिये संकल्प। हम बच्चे को जो उपहार दे सकते हैं उनमें सब से अधिक मूल्यवान् है सीखने से प्रेम, हमेशा, हर जगह सीखने से प्रेम ताकि सभी परिस्थितियां, जीवन की सभी घटनाएं हमेशा सीखने और अधिक सीखने के लिये नये-नये अवसर बनें।

इसके लिये ध्यान और एकाग्रता के साथ अवलोकन, यथार्थ आलेखन और विश्वसनीय स्मृति को भी जोड़ सकते हैं। अवलोकन की यह क्षमता विभिन्न और सहज अभ्यासों द्वारा बढ़ायी जा सकती है। बच्चे के विचार को सदा जाग्रत, चुस्त और तत्पर रखने के लिये जो भी अवसर आये उसका उपयोग किया जाय। स्मरण-शक्ति की अपेक्षा समझ पर ज्यादा जोर देना चाहिये। तुम अच्छी तरह वही जानते हो जिसे तुमने अच्छी तरह समझा है। यांत्रिक रूप से रटी हुई चीजें धीरे-धीरे जरा-जरा करके मुरझा जाती और अंत में गायब हो जाती हैं लेकिन जो समझ में आ गया है वह कभी नहीं भूला जाता। और फिर तुम्हें बच्चों को वस्तुओं के क्यों और कैसे के बारे में समझाने से कभी इन्कार न करना चाहिये। अगर तुम अपने-आप न समझा सको तो बच्चे को किसी ऐसे के पास भेज दो जो उस प्रश्न या बिंदु को समझाने के लिये ज्यादा योग्य हो या कोई ऐसी पुस्तक बतलाये जो उस विषय में जानकारी दे। इस तरह तुम बच्चे के अन्दर क्रमशः सच्चे अध्ययन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के लिये रस जगाओगे और उसमें जानने का सतत प्रयास करने की आदत जगा दोगे।

१९५१

—माताजी

जब तुम सचेतन होगे तो स्मरण-शक्ति बढ़ेगी।

चेतना यांत्रिक मस्तिष्क-स्मृति की अपेक्षा बहुत ऊंची स्मृति है, यांत्रिक मस्तिष्क-स्मृति भूल सकती है, गड़बड़ कर सकती और विकृत कर सकती है, लेकिन अगर तुम अपने अन्दर फिर से उस चेतना को प्रतिष्ठित कर सको जिसमें तुम अमुक समय थे, तो तुम ठीक-ठीक वही अनुभव पा सकते हो। और वही सच्ची स्मृति है।

१६ सितम्बर १९५३

—माताजी

. . . अमुक अवस्था तक, जब तुम बहुत छोटे होते हो, अपने-आपको विकसित करना, सभी दिशाओं में जितना हो सके उतना अपने-आपको फैलाना, अपने अन्दर की सभी सम्भाव्यताओं को खींच निकालना और उन्हें अभिव्यक्त, सचेतन, सक्रिय चीजों में बदलना अच्छा है ताकि आरोहण के लिये काफी ठोस आधार बन जाय अन्यथा वह क्षुद्र-सा रहेगा।

इसीलिये तुम्हें सीखना चाहिये, सीखने से प्रेम करना चाहिये, हमेशा सीखना चाहिये और अपना समय नष्ट न करना चाहिये . . . अपने-आपको व्यर्थ की चीजों से या बेकार काम करके न भरना चाहिये। तुम्हें हर चीज इसी लक्ष्य के साथ करनी चाहिये, अपनी क्षमताएं बढ़ाओ, जो क्षमताएं तुम्हारे अन्दर हैं उन्हें विकसित करो, नयी क्षमताएं प्राप्त करो और जितना पूर्ण हो सको, जितना पूर्ण मनुष्य हुआ जा सके, होओ।

—माताजी

२१ सितम्बर १९५५

यह सच है कि कुछ विषय कुछ क्षमताओं को विकसित करने के लिये औरों से अधिक उपयोगी होते हैं। यथार्थ तर्क करने की क्षमता को ज्यामिति, तर्क-शास्त्र और राजनीतिक अर्थ-शास्त्र से बहुत सहायता मिलती है। भाषाओं का सब से महत्त्वपूर्ण परिणाम है अभिव्यक्ति की शक्ति को परिष्कृत और प्रशिक्षित करना और तुलना करने की शक्ति और भेदीकरण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को बुद्धिमत्तापूर्ण इतिहास के अध्ययन से बढ़कर और कोई चीज नहीं बढ़ा सकती लेकिन भाषा के सिवा कोई विशेष विषय आवश्यक नहीं है और न ही किसी विशेष क्षमता के लिये ऐकान्तिक रूप से उचित ही है। बुद्धि के प्रकार होते हैं जो उदाहरणतः, स्वाभावतः ज्यामिति की समस्याओं को हल करने या तर्क के रूपात्मक यन्त्रविन्यास के लिये पूर्णतः अयोग्य होते हैं पर अन्य बौद्धिक क्षेत्रों में गहरे, प्रतिभावान् और उचित तार्किक होते हैं। वस्तुतः मुश्किल से कोई ऐसा विषय है, गणना के विज्ञानों को छोड़कर, जो योग्य अध्यापक के हाथ में आकर मन की व्यापक क्षमताओं के विकास में सहायक न हो।

—श्रीअरविन्द

अपनी परिपूर्णता में तर्क-बुद्धि की विशेष शक्ति है एक ऐसी तर्क-संगत गति जो पहले समस्त प्राप्त सामग्री और आंकड़े द्वारा अपने-आपको अवलोकन और व्यवस्था द्वारा आश्वस्त करती है, फिर उन पर चल कर चिन्तन-शक्ति का प्रथम उपयोग करके और अन्त में अधिक सावधान और अनौपचारिक पद्धति के अनुसार कर्म के द्वारा परिणामों की शुद्धि के बारे में अपने-आपको आश्वस्त करके, अधिक जागरूक, विवेचित, परख में कठोर तर्क द्वारा उन्हें कुछ निश्चित मानदण्डों और चिन्तन और अनुभव द्वारा विकसित मानक और प्रक्रियाओं द्वारा अस्वीकार या पुष्ट करती है। अतः तर्क-संगत बुद्धि का पहला काम है प्राप्य उपकरण और सामग्री का ठीक-ठीक, सावधानी के साथ पूरा-पूरा अवलोकन।

—श्रीअरविन्द

जैसे ही मनुष्य सोचने योग्य हो, उसे पहली चीज यह सिखानी चाहिये कि उसे तर्क-बुद्धि की आज्ञा माननी चाहिये जो इस जाति की एक तरह की उच्चतर सहजवृत्ति है। और मैं दोहराती हूं कि यह आध्यात्मिक जीवन का प्रश्न नहीं है बल्कि मानव, शुद्ध रूप से मानव जीवन की एकदम प्रारम्भिक बुद्धि है। हर बच्चे को जानना चाहिये कि उसका सृजन मानव सत्ता बनने के लिये हुआ है और अगर उसे अपनी मानव प्रकृति को प्रकट करना है तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसके जीवन का नियन्त्रण प्राणिक आवेगों द्वारा नहीं, तर्क-बुद्धि द्वारा होना चाहिये। यह वह प्रारम्भिक शिक्षा है जो हर जगह देनी चाहिये।

तर्क-बुद्धि का शासन चैत्य विधान के आने से पहले समाप्त नहीं होना चाहिये, जो दिव्य इच्छा को प्रकट करता है।

८ मई १९५७

—माताजी

तुम बहुत छोटी अवस्था में शुरू कर सकते हो;—पांच वर्ष का बच्चा भी अपने ऊपर अधिकार करने के लिये तर्क-बुद्धि का उपयोग कर सकता है, मैं इसे जानती हूं। इन छोटे नन्हें-मुन्नों की सत्ता में भी, जो इतने सहज और गैर जिम्मेदार मालूम होते हैं, काफी मानसिक व्यवस्था होती है। उनके अन्दर काफी मस्तिष्क-व्यवस्था होती है जिससे वे अपने-आपको, अपने जीवन, अपने स्वभाव, अपनी गतिविधि, क्रियाओं और विचारों की तर्कसंगत व्यवस्था कर सकते हैं।

. . . यहां कुछ ऐसे बच्चे हैं, मैं उन्हें जानती हूं। अगर इन्हें अपनी तर्क-बुद्धि का, अभी छोटी अवस्था में ही, ठीक तरह उपयोग करना सिखाया जाय तो वे महा अभियान पर चलने के लिये तैयार होंगे, वे काफी समय बचा लेंगे।

२५ मई १९५५

—माताजी

तर्क-बुद्धि एक विशेष और सीमित उपयोगी, सहायक क्रिया है जो अपने से किसी बहुत बड़ी चीज से निकलती है, एक ऐसी शक्ति से जो एक अधिक आलोकमय, विस्तृत, असीम आकाश में निवास करती है, जो तात्कालिक या मध्यवर्ती की तुलना में सत्य और निर्णायक है। हमारे अवलोकन, तर्क करने, खोज करने और निर्णय करनेवाली बुद्धि का महत्त्व यह है कि वह मानव मन को ऊपर से आनेवाले प्रकाश के समुचित ग्रहण और उसकी समुचित क्रिया के लिये तैयार करती है। उस प्रकाश को क्रमशः नीचे से आनेवाले धुंधले प्रकाश का स्थान लेना है जो पशु का पथ-प्रदर्शन करता है।

—श्रीअरविन्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

. . . विचार एक यथार्थ सूत्रीकरण का तत्त्व है जिसमें रूप बनाने की शक्ति है . . .। श्रीअरविन्द का कहना है कि तुम जो कुछ सोचते हो वह तुम हो, सोचने के तथ्य के कारण ही तुम हो सकते हो। सत्ता के विकास के लिये यह ज्ञान बहुत महत्त्वपूर्ण है कि तुम जो कुछ सोचते हो वह हो सकते हो, केवल होने की सम्भावना की दृष्टि से ही नहीं बल्कि तुम जो होगे, तुम जो होना चाहोगे, उसके चुनाव और नियन्त्रण की दृष्टि से भी।

. . . श्रीअरविन्द कहते हैं कि विचार जीवन का कारण तो नहीं पर माध्यम या उपकरण है जो जीवन को, सृजन को रूप देता है और इस माध्यम का नियन्त्रण अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है—यदि तुम चाहते हो कि जीवन में जो अव्यवस्था है, जो कुछ भगवान्-विरोधी है वह गायब हो जाय।

१९ दिसम्बर १९५६ —माताजी

मन की सच्ची भूमिका है कर्म को रूप देना और उसकी व्यवस्था या संगठन करना। मन में एक रचनात्मक और संगठनात्मक शक्ति है और वही प्रेरणा के अलग-अलग तत्त्वों को कर्म के लिये, कर्म की व्यवस्था के लिये व्यवस्थित करती है। और अगर मन अपने-आपको केवल उसी भूमिका तक सीमित रख सके, चाहे ऊपर से या अन्तरात्मा के गुह्य केन्द्र से प्रेरणा प्राप्त करके और कर्म की योजना बनाकर, चाहे मोटे-मोटे खाके में या सूक्ष्म ब्योरे में, जीवन की छोटी-से-छोटी चीजों के लिये या बड़े-से-बड़े पार्थिव संगठनों के लिये—तो वह अपना कार्य सन्तोषजनक रीति से पूरा कर लेगा।

वह ज्ञान का उपकरण नहीं है।

लेकिन वह कार्य के लिये, उसे व्यवस्थित करने के लिये ज्ञान का उपयोग कर सकता है। वह व्यवस्था करने और रूप देने के लिये बहुत शक्तिशाली और बहुत योग्य यन्त्र है—बशर्ते कि उसे भली-भांति विकसित किया जाय . . .

और फिर एक और उपयोग है। जब तुम अपनी तर्क-बुद्धि के साथ, बुद्धि के तर्क-संगत केन्द्र के साथ, शुद्ध तर्क-बुद्धि के सम्पर्क में होते हो तो वह सभी प्राणिक आवेगों के ऊपर एक सशक्त नियन्त्रण होता है। जो कुछ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राणिक जगत् से आता है उस पर वह दृढ़ता के साथ नियन्त्रण कर सकता है, उसका अनुशासित और व्यवस्थित कार्य में उपयोग कर सकता है लेकिन वह स्वयं अपने सन्तोष के लिये नहीं, किसी और की सेवा के लिये कार्यरत हो।

मन के दो उपयोग हैं: वह नियन्त्रण करनेवाली शक्ति, नियन्त्रण का यन्त्र है और वह व्यवस्था करनेवाली शक्ति है। यही उसका सच्चा कार्य है।

२० जून १९५६

—माताजी

. . . मन और बुद्धि हमारे जीवन की मुख्य शक्तियां नहीं हैं। क्योंकि वे केवल अर्द्ध-सत्यों और अनिश्चितियों के चक्र का पता लगा सकती हैं और उसी असन्तोषजनक घेरे में चक्कर लगाती हैं। लेकिन मन और प्राण के सभी बौद्धिक क्रियाओं, सौन्दर्य-बोधात्मक नैतिक, गतिशील, व्यावहारिक, भावात्मक, सम्वेदनात्मक, प्राणिक और भौतिक सत्ता में पीछे एक शक्ति छिपी हुई है जो तादात्म्य और अन्तर्भास के द्वारा देखती है और इन सब चीजों को उतना सत्य और ऐसी निश्चिति और स्थिरता देती है जिसे वे समझ सकें। अब हम अपने समस्त विज्ञान और दर्शन के पीछे और अपनी अन्य क्रियाओं के पीछे धुंधले रूप से इसे देखने लगे हैं। आध्यात्मिक अतिमानसिकता की ओर मनुष्य का मार्ग तब खुलेगा जब वह इसकी खुले आम घोषणा कर देगा कि अभी तक उसने जो कुछ विकसित किया है, जिसमें उसकी बुद्धि भी आ जाती है जिसके बारे में वह उचित रूप से फिर भी व्यर्थ में इतना गर्व करता है, अब उसके लिये काफी नहीं है और अब से उसका व्यापक, सर्वोपरि व्यापार होगा भीतर की उस महत्तर ज्योति को खोलना, खोजना और मुक्त करना। तब उसका दर्शन, कला, विज्ञान, नीति, सामाजिक जीवन, प्राणिक व्यवसाय मन और प्राण की स्वयं अपने लिये कसरतें न रहकर, जो गोल-गोल चक्कर में घूमती हैं, मन और प्राण के पीछे के बृहत्तर सत्य को खोजने के साधन और उसकी शक्ति को हमारे जीवन में लानेवाले साधन होंगे।

—श्रीअरविन्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारा लक्ष्य है चीजों को बदलना। वैज्ञानिक कहता है कि जो कुछ है वह प्राकृतिक है और उसे हृदय में नहीं बदला जा सकता लेकिन वस्तुतः वह जिन नियमों की बात करता है वे सामान्यतः उसीके मन की रचना होते हैं और चूंकि वह प्रकृति को उसी रूप में स्वीकार करता है जैसी कि वह है इसलिये उसके लिये चीजें कभी पूर्णतया नहीं बदलती और न बदल सकती हैं लेकिन हमारी दृष्टि में यह सब बदल सकता है क्योंकि हम जानते हैं कि कोई चीज ऊपर है—एक दिव्य सत्य जो अभिव्यक्त होना चाहता है। वहां कोई निश्चित नियम नहीं है। विज्ञान भी, जब कट्टरता से काम नहीं लेता, तो यह स्वीकार करता है कि ये नियम उसकी मानसिक रचनाएं हैं।

—माताजी

विज्ञान, कला, दर्शन, मनोविज्ञान, मनुष्य और उसके भूतकाल का ज्ञान, क्रिया स्वयं ऐसे साधन हैं जिनके द्वारा हम प्रकृति और प्राण द्वारा भगवान् की क्रियाओं के ज्ञान तक पहुंचते हैं। पहले पहल हम प्राण और प्रकृति के रूपों की क्रियाओं के साथ व्यस्त होते हैं लेकिन जैसे-जैसे हम अधिक गहरे जाते हैं और पूर्णतर दृष्टि और अनुभूति पाते हैं, इनमें से प्रत्येक रेखा हमें भगवान् के सम्मुख लाती है। अपनी सीमाओं पर विज्ञान, भौतिक विज्ञान तक अनन्त, वैश्व, आत्मा, दिव्य प्रज्ञा और इच्छा को जड़ विश्व में देखने के लिये बाधित होता है। उन चैत्य विज्ञानों के लिये भी अन्त में अधिक आसानी के साथ यही होगा जो हमारी सत्ता के उच्चतर और सूक्ष्मतर स्तरों की क्रियाओं और शक्तियों से वास्ता रखते हैं और पीछे के अदृश्य जगतों के प्रपंच के साथ सम्बन्ध रखते हैं, हम इन जगतों का अनुभव अपनी भौतिक इन्द्रियों से तो नहीं कर सकते पर सूक्ष्म मन और सूक्ष्म इन्द्रियों द्वारा ये निश्चेय हैं। कला उसी लक्ष्य की ओर ले जाती है; अन्त में सौन्दर्यबोधात्मक भाव को आध्यात्मिक भाव तक पहुंच कर न केवल अनन्त जीवन को बल्कि उसके अन्दर की अनन्त उपस्थिति को देखना चाहिये। मानव जीवन में सौन्दर्य में तल्लीन होकर उसे अन्त में भगवान् को, वैश्व को, मानव जाति में आध्यात्म पुरुष को देखना चाहिये। दर्शन को वस्तुओं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के तत्त्वों के साथ व्यवहार करते हुए इन सब तत्त्वों के तत्त्व को देखने तक पहुंचना चाहिये और उसके स्वभाव, गुणों और तात्त्विक क्रियाओं के बारे में खोज करनी चाहिये। इसी तरह नीतिशास्त्र को अन्ततः यह देखना चाहिये कि वह जिस शुभ के विधान की खोज कर रहा है वह भगवान् का विधान है और विधान के स्वामी की सत्ता और उसके स्वभाव पर निर्भर है। मनोविज्ञान जीवित सत्ताओं के मन और उनकी अन्तरात्मा के अध्ययन से सभी वस्तुओं और सभी सत्ताओं में एक ही अन्तरात्मा और एक ही मन के दर्शन की ओर ले जाता है। प्रकृति के इतिहास और उसके अध्ययन की तरह मनुष्य का इतिहास और उसका अध्ययन शाश्वत और वैश्व शक्ति और सत्ता के दर्शन की ओर ले जाता है जिसका विचार और जिसकी इच्छा-शक्ति वैश्व और मानव विकास द्वारा सम्पादित होते हैं। स्वयं कर्म हमें दिव्य शक्ति के साथ सम्पर्क के लिये बाधित करता है जो हमारे द्वारा कार्य करती है और हमारे कार्यों को रद्द कर देती है। बुद्धि देखना और समझना शुरू करती है, भाव अनुभव करना, कामना करना और आदर करना, इच्छा-शक्ति अपने-आपको भागवत सेवा में बदलना शुरू करती है जिसके बिना मनुष्य और प्रकृति का न तो अस्तित्व ही रह सकता है न उनमें गति हो सकती है, जिसके सचेतन ज्ञान द्वारा ही हम अपनी उच्चतम सम्भावनाओं तक पहुंच सकते हैं।

इस जगह योग कदम रखता है।

—श्रीअरविन्द

पूर्व और पश्चिम को मिलाने के लिये, जो कुछ एक में सब से अच्छा हो वह दूसरे को देने के लिये और सच्चा समन्वय लाने के लिये, सब प्रकार का अध्ययन करने के लिये एक विश्व-विद्यालय की स्थापना की जायगी। हमारा विद्यालय उस विश्व-विद्यालय का केन्द्र होगा।

अपने विद्यालय में मैंने फरासीसी भाषा को शिक्षा का माध्यम बनाया है। इसके कारणों में से एक यह है कि फरासीसी दुनिया की सांस्कृतिक भाषा है। बच्चे भारतीय भाषाएं बाद में सीख सकते हैं। अगर अभी भारतीय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भाषाओं पर अधिक बल दिया जाय तो भारतीय मन की स्वाभाविक वृत्ति होगी, प्राचीन साहित्य, संस्कृति और धर्म की ओर लौटने की। तुम अच्छी तरह जानते हो कि हम प्राचीन भारतीय चीजों का मूल्य भली-भांति जानते हैं लेकिन हम यहां कोई नयी चीज बनाने के लिये हैं, कोई ऐसी चीज उतार लाने के लिये हैं जो धरती के लिये एकदम नयी होगी। इस प्रयास में अगर तुम्हारा मन पुरानी चीजों के साथ बंधा रहे तो वह आगे बढ़ने से इंकार करेगा। अतीत के अध्ययन का अपना स्थान है लेकिन उसे भविष्य के काम में बाधा न देनी चाहिये।

—माताजी

सभी अध्ययन या कम-से-कम अध्ययन का एक बहुत बड़ा भाग प्राचीन के बारे में सीखना होता है और वह इस आशा से कि इससे तुम वर्तमान को ज्यादा अच्छी तरह समझ पाओगे। लेकिन अगर तुम इस भय से बचना चाहो कि विद्यार्थी अतीत के साथ चिपके रहेंगे और भविष्य की ओर देखने से इंकार करेंगे तो तुम्हें बड़ी सावधानी से उन्हें यह समझाना होगा कि अतीत में जो कुछ हुआ था वह आज जो हो रहा है उसकी तैयारी के लिये था और अब जो कुछ हो रहा है वह और कुछ नहीं भविष्य की ओर के पथ की तैयारी है, जो सचमुच सब से महत्त्वपूर्ण चीज है जिसके लिये हमें तैयारी करनी है।

अन्तर्भास को पैदा करके हम भविष्य में जीने की तैयारी करते हैं।

१८ सितम्बर १९६७ —माताजी

तथ्य यह है कि मनुष्य के अन्य सब भागों की तरह मन को भी आराम की जरूरत होती है और यह आराम उसे तब तक नहीं मिल सकता जब तक कि हम उसे आराम देना न जानें। मन को आराम देने की कला एक ऐसी चीज है जिसे प्राप्त करना होता है।

मानसिक क्रिया-कलाप को बदलना निश्चय ही आराम देने का एक तरीका है। लेकिन यथासम्भव बड़े-से-बड़ा आराम है नीरवता . . .।

जब तुम मन को इच्छानुसार नीरव करना सीख लो और उसे ग्रहणशील

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नीरवता पर केन्द्रित करो तब ऐसी कोई समस्या न रहेगी जिसे हल न किया जा सके, कोई मानसिक कठिनाई ऐसी न रहेगी जिसका हल न पाया जा सके।

१९५१

—माताजी

मैं अन्तर्भास की मदद से काम करना चाहूंगा। मेरे प्रयास में मेरी सहायता कीजिये।

प्राण को निश्चल बनाओ।

मन को नीरव करो।

मस्तिष्क को नीरव और स्थिर करो, एक समतल सतह की तरह से जो उन्मुख और एकाग्र हो।

और प्रतीक्षा करो . . .।

२९ सितम्बर १९६७

—माताजी

हमारे बच्चों का मन आधुनिक तरीके से प्रशिक्षित हो रहा है लेकिन हमें उनमें अन्तर्भास और तादात्म्य द्वारा ज्ञान की क्षमता भी विकसित करनी चाहिये।

—माताजी

बच्चों को बहुत छोटी उम्र में लेकर उन्हें पढ़ाने का नया तरीका बनाना या प्रतिपादित करना मजेदार होगा। जब वे बहुत छोटे हों तो यह आसान होगा। हमें लोगों की जरूरत है—ओह !, हमें विलक्षण अध्यापकों की जरूरत होगी—जिनके पास पहले, जो कुछ ज्ञात है उसका पर्याप्त प्रालेखन हो ताकि वह हर प्रश्न का उत्तर दे सकें और साथ ही, अगर अनुभव न हो सके तो सच्ची अन्तर्भासात्मक बौद्धिक वृत्ति का ज्ञान, यद्यपि अनुभव ज्यादा अच्छा है—स्वभावतः क्षमता हो तो और भी अच्छा—यह ज्ञान तो कम-से-कम हो ही कि जानने का सच्चा तरीका है नीरवता, सत्यतर चेतना की ओर मुड़ी हुई एकाग्र नीरवता और वहां से जो कुछ आये उसे ग्रहण करने की क्षमता। सबसे अच्छा तो यही होगा कि यह क्षमता हो, या कम-से-कम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उन्हें समझाया जाय कि यही सच्चा तरीका है—एक प्रकार का प्रदर्शन—और वह केवल जो कुछ सीखना चाहिये उसकी दृष्टि से ज्ञान के सारे क्षेत्र की और साथ ही जो कुछ किया जा सकता है केवल उस दृष्टि से कार्य नहीं करता बल्कि उसके क्षेत्र का भी एकदम ठीक-ठीक संकेत पाने की क्षमता रखता है कि उसे **कैसे** किया जाय। जैसे ही उनमें सोचने की क्षमता आये, बच्चों को सात वर्ष की उम्र में जरा से संकेत देने चाहियें, चौदह वर्ष की उम्र में पूरी व्याख्या कि उसे कैसे किया जाय और यह कि वस्तुओं के अधिक गहरे सत्य के साथ सम्पर्क साधने का बस यही एक तरीका है और बाकी सब, जो चीज प्रत्यक्ष जानी जा सकती है उसी का कमोबेश भद्दा मानसिक अनुमान है।

५ अप्रैल १९६७ —माताजी

विद्यालय, विद्यार्थी, अध्यापक . . .

यह है जीवन जो अपने-आपको रूपान्तरित करने की कोशिश कर रहा है।

तो यह रहा : हमें उस दिशा में बढ़ना चाहिये।

*

सच्चे शिक्षण का पहला सिद्धान्त यह है कि कुछ भी सिखाया नहीं जा सकता। शिक्षक कोई प्रशिक्षक या कड़ा हाकिम नहीं होता। वह होता है सहायक और पथ-प्रदर्शक। उसका काम है सुझाव देना, आरोपित करना नहीं; वह सचमुच विद्यार्थी के मन को प्रशिक्षित नहीं करता, वह विद्यार्थी को केवल यह दिखाता है कि वह अपने ज्ञान के उपकरणों को कैसे पूर्ण बनाये, और इस प्रक्रिया में उसकी सहायता करता और उसे प्रोत्साहन देता है। वह उसे ज्ञान देता नहीं है, वह दिखाता है कि अपने-आप ज्ञान कैसे पाया जाय। वह भीतर स्थित ज्ञान को बुलाता नहीं है, वह केवल दिखाता है कि वह ज्ञान कहां रहता है और उसे सतह पर आने की आदत कैसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

डलवाई जा सकती है। जो विशिष्टता इस सिद्धान्त को केवल कुमारों और युवकों के मन को शिक्षित करने के लिये सुरक्षित रखती है और बच्चों के लिये इसका उपयोग करने से इंकार करती है वह पुराणपंथी और नासमझ सिद्धान्त है . . . ।

दूसरा सिद्धान्त यह है कि मन से उसके अपने विकास में परामर्श लेना चाहिये। यह विचार कि बालक को मार-पीट कर ऐसे आकार में गढ़ा जाय जैसा मां-बाप या अध्यापक चाहते हैं, बर्बर और अज्ञानमय अन्ध-विश्वास है। उसे इस बात के लिये प्रेरित करना चाहिये कि वह अपने स्वभाव के अनुसार विस्तार करे . . . शिक्षा का मुख्य उद्देश्य यह होना चाहिये कि विकसनशील अन्तरात्मा की इस बात में सहायता की जाय कि वह उस चीज को बाहर निकाले जो उसके अन्दर अच्छे-से-अच्छी है और उसे उदात्त उपयोग के लिये पूर्ण बनाये।

और शिक्षा का तीसरा सिद्धान्त यह है कि निकट से दूर की ओर कार्य किया जाय। जो है उससे जो होगा उसकी तरफ . . . सच्चे विकास की शर्त है मुक्त और स्वाभाविक विकास।

—श्रीअरविन्द

मन को ऐसी कोई चीज नहीं सिखायी जा सकती जो पहले ही से उसमें, उस प्राणी में खुलती हुई अन्तरात्मा के अन्दर सम्भाव्य ज्ञान के रूप में छिपी हुई न हो। इसी भांति वह समस्त पूर्णता जिसके लिये बाहरी मनुष्य सक्षम है वह है उसके भीतर आध्यात्म पुरुष की शाश्वत पूर्णता को चरितार्थ करना। हम भगवान् को जानते हैं और भगवान् बन जाते हैं क्योंकि हम अपनी गुप्त प्रकृति में वही हैं। समस्त शिक्षा एक प्रकटन है, समस्त सम्भूति एक खिलना या प्रकट होना है। आत्म-प्राप्ति गुप्त रहस्य है। आत्म-ज्ञान और बढ़ती हुई चेतना साधन और प्रक्रिया हैं।

—श्रीअरविन्द

बच्चों को सभी कुछ सीखना है। उनका मुख्य कार्य यही होना चाहिये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ताकि वे अपने-आपको एक उपयोगी और रचनात्मक जीवन के लिये तैयार कर सकें।

साथ ही जैसे-जैसे वे विकसित होते हैं उन्हें अपने अन्दर उस चीज या उन चीजों को खोजना चाहिये जिनमें उन्हें सबसे अधिक रुचि हो और जिन्हें वे भली-भांति कर सकते हों। अपने अन्दर छिपी हुई क्षमताओं को विकसित करना होता है और ऐसी क्षमताएं भी होती हैं जिन्हें खोजना होता है।

बच्चों को सिखाना चाहिये कि वे कठिनाइयों पर विजय पाने में मजा ले सकें और यह भी कि यह विजय जीवन को विशेष मूल्य देती है; जब तुम जान लेते हो कि यह कैसे किया जाय तो वह हमेशा के लिये ऊब को नष्ट कर देती है और जीवन में एक नया ही रस देती है।

हम पृथ्वी पर प्रगति करने के लिये हैं और हमें सब कुछ सीखना है।

—माताजी

१४ जनवरी १९७२

...ये चीजें, प्रायः उन सभी चीजों की तरह जो हम जीवन में करते हैं, अपने-आपमें महत्त्वपूर्ण नहीं हैं। एकमात्र चीज जिसका मूल्य है वह है वह वृत्ति जिसके साथ इन्हें किया जाता है।

—माताजी

३० जनवरी १९५७

हर बच्चा मजेदार आख्यानों का प्रेमी, वीर-पूजक और देशप्रेमी होता है। उसके अन्दर इन गुणों के लिये आकर्षण पैदा करो और उनके द्वारा उसके जाने बिना उसे उसके राष्ट्र के इतिहास के जीवन्त तथा मानव अंशों का पूर्ण ज्ञान प्राप्त करने दो। प्रत्येक बालक जांच-पड़ताल करनेवाला, खोज करनेवाला, विश्लेषण करनेवाला, निर्दय चीर-फाड़ करनेवाला शरीर-शास्त्री होता है। उसके इन गुणों को जगाओ और उसके जाने बिना ही उसके अन्दर वैज्ञानिक के आवश्यक मौलिक ज्ञान और उचित स्वभाव आने दो। हर बच्चे के अन्दर एक न बुझनेवाली बौद्धिक उत्सुकता और तत्त्वज्ञान की खोज के लिये प्रवृत्ति होती है। इन चीजों का उपयोग करके उसे धीरे-धीरे जगत् को और अपने-आपको समझने की ओर खींचो। हर बालक में नकल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करने की प्रतिभा और कल्पनात्मक शक्ति का स्पर्श होता है। इन चीजों का उपयोग कर के उसे कलाकार की क्षमता की आधार-भूमि दो।

—श्रीअरविन्द

तुम्हें करना यह चाहिये कि बच्चे जो कर रहे हों उसमें उन्हें रस लेना सिखलाओ, यह, और बच्चों का मनोरंजन करना एक ही नहीं है!...

अधिकतर अध्यापक **अच्छे विद्यार्थी** लेना चाहते हैं, ऐसे विद्यार्थी जो अध्ययनशील और एकाग्र हों, जो समझते और बहुत-सी चीजें जानते हों, जो ठीक उत्तर दे सकें—अच्छे विद्यार्थी। यह बात सब कुछ बिगाड़ देती है, विद्यार्थी पुस्तक पढ़ना, अध्ययन करना और सीखना शुरू करते हैं तब वे केवल पुस्तकों पर आश्रित रहते हैं, जो औरों ने कहा या लिखा है उस पर आश्रित रहते हैं और अपने अतिचेतन भाग से सम्पर्क खो बैठते हैं जो अन्तर्भास से ज्ञान पाता है। यह सम्पर्क प्रायः छोटे बच्चे में रहता है लेकिन अपनी पढ़ाई-लिखाई में वह उसे खो बैठता है।

विद्यार्थी ठीक दिशा में प्रगति कर सकें, स्पष्टतया इसके लिये जरूरी है कि अध्यापक इस चीज को समझें और देखने तथा पढ़ाने के अपने पुराने तौर-तरीकों को बदलें। इसके बिना मेरा काम जहां का तहां खड़ा है।

१६ दिसम्बर १९५९ —माताजी

...प्रकृति में केवल हर श्रेणी, हर प्ररूप, हर प्रवृत्ति ही इस तरह अपने निजी तरीके से, अपने निजी गुप्त सत्य के लिये प्रयास करने के लिये प्रेरित नहीं होती, बल्कि हर एक व्यक्ति अपने निजी फेर-फार लाता है...। मनुष्य में यह कठिनाई अपनी पराकाष्ठा पर जा पहुंचती है क्योंकि केवल इतना ही नहीं कि मनुष्य जाति की सम्भावनाओं की कहीं कोई सीमा नहीं, न केवल उसकी हर शक्ति और हर प्रवृत्ति अपने ही तरीके से अपनी पूर्णता को खोज रही है—और इसलिये स्वभावतः तर्क के किसी भी कठोर नियन्त्रण तले अशान्त हो जाती है—बल्कि हर मनुष्य में उनकी कोटि, तरीके और जोड़-तोड़ अलग-अलग होते हैं। हर मनुष्य न केवल जन-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साधारण का अंश है, बल्कि अपने अन्दर स्थित अनन्त का भी अंग है और इसलिये अद्वितीय है।

—श्रीअरविन्द

अध्यापक को ऐसी पुस्तक न होना चाहिये जो जोर से पढ़ी जाती है, जो सभी के लिये एक ही हो, उसकी प्रकृति और उसका चरित्र चाहे जैसा हो। अध्यापक का पहला कर्तव्य यह है कि वह विद्यार्थी को अपने-आपको जानना सिखलाये और उससे यह खोज करवाये कि वह क्या करने के योग्य है।

इसके लिये हमें उसके खेलों का, उन क्रियाओं का अवलोकन करना चाहिये जिनकी ओर वह स्वाभाविक और सहज रूप से आकर्षित होता है और यह भी देखना होगा कि वह क्या सीखना चाहता है, क्या उसकी बुद्धि जाग्रत है, वह कैसी कहानियों में मजा लेता है, किन कामों और किन मानव उपलब्धियों की ओर आकर्षित होता है।

अध्यापक को पता लगाना चाहिये कि उसकी देखभाल में रहनेवाले विद्यार्थियों में से कौन किस श्रेणी का है। और अगर ध्यानपूर्वक अवलोकन के बाद उसे पता लगे कि दो-तीन बच्चे अपवादिक रूप से सीखने के लिये उत्सुक हैं, जिन्हें प्रगति से प्रेम है तो उसे उनकी सहायता करनी चाहिये कि वे अपनी क्षमताओं का उस प्रयोजन के लिये उपयोग कर सकें। वह उन्हें चुनाव करने की आजादी दे जो व्यक्तिगत विकास को प्रोत्साहित करती है।

पुराना ढंग, जिसमें कक्षा बैठी होती है और अध्यापक सब को एक जैसा पाठ पढ़ाता है, निश्चय ही ज्यादा आसान और किफायती है लेकिन साथ ही प्रभावशून्य है और सब का इतना समय नष्ट होता है।

१५ जनवरी १९७२ —माताजी

मधुर मां; आप हमारी शिक्षण-व्यवस्था के बारे में क्या सोचती हैं, जिसमें बच्चे अपनी क्षमता का पता लगा सकें और फिर व्यक्तिगत विकास का मार्ग अपना सकें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यहां हम यही करने की कोशिश कर रहे हैं। लेकिन उसे अच्छी तरह करना अध्यापक पर निर्भर है, इस पर निर्भर है कि वह कितना कष्ट उठाता है, उसमें कितनी मनोवैज्ञानिक समझ की शक्ति है। उसे विद्यार्थी के चरित्र और उसकी क्षमता को समझ सकने के योग्य होना चाहिये ताकि वह अपने शिक्षण को हर व्यक्ति की आवश्यकता के अनुकूल बना सके।

२२ जनवरी १९७२

—माताजी

अगर हर व्यक्ति अधिक-से-अधिक प्रगति कर सके तो निश्चय ही दल को उस से लाभ होगा। अगर व्यक्ति को दल की क्षमता और योग्यता के अर्पित किया जाय तो वह अपनी पूर्ण जाग्रति का अवसर खो बैठता है।

२२ दिसम्बर १९६७

—माताजी

एक बात है जिस पर मुझे जोर देना चाहिये। यहां उन्हीं चीजों की नकल करने की कोशिश न करो जो बाहर के विश्व-विद्यालयों में की जाती हैं। बच्चों में केवल सूचनाएं या आंकड़े भरने की कोशिश न करो। उन्हें इतना काम न दो कि उन्हें और किसी चीज के लिये समय ही न मिले। तुम रेल पकड़ने के लिये बहुत जल्दी में नहीं हो। विद्यार्थी जो सीखते हैं उसे उन्हें समझने दो, उसे आत्मसात् करने दो। पाठ्य-क्रम पूरा करना तुम्हारा लक्ष्य न हो। तुम्हें कार्य-क्रम इस तरह बनाना चाहिये कि बच्चों को उन विषयों में जाने के लिये भी समय मिल सके जो वे सीखना चाहते हैं। उन्हें शारीरिक व्यायाम के लिये काफी समय मिले।

१० सितम्बर १९५३

—माताजी

ऐसी बात नहीं है कि मुझे सामाजिक या अन्य प्रकार के रूढ़िगत अनुशासन से कोई विशेष अरुचि हो, यह भी नहीं कि हर एक को समस्त अनुशासन से दूर रहना चाहिये, बल्कि मैं यह चाहूंगी कि हर एक अपने आन्तरिक अभीप्सा की सच्चाई में और अपने-आपको चरितार्थ करने के संकल्प में अपना निजी अनुशासन खोजे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो उनका उद्देश्य जो जानते हैं, अध्यापक, प्रशिक्षक आदि का, एकमात्र प्रयोजन, जिसके लिये उनका अस्तित्व है, होगा तुम्हें बतलाना, तुम्हारी सहायता करना। जब तुम्हारे सामने कोई ऐसा विषय हो जो तुम्हें कठिन मालूम होता है, तो तुम अपनी समस्या उनके सामने रखो और वे अपने व्यक्तिगत अनुभव से कहेंगे, "नहीं यह बात ऐसी या वैसी नहीं है। तुम्हें यह करना चाहिये, तुम्हें ऐसी कोशिश करनी चाहिये।" तब तुम्हें सिद्धान्त, परिकल्पनाएं या तथाकथित विधान तथा एक न्यूनाधिक अमूर्त ज्ञान आत्मसात् करने के लिये बाधित करने की जगह वे तुम्हें सूचना देने के लिये होंगे, अत्यन्त जड़-भौतिक से लेकर अत्यन्त आध्यात्मिक वस्तुओं की, हर एक अपने क्षेत्र की, अपनी क्षमता के अनुसार सूचना देने के लिये होगा। उनका यही उपयोग है कि वे प्रश्नों का उत्तर दें।

१३ जून १९५६ —माताजी

आधुनिक शिक्षा की एक विशेष बात यह है कि इसमें चीजें टुकड़े-टुकड़े करके सिखायी जाती हैं। एक विषय एक समय में जरा-सा ही सिखाया जाता है जिसके साथ और भी बहुत-सी चीजें सिखायी जाती हैं जिसका परिणाम यह होता है कि जो चीज एक वर्ष में सीखी जा सकती थी उसे बुरी तरह सात वर्षों में सीखा जाता है . . .

औसत आधुनिक मन का बहुत-सा छिछलापन, असंगत छिछोरापन, ढुलमुल चंचलता टुकड़े-टुकड़े करके पढ़ाने के दोषी सिद्धान्त का ऋणी है . . .

आधुनिक पद्धति के बचाव में कहा जाता है कि बच्चों की एकाग्रता आसानी से थक जाती है और उसे लम्बे समय तक एक ही विषय में लगाये रखने के भार तले नहीं रखा जा सकता। स्वभावतः यह प्रश्न उठता है कि क्या आधुनिक समय के बच्चे पहले के बच्चों से इतने अधिक भिन्न हैं और अगर ऐसी बात है तो क्या हम ने उन्हें लम्बी एकाग्रता से दूर रख कर ऐसा नहीं बना दिया है? . . . आजकल की अस्वाभाविक पद्धति के स्थान पर बच्चे के स्वाभाविक आत्म-शिक्षण को लाने से अक्षमता की यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपत्ति दूर हो जायगी। मनुष्य की तरह बालक भी, अगर उसे रस आ रहा हो, तो अपने विषय को अधूरा छोड़ने की जगह उसे पूरा कर लेना ज्यादा पसन्द करेगा। पढ़ाने की सच्ची पद्धति है विद्यार्थी को एक-एक पग करके आगे बढ़ाना, जो कुछ सामने आता जाय उसमें रस लेना और तल्लीन होना सिखाया जाय, यहां तक कि वह अपने विषय पर पूरा अधिकार पा ले। . . . टुकड़े-टुकड़े करके पढ़ाने की पद्धति को मृत दुःखों के कबाड़खाने में फेंक देना चाहिये। सब से पहला काम है बच्चे में जीवन, कार्य और ज्ञान में रस पैदा करना, उसके ज्ञान के उपकरणों को अधिकतम सम्पूर्णता के साथ विकसित करना, उसे जिस साधन का उपयोग करना हो उस पर पूर्ण अधिकार देना। इसके बाद वह जिस तेजी से सीखेगा वह नियमित पढ़ाई में जो देर लगी है उसकी कमी पूरी कर लेगी और कि अभी जहां वह कुछ ही चीजें, वे भी बुरी तरह से सीखता है, वहां वह बहुत-सी चीजें अच्छी तरह पूर्णता के साथ सीख लेगा।

—श्रीअरविन्द

सात वर्ष की उम्र से पहले वे प्रतिभावान् होते हैं—हर जगह, हमेशा प्रतिभावान् होते हैं—लेकिन एक सामान्य नियम के रूप में बच्चा अपने बारे में सचेतन नहीं होता और नहीं जानता कि वह चीजों को क्यों और कैसे करे। वही समय है जब उसके मनोयोग को प्रशिक्षित करना चाहिये, वह जो कुछ करे उस पर उसे एकाग्र होना सिखाओ . . .। उसके बाद सात वर्ष की अवधि ऐसी होती है जब उसे चुनाव करना सिखाना चाहिये, उसे यह चुनाव करना होगा कि वह क्या बनना चाहता है। अगर वह समृद्ध, जटिल, सुविकसित, अपने क्रिया-कलाप में सशक्त मस्तिष्क चाहता है तो उसे काम करना सिखाना चाहिये क्योंकि काम, चिन्तन, अध्ययन, विश्लेषण आदि के द्वारा ही मस्तिष्क का निर्माण होता है। १४ वर्ष की उम्र में तुम तैयार होते हो—या तुम्हें तैयार होना चाहिये—यह जानने के लिये कि तुम क्या बनना चाहते हो।

इसलिये मैं कहती हूं: अगर उस उम्र के बच्चे निश्चित रूप से घोषणा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करें कि उन्हें बौद्धिक विकास में कोई रस नहीं है, वे सीखना नहीं चाहते, वे अज्ञान के साधारण रूप में अज्ञानी रहना चाहते हैं तो मेरी समझ में नहीं आता कि तुम किस अधिकार से उन पर पढ़ाई-लिखाई लाद सकते हो या यह कि उनका मानकीकरण करना क्यों जरूरी है . . .

. . . विद्यालय के अध्यापकों से हमेशा मेरा यह झगड़ा चलता रहता है ! वे मेरे पास आकर कहते हैं, "अगर ये बच्चे काम न करेंगे तो बड़े होकर मूढ़ और अज्ञानी बने रहेंगे।" मैं कहती हूं, "लेकिन अगर उन्हें मूढ़ और अज्ञानी रहना ही पसन्द है तो तुम्हें बीच में पड़ने का क्या अधिकार है ?"

तुम ज्ञान और बुद्धि को अनिवार्य नहीं बना सकते। बस इतना ही।

—माताजी

१३ जून १९५६

बच्चे की सम्भावनाओं का अन्दाज लगाने के लिये सामान्य नैतिक धारणाएं बहुत उपयोगी नहीं होतीं। जिनकी प्रकृति विद्रोही, अनियन्त्रित, हठीली होती है उनमें प्रायः ऐसे गुण छिपे होते हैं जिनका उपयोग करना किसी को नहीं आया। प्रमादी प्रकृति में भी अचंचलता और शान्ति के लिये बड़ी क्षमता हो सकती है।

खोजने के लिये हमारे आगे एक विश्व पड़ा है और सरल से समाधान बहुत उपयोगी नहीं होते। विभिन्न विशिष्टताओं को कैसे पहचाना जा सकता है और उसका कैसे यथा-सम्भव अच्छे-से-अच्छा उपयोग किया जा सकता है यह जानने के लिये विद्यार्थी की अपेक्षा अध्यापक को अधिक मेहनती होना चाहिये।

—माताजी

२३ जनवरी १९७२

मैंने कहा है कि अपवादिक बच्चों को चुनाव करने की छूट मिलनी चाहिये क्योंकि अगर हम पूर्णतया विकसित होने में उनकी सचमुच सहायता करना चाहते हैं तो उनके लिये यह बिल्कुल अनिवार्य है।

निश्चय ही, चुनाव की यह छूट सभी बच्चों को दी जा सकती है और आखिर उनका सच्चा स्वभाव जानने के लिये यह अच्छा तरीका है लेकिन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनमें से अधिकतम आलसी सिद्ध होंगे जिन्हें लिखाई-पढ़ाई में बहुत रस नहीं है। लेकिन दूसरी ओर हो सकता है कि वे हाथ के काम में होशियार हों और चीजें बनाने के लिये इच्छुक हों। इसे भी प्रोत्साहित करना चाहिये। इस तरह बच्चे समाज में अपना सच्चा स्थान पायेंगे और बड़े होकर उसे पूरा करने के लिये तैयार होंगे।

हर एक को यह सिखाना चाहिये कि वह जो कुछ भी करे उसे अच्छी तरह करने में आनन्द ले, चाहे वह बौद्धिक या कलात्मक हो अथवा शारीरिक काम हो। और सब से बढ़कर यह सिखाना चाहिये कि हर काम, वह चाहे कुछ क्यों न हो, यदि उसे अच्छी तरह सावधानी और कौशल के साथ किया जाय तो उसकी अपनी गरिमा है।

१६ जनवरी १९७२ —माताजी

जैसा मैं देखती और जानती हूं उसके अनुसार सामान्यतः चौदह वर्ष से ऊपर के बच्चों को स्वाधीनता मिलनी चाहिये, उन्हें सलाह केवल तभी दी जाय जब वे मांगें।

उन्हें पता होना चाहिये कि अपने जीवन की व्यवस्था करने की जिम्मेदारी उनके ऊपर है।

जुलाई १९६८ —माताजी

क्या हमें जो अत्यधिक छूट दी जाती है वह उन लोगों के लिये खतरनाक नहीं है जो अभी तक जागे नहीं हैं, जो अभी तक निश्चेतन हैं? हमें यहां जो सौभाग्य प्रदान किया गया है उसका हम क्या कारण समझें?

खतरा और जोखिम सभी अग्रगति के भाग हैं। उनके बिना कोई चीज खिसकेगी भी नहीं। इसके अतिरिक्त जो लोग प्रगति करना चाहते हैं उनके चरित्र-निर्माण के लिये ये अनिवार्य हैं।

—माताजी

१३ अप्रैल १९६६

हर मनुष्य को अपनी व्यक्तिगत सत्ता द्वारा अपने अन्दर के भगवान् में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विकसित होना है अतः सत्ता के विकसित होते हुए अमुक मात्रा में बढ़ती हुई स्वाधीनता एक आवश्यकता है और पूर्ण स्वाधीनता पूर्ण जीवन का चिह्न और उसकी शर्त है।

—श्रीअरविन्द

तुम बच्चे पर अमुक अनुशासन आरोपित कर सकते हो, उन्हें एक खास सांचे में सजा सकते हो, डांट-फटकार कर वापिस पथ पर ला सकते हो पर जब तक तुम उनके हृदय और स्वभाव अपने साथ न ले सको, इस आरोपित नियम का अनुसरण ढोंग, हृदयहीन, रूढ़िवादी और बहुधा भीरुतापूर्ण अनुसरण होता है. . .।

जैसा मन की शिक्षा में होता है वैसा ही हृदय की शिक्षा में, सबसे अच्छा तरीका यह है कि बच्चे को अपनी निजी पूर्णता के मार्ग पर पहुंचा दो और उसका अनुसरण करने के लिये प्रोत्साहित करो, उसपर नजर रखो, सुझाव दो, सहायता करो पर हस्तक्षेप न करो।

—श्रीअरविन्द

जब तुम बहुत छोटे थे तब यदि तुम्हारे मां-बाप या जो भी तुम्हारी देख-रेख कर रहे थे, उन्होंने तुम्हें यह सिखाने का कष्ट किया होता कि तुम जो कुछ करते हो उसे ठीक तरह से, जैसे करना चाहिये उस तरह, उचित प्रकार से करो तो इससे तुम्हें सभी भूलों से, उन सभी भूलों से बचने में सहायता मिलती जो इन बरसों में होती चली आ रही हैं। केवल इतना ही नहीं कि तुम भूलें करते हो, कोई तुम से कहता भी नहीं कि ये भूलें हैं, अतः, तुम्हें आश्चर्य होता है कि तुम बीमार पड़ जाते हो, थक जाते हो, तुम जो करना चाहते हो उसे ठीक तरह कैसे किया जाय यह नहीं जानते और यह तुम्हें कभी सिखाया भी नहीं गया . . .।

उचित ढंग से जीना बहुत कठिन कला है और जब तक कि तुम उसे बहुत छोटी अवस्था में न सीखो, और प्रयास न करो तब तक तुम उसे कभी ठीक तरह नहीं जान सकते।

२ जून १९५४ —माताजी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जो अध्यापक पूरी तरह अचंचल नहीं हैं, जिनमें ऐसी सहज शक्ति नहीं है जो कभी धोखा नहीं देती, जिनमें ऐसी स्थिरता नहीं है जिसे कोई चीज क्षुब्ध न कर सके, जिनमें आत्म-सम्मान नहीं है, वे कुछ भी नहीं कर सकते। अच्छा अध्यापक होने के लिये तुम्हें महान् योगी और शूरवीर होना चाहिये। बच्चों से पूर्णता की वृत्ति उभारने के लिये स्वयं तुम्हारे अन्दर पूर्णता की वृत्ति होनी चाहिये। जो चीज तुम अपने-आप नहीं करते वह किसी और से करने के लिये भी नहीं कह सकते।

१४ नवम्बर १९५६

—माताजी

हम जिस शिक्षा-प्रणाली को चला रहे हैं वह अभी तक श्रीअरविन्द के शब्दों में, 'मानव बुद्धि की देदीप्यमान दरिद्रता' है।

तुम्हारा मतलब उस शिक्षा से है जो तुम अपने विद्यार्थियों को दे रहे हो। है न? लेकिन अब समय हो चुका है कि इसे बदला जाय!

लोगों में एक शोचनीय आदत होती है कि जो कुछ पहले किया जा चुका है या जो कुछ और लोग कर रहे हैं उसकी नकल करें। बहुत पहले मैंने तुम से कहा था। यह युक्ति कि "ऐसा करना चाहिये क्योंकि हर जगह ऐसा ही किया जाता है!" इसके लिये मेरा उत्तर है, "शायद इसीलिये हमें यह नहीं करना चाहिये। क्योंकि यदि सभी ऐसा कर रहे हैं तो फिर यहां भी यही करने की क्या जरूरत है?"

लेकिन आपके हस्तक्षेप के बिना हम कुछ भी कैसे कर सकते हैं?

लेकिन तुम मुझ से यह क्यों पूछते हो? पहले तुम्हें अपनी शिक्षा-प्रणाली को अतिमानस के सिद्धान्त के अनुसार बदलना होगा। कम-से-कम तुम्हें कोशिश तो करनी चाहिये। तुम्हें पूछना नहीं, करना चाहिये, अगर तुम हमेशा उसी लीक पर चलते रहो तो तुम अनन्त काल तक उसी पर चल सकते हो। तुम्हें उससे बाहर निकलने की कोशिश करनी चाहिये।

—माताजी

१३ जून १९५६

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिक्षा के नये आदर्श के पथ-प्रदर्शक नियम क्या होने चाहियें ?

सत्य, सामंजस्य, स्वाधीनता।

२६ नवम्बर १९६७ —माताजी

और मैं अध्यापकों से कहती हूं कि उन्हें अधिकाधिक सत्य के अनुसार पढ़ाना चाहिये। क्योंकि हमारे यहां एक विद्यालय है तो यह जरूरी है कि वह दुनिया के करोड़ों विद्यालयों से भिन्न हो। यह बच्चों को यह अवसर देने के लिये है कि वे सामान्य जीवन और दिव्य जीवन, सत्य के जीवन में फर्क कर सकें, चीजों को भिन्न तरीके से देख सकें। यहां सामान्य जीवन को ही दोहराना बेकार है। अध्यापक का आदर्श यह है कि वह बच्चों की आंखें किसी ऐसी चीज की ओर खोलें जिसे वे और कहीं नहीं पा सकेंगे।

२१ दिसम्बर १९५० —माताजी

बौद्धिक रूप से सत्य वह बिन्दु है जहां सभी विरोध मिलते हैं और मिलकर एकता का निर्माण करते हैं।

व्यावहारिक रूप से सत्य है अहंकार का उत्सर्ग ताकि भगवान् का जन्म और उनकी अभिव्यक्ति सम्भव हो सके।

६ अक्तूबर १९६५ —माताजी

मन के साथ व्यक्तित्व शुरू हुआ और साथ ही पृथकता की तेज भावना और एक तरह से न्यूनाधिक यथार्थता के साथ चुनाव की स्वाधीनता का संस्कार, यह सब, ये सभी मनोवैज्ञानिक अवस्थाएं मानसिक जीवन के स्वाभाविक निष्कर्ष हैं और ये उन सब चीजों की ओर द्वार खोलती हैं जिन्हें हम आज देख सकते हैं, मतिभ्रम से लेकर कठोरतम सिद्धान्तों तक, सभी चीजों के लिये द्वार खोल देती हैं। मन का ख्याल है कि वह इस या उस चीज में से चुनाव कर सकता है परन्तु यह ख्याल एक सच्चे सिद्धान्त का विकृत रूप है जो पूरी तरह प्रामाणिक तभी होगा जब अन्तरात्मा या चैत्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुरुष चेतना में प्रकट हो जाय और अगर अन्तरात्मा सचमुच सत्ता का शासन अपने हाथ में ले ले। तब मनुष्य का जीवन सचमुच परम संकल्प की अभिव्यक्ति बन जायगा जो अपने-आपको सचेतन रूप से व्यष्टि भाव में प्रकट कर रहा होगा।

१७ मार्च १९६१

—माताजी

सोसायटी समाचार

इस अंक के साथ सोसायटी के जनरल सेक्रेटरी द्वारा दी गयी २७ फरवरी १९८९ को होनेवाले वार्षिक बृहद् अधिवेशन की सूचना जा रही है जो कलकत्ते के रजिस्टर्ड कार्यालय में होगी, साथ ही ३१ मार्च को समाप्त होनेवाले आर्थिक वर्ष के हिसाब-किताब का संक्षिप्त रूप और उसी वर्ष के कार्य-कलाप की रिपोर्ट सोसायटी के सदस्यों के नाम भेजी जा रही है।

६ फरवरी १८९३ को श्रीअरविन्द १४ वर्ष पूरी तरह अंग्रेजी वातावरण में रहकर वहां की शिक्षा पूरी करके भारत लौटे। भारत-भूमि पर पैर रखते ही उनके अन्दर अचंचलता का अवतरण हुआ। यह अनुभूति बहुत समय तक बनी रही। अब से चार वर्ष बाद हम इस महान् घटना की शताब्दी मनायेंगे।

डा. महेश्वरी ने उत्तर प्रदेश, दिल्ली, मध्य प्रदेश, गुजरात, बम्बई आदि के सोसायटी केन्द्रों की यात्रा की। वृन्दावन में उन्होंने एक अखिल भारतीय सेमिनार में श्रीकृष्ण के बारे में श्रीअरविन्द के वचन सुनाये। इन्दौर में उन्होंने गीता और पूर्णयोग विषय पर स्वाध्याय शिविर की योजना की। उत्तर प्रदेश के किशनपुर में उन्होंने उत्तर प्रदेश की सोसायटी के वार्षिक अधिवेशन में भाषण दिये और दिल्ली में गीता-अध्ययन शिविर में भाषण दिये। बड़ौदा के श्रीअरविन्द निवास में उन्होंने अखिल भारतीय दर्शन परिषद् के तत्त्वावधान में श्रीअरविन्द-दर्शन की विशेषताओं का उल्लेख किया। वल्लभ विद्यानगर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में गीता और कर्मयोग के बारे में भाषण दिये। बम्बई में 'नये भविष्य की तैयारी', 'कल के जगत् में भारत की भूमिका' इत्यादि विषयों पर भाषण दिये।

हमारे मुख्यालय के श्री देवव्रत सितम्बर, अक्तूबर, नवम्बर में वर्धमान, बैरकपुर, आसनसोल, पुरुलिया आदि अनेक स्थानों की सोसायटी संस्थाओं में गये और उन्होंने वहां का निरीक्षण किया, उनके कामों में सहायता की, बातचीत, वीडिओ फिल्म द्वारा लोगों को माताजी और श्रीअरविन्द का परिचय दिया और श्रीअरविन्द-साहित्य उपलब्ध कराया।

मोतीहारी (बिहार) में डा. डी. एन. श्रीवास्तव ने भाषण दिये और एक सम्मेलन की व्यवस्था की जिसमें अतिमानस के अवतरण, युवकों को श्रीअरविन्द का सन्देश आदि विषयों की जानकारी दी गयी और कइयों के भाषण हुए।

सोसायटी की **ओमपुरी** शाखा में श्रीसुन्दरम् ने एक सप्ताह का शिविर किया। केरल और विदर्भ में भी कुछ शिविर हुए।

सोसायटी का नारी-कक्ष हर साल नवम्बर में नारी समाज की व्यवस्था करता है। इसमें माताजी और श्रीअरविन्द के वचनों का अध्ययन किया जाता है और कुछ उपयोगी काम सिखाये जाते हैं। मद्रास, बंगलोर आदि स्थानों से कई नारियां खास इसके लिये आयी थीं। जो इसमें विशेष रस रखते हों वे को-आर्डिनेटर, वीमेन्स काउंसिल, श्रीअरविन्द सोसायटी, पांडिचेरी—६०५००२ से पत्र-व्यवहार करें

—*—

हर जगह असामंजस्य है, लेकिन तुम्हें उसे अस्वीकार करके केवल सामंजस्य को ही अपने अन्दर पैठने देना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जन्म या मृत्यु

जब आपके परिवार में हो तो अपने स्थानीय रजिस्ट्रार के यहां रजिस्टर कराएं

क्योंकि

जन्म प्रमाण-पत्र
उम्र का सबूत है।
* स्कूल में प्रवेश के लिए
* रोजगार के लिए
* मताधिकार प्राप्त करने के लिए
* ड्राईविंग लाइसेंस प्राप्त करने के लिए
* पासपोर्ट प्राप्त करने के लिए
* बीमा पालिसी प्राप्त करने के लिए

मृत्यु प्रमाण-पत्र
आवश्यक है।
* सम्पत्ति के उत्तराधिकार के लिये
* बीमा राशि वसूल करने के लिए
* सम्पत्ति के दावे निपटाने के लिए

समय पर रजिस्टर कराएं और
प्रमाण-पत्र निःशुल्क प्राप्त करें

जन्म और मृत्यु रजिस्ट्रीकरण कानूनन जरूरी है।
विलम्ब रजिस्ट्रीकरण की भी अनुमति है।

महा रजिस्ट्रार, भारत

डीएवीपी 88/126

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

O Lord, awaken in me an ardent desire to know Thee. I aspire that my life may be consecrated to Thy service.

The Mother

Space donated by

Kooverji Devshi & Co., Pvt. Ltd.

FIREX LEADS TO SAFETY

SAFETY LEADS TO PROSPERITY

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तपेदिक के विरुद्ध अभियान

1. यदि आपको लगातार दो हफ्तों से भी अधिक समय से खांसी है या थूक में खून आता है, तो हो सकता है, आपको फेफड़ों की तपेदिक हो।

2. अपने नजदीकी प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, औषधालय या तपेदिक केन्द्र पर स्वयं की, विशेष कर अपने थूक की, जांच कराएं।

3. तपेदिक का इलाज किया जा सकता है, बशर्ते डाक्टर द्वारा बताई गई दवाइयां नियमित रूप से निर्धारित अवधि तक ली जाएं।

4. बचाव हमेशा इलाज से बेहतर है। इसलिए अपने बच्चे को बी.सी.जी. का टीका लगवाएं।

केन्द्रीय स्वास्थ्य शिक्षा ब्यूरो (स्वास्थ्य सेवा महानिदेशालय)
स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय,
कोटला रोड, नई दिल्ली- 110002

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सबसे पहली चीज होनी चाहिये 'शांति'। तुम जो कुछ करो उसे शांतिपूर्ण तरीके से करना चाहिये।

सहारनपुर सर्विस स्टेशन

पैट्रोल पम्प, देहरादून रोड

सहारनपुर–२४७००१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Registered with the Registrar of Newspapers for India
No. R. N. 18135/70
REGD. No. M. 873

A happy beginning
a good continuation
and no end —
an endless progression

14-5-57

New Horizon Sugar Mills (Pvt.) Ltd.

PONDICHERRY

Telegram : SAKAR
Phone : Town Office : 4280
Factory : 4423 4424

P.O. Box 2
Pondicherry
S. India

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मार्च १९८९

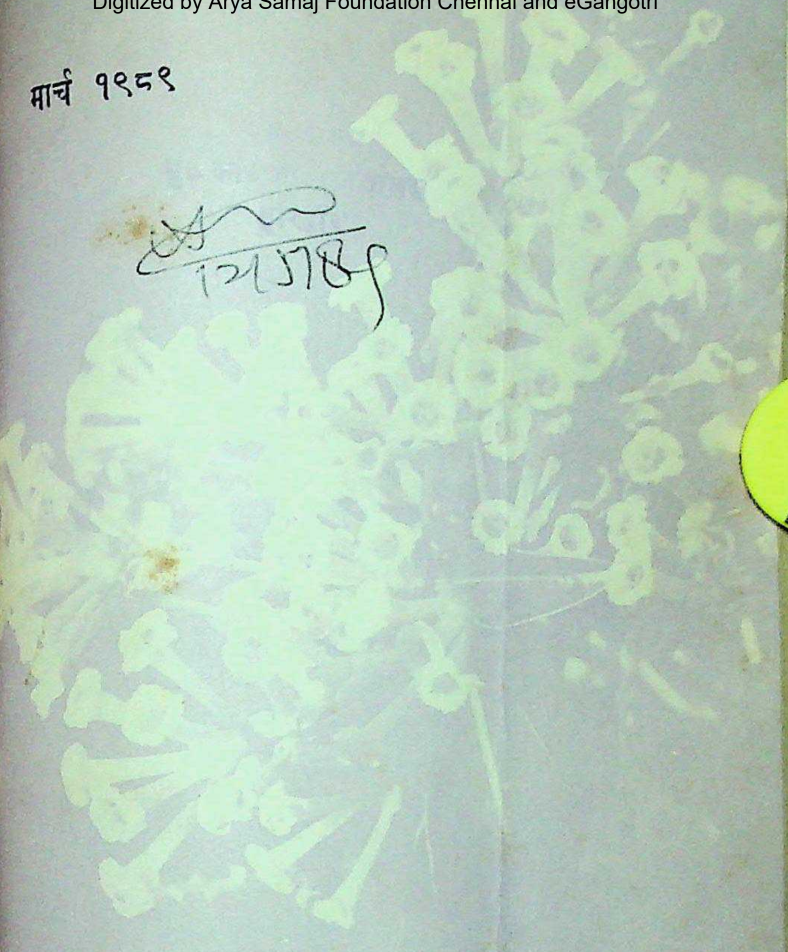

अग्निशिखा

अखिल भारतीय पत्रिका

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अग्निशिखा मार्च १९८९ वर्ष १९, अंक ८, पूर्णांक २२४

विषय-सूची

सन्देश १

'संपादकीय'—विजय की निश्चिति अनुबेन २

दैनन्दिनी ४

चैत्य और आध्यात्मिक शिक्षा ७

एक नये जगत् की प्रतिज्ञा १७

चतुर्विध तपस्या और चतुर्विध मुक्ति २४

हमारे प्रकाशन ३५

आपका अग्निशिखा/पुरोधा का चंदा ... में समाप्त हो रहा है। कृपया अग्निशिखा के १० और पुरोधा के १४ शीघ्र भेजें अन्यथा अगला अंक वी. पी. पी. से जायगा। वी. पी. पी लौट आने से हमें बहुत हानि होती है। अलग अनुस्मारक नहीं भेजा जायगा। कृपया चेक न भेजें। चाहें तो २२५ और २७५ एक साथ या किस्तों में देकर अग्निशिखा और पुरोधा के या ५०० देकर दोनों के आजीवन सदस्य बन सकते हैं।

अग्निशिखा वार्षिक १०.०० आजीवन २२५.००

श्रीअरविंद सोसायटी की मासिक पत्रिका

संपादक : रवींद्र, अनुबेन

प्रकाशक : श्रीअरविंद सोसायटी, पांडिचेरी-६०५००२

मुद्रक : अमियरंजन गांगुली, श्रीअरविंद आश्रम प्रेस, पांडिचेरी-६०५००

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उद्बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि

संदेश

विशिष्ट काल में ऐसी विशेष क्रिया-धाराएं होती हैं जिनमें दिव्य शक्ति समस्त मानव गणनाओं को चकनाचूर करती हुई, सावधान राजनेता की बुद्धिमानी और राजनीतिज्ञ की चालाकी का मजाक उड़ाती हुई अपने-आपको अभिव्यक्त करती है। वह वैज्ञानिक विश्लेषक की भविष्यवाणी को झूठा ठहराती है। वह इतनी तीव्रता और ऐसे भीषण वेग से आगे बढ़ती है कि स्पष्ट रूप से मानव शक्ति से अधिक उच्च मालूम होती है। उस गतिधारा के कारणों को ढूंढ़ने का बाद में बुद्धिमान मनुष्य प्रयास करता है, और उन शक्तियों का भेद खोलना चाहता है जिनके कारण वह संभव हुआ किन्तु वह इस बार विमूढ़ बन जाता है, उसकी बुद्धिमत्ता हर कदम पर झूठी ठहरती है और विज्ञान उसकी कोई सहायता नहीं कर पाता। ऐसे समय हम कहते हैं कि इस गति-धारा में भगवान् उपस्थित हैं। वे उसके नेता हैं और वह सफल होकर ही रहेगी चाहे मनुष्य के लिये उसकी सफलता के साधनों को देखना असंभव हो।

—श्रीअरविन्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संपादकीय :

विजय की निश्चिति

सारा संसार एक ऐसे दुश्चक्र में फंस गया है कि मानव मात्र असमंजस में पड़ा है। चारों ओर से आर्थिक, सामाजिक, शैक्षिक और व्यक्तिगत तनावों से घिरा हुआ मानव कभी दायें तो कभी बायें चलने की कोशिश करता है किन्तु इस संधि-काल में, जब नया युग उतर रहा है, कोई भी दिशा हमें सही रास्ते पर नहीं ले जाती। इस समय अगर हम साक्षी भाव को जगा कर व्यक्तिगत और विश्व की सारी गतियों का निरीक्षण करें तो हम उस चमत्कार को देखेंगे जिसे बल्लाल सेन ने कुरुक्षेत्र के युद्ध में छावनी के एक खंभे पर स्थित होकर देखा था।

एक लोक-कथा के अनुसार एक राक्षसी की कोख से भीम का पुत्र था जिसका नाम था बल्लाल सेन या बरवरी। इस महा बलशाली पुत्र ने किसी ऋषि के चरणों में बैठ कर अमोघ शक्ति प्राप्त कर ली। जब उसने कुरुक्षेत्र के युद्ध की बात सुनी तो तीन तीरों को अभिमंत्रित करके पितृकुल की रक्षा हेतु निकल पड़ा। सर्वव्यापी, सर्वज्ञ श्रीकृष्ण ने यह देख ब्राह्मण का भेष बनाया और उसे रास्ते में ही रोक लिया। मन ही मन सोच रहे थे कि यह मेरे कार्य में बाधा डालेगा।

ब्राह्मण को सामने पाकर बल्लाल ने नमस्कार किया तो उसने पूछा, "वीर, इतनी उतावली से कहां जा रहे हो?" बल्लाल बोला, "तात, कुरुक्षेत्र के युद्ध में पिता और चाचाओं की रक्षा करने जा रहा हूं। देखिये, इन तीन तीरों से सारी कुरु सेना का नाश कर दूंगा।" ब्राह्मण मुस्कुरा दिये, "ऐसे प्रभावी तीर हैं तो चलो एक तीर से मेरी इस उंगली को भेद दो।" और उन्होंने अपनी छिगुनी आगे कर दी। बल्लाल ने सगर्व निशाना साधा और तीर सनसनाता हुआ निकला, उंगली को छू कर ब्राह्मण के चरणों में जा गिरा। बल्लाल फटी आंखों से अज्ञात ब्राह्मण को ताकता रहा, फिर बोला, "तात, सच बताइये आप हैं कौन?" श्रीकृष्ण ने अपना रूप प्रकट किया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और कहा, "तुम्हें दिखाना चाहता था कि तुम्हारी यह इच्छा पूर्ण न होगी। तुम वीर हो, मैं तुमसे प्रसन्न हूं, वर मांगो।" बल्लाल नतमस्तक हो बोला, "मुझे यह देखना है कि इस महायुद्ध में कौन सच्चा वीर है, मुझे पूरा युद्ध दिखाइये।" भगवान् के आदेश से उसने अपने अभिमंत्रित बाणों से अपना सिर काट दिया और वह सिर पांडव छावनी के स्तंभ पर टंगा रहा।

अनेक वीरों के पराक्रम और पतन के बाद युद्ध समाप्त हुआ। पांडव विजयोल्लास में डींगें हांकने लगे। प्रत्येक का दावा था कि उसीके बल और पराक्रम से कुरुक्षेत्र का युद्ध जीता गया है। सब पांडव मिलकर अंत में श्रीकृष्ण के पास गये ताकि वे उनके प्रश्न का उत्तर दें। भेदपूर्वक मुस्कुरा कर वे बोले, "मैं क्या जानूं? मैं तो केवल सारथी बना रहा। मुझे पता नहीं किस वीर के पराक्रम ने युद्ध जीता, तुम बल्लाल सेन के पास जाओ, उसका जीवित सिर अभी तक छावनी में टंगा है। उसने सारा युद्ध देखा है। वह अवश्य बता सकेगा कि यश का भागी कौन है।" पांडव छावनी की ओर भागे, बल्लाल से उन्होंने पूछा, "हे वीर, हम जानना चाहते हैं कि हममें से किसने कुरुक्षेत्र का युद्ध जीता।" बल्लाल ने अट्टहास्य किया, फिर गंभीर होकर बोला, "मैंने आकाश में एक हाथ देखा जो एक चक्र को इधर-उधर फेंकता था और उसी चक्र के वेग से योद्धा धराशायी होते जा रहे थे।" पांडवों की मति ठिकाने आ गयी और वे लज्जित हो, मन-ही-मन श्रीकृष्ण को नमन करते हुए लौट आये।"

इस कहानी से हमें भी यही सीखना है कि जहांतक हो सके निष्पक्ष होकर अपने और संसार के जीवन को बल्लाल की तरह देखें और कार्य करें। यह जानें कि हम चाहे जितने पराक्रमी हों, सचमुच करनेवाला कोई और है और उसीकी विजय होगी।

—अनुबेन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दैनन्दिनी

मार्च

१. हे प्रभु, तू हमारे जीवन का परम सम्राट् बन जा और सारे अंधकार को दूर भगा दे जो हमें तेरे दर्शन करने से, तेरे साथ सतत संपर्क रखने से रोकता है।

२. जब मेरे विचार तेरी ओर उड़ान भरते हैं और तेरे साथ एक हो जाते हैं, तब सब कुछ कितना सुंदर, भव्य, सरल और शांत बन जाता है।

३. अपने हृदय में शांति के साथ, अपने मन में प्रकाश के साथ, हे स्वामी, हम तुझे अनुभव करते हैं। उसे हम अपने अंदर इतना जीवंत पाते हैं कि यह जानते हुए कि सर्वत्र तेरा ही मार्ग है, हम घटनाओं की प्रतीक्षा प्रसन्न चित्त से कर रहे हैं।

४. तेरा विधान हमारा विधान है और अपनी सारी शक्ति से हम यह अभीप्सा करते हैं कि तेरी शाश्वत चेतना के साथ हमारी चेतना का तादात्म्य हो, कि हर क्षण, हर वस्तु में हम तेरा उदात्त कार्य चरितार्थ करें।

५. वर दे कि अब से हम केवल तेरी ही आंखों से देखें और तेरी ही इच्छा द्वारा कार्य करें।

६. मेरे सब कार्य तेरे विधान का समर्थन हों, तेरी और मेरी इच्छा में कोई भेद न रहे।

७. मैं तुझ से विनती करती हूं, वर दे, कि मेरी समस्त सत्ता तेरे साथ एक हो जाय, तेरी उपलब्धि की ओर पूर्णतः जाग्रत् प्रेम की एक ज्वाला के सिवा मैं और कुछ न बनूं।

८. हे ईश्वर, मैं अत्यन्त नम्रता के साथ तुझसे प्रार्थना करती हूं कि मेरे अंदर सचेतन या अवचेतन रूप से कुछ भी तुझे धोखा न दे। तेरे पवित्र कार्य की सेवा में जरा भी लापरवाही न आय।

९. प्रत्येक दिवस, प्रत्येक क्षण नये और अधिक पूर्ण समर्पण के लिये एक अवसर होना चाहिये,—गभीर और नीरव समर्पण का जो दिखाई तो न दे किन्तु जो गहरे पैठकर समस्त कार्य को रूपान्तरित कर दे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१०. एकाकी और शान्त, हमारे मन को हमेशा तेरे अंदर विश्राम करना चाहिये और उस पवित्र शिखर से वास्तविकता का सच्चा रूप देख पाना चाहिये, एकमात्र और शाश्वत सद्वस्तु को देखना चाहिये जो सब चीजों के पीछे विद्यमान है।

११. स्वामी, वर दे कि मैं अपने भटकते विचारों का स्वामी बन जाऊं, कि तेरे अंदर जीते हुए मैं जीवन को तेरे द्वारा देखूं।

१२. वर दे कि मैं हमेशा तेरे दिव्य प्रेम में रहूं ताकि वह मेरे अंदर, मेरे द्वारा जीवित रहे।

१३. मैं अपनी पूर्णताओं को, कठिनाइयों को, दुर्बलताओं को जानता हूं लेकिन मैं तेरे ऊपर पूर्ण विश्वास करता हूं और नीरव भक्ति में तेरे सामने झुकता हूं।

१४. हे प्रभु, हमारा जो कुछ है वह सब तेरी आराधना करे, तेरी सेवा करे। सबको शांति प्राप्त हो।

१५. प्रत्येक वस्तु में तुझे ढूंढना, प्रत्येक परिस्थिति में तुझे अधिक-से-अधिक अच्छी तरह अभिव्यक्त करने की इच्छा करना; इसी मनोवृत्ति में परम शांति, पूर्ण प्रसन्नता और सच्चा संतोष है।

१६. हे ईश्वर, तू हमारी सुरक्षा है, हमारा एकमात्र सुख है, तू हमारा देदीप्यमान प्रकाश, हमारा विशुद्ध प्रेम, हमारी आशा और शक्ति है।

१७. जिस व्यक्ति ने अपनी सत्ता की पूरी सचाई के साथ अपने-आपको तुझे अर्पित कर दिया है . . . वह पाता है कि उसके जीवन में सब चीजें बदल जाती हैं और सारी परिस्थितियां तेरे विधान को अभिव्यक्त करना आरंभ करती हैं और उसके समर्पण में सहायक होती हैं।

१८. आह, यह व्याकुलता क्यों कि मेरे लिये घटनाओं का मोड़ इस तरह या उस तरह होना चाहिये! क्यों न मैं अपनी शक्ति को शांत आंतरिक विश्वास से इच्छा करने के लिये लगाऊं कि तेरा विधान विजयी हो।

१९. प्रत्येक क्षण की क्रियाशीलता में हमें तेरी सेवा करनी और अपने-आपको तेरे साथ एक करना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२०. हे प्रभु, अब मुझे अपने-आपको पूरी तरह अर्पित कर एक कोरा कागज-सा बनना चाहिये जिसपर तेरे विचार और तेरी इच्छा मेरी ओर से विकृति के खतरे के बिना अंकित हो पायें।

२१. यह शरीर तेरा यंत्र है, यह इच्छा तेरी चेरी है और यह बुद्धि तेरा औजार है, समस्त सत्ता केवल तू है।

२२. किसी क्षण, किसी भी परिस्थिति में, हमें यह न भूलना चाहिये कि तेरे बाहर हमारे "मैं" की कोई वास्तविकता नहीं है।

२३. वर दे कि यह यंत्र सचेतन रूप से अपने-आपको जानते हुए तेरी सेवा करे, मेरी यह चेतना तेरी चेतना में विलीन होकर तेरी दिव्य दृष्टि से सब चीजों पर मनन करे।

२४. इस शरीर के द्वारा तू संसार को देखेगा, इस यंत्र के द्वारा तू संसार में कार्य करेगा।

२५. हे मेरे दिव्य स्वामी, मेरा प्रेम तेरी ओर पहले से कहीं अधिक तीव्रता से अभीप्सा करता है। संसार में मुझे केवल अपना जीवंत प्रेम बना दे और कुछ नहीं।

२६. मुझे पता है कि सब कुछ तेरी इच्छा के अनुसार चलता है और पवित्र पूजा भाव से मैं आनंद सहित तेरी इच्छा पर भरोसा कर रहा हूं। हे ईश्वर, मैं वही बनूंगा जो तू चाहे।

२७. वर दे कि प्रत्येक बाधा दूर हो जाय। मेरे हर भाग में अज्ञान के अंधकार का स्थान तेरा दिव्य ज्ञान ले ले।

२८. समस्त विश्व में तेरे जीवन, तेरे प्रकाश, तेरे प्रेम के सिवा कुछ भी नहीं है।

२९. वर दे कि तेरे लिये मेरा प्रेम बढ़ता चला जाय ताकि मैं समस्त प्रेम बन जाऊं, तेरा ही प्रेम और तेरा प्रेम होने के कारण संपूर्ण रूप से तेरे साथ एक हो जाऊं।

३०. वर दे कि विचार स्पष्ट, व्यवस्थित, आलोकित हो जायें और तेरे प्रेम से रूपांतरित भी हो जायें।

३१. सारी जीवन-शक्तियां केवल तेरे प्रेम द्वारा गठित होकर, उससे व्याप्त होकर, अप्रतिरोध्य पवित्रता, और सतत ऊर्जा, शक्ति और आर्जव पाती हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चैत्य और आध्यात्मिक शिक्षा

हमने यह बात कितनी बार दोहरायी है कि जो कुछ मन से आता है वह पूरी तरह से सापेक्ष होता है। मन जितना अधिक शिक्षित हो, उसने अपने-आपको जितने अनुशासनों में ढाला हो उसमें उतनी ही अधिक यह क्षमता आ जाती है कि यह प्रमाणित करे कि वह जो कुछ प्रस्तुत कर रहा है या कह रहा है वही सच है। तर्क द्वारा तुम किसी भी चीज की सच्चाई प्रमाणित कर सकते हो लेकिन इस आधार पर वह सत्य नहीं बन जाती। वह रहती है एक राय, एक पूर्वाग्रह, एक ऐसा ज्ञान जो ऐसे आभासों पर आधारित है जो अपने-आप में शंकास्पद हैं।

इसमें से बाहर आने का बस एक ही तरीका मालूम होता है, अपनी अन्तरात्मा की खोज में निकलो और उसे पा लो। वह उपस्थित है, अपने-आपको छिपाने का आग्रह नहीं करती, वह चीजों को कठिन बनाने के लिये तुम्हारे साथ खिलवाड़ नहीं करती, इसके विपरीत, वह बहुत प्रयास करती है कि इस बात में तुम्हारी सहायता करे कि तुम उसे पा सको और वह अपनी बात सुना सके। तुम्हारी अन्तरात्मा और तुम्हारी सक्रिय चेतना के बीच दो पात्र हैं जिन्हें बहुत शोर मचाने की आदत है—मन और प्राण। और चूंकि वे बहुत शोर मचाते हैं, जब कि अन्तरात्मा शोर नहीं मचाती, या जितना हो सके कम-से-कम शब्द करती है, उनका शोर तुम्हें अन्तरात्मा की आवाज सुनने से रोकता है।

१४ नवम्बर १९५८

—माताजी

...एकमात्र सच्ची शिक्षा वह होगी जो व्यक्ति या राष्ट्र के मन और शरीर में आत्मा के वास्तविक कार्य के लिये उपकरण हो।

यही वह सिद्धान्त होना चाहिये जिस पर हम निर्माण करें, यही केन्द्रीय प्रयोजन और पथ-प्रदर्शक आदर्श होना चाहिये। यह ऐसी शिक्षा होनी चाहिये जो व्यक्ति के लिये अन्तरात्मा, उसकी शक्तियों और उसकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्षमताओं के विकास को ही व्यक्ति का केन्द्रीय आदर्श बना दे।

—श्रीअरविन्द

यह अभी तक अनुभव नहीं किया गया है कि यह अन्तरात्मा है क्या और चाहे बालक में हो या मनुष्य में, सच्चा रहस्य है, उसकी अपनी गहनतम आत्मा, सच्चे चैत्य की खोज करने में सहायता करना। अगर हम कभी उसे सामने आने का अवसर दें, और इससे भी बढ़ कर यदि हम उसे, "अपने सामने प्रस्तुत अभियान के नेता के रूप में" बुलायें तो वह स्वयं ही शिक्षा के अधिकांश व्यापार को हमारे हाथों से अपने हाथ में ले लेगा और आध्यात्म पुरुष की क्षमता को अपनी सम्भाव्यताओं के विकास की ओर ले जायगा, मनुष्य और जीवन की हमारी वर्तमान यान्त्रिक दृष्टि और उनके साथ व्यवहार करने के बाह्य रूढ़िगत तरीके उसका अनुभव पाने या उसकी कोई कल्पना करने से हमें रोकते हैं। शिक्षा के ये नये तरीके सत्यतर व्यवहार के सीधे मार्ग पर हैं। प्राणिक और भौतिक मानस के पीछे स्थित चैत्य सत्ता के साथ निकटतर स्पर्श पाने के प्रयास और सम्भावनाओं पर बढ़ता हुआ भरोसा निश्चय ही हमें इस परम शोध की ओर ले जायगा कि मनुष्य आन्तरिक रूप से अन्तरात्मा और भगवान् की सचेतन शक्ति है और इस अन्तस्थ वास्तविक मनुष्य का आह्वान शिक्षा का बल्कि वस्तुतः समस्त मानव जीवन का उचित उद्देश्य है . . .।

—श्रीअरविन्द

. . . यदि समाज की अवस्था, समाज पर शासन करनेवाला सिद्धान्त और नियम आध्यात्मिक परिवर्तन के विरुद्ध हैं, चाहे ये चीजें पूरी तरह प्राणिक, बाह्य, आर्थिक और यान्त्रिक श्रेणी की हों, जैसा कि निश्चित रूप से आजकल मानव जाति में है, फिर भी यदि सामान्य मानव मन ने उच्चतर श्रेणी के विचारों को प्रवेश देना शुरू कर दिया है, जिसका अन्ततोगत्वा आना आवश्यक है, और यदि मनुष्य के हृदय ने इन विचारों से उत्पन्न अभीप्सा से अनुप्राणित होना शुरू कर दिया है तो अनतिदूर भविष्य में कुछ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रगति की आशा है। और यहां सब से पहला आवश्यक चिह्न होना चाहिये जीवन के आत्मपरक विचार की वृद्धि—अन्तरात्मा की, आन्तरिक सत्ता की उसकी शक्तियों, सम्भावनाओं, उसके विकास और अभिव्यक्ति की वृद्धि और उसके लिये सत्य, सुन्दर और सहायक वातावरण की सृष्टि ही प्रथम और चरम महत्त्व की एकमात्र वस्तु है।

—श्रीअरविन्द

शिक्षा की तीन प्रणालियां, शारीरिक, प्राणिक और मानसिक, उस चीज के साथ सम्बन्ध रखती हैं जिसे व्यक्ति के निर्माण का साधन, अव्यवस्थित अवचेतन राशि में से व्यक्ति को ऊपर उठाकर सुव्यवस्थित, आत्म-चेतन सत्ता बनाने का साधन कहा जा सकता है। चैत्य शिक्षा से हम जीवन के सच्चे प्रयोजन की समस्या, धरती पर अपने अस्तित्व के कारण, ठीक वही शोध जिसकी ओर जीवन को जाना चाहिये और उस शोध के परिणाम: व्यक्ति का उसके शाश्वत तत्त्व के प्रति उत्सर्ग तक पहुंचते हैं।

१९५२ —माताजी

...अगर हमें चैत्य शिक्षा का एक सामान्य खाका देना हो तो हमें कुछ इसका ख्याल होना चाहिये, वह चाहे जितना सापेक्ष क्यों न हो, कि चैत्य सत्ता से हमारा क्या मतलब है। उदाहरण के लिये हम कह सकते हैं कि व्यष्टिगत सत्ता का सृजन, देश और काल में, परम स्रोत के अन्दर छिपी हुई अनन्त सम्भावनाओं में से एक की अभिव्यक्ति का प्रक्षेपण है। वह एक ओर वैश्व चेतना द्वारा व्यष्टि के विधान या सत्य में मूर्त रूप लेता है और क्रमशः वृद्धि करते हुए उसकी अन्तरात्मा या चैत्य सत्ता बन जाता है।

१९५२ —माताजी

अनुभव के लिये, व्यष्टिगत सत्ता की वृद्धि के लिये अन्तरात्मा पुनर्जन्म में प्रवेश करती है, सुख और दुःख, पीड़ा और व्यथा, सौभाग्य और दुर्भाग्य उस अनुभव के अंश हैं, उस वृद्धि के साधन हैं...सुख और सुख

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लानेवाली सफलता के लिये मानवजाति की मांग निस्सन्देह रूप से उचित है। यह प्राण और भौतिक के आनन्द की फीकी-सी झलक या स्थूल विम्ब पाने के लिये प्रयास है। लेकिन एक आभासी प्रसन्नता और भौतिक सफलता, यह हमारी प्राणिक प्रकृति के लिये चाहे जितनी वांछनीय क्यों न हो परन्तु हमारे जीवन का मुख्य उद्देश्य नहीं है . . . पुनर्जन्म की परिस्थितियों का सारा रहस्य, अन्तरात्मा की एक प्रधान आवश्यकता के चारों ओर केन्द्रित होता है, वृद्धि की आवश्यकता, अनुभव की आवश्यकता जो उसके विकास की रेखा पर शासन करती है। बाकी सब गौण है।

—श्रीअरविन्द

चैत्य उपस्थिति के द्वारा ही, व्यष्टिगत सत्ता का सत्य उसके तथा उसके जीवन की परिस्थितियों के सम्पर्क में आता है। अधिकतर उदाहरणों में, हम कह सकते हैं, वह उपस्थिति पर्दे के पीछे से, अज्ञात और अपरिचित रूप में काम करती है लेकिन कुछ व्यक्तियों में वह गोचर होती है और उसकी क्रिया ज्ञेय होती है और बहुत ही कम व्यक्तियों में उपस्थिति इन्द्रिय-गम्य और उसकी क्रिया पूरी तरह प्रभावकारी होती है। ये अपने जीवन में एक आश्वासन और एक निश्चिति के साथ आगे बढ़ते चलते हैं और अपने नियति के स्वामी होते हैं। इस स्वामित्व को पाने के प्रयोजन से और चैत्य उपस्थिति के बारे में सचेतन होने के लिये चैत्य शिक्षा का अभ्यास करना चाहिये लेकिन उसके लिये एक विशेष उपकरण की जरूरत है—वह है व्यक्तिगत संकल्प।

१९५२

—माताजी

चैत्य शोध का आरम्भ बिन्दु है अपने अन्दर उसे खोजना जो शरीर और जीवन की अवस्थाओं से मुक्त है, जिसका जन्म उस मानसिक रूपायन से नहीं हुआ जो तुम्हें दिया गया है, उस भाषा से जिसे तुम बोलते हो, तुम जिस वातावरण में रहते हो उसकी आदतों और रीति-रिवाजों से, उस देश से जहां तुम जन्मे, उस काल से जिसमें तुम जीते हो, उन सब से मुक्त हो तुम्हें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपनी सत्ता की गहराइयों में उसे खोजना होगा जो अपने अन्दर वैश्व भाव, असीम विस्तार, अविच्छिन्न सातत्य लिये रहता है। जब तुम अपने-आपको विकेन्द्रित करते हो, अपने-आपको फैलाते और विस्तृत करते हो तो तुम सभी चीजों और सभी सत्ताओं में जीना शुरू करते हो। व्यक्ति को एक-दूसरे से अलग करनेवाली बाधाएं टूट जाती हैं। तुम उन्हीं के विचारों में सोचते, उनके संवेदनों में स्पन्दित होते, उनके अनुभवों में अनुभव करते हो, उन सब के जीवन में जीते हो। जो एकदम से निष्प्राण मालूम होता था, अचानक जीवन से भर उठता है, पत्थरों में जान आ जाती है, पौधे अनुभव करते, इच्छा करते और कष्ट सहते हैं, पशु लगभग न्यूनाधिक रूप से अस्फुट परन्तु स्पष्ट और अर्थपूर्ण वाणी बोलते हैं। एक काल और सीमाहीन अद्‌भुत चेतना द्वारा सभी चीजें अनुप्राणित हो उठती हैं। और यह तो चैत्य उपलब्धि का एक पक्ष मात्र है।

१९५२ —माताजी

और अगर तुम, तुम में से हर एक अपनी चैत्य सत्ता को पा ले और उसके साथ एक हो जाय तो सभी समस्याओं का समाधान हो जायगा।

चैत्य सत्ता मनुष्य के अन्दर भगवान् की प्रतिनिधि है—तो बात ऐसी है—भगवान् कोई दूर की, पहुंच से बाहर की चीज नहीं हैं। भगवान् तुम्हारे अन्दर हैं पर तुम उनसे भली-भांति अभिज्ञ नहीं हो। . . . अभी वे तुम्हारे अन्दर एक उपस्थिति की जगह प्रभाव की तरह काम करते हैं। सचमुच तो यह सचेतन सत्ता होनी चाहिये। तुम्हें हर क्षण अपने-आपसे पूछ सकना चाहिये, भगवान् इसे किस तरह देखते हैं? इस तरह: पहले यह कि भगवान् इसे किस तरह देखते हैं, फिर भगवान् क्या इच्छा करते हैं, और फिर यह कि भगवान् कैसे क्रिया करते हैं? और यह अगम्य क्षेत्रों में जाना नहीं है। वे यहीं हैं। अभी के लिये सभी पुरानी आदतें और व्यापक निश्चेतना एक प्रकार का आवरण लगा देती हैं जो हमें देखने और अनुभव करने से रोकता है। तुम्हें अवश्य, निश्चित रूप से उसे उठा देना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वस्तुतः तुम्हें सचेतन यन्त्र बनना चाहिये . . . सचेतन . . . भगवान् के बारे में सचेतन।

साधारणतः इसमें पूरा जीवन लग जाता है, कुछ लोगों के लिये कई जीवन। यहां, वर्तमान स्थिति में तुम कुछ महीनों में कर सकते हो। जो लोग . . . जिनमें तीव्र अभीप्सा है वे इसे कुछ **महीनों** में कर सकते हैं।

८ फरवरी १९७३

—माताजी

केवल एक ही सच्चा पथ-प्रदर्शक या गुरु है, वह है आन्तरिक गुरु, जो मानसिक चेतना में से हो कर नहीं गुजरता।

स्वभावतः, अगर किसी बच्चे को अनर्थकारी शिक्षा मिले तो वह अधिक-से-अधिक प्रयास करेगा अपने अन्दर की इस छोटी-सी सच्ची चीज को बुझा देने का और कभी-कभी वह इतनी अच्छी तरह सफलता पा लेता है कि वह उसके साथ सारा सम्पर्क खो बैठता है और साथ ही शुभ-अशुभ का विवेक भी खो देता है। इसीलिये मैं इस बात पर आग्रह करती हूं और कहती हूं कि बाल्यावस्था से ही बच्चों को यह सिखाना चाहिये कि एक भीतरी सद्वस्तु है, स्वयं उनके अन्दर, पृथ्वी के अन्दर, विश्व के अन्दर और यह कि उनका, पृथ्वी और विश्व का अस्तित्व केवल उस सत्य की एक क्रिया के नाते है। अगर वह न होता तो बच्चा उतने कम समय तक भी न रह पाता जितना वह रहता है और हर चीज अस्तित्व में आते ही नष्ट हो जाती। और चूंकि यह विश्व की सच्ची नींव है इसलिये स्वभावतः इसीकी विजय होगी और वह सब जो इसका विरोध करता है, तब तक नहीं टिक सकता जब तक इसका अस्तित्व है क्योंकि यह तत् है, वह शाश्वत है जो विश्व का आधार है।

निश्चय ही यहां बच्चे को दार्शनिक भाषण देने का सवाल नहीं है। उसे इस तरह की अनुभूति दी जा सकती है कि जब वह इस छोटी-सी मौन वस्तु का कहना मानता है, जो उसके अन्दर विद्यमान है तो उसे एक आन्तरिक विश्राम, सन्तोष और कभी-कभी तीव्र आनन्द का अनुभव होता है, ये चीजें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसे इससे विपरीत चीजें करने से रोकेंगी। शिक्षा इस प्रकार की अनुभूति पर आधारित हो सकती है।

८ जनवरी १९५१ —माताजी

. . . हर एक के अन्दर अनगिनत सम्भावनाएं होती हैं जिनके बारे में वह अनजान होता है और वे तभी विकसित होती हैं जब वह जो कुछ करना चाहिये करे और जिस तरह करना चाहिये उसी तरह करे . . . लेकिन एक नहीं दो प्रकार की प्रगति होती है, एक प्रगति तो वह है जिसमें तुम अपनी उन सामर्थ्यों, सम्भावनाओं, क्षमताओं और गुणों को विकसित करते हो जो तुम्हारे अन्दर पहले से ही हैं—सामान्यतः शिक्षा द्वारा यही प्राप्त किया जाता है। लेकिन अगर तुम जरा अधिक पूर्ण विकास की ओर जाओ, एक गहनतर सत्य की ओर बढ़ो तो तुम, तुम्हारे अन्दर पहले से जो गुण हैं उनमें और भी गुण जोड़ सकते हो, ऐसे नये गुण जो तुम्हारी सत्ता में सोये हुए प्रतीत होते हैं।

तुम अपनी सम्भावनाओं का गुणन कर सकते हो, उन्हें बढ़ा सकते और विस्तृत कर सकते हो; अचानक कुछ ऐसी चीज ऊपर ला सकते हो जिसके अपने अन्दर होने के बारे में तुम ने सोचा भी न था।

१० सितम्बर १९५८ —माताजी

माताजी, क्या आप कुछ शब्दों में बतला सकेंगी कि फ्री प्रोग्रेस (मुक्त प्रगति) से आपका क्या मतलब है?

एक ऐसी प्रगति जिसका मार्ग-दर्शन अन्तरात्मा करती है, जो आदतों, रूढ़ियों और पूर्व कल्पित विचारों के आधीन न हो।

—माताजी

क्या तुम जानते हो कि चौथा आयाम क्या होता है? क्या तुम जानते हो?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जी नहीं, मधुर मां।

आह! यह तो आधुनिक विज्ञान का सबसे अच्छा उपगमन है—चौथा आयाम। हमारे लिये भगवान् ही चौथा आयाम हैं... चौथे आयाम में हैं। वह हर जगह है, हर जगह, हर समय है। वह आता जाता नहीं है। वह हमेशा रहता है, हर जगह। हम और हमारी मूर्खता हमें उसका अनुभव करने से रोकती है। चले जाने की कोई जरूरत नहीं है। बिल्कुल नहीं, बिल्कुल नहीं, बिल्कुल नहीं।

अपनी चैत्य सत्ता के बारे में सचेतन होने के लिये तुम्हें चौथे आयाम को अनुभव करने योग्य होना चाहिये। अन्यथा तुम नहीं जान सकते कि वह क्या है...

अनिवार्य, अनिवार्य! जीवन उसी से शुरू होता है अन्यथा तुम मिथ्यात्व में, गड़बड़झाले में, अस्त-व्यस्तता में और अन्धकार में रहते हो। मन, मन, मन, मन! स्वयं अपनी चेतना के बारे में सचेतन होने के लिये तुम्हें उसे मानसिक रूप देना पड़ता है। यह भयंकर है, भयंकर!

—माताजी

८ फरवरी १९७३

शिक्षा-केन्द्र के विद्यार्थियों को पदवियां और प्रमाण-पत्र क्यों नहीं दिये जाते?

पिछले सौ वर्षों से मानव जाति एक बीमारी से ग्रस्त है जो अधिकाधिक फैलती जा रही है और हमारे काल में अपनी पराकाष्ठा पर जा पहुंची है। इसे हम "उपयोगितावाद" कहते हैं। मनुष्यों और वस्तुओं, परिस्थितियों और क्रियाओं को अपवादिक रूप से उपयोगितावाद की दृष्टि से देखा जाता है और उसीसे उनका मूल्य आंका जाता है। किसी चीज का कोई मूल्य नहीं यदि वह उपयोगी न हो...।

...हर चीज को धन की दृष्टि से जांचा जाता है और उसीसे उसका मूल्य आंका जाता है। मैं इसे ही उपयोगितावाद कहती हूं। यह बहुत फैलनेवाली बीमारी है। बच्चे भी इससे बचकर नहीं रह पाते।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिस अवस्था में बच्चों को सौन्दर्य, महानता और पूर्णता के स्वप्न देखने चाहियें, ऐसे स्वप्न जो सामान्य बुद्धि के लिये बहुत अधिक ऊंचे हों, फिर भी जो मन्द सद्बुद्धि से बहुत अच्छे होते हैं, आजकल बच्चे धन के स्वप्न देखते हैं और धन कैसे कमाएं इसकी चिन्ता में लगे रहते हैं।

तो जब वे अपनी पढ़ाई-लिखाई के बारे में सोचते हैं तो सब से बढ़कर वे यही सोचते हैं कि कौन-सी चीज उनके लिये ज्यादा उपयोगी हो सकती है ताकि वे बड़े होकर बहुत-सा धन कमा सकें।

तो जो चीज उनके लिये सब से अधिक महत्त्वपूर्ण बन जाती है वह है अपने-आपको सफलता के साथ परीक्षाओं के लिये तैयार करना क्योंकि पदवियों, प्रमाण-पत्रों, उपाधियों के साथ वे अच्छे पद पा सकेंगे और बहुत-सा पैसा कमा सकेंगे।

उनके लिये पढ़ने-लिखने का और कोई प्रयोजन नहीं है, और कोई रस नहीं है . . .

जो बच्चे इस बीमारी से ग्रस्त हैं वे आश्रम के शिक्षा-केन्द्र के लिये योग्य नहीं हैं। उनके आगे यह चीज स्पष्ट कर देनी होगी कि हम यहां पर किसी सरकारी परीक्षा या प्रतियोगिता के लिये तैयार नहीं करते हैं, हम उन्हें कोई प्रमाण-पत्र या उपाधि नहीं देते जिसका वे बाहरी जगत् में उपयोग कर सकें।

हम यहां पर केवल ऐसे विद्यार्थी चाहते हैं जो उच्चतर और अधिक अच्छे जीवन के लिये अभीप्सा करते हों, जो ज्ञान और पूर्णता के प्यासे हों, जो उत्सुकता के साथ ऐसे भविष्य की ओर ताकते हैं जो अधिक पूर्ण रूप से सत्य हो।

बाकी सब के लिये जगत् में बहुत जगह है।

१७ जुलाई १९६० —माताजी

हमें संख्या की जरूरत नहीं है, हम चयन चाहते हैं, हम तेज विद्यार्थी नहीं चाहते, हम चाहते हैं जीवन्त आत्माएं।

अगस्त १९६० —माताजी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

It is not a number that we want — it is a selection; it is not brilliant students that we want, it is living souls.

साधारणतः जब तुम चैत्य सत्ता के बारे में सचेतन हो जाते हो तो प्राणिक और भौतिक आकर्षण और क्रियाशीलता से मुक्ति की ओर प्रवृत्ति होती है। तुम जगत् से भागने की कोशिश करते हो और भगवान् पर एकाग्रता और उनके साथ सतत सम्पर्क की शान्ति में रहना चाहते हो। लेकिन जो श्रीअरविन्द के पूर्णयोग का अनुसरण करते हैं उनकी वृत्ति एकदम भिन्न है। जब वे अपने चैत्य पुरुष को पा लें और उसके साथ एक हो जाएं तो वे उससे यह मांग करते हैं कि वह भौतिक सत्ता की ओर नजर डाले, उस पर भगवान् के साथ अन्तर्निष्ठ चैत्य सम्पर्क से उत्पन्न चेतना से कार्य करे, शरीर को इस तरह रूपान्तरित करे कि वह भागवत चेतना और सामंजस्य को ग्रहण करने और अभिव्यक्त करने योग्य हो जाय।

तो यहां हमारे प्रयास का यही लक्ष्य है, यही अन्तर्राष्ट्रीय यूनिवर्सिटी केन्द्र के अध्ययन की निष्पत्ति होगी।

—माताजी

१९५२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक नये जगत् की प्रतिज्ञा

हम कह सकते हैं कि चैत्य जीवन अमर जीवन है, अन्तहीन काल, अन्तहीन देश, सदा प्रगतिशील परिवर्तन, रूपों के विश्व में अखंड अविच्छिन्नता है। दूसरी ओर आध्यात्मिक चेतना का अर्थ है अनन्त और शाश्वत में जींना, समस्त सृष्टि के परे, वेद और काल के परे प्रक्षिप्त होना। अपनी चैत्य सत्ता के बारे में सचेतन होने के लिये और चैत्य जीवन जीने के लिये तुम्हें समस्त अहंकार को समाप्त करना होगा और आध्यात्मिक जीवन जीने के लिये तुम्हारे अन्दर अहंकार का अस्तित्व ही बाकी न रहना चाहिये।

—माताजी

१९५२

भागवत क्रिया वह क्रिया नहीं है जिसकी मांग अहंकारमय मन करता है जिसे वह स्वीकार करता है, क्योंकि वह सत्य तक पहुंचने के लिये भ्रान्ति का उपयोग करता है, आनन्द तक पहुंचने के लिये दुःख-दर्द का और पूर्णता तक पहुंचने के लिये अपूर्णता का उपयोग करता है। अहं नहीं देख पाता कि उसे कहां ले जाया जा रहा है ! वह पथ-प्रदर्शन के विरुद्ध विद्रोह करता है, विश्वास खो देता है, साहस खो बैठता है। इन असफलताओं का कोई मूल्य नहीं है क्योंकि अन्दर के दिव्य पथ-प्रदर्शक हमारे विद्रोह से नाराज नहीं होते, हमारी श्रद्धा की कमी से हतोत्साह नहीं होते और हमारी दुर्बलता से घृणा के मारे पीछे नहीं हटते। उनके अन्दर मां का समस्त प्रेम और अध्यापक का समस्त धैर्य होता है।

—श्रीअरविन्द

हम एक ऐसी जाति चाहते हैं जिसमें अहंकार न हो, जिसमें अहंकार के स्थान पर दिव्य चेतना हो। हमें उसीकी चाह है—ऐसी भागवत चेतना जो जाति को विकसित करेगी और अतिमानसिक सत्ता को जन्म देगी।

२ अप्रैल १९७२

—माताजी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूपों की सीमा के परे से एक नयी शक्ति का, चेतना की शक्ति का आह्वान किया जा सकता है, जो अभी तक अभिव्यक्त नहीं हुई। जो अपने आविर्भाव द्वारा वस्तुओं का मार्ग बदल देगी और एक नये जगत् को जन्म देगी। आत्म-विलोपन द्वारा पार्थिव कष्टों से व्यक्तिगत छुटकारा ही दुःख-दर्द, अज्ञान तथा मृत्यु की समस्या का सच्चा समाधान नहीं है, सच्चा समाधान है रूपान्तर, जड़-भौतिक का पूर्ण रूपान्तर जो प्रकृति की पूर्णता की ओर प्रगति में उसके आरोहणकारी अभियान की युक्तियुक्त निरन्तरता द्वारा सम्पन्न होता है, एक ऐसी नयी जाति के सर्जन द्वारा जो मनुष्य के लिये वैसी ही होगी जैसा मनुष्य अभी पशु के लिये है, और वह पृथ्वी पर एक नया बल, एक नयी चेतना तथा एक नयी शक्ति प्रकट करेगी। और तब एक नयी शिक्षा भी शुरू हो जायगी जिसे अतिमानसिक शिक्षा कहा जा सकता है।

—माताजी

१९५२

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि अतिमानसिक शिक्षा का परिणाम केवल मानव प्रकृति को क्रमशः विकसित करना और उसकी प्रसुप्त क्षमताओं की उत्तरोत्तर वृद्धि नहीं होगा बल्कि स्वयं प्रकृति का रूपान्तर होगा, सत्ता का अपनी समग्रता में रूपान्तर, ऊपर से, मनुष्य के परे अतिमानव की ओर जानेवाली जाति का नूतन आविर्भाव जो अन्ततः पृथ्वी पर दिव्य जाति को प्रकट करने की दिशा में अग्रसर होगी।

—माताजी

१९५२

. . . मानव इतिहास के आरम्भ से एक या दूसरे रूप में, एक या दूसरे नाम के साथ श्रीअरविन्द हमेशा महान् पार्थिव रूपान्तरों में अधिष्ठित रहे हैं। अतः जब वे तुम से कहते हैं, "यह उचित समय है", तो शायद वे जानते हैं। मैं बस इतना ही कह सकती हूं।

अतः, अगर यह उचित समय है तो समस्या को इस तरह रखा जाता है: कुछ लोग हैं जो तैयार हैं या तैयार हो जायेंगे, ये ही निश्चित रूप से नये पथ के अग्रदूत होंगे। कुछ दूसरे शायद इसके बारे में बहुत देर से अभिज्ञ होंगे, वे सुअवसर को अपने हाथ से खो बैठेंगे; मेरा ख्याल है कि ऐसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बहुत से होंगे। बहरहाल, मेरा दृष्टिकोण यह है: अगर सम्भावना आधी भी हो तो यह प्रयास कष्ट उठाने योग्य होगा क्योंकि अन्ततः . . . मुझे नहीं मालूम . . . मैंने तुम से अभी-अभी कहा, एक ऐसा क्षण आता है जब जीवन, जैसा कि वह है, मानव चेतना जैसी कि वह है, एकदम से असह्य चीज बन जाती है, वह एक तरह की घृणा, जुगुप्सा पैदा कर देती है, तुम कह उठते हो, "नहीं, यह वह नहीं है, यह वह नहीं है, यह वह नहीं हो सकता, इस तरह से जारी नहीं रह सकता।" हां, तो, जब तुम यहां तक जा पहुंचो तब बस तुम—अपना **सब कुछ** —प्रयास, अपनी सारी शक्ति, अपना सारा जीवन, अपनी सारी सत्ता—इस प्रयास में या इस विशेष सुअवसर में झोंक दो जो तुम्हें दूसरे किनारे पर लगाने के लिये दिया गया है। उस नये पथ पर कदम रखना कितना आरामदायक है जो तुम्हें कहीं और ले जायगा! यह अपने पीछे बहुत सारा असबाब छोड़ने, बहुत सारी चीजों से छुटकारा पाने के लिये कष्ट उठाने लायक प्रयास है ताकि तुम यह छलांग लगा सको। मैं समस्या को इस रूप में देखती हूं।

वस्तुतः, यह अभियानों में उदात्ततम है और अगर तुम्हारे अन्दर साहस-यात्रा की सच्ची भावना का लेशमात्र पुट भी हो तो यह सब कुछ लगा देने लायक बाजी है।

१२ अक्तूबर १९५५ —माताजी

. . . हम बहुत विशेष स्थिति में हैं, बहुत ही विशेष, जैसी पहले कभी नहीं आयी। हम एक नये जगत् के जन्म के साक्षी हैं; वह बहुत अपरिपक्व, बहुत दुर्बल जगत् है—अपने सार तत्त्व में नहीं बल्कि अपनी बाह्य अभिव्यक्ति में—जिसे अब तक पहचाना नहीं गया है, महसूस नहीं किया गया है और अधिकतर लोग इसे अस्वीकार करते हैं। लेकिन वह यहां उपस्थित है, वह यहां है, परिणाम के बारे में पूरी तरह से निश्चित वह विकसित होने का प्रयास कर रहा है। लेकिन उसका रास्ता एकदम से नया रास्ता है जिस पर पहले कभी किसी ने कदम नहीं रखा—कोई भी वहां नहीं गया है, किसी ने यह काम नहीं किया है। यह आरम्भ है, एक **वैश्व**

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आरम्भ। अतः यह एकदम से अप्रत्याशित तथा अननुमेय अभियान है।

कुछ लोग हैं जिन्हें अभियान बहुत प्रिय होता है। मैं उन्हें टेर लगाती हूं और उनसे कहती हूं : "मैं तुम्हें महान् अभियान के लिये निमन्त्रण देती हूं।"

औरों ने हमारे पहले जो कुछ किया है यह उसे ही आध्यात्मिक रूप से दोहराने की बात नहीं है क्योंकि हमारा अभियान उसके बाद से शुरू होता है। यह एक नयी सृष्टि का प्रश्न है, पूरी तरह से नयी जो अपने साथ सभी अप्रत्याशित घटनाओं, जोखिमों, संकटों को साथ लिये चलती है—यह सच्चा साहस-अभियान है, जिसका लक्ष्य सुनिश्चित विजय है, लेकिन उसका रास्ता अजाना है और अज्ञात में उसे पग-पग पर खोजना होगा। यह ऐसी चीज है जो इस वर्तमान विश्व में कभी नहीं हुई और जो इस तरह फिर कभी न होगी। अगर इसमें तुम्हें रस हो . . . तो चलो कूच कर दें। कल तुम्हारे साथ क्या होगा इसका मुझे कोई अन्दाज नहीं।

तुम्हें उस सब को परे हटा देना चाहिये जिसका पूर्वानुमान किया गया है, जिसकी कल्पना की गयी है, जिसकी रचना की गयी है और फिर . . . अज्ञात में कूच कर दो। और जो होना हो होता रहे!

१० जुलाई १९५७ —माताजी

मानव शरीर में अतिमानसिक चेतना को उतारने के लिये श्रीअरविन्द ने न केवल हमारे सामने यह प्रकट किया है कि लक्ष्य तक पहुंचने के लिये किस पथ का कैसे अनुसरण किया जाय बल्कि अपनी निजी व्यक्तिगत उपलब्धि द्वारा हमारे सामने उदाहरण भी प्रस्तुत कर दिया है, अर्थात् हमें इसका प्रमाण दे दिया है कि यह चीज की जा सकती है और यह भी कि इसे करने का समय आ गया है।

परिणामतः, हम यहां वह दोहराने के लिये नहीं हैं जो दूसरे कर चुके हैं बल्कि इसलिये हैं कि अपने-आपको एक नयी चेतना तथा नये जीवन में खिलने के लिये तैयार करें। इसी कारण मैं तुम्हें, तुम विद्यार्थियों को सम्बोधित कर रही हूं, अर्थात् उन सबको जो सीखना चाहते हैं, हमेशा अधिक तथा हमेशा ज्यादा अच्छी तरह सीखना चाहते हैं ताकि एक दिन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुम स्वयं को नयी शक्ति के प्रति खोलने और उसके लिये यह सम्भावना पैदा करने में समर्थ हो सको कि वह जड़-भौतिक स्तर पर अभिव्यक्त हो जाय। यही हमारा कार्यक्रम है और हमें इसे भूलना नहीं चाहिये।

—माताजी

१९५३

...ऐसा हो कि श्रीअरविन्द में श्रद्धा के द्वारा तुम्हारी कल्पना ढले; क्योंकि क्या ऐसी श्रद्धा ही वह आशा और विश्वास नहीं है कि श्रीअरविन्द की इच्छा सम्पन्न होकर रहेगी, कि रूपान्तर का उनका कार्य परम विजय में परिपूर्ण होगा और यह कि वे जिसे अतिमानसिक जगत् कहते हैं वह धरती पर उतारा जायेगा और हम उसे यहां और अभी चरितार्थ करेंगे।

—माताजी

श्रीअरविन्द ने जिस बात का वचन दिया है और स्वभावतः जिस चीज में हमें रस है—हम जो इस समय यहां हैं—वह यह है कि समय आ गया है जब मानवता का विशिष्ट वर्ग आध्यात्मीकरण के लिये आवश्यक शर्तों को पूरा कर के अतिमानसिक शक्ति, चेतना तथा प्रकाश की सहायता से अपने शरीर का रूपान्तर कर पायेगा ताकि वे पशु-मनुष्य न बने रह कर अतिमानव बन जायें।

श्रीअरविन्द ने यह वचन दिया है और उसका आधार था उनका यह ज्ञान कि अतिमानसिक शक्ति धरती पर अभिव्यक्त होने-होने को है। वस्तुतः, उनके अन्दर वह बहुत पहले अवतरित हो चुकी थी, वह इस बात को जानते थे और उसके प्रभावों से भी परिचित थे।

और अब जब कि वह वैश्व रूप से अभिव्यक्त हो गयी है, मैं कह सकती हूं कि व्यापक रूप में, रूपान्तर की सम्भावना की निश्चिति स्वभावतः बहुत अधिक बढ़ गयी है। अब इसमें कोई सन्देह नहीं कि जो इसकी शर्तें पूरी करेंगे या पूरी कर रहे हैं वे इस रूपान्तर के पथ पर हैं।

१० अक्तूबर १९५६ —माताजी

अगर वह प्रकाश जो जन्म ले रहा है, बढ़ता जाय, अगर उन व्यक्तियों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की संख्या जगत् में बढ़े जो अपने अन्दर और जगत् में इस सम्भावना को चरितार्थ करना चाहते हैं, और वे उचित मार्ग की ओर बढ़ें तो वह आत्मा जो मनुष्य में उपस्थित है, जो अभी छिपी हुई दिव्यता है, वर्द्धमान प्रकाश और शक्ति है, वह अभी तक अनदेखे, अकल्पित देवत्व के अवतार के रूप में ऊपर से मानवता की अन्तरात्मा में तथा उन महान् व्यक्तियों में अधिक सम्पूर्ण रूप से उतरेगी जिन में प्रकाश तथा शक्ति प्रबलतम है, तब वह परिवर्तन सम्पन्न होगा जो मानव जीवन को उसकी वर्तमान सीमाओं से विशालतर तथा शुद्धतर क्षितिजों में संक्रमण के लिये तैयार करेगा, पार्थिव क्रम-विकास का महान् आवेग ऊपर की ओर उठ गया होगा और उसने भागवत प्रगति में एक अन्तःप्रकाशात्मक कदम बढ़ा लिया होगा जिसका पाशविक प्रकृति से चिन्तनशील और अभीप्सुक मनुष्य का जन्म केवल एक धुंधली-सी तैयारी और दूरस्थ वचन था।

—श्रीअरविन्द

मैंने देखे सर्वशक्तिमान् प्रभु के जाज्वल्यमान अग्रदूत
स्वर्ग के छोर पर जो मुड़ता है जीवन की ओर
जन्म के अम्बर-सोपानों पर समूहों में नीचे उतरते हुए
दिव्य समष्टि के आगे दौड़ते हुए
प्रभात-नक्षत्र के मार्ग से वे आये
मर्त्य जीवन के संकीर्ण प्रदेश में।
मैंने उन्हें देखा एक युग-संध्या को पार करते हुए,
चमत्कारिणी उषा के सूर्य-नेत्र पुत्रों को,
प्रशान्त विशाल भालवाले इन महान् स्रष्टाओं को,
ये थे विश्व के अवरोध-भंजक महाकाय
नियति के साथ कुश्ती लड़ते उसके संकल्प-अखाड़े में,
देवों की खदानों के उत्खनक श्रमिक,
अनिर्वचनीय के संदेशवाहक
और अमरता के शिल्पी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पतित मानव-लोक में वे आये,
यहां भी उनके मुख पर छाया था अमरत्व का तेज,
वाणी यहां भी ईश्वर के विचारों से संपर्क जोड़े थी,
आत्मा के प्रकाश-से सुन्दर थे उनके शरीर,
वे साथ लिये थे अभिमंत्रित शब्द और गुह्य अग्नि,
वहन करते थे 'सुरा देवता' का आनन्द-चषक,
दैवज्ञ मनुष्य के मैत्रीपूर्ण निकट आते नेत्र,
आत्मा के एक अज्ञात स्तोम को गाते अधर,
काल के गलियारों में प्रतिध्वनित हो रही थी उनकी पदचाप।
प्रज्ञा, माधुर्य, बल और आनन्द के महायाजक,
सौन्दर्य के सूर्यप्रभ मार्गों के अन्वेषक
और प्रेम के हंसते हुए अग्नि-ज्वारों के तैराक,
हर्षोल्लास के स्वर्णिम द्वारों के भीतर नाचते नर्तक,
उनका संचरण एक दिन इस उत्पीड़ित पृथ्वी को बदलेगा
और प्रकृति के मुख पर प्रकाश के औचित्य को सिद्ध करेगा।
यद्यपि नियति रुकी हुई है ऊर्ध्व भूमिका में
और वह कार्य निष्फल लगता है जिसपर हमारी अंतर-शक्ति लगी थी,
सब पूरा होगा जिसके लिये हमने पीड़ा झेली थी।

—श्रीअरविन्द

हर एक व्यक्ति में आत्म-अनुशासन का भाव होना चाहिये और उसका सचमुच अभ्यास करना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चतुर्विध तपस्या और चतुर्विध मुक्ति

अतिमानसिक उपलब्धि की ओर ले जानेवाली सर्वांगीण शिक्षा की खोज करने के लिये चार तपस्याओं और साथ ही चार प्रकार की मुक्ति की जरूरत है।

साधारणतः, लोग तपस्या और आत्म-दमन को एक ही समझने की भूल करते हैं। जब तपस्या की बात की जाती है तो लोग उस तपस्वी की साधना की बात सोचते हैं जो भौतिक, प्राणिक और मानसिक जीवन को आध्यात्मिक बनाने के कठिन काम से बचने की कोशिश करता है और इसलिये यह घोषणा करता है कि यह रूपांतर के योग्य है ही नहीं, और उसे निर्दय होकर व्यर्थ भार, बंधन, आध्यात्मिक प्रगति में बेड़ी मानकर फेंक देता है। बहरहाल, यह माना जाता है कि यह ऐसी चीज है जिसे ठीक करना असंभव है, एक भार है जिसे न्यूनाधिक रूप में खुशी-खुशी तब तक ढोते रहना है जब तक प्रकृति या भगवान् की कृपा मृत्यु के द्वारा तुम्हें उससे छुटकारा न दिला दे। धरती का जीवन अच्छे-से-अच्छे रूप में प्रगति के लिये क्षेत्र है और मनुष्य को उससे अधिक-से-अधिक लाभ उठाने की कोशिश करनी चाहिये और जल्दी-से-जल्दी पूर्णता की उस स्थिति तक पहुंचना चाहिये जो इस परीक्षा को अनावश्यक बनाकर इसका अंत कर दे।

हमारे लिये समस्या बिल्कुल और ही है। हमारे लिये पार्थिव जीवन केवल एक रास्ता या साधन नहीं है, उसे रूपांतर के द्वारा एक लक्ष्य, एक उपलब्धि बनना चाहिये। जब हम तपस्या की बात करते हैं तो शरीर के लिये निंदा की या अपने-आपको उससे अलग कर लेने की दृष्टि नहीं होती। हम आत्म-संयम और आत्म-प्रभुत्व की आवश्यकता के कारण तपस्या की बात छेड़ते हैं। क्योंकि एक ऐसी तपस्या है जो तपस्वी की सभी तपस्याओं से बढ़ कर, उनसे अधिक पूर्ण और अधिक कठिन है—वह है रूपांतर के लिये आवश्यक चतुर्विध तपस्या जो व्यक्ति को अतिमानस सत्य की अभिव्यक्ति के लिये तैयार करती है। इस तरह, उदाहरणार्थ, हम कह सकते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं कि शरीर की पूर्णता के लिये शारीरिक प्रशिक्षण जिस तपस्या की मांग करता है उसकी बराबरी करनेवाली तपस्याएं कम ही होंगी। लेकिन उसकी बात हम उचित समय पर करेंगे।

अपेक्षित चार प्रकार की तपस्याओं का वर्णन करने से पहले मुझे एक प्रश्न स्पष्ट कर देना चाहिये जो अधिकतर लोगों के मन में बहुत सारी गलतफहमियों और उलझनों का कारण है। यह है तपस्वी की इन क्रियाओं के बारे में जिन्हें लोग आध्यात्मिक साधना मानते हैं। इन क्रियाओं में शरीर के साथ बुरा व्यवहार किया जाता है ताकि, जैसा कहा जाता है उसके अनुसार, आत्मा को उससे मुक्त किया जा सके। वास्तव में, ये क्रियाएं आध्यात्मिक साधना का ऐंद्रिय विकृत रूप हैं। कष्ट पाने की विकृत आवश्यकता ही तपस्वी से आत्म-पीड़न करवाती है। साधुओं का कीलों का बिछौना और ईसाई साधुओं की टाट की वेश-भूषा और कोड़ों की मार में एक, थोड़ा-बहुत छिपा हुआ, पीड़ासक्ति का प्रभाव होता है जिसे न तो स्वीकार किया जाता है, न स्वीकार किया ही जा सकता है। यह उग्र संवेदनों के लिये एक अस्वस्थ चाह या अवचेतन आवश्यकता है। वास्तव में, ये चीजें आध्यात्मिक जीवन से कोसों दूर की हैं। ये भद्दी, निम्नकोटि की, अंधेरी और रुग्ण हैं। इनके विपरीत, आध्यात्मिक जीवन प्रकाश और संतुलन, सौंदर्य और आनंद का जीवन है। शरीर पर की जानेवाली एक प्रकार की मानसिक और प्राणिक क्रूरता ने इनका आविष्कार और गुणगान किया है। लेकिन क्रूरता, चाहे वह अपने ही शरीर पर क्यों न हो, आखिर क्रूरता है और सभी प्रकार की क्रूरता बहुत बड़ी निश्चेतना का चिह्न है। अचेतन प्रकृतियों को प्रबल संवेदनों की जरूरत होती है, उसके बिना उन्हें कुछ अनुभव ही नहीं होता; और क्रूरता एक प्रकार की परपीड़न कामुकता है जो बहुत प्रबल संवेदन पैदा करती है। इस प्रकार की क्रियाओं का उद्देश्य यह माना जाता है कि सभी प्रकार के संवेदनों से छुट्टी पा ली जाय ताकि शरीर हमारी आत्मा की ओर की उड़ान में और बाधा न दे सके। परंतु इसकी उपयोगिता संदेहास्पद है। यह भली-भांति जानी हुई बात है कि अगर तुम तेजी से प्रगति करना चाहते हो तो तुम्हें कठिनाइयों से डरना न चाहिये;

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसके विपरीत, जब कभी अवसर आये तब कठिन चीज को चुनने से ही संकल्प-शक्ति बढ़ती है और स्नायुओं में बल आता है। वास्तव में, तपस्या की विकृतियों और उनके विघटनकारी परिणामों के द्वारा सुख की विकृतियों और उनके अज्ञानमय परिणामों के साथ संघर्ष करने की अपेक्षा, संयम और संतुलन के साथ समचित्तता और स्थिरता का जीवन बिताना कहीं अधिक कठिन है। अपनी भौतिक सत्ता के साथ इस हद तक बुरा व्यवहार करना कि वह शून्यवत् हो जाय, इसकी अपेक्षा, उसमें स्थिरता और सरलता के साथ सामंजस्यपूर्ण उत्तरोत्तर विकास पाना बहुत अधिक कठिन है। बड़े गर्व के साथ अपने संयम का प्रदर्शन करने के लिये शरीर को उसके लिये आवश्यक आहार और शुद्ध अभ्यासों से वंचित करने की अपेक्षा, बिना इच्छा के गंभीरतापूर्वक जीना कहीं ज्यादा कठिन है। रोग या दुर्भावना की अवहेलना करने और उसकी ओर ध्यान न देने और उसे अपना विनाश कार्य करते रहने देने की अपेक्षा, उस पर आंतरिक और बाह्य सामंजस्य, शुद्धि और संतुलन द्वारा विजय प्राप्त करना या उसे आने न देना बहुत ज्यादा कठिन है। और सबसे कठिन काम है चेतना को हमेशा उसकी क्षमता के शिखर पर बनाये रखना और शरीर को कभी निचले आवेगों या प्रेरणाओं के प्रभाव में आकर काम न करने देना।

इस लक्ष्य को सामने रख कर हमें चार तपस्याएं अपनानी चाहिये जिनके परिणाम-स्वरूप चार मुक्तियां आयेंगी। उनके अभ्यास से ही चार प्रकार की साधनाएं या तपस्याएं संघटित होंगी जिन्हें हम कह सकते हैं:

(१) प्रेम की तपस्या

(२) ज्ञान की तपस्या

(३) शक्ति की तपस्या

(४) सौंदर्य की तपस्या

इनका क्रम, कह सकते हैं, ऊपर से नीचे की ओर है। परंतु इनके क्रम को देखकर किसीको श्रेष्ठ या हीन न मान लेना चाहिये और न ही कम या ज्यादा कठिन मानना चाहिये। इससे यह भी नहीं पता चलता कि इन तपस्याओं को किस क्रम में लिया जाना चाहिये या लिया जा सकता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इनका क्रम, महत्त्व और कठिनाई व्यक्ति-व्यक्ति के हिसाब से अलग है और इनके बारे में कोई पक्का नियम नहीं बनाया जा सकता। हर एक को अपनी क्षमता और निजी आवश्यकता के अनुसार अपनी पद्धति खोजनी होगी और उसे कार्यान्वित करना होगा।

यहां केवल एक व्यापक दृष्टि दी जायगी जो यथासंभव पूर्ण आदर्शप्रणाली सामने रख सके। तब हर एक इसे अपनी क्षमता के अनुसार अच्छे-से-अच्छे रूप में व्यवहार में ला सकेगा।

सौंदर्य की तपस्या हमें भौतिक जीवन की तपस्या के द्वारा कर्म की स्वतंत्रता की ओर ले जायगी। इसका आधारभूत कार्यक्रम होगा एक ऐसा शरीर बनाना जो आकार में सुन्दर, ठवन और भंगिमा में सामंजस्यपूर्ण, अपनी गतिविधि में लचीला और फुरतीला, कार्य में सबल और स्वास्थ्य तथा जीवन-क्रियाओं में प्रतिरोध की शक्ति रखनेवाला हो।

इन परिणामों को पाने के लिये, सामान्य रूप में, ऐसी आदतें डालना और उनका उपयोग करना अच्छा होगा जो भौतिक जीवन का संगठन करने में सहायक हों। क्योंकि शरीर नियमित कार्यक्रम के चौखटे में ज्यादा अच्छी तरह काम करता है। फिर भी, व्यक्ति में सामर्थ्य होनी चाहिये कि वह अपनी आदतों का, वे चाहे कितनी भी अच्छी क्यों न हों, दास न बन जाय; उसमें अधिक-से-अधिक नमनीयता होनी चाहिये ताकि जब-जब जरूरत हो आदमी अपनी आदतों को बदल सके।

तुम्हें नमनीय और बलवान् मांसपेशियों के शरीर में इस्पात की स्नायुएं बनानी चाहियें ताकि, जब अनिवार्य हो तो तुम सब कुछ सह सको। लेकिन साथ ही इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि शरीर से, वृद्धि और प्रगति के लिये जितना प्रयास, जितनी शक्ति जरूरी है उससे ज्यादा की मांग न की जाय, उन सब चीजों से पूरी सावधानी के साथ बचा जाय जो थका कर चूर कर देनेवाली हों और जो अंत में भौतिक तत्त्वों के विघटन और क्षय की ओर ले जानेवाली होती हैं।

जो शारीरिक शिक्षण ऐसा शरीर बनाना चाहता है जो उच्चतर चेतना का उपयुक्त यंत्र बन सके वह बहुत कठोर आदतों की मांग करता है: भोजन, नींद, शारीरिक व्यायाम और सभी अन्य क्रियाओं में बहुत अधिक नियमितता। तुम्हें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने शरीर की आवश्यकताओं का बड़ी सावधानी से अध्ययन करना चाहिये—ये व्यक्ति-व्यक्ति में बदलती रहती हैं—और फिर, एक सामान्य कार्यक्रम निश्चित कर लेना चाहिये; एक बार कार्यक्रम निश्चित हो जाय तो तुम्हें उसे हिलानेवाली मन-मौज या ढील के बिना कड़ाई के साथ उसका पालन करना चाहिये। इसमें उस तरह के अपवाद बिल्कुल न हों जिनमें मनुष्य बस ''एक बार'' के लिये रस लेता है—क्योंकि ''एक बार'' बार-बार आने लगता है। केवल एक बार से भी तुम अपने संकल्पबल की प्रतिरोध-शक्ति को कम कर देते हो और हर पराजय के लिये द्वार खोल देते हो। तुम्हें सब कमजोरियों के लिये रास्ता बंद कर देना चाहिये : रात की शरारतें बिल्कुल न होनी चाहियें जिनसे तुम एकदम टूटकर लौटते हो। दावतों के, भकोसने के ऐसे कार्यक्रम न होने चाहियें जो पेट की सामान्य क्रिया में गड़बड़ करें। कोई ऐसे विक्षेप, मन-बहलाव या आमोद-प्रमोद न होने चाहियें जो तुम्हारी शक्ति नष्ट करते हैं और तुम्हें दैनिक अभ्यास के लिये उदासीन या निर्जीव छोड़ जाते हैं। तुम्हें एक बुद्धिमत्तापूर्ण और सुनिश्चित जीवन की तपस्या करनी चाहिये, भौतिक रूप से तुम्हारा सारा ध्यान शरीर को भरसक पूर्ण बनाने में लगा रहे। इस आदर्श लक्ष्य को पाने के लिये तुम्हें सब प्रकार की अतियों से, छोटी-बड़ी, सब तरह की बुरी आदतों से बचना चाहिये; तमाखू, शराब आदि जैसे मंद विषों से अपने-आपको मुक्त रखना चाहिये; लोग इन्हें अनिवार्य आवश्यकता बना लेते हैं और ये धीरे-धीरे उनके संकल्प-बल और स्मृति को नष्ट कर देते हैं। बिना अपवाद के लोग, यहांतक कि बहुत अधिक बुद्धिवादी भी, भोजन में, उसके तैयार करने और खाने में जो सर्वग्राही रस लेते हैं, उसके स्थान पर शरीर की आवश्यकताओं के लगभग रासायनिक ज्ञान तथा इन्हें पूरा करने के लिये विशुद्ध वैज्ञानिक प्रकार की तपस्या को बिठाना चाहिये। भोजन की इस तपस्या के साथ हमें एक और तपस्या भी जोड़ देनी चाहिये और वह है नींद की तपस्या। इसका यह अर्थ नहीं है कि तुम्हें सोये बिना रहना चाहिये, नहीं, तुम्हें यह जानना चाहिये कि कैसे सोया जाय। नींद का अर्थ निश्चेतना में जा गिरना न होना चाहिये जिससे शरीर ताजा होने की जगह भारी हो जाय। संयत भोजन हो और सब प्रकार की अतियों से परहेज रहे तो सो सकने से पहले कई घंटे खराब करने की जरूरत नहीं पड़ती। फिर भी, नींद को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मात्रा की अपेक्षा, उसके गुण का महत्त्व अधिक है। अगर नींद से सचमुच लाभदायक विश्राम पाना हो तो बिस्तर पर जाने से पहले, उदाहरण के लिये, दूध, सूप या फल के रस का एक प्याला पी लेना लाभदायक होता है। हल्का भोजन शांतिपूर्ण नींद लाता है। हर हालत में, तुम्हें बहुत अधिक भोजन से बचना चाहिये क्योंकि उससे नींद खराब और अशांत होती है और दुःस्वप्न आते हैं या नींद भारी, स्थूल और तामसिक हो जाती है, लेकिन मन को निर्मल रखना, भावनाओं को अचंचल रखना, इच्छाओं की बुदबुदाहट और उसके साथ की चेष्टाओं को शांत करना सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है। यदि कोई सोने से पहले बहुत बोल चुका हो, जोरों से बहस कर चुका हो, कोई बहुत मजेदार और उत्तेजक चीज पढ़ चुका हो तो ज्यादा अच्छा यह है कि सोने से पहले थोड़ा आराम कर लिया जाय ताकि मन के क्रिया-कलाप शांत हो जायें और जब केवल शरीर सो रहा हो तब मस्तिष्क असंयत गतिविधि में न फंसा रहे। दूसरी ओर, अगर तुम्हें ध्यान का अभ्यास है तो ज्यादा अच्छा होगा कि तुम कुछ क्षणों के लिये किसी उच्च और विश्रामदायक विचार पर उच्चतर और महानतर चेतना के लिये अभीप्सा करते हुए, अपने मन को एकाग्र करो। इससे तुम्हारी नींद को बहुत लाभ होगा और तुम बड़ी हद तक, नींद में निश्चेतना में जा गिरने के भय से सुरक्षित रहोगे।

संपूर्ण विश्राम, शांति और नीरव निद्रा की रात्रि की तपस्या के बाद दिन की तपस्या आती है जिसकी व्यवस्था ज्ञान से की गयी हो। शारीरिक विकास के लिये आवश्यक क्रमबद्ध विकसनशील कसरतों और काम के बीच, तुम जो कुछ भी करो, तुम्हारी दिनचर्या बुद्धिमानी से विभाजित होनी चाहिये। ये दोनों ही शारीरिक तपस्या के अंग हो सकते हैं और होने चाहियें। जहां तक व्यायाम का प्रश्न है, हर एक को ऐसे व्यायाम चुनने चाहियें जो उसके शरीर के लिये सबसे अधिक अनुकूल हों। और अगर हो सके तो इसका चुनाव किसी ऐसे विशेषज्ञ की सहायता से किया जाय जो व्यायाम से होनेवाले अधिकतम लाभ को दृष्टि में रखते हुए उन्हें क्रमबद्ध करके मिला सके। इनका चुनाव या कार्यान्वयन मन की मौज के अधीन नहीं होना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तुम्हें यह या वह चीज इसलिये नहीं करनी चाहिये कि वह ज्यादा सरल या सुखद है। तुम अपने कार्यक्रम में तभी कुछ हेर-फेर करो जब तुम्हारा प्रशिक्षक उसे आवश्यक समझे। अपनी पूर्णता और उन्नति की दृष्टि से हर शरीर एक समस्या है जिसे हल करना होगा। और उसे हल करने के लिये बहुत धीरज, अध्यवसाय और नियमितता की आवश्यकता है। लोग जो कुछ भी सोचें, व्यायामी का जीवन सुख और विक्षेप का जीवन नहीं होता। उसके विपरीत, यह वांछित परिणाम पाने के लिये क्रमबद्ध प्रयत्न और कठोर अभ्यासों का जीवन होता है। इसमें बेकार और हानिकर सनकों के लिये कोई स्थान नहीं होता।

काम भी एक तपस्या है। इसमें यह जरूरी है कि अपनी पसंद न हो, जो भी करना हो उसे रस ले कर किया जाय। जो व्यक्ति अपने-आपको पूर्ण बनाना चाहता है उसके लिये छोटे या बड़े, महत्त्वपूर्ण और महत्त्वहीन काम के जैसी कोई चीज नहीं होती। जो प्रगति और आत्म-प्रभुत्व के लिये अभीप्सा करता है उसके लिये सभी काम एक-से उपयोगी हैं। कहा जाता है कि तुम जिस काम में रस लेते हो उसी को अच्छे-से-अच्छी तरह कर सकते हो। यह सच है, लेकिन यह और भी सच है कि तुम जो भी करो, चाहे वह कितना ही नगण्य क्यों न लगता हो, उसमें रस ले सकते हो। इस प्राप्ति का रहस्य पूर्णता की अभीप्सा में है। तुम्हारा चाहे जो पेशा हो, तुम्हारा चाहे जो काम हो, उसे प्रगति के संकल्प के साथ करो। तुम जो कुछ करो, उसे न सिर्फ अपनी सामर्थ्य-भर अच्छा करो, बल्कि हमेशा पूर्णता की ओर बढ़ते हुए, हमेशा अच्छे-से-अच्छा करते रहने के उत्साह के साथ करो। इस तरह, बिना अपवाद के, सभी चीजें रुचिकर हो जाती हैं, एकदम शारीरिक श्रम से ले कर अत्यधिक कलात्मक और बौद्धिक कार्य तक, सभी चीजें रुचिकर और रसप्रद हो जाती हैं। प्रगति के लिये अनंत क्षेत्र हैं और तुम छोटी-से-छोटी चीज में भी गंभीर हो सकते हो।

यह हमें स्वाभाविक रूप से कर्म में मुक्ति की ओर ले जाता है। तुम्हें अपने कार्य में सभी सामाजिक रूढ़ियों और नैतिक पसंदों से मुक्त होना चाहिये। इसका यह मतलब नहीं है कि तुम्हें स्वच्छन्द, असंयत जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिताना चाहिये। इसके विपरीत, यहां तुम एक ऐसे नियम के अधीन होते हो जो सभी सामाजिक नियमों की अपेक्षा अधिक कठोर है, क्योंकि वह किसी ढोंग को नहीं सहता, वह संपूर्ण निष्कपटता की मांग करता है। सभी शारीरिक क्रियाएं इस तरह व्यवस्थित की जानी चाहियें जिससे शरीर संतुलन, शक्ति और सौंदर्य में बढ़ता जाय। इस लक्ष्य को दृष्टि में रखते हुए मनुष्य को सब प्रकार की विलास-प्रियता और काम-केलि से बचना चाहिये। क्योंकि प्रत्येक कामुक क्रिया मृत्यु की ओर एक और कदम है। इसीलिये, सभी युगों में, सभी पवित्र संप्रदायों में, अमरता की अभीप्सा करनेवालों के लिये यह क्रिया वर्जित रही है। इसके बाद ही निश्चेतना का कम या ज्यादा लंबा काल आता है जो सब प्रकार के प्रभावों के लिये द्वार खोल देता है और चेतना को नीचे गिरा देता है। वास्तव में जो अतिमानसिक जीवन के लिये तैयारी करना चाहता है उसे अपनी चेतना को सुख-भोग, विश्राम या मन-बहलाव के बहाने कभी असंयम या निश्चेतना में न फिसलने देना चाहिये। विश्राम शक्ति और प्रकाश में लेना चाहिये, न कि अंधकार और दुर्बलता में। उन सब लोगों के लिये जो उन्नति के लिये अभीप्सा करते हैं, संयम ही नियम है। परंतु विशेषकर उनके लिये जो अपने-आपको पूर्ण रूपांतर और अतिमानसिक अभिव्यक्ति के लिये तैयार करना चाहते हैं, उनके लिये तो संयम की जगह पूर्ण ब्रह्मचर्य की जरूरत है जो दबाव के द्वारा या जोर-जबर्दस्ती से नहीं, बल्कि एक आंतरिक कीमिया के द्वारा सामान्यतया, प्रजनन के कार्य में लगनेवाली शक्ति को ओज में, प्रगति और सर्वांगीण रूपांतर की शक्ति में बदल दे। यह कहने की तो जरूरत ही नहीं है कि पूरा-पूरा, सच्चा लाभदायक परिणाम पाने के लिये सब प्रकार की काम-वासना और आवेग को शारीरिक संकल्प के साथ-ही-साथ मानसिक और प्राणिक चेतना से निकाल बाहर करना चाहिये, समस्त आमूल और स्थायी रूपान्तर अंदर से बाहर की ओर होता है। बाह्य रूपांतर आंतरिक रूपांतर का स्वाभाविक और अनिवार्य परिणाम होता है।

प्रकृति की आज्ञा के अनुसार वर्तमान जाति को जैसा-का-वैसा बनाये रखने के लिये शरीर को इस काम के लिये सौंप देना या इसी शरीर को एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नयी जाति की सृष्टि के लिये एक कदम बनाना—इन दोनों में से एक निर्णायक चुनाव करना होगा। दोनों एक साथ नहीं चल सकते। हर क्षण तुम्हें निश्चय करना होगा कि तुम्हें बीते कल की मानवता में बने रहना है या भावी कल की अतिमानवता का अंग बनना है।

अगर तुम भावी जीवन के लिये तैयारी करना चाहते हो और उसके सक्रिय, समर्थ सदस्य बनना चाहते हो तो तुम्हें वर्तमान जीवन के अनुसार ढलने से और उसमें सफल होने से इंकार कर देना होगा।

अगर तुम समग्र सौंदर्य और सामंजस्य में जीने के आनंद की ओर खुलना चाहते हो तो तुम्हें अपने-आपको सुख-भोगों से वंचित रखना होगा।

यह स्वभावतः, हमें प्राणिक तपस्या की ओर ले आता है: संवेदनों की तपस्या, शक्ति की तपस्या की ओर। प्राणमय पुरुष, वास्तव में, शक्ति का, उपलब्ध करनेवाले उत्साह का आधार है। प्राण में ही विचार संकल्प में बदल कर कर्म की सक्रियता का रूप लेता है। यह सच है कि प्राण ही कामनाओं और आवेगों, उग्र आवेशों और साथ ही उतनी ही उग्र प्रतिक्रियाओं की, विद्रोह और अवसाद की भूमि है। साधारणतः, इसका इलाज है गला घोंट देना, इसे संवेदनों से वंचित कर देना। वास्तव में, संवेदन ही इसका मुख्य आहार हैं और उनके बिना यह सो जाता है, शिथिल और मंद पड़ जाता है और अंत में पूरी तरह खाली हो जाता है।

तथ्य तो यह है कि प्राण तीन स्रोतों से पोषण प्राप्त करता है। उसके लिये सबसे आसान है, नीचे की ओर से संवेदनों द्वारा आनेवाली भौतिक शक्तियों तक पहुंचना।

दूसरा स्रोत है स्वयं अपने ही स्तर पर वैश्व प्राणिक शक्तियां, लेकिन इसके लिये उसे काफी विशाल और ग्रहणशील होना चाहिये।

तीसरा स्रोत ऊपर की ओर है जिसके प्रति साधारणतः वह तभी खुलता है जब यह प्रगति के लिये तीव्र अभीप्सा द्वारा, आध्यात्मिक शक्तियों और अंतःप्रेरणाओं से अनुप्राणित होकर उन्हें आत्मसात् करे।

मनुष्य प्रायः हमेशा, कम या ज्यादा, इनमें एक और स्रोत जोड़ने की कोशिश करते हैं। साथ ही यह स्रोत उनके लिये उनके अधिकतर दुःखों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और दुर्भाग्यों का स्रोत होता है। यह है अपने साथी-प्राणियों के साथ प्राणिक शक्तियों का आदान-प्रदान। साधारणतः, यह दो-दो के दल में होता है जिसे वे भूल से प्रेम मान बैठते हैं, लेकिन यह दो शक्तियों के बीच आकर्षण मात्र होता है जो परस्पर आदान-प्रदान में ही सुख मानती हैं।

तो अगर हम अपने प्राण को भूखा नहीं मारना चाहते तो संवेदनों का न तो त्याग करना चाहिये, न उन्हें कम करना या भोथरा बनाना चाहिये। उनसे बचने की भी जरूरत नहीं है, बल्कि उनका बुद्धि और विवेक के साथ उपयोग करना चाहिये। संवेदन ज्ञान और शिक्षा के लिये बहुत अच्छे यंत्र हैं। उन्हें इस काम में उपयोगी बनाने के लिये जरूरी है कि उनका उपयोग अहंकारपूर्ण हेतु के लिये, आमोद-प्रमोद के लिये या सुख और आत्म-तुष्टि की अंधी अज्ञानमय खोज के लिये न किया जाय।

इंद्रियों को हर चीज घृणा या अप्रसन्नता के बिना ले सकनी चाहिये और साथ ही उन्हें विभिन्न प्राणिक स्पंदनों के गुण, स्रोत और परिणाम के बारे में अधिकाधिक विवेक-शक्ति विकसित करनी चाहिये और यह जानना चाहिये कि वे भौतिक और प्राणिक सत्ता की प्रगति और उनके संतुलन में सहायक हैं या नहीं। इसके अतिरिक्त, भौतिक और प्राणिक जगत् को उनकी सारी जटिलताओं के साथ समझने और उनका अध्ययन करने के लिये साधन के रूप में इंद्रियों का उपयोग होना चाहिये। इस तरह वे रूपांतर के महान् प्रयत्न में अपना सच्चा स्थान लेंगी।

प्राण को कमजोर बना कर नहीं, बल्कि उसे प्रकाशयुक्त, बलवान् और शुद्ध करके ही व्यक्ति सत्ता की सच्ची प्रगति में सहायता दे सकता है। अपने-आपको संवेदनों से वंचित करना भी उसी तरह हानिकर है जैसे भोजन से वंचित रखना। लेकिन जैसे भोजन का चुनाव बुद्धिमत्ता के साथ, शरीर के विकास और उसके व्यापार-विशेष को ध्यान में रखते हुए करना चाहिये, उसी तरह संवेदनों का चुनाव और नियंत्रण भी विशुद्ध वैज्ञानिक ढंग की तपस्या के द्वारा, इस अत्यधिक सक्रिय यंत्र की उन्नति और पूर्णता को ही ध्यान में रखते हुए करना चाहिये, क्योंकि वह सत्ता के अन्य सभी भागों के विकास के लिये आवश्यक है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्राण को शिक्षा देकर, उसे अधिक शिष्ट, अधिक भावुक और अधिक सूक्ष्म या यूं कहें, अधिक सुरुचि-संपन्न—शब्द के अच्छे-से-अच्छे अर्थ में—बनाकर ही व्यक्ति इसकी हिंसामय उग्रताओं और पाशविकताओं पर विजय पा सकता है। ये चीजें प्रायः उसकी अशिष्टता और अज्ञानमयी सुरुचिविहीन क्रियाएं होती हैं।

वास्तव में, प्राण, जब शिक्षित और प्रकाशयुक्त हो तो, उतना ही महान्, वीर और निःस्वार्थ हो सकता है जितना अभी सहज रूप से शिक्षा के बिना अशिष्ट, अहंकारपूर्ण और विकृत है। अगर हर एक अपने अंदर सुख की खोज को अतिमानसिक पूर्णता की अभीप्सा में बदलना जाने तो यह काफी है। उसके लिये यदि प्राण की शिक्षा अध्यवसाय और निष्कपटता के साथ काफी आगे बढ़ायी जाय तो एक ऐसा क्षण आता है जब उसे लक्ष्य की महानता और उसके सौंदर्य के बारे में विश्वास हो जाता है और वह भागवत आनंद को पाने के लिये अपनी इंद्रियों के तुच्छ और भ्रान्तिजनक सन्तोषों को त्याग देता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारे प्रकाशन

माताजी और श्रीअरविन्द के बारे में :

बच्चों के श्रीअरविन्द—छोटे बच्चों के लिये	२.००
हमारी मां	२.००
श्रीअरविन्द और उनका आश्रम	५.००
श्रीअरविन्द—जीवन और दर्शन	१०.००
माताजी—एक झलक	१०.००
श्वेत कमल—माताजी का परिचय (नया संस्करण)	४५.००
लाल कमल—श्रीअरविन्द का परिचय	३५.००
माताजी और श्रीअरविन्द अपने बारे में	३.००
१५ अगस्त (स्वप्न और सिद्धियां)—१५ अगस्त के बारे में श्रीअरविन्द के कुछ वार्तालाप	५.००
माताजी की चित्रावली	४.००

श्रीअरविन्द की संस्कृत कृतियां :

सप्तचतुष्टय—साधनासम्बन्धी संस्कृत सूत्र और अंग्रेजी व्याख्या का अनुवाद, श्रीअरविन्द का उपनिषद् और उनके मन्त्र	४.००
भवानी भारती—भारत माता के बारे में संस्कृत काव्य, हिन्दी अनुवाद सहित	२.५०

शिक्षासम्बन्धी माताजी और श्रीअरविन्द के लेख :

शिक्षा के आधार	५.००
शिक्षा के आयाम	६.००

भारतसम्बन्धी :

भारत मां की मांग—श्रीअरविन्द के वन्दे मातरम् में छपे राष्ट्रीयतापरक लेख	५.००
माताजी और भारत	२.००

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

योगसम्बन्धी :

ध्यान ५.००
प्रार्थना और मन्त्र ३.००
गीता की भूमिका ४.००
मृत्यु ३.००
जगन्माता ४.००
कर्म—कर्म के बारे में माताजी और श्रीअरविन्द के कुछ लेख तथा आश्रम में कर्म का व्यावहारिक रूप ६.००
अतिमानसिक योग—पुराणीकृत सान्ध्य वार्ताओं में से श्रीअरविन्द के साथ योगसम्बन्धी बातचीत ६.००
श्रीअरविन्द—शाश्वत के प्रतिनिधि ६.००
माताजी का पत्र-व्यवहार एक कार्यकर्ता से १२.००
चिकित्सा—श्रीमां, श्रीअरविन्द के वचनों से संकलित ५.००
भय ५.००
मनुष्य का मन ७.००
योग के तत्त्व १२.००

प्रकीर्ण :

प्रकृति की कानाफूसी—माताजी के लेखों से संकलित ३.००
नर-नारी १०.००
नवजन्म—विशेष अवसरों पर उपहार देने योग्य एक चित्रावली ३.००

कहानियां जो कुछ और भी कहती हैं :

राजकुमार, महालक्ष्मी का अवतरण—दो प्रतीकात्मक नाटिकाएं २.००
नया अभियान, गुलदस्ता, नया तराना, काल के गर्भ में — प्रत्येक का दाम ३.००

सम्पर्क सूत्र :—

सम्पादक अग्निशिखा एवं पुरोधा, श्रीअरविन्द सोसायटी
पांडिचेरी—६०५००२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तपेदिक के विरूद्ध अभियान

1. यदि आपको लगातार दो हफ्तों से भी अधिक समय से खांसी हैं या थूक में खून आता है, तो हो सकता है, आपको फेफेड़ों की तपेदिक हो।

2. अपने नजदीकी प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, औषधालय या तपेदिक केन्द्र पर स्वयं की, विशेष कर अपने थूक की, जांच कराएं।

3. तपेदिक का इलाज किया जा सकता है, बशर्ते डाक्टर द्वारा बताई गई दवाइयां नियमित रूप से निर्धारित अवधि तक ली जाएं।

4. बचाव हमेशा इलाज से बेहतर है। इसलिए अपने बच्चे को बी.सी.जी. का टीका लगवाएं।

केन्द्रीय स्वास्थ्य शिक्षा ब्यूरो (स्वास्थ्य सेवा महानिदेशालय)
स्वास्थ्य और परिवार कल्याण मंत्रालय,
कोटला रोड, नई दिल्ली-110 002

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

davp 88/729

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Selfishness kills the soul; destroy it. But take care that your altruism does not kill the souls of others.

Sri Aurobindo

Assam Tea Warehousing Corporation

Registered and approved Warehouse
at Gauhati (Assam)

H.O.: 8, Camac Street, Room No. 7
Shantiniketan Building
CALCUTTA – 700 017

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"बहादुरी ही जीवन में सबसे अहम् चीज़ है."

जवाहरलाल नेहरू

ये शब्द पंडित जवाहरलाल नेहरू ने 26 अक्टूबर, 1930 को अपनी पुत्री इंदिरा प्रियदर्शिनी को लिखे थे।

आज गणतंत्र दिवस के अवसर पर जब हम जवाहरलाल नेहरू की जन्मशताब्दी भी मना रहे हैं, हमें उनके ये शब्द याद आते हैं। और साथ ही हम उन सब बहादुर बच्चों को भी याद करते हैं जिन्होंने वीरता और सेवा का बेमिसाल उदाहरण दिया है।

davp 88 617

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

A happy beginning
A good continuation
and no end —
an endless progression

14-5-57

new Horizon Sugar Mills (Pvt.) Ltd.

PONDICHERRY

Telegram: SAKAR
Phone: Town Office: 26780
Factory: 24423 24424

P.O. Box 29
Pondicherry
S. India

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सबसे पहली चीज होनी चाहिये 'शांति'। तुम जो कुछ करो उसे शांतिपूर्ण तरीके से करना चाहिये।

सहारनपुर सर्विस स्टेशन

पैट्रोल पम्प, देहरादून रोड

सहारनपुर–२४७००१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Registered with the Registrar of Newspapers for India
No. R. N. 18135/70
REGD. No. M. 8731

Statement about ownership and other particulars about Newspaper (Agnishikha) to be published in the first issue every year after the last day of February.

FORM IV (See Rule 8)

1. *Place of Publication*	Sri Aurobindo Ashram, Pondicherry - 605 002
2. Periodicity of its publication	Monthly
3. Printer's Name	Amiyo Ranjan Ganguli
Nationality	Indian
Address	Sri Aurobindo Ashram Press, Pondicherry-605 002
4. Publisher's Name	Kishorilal Dhandhania,
Nationality	Indian
Address	Sri Aurobindo Society Pondicherry-605 002
5. Editor's Name	Ravindra, Anuben
Nationality	Indian
Address	Sri Aurobindo Ashram, Pondicherry-605 002
6. Names and addresses of individuals who own the newspaper and partners or shareholders holding more than one per cent of the total capital	Sri Aurobindo Society, Pondicherry-605 002

I, Kishorilal Dhandhania *hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.*

(Sd) Kishorilal Dhandhania,
Signature of Publisher

March 1989

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

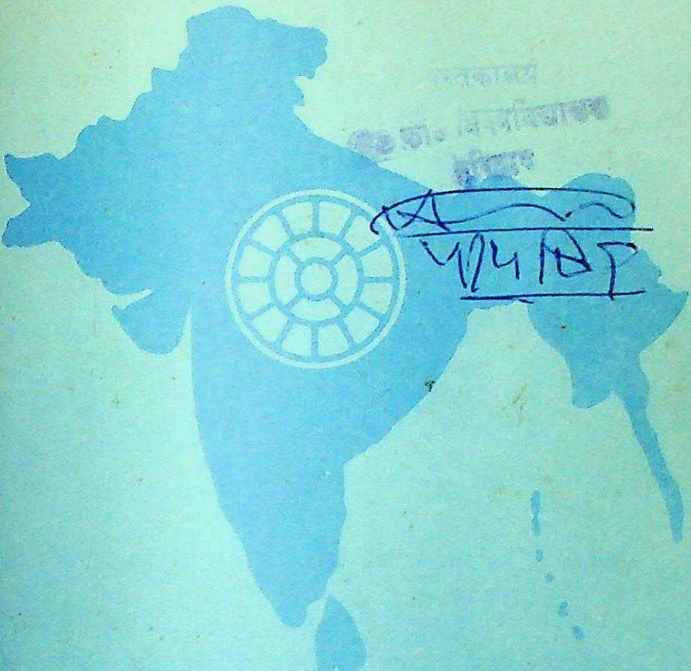

अग्निशिखा

अखिल भारतीय पत्रिका

अप्रैल १९८९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अग्निशिखा अप्रैल १९८९ वर्ष १९, अंक ९, पूर्णांक २२५

विषय-सूची

सन्देश	श्रीअरविंद	१
'संपादकीय'—उज्जवल भविष्य के सामने		२
दैनन्दिनी		५
चतुर्विध तपस्या और चतुर्विध मुक्ति (२)		८
" " " (३)		१७
छोटे-बड़े विद्यार्थियों से		२५
भविष्य दृष्टि		३०
रूपांतर		३३
सफ़ेद हाथी		३५
सोसायटी समाचार		३६

आपका अग्निशिखा/पुरोधा का चंदा ... में समाप्त हो रहा है। कृपया अग्निशिखा के १० और पुरोधा के १४ शीघ्र भेजें अन्यथा अगला अंक वी. पी. पी. से जायगा। वी. पी. पी लौट आने से हमें बहुत हानि होती है। अलग अनुस्मारक नहीं भेजा जायगा। कृपया चेक न भेजें। चाहें तो २२५ और २७५ एक साथ या किस्तों में देकर अग्निशिखा और पुरोधा के या ५०० देकर दोनों के आजीवन सदस्य बन सकते हैं।

अग्निशिखा वार्षिक १०.०० आजीवन २२५.००

श्रीअरविंद सोसायटी की मासिक पत्रिका

संपादक : रवींद्र, अनुबेन
प्रकाशक : श्रीअरविंद सोसायटी, पांडिचेरी-६०५००२
मुद्रक : अमियरंजन गांगुली, श्रीअरविंद आश्रम प्रेस, पांडिचेरी-६०५००२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उद्बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि

संदेश

श्रीअरविन्द के योग का एक उद्देश्य है, प्रत्येक व्यक्ति का आंतरिक आत्म-विकास ताकि जो व्यक्ति उसका अनुसरण करे वह अंत में सबके अंदर एकमेव आत्मा को खोजे और मानसिक चेतना से उच्चतर चेतना का विकास कर पाये—एक आध्यात्मिक और अतिमानसिक चेतना का जो मानव प्रकृति को रूपान्तरित करे और दिव्य बना पाय।

—श्रीअरविन्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'संपादकीयः :

उज्ज्वल भविष्य के सामने

अभी कुछ महीनों पहले की बात है, एक सज्जन भोजनालय में भोजन समाप्त करके टहलते हुए उधर आ गये जहां मैं बैठा था। अचानक आंखें चार हुईं और वह मेरे पास आ गये और बोले, "मैं आपसे कुछ बातचीत करना चाहता हूं।" यह तो 'जान न पहचान, बड़ी खाला सलाम'वाली बात हो गयी। मैंने कहा, "आइये, कहिये क्या सेवा कर सकता हूं आपकी?" उन्होंने अपना नाम बतलाया तो मैं चौंक पड़ा। यह तो बहुत प्रसिद्ध सरकारी अफसर थे जिनका नाम अखबारों में बहुत पढ़ा था। भारत के जाने-माने अफसरों में से एक।

उन्होंने कहा, "मैं जानना चाहूंगा कि आप यहां कितने वर्षों से हैं?" मैंने उत्तर दिया, "दो चार महीने हुए मैंने पचास वर्ष पूरे किये हैं।" "अच्छा, तब तो मैं ठीक आदमी के पास आया हूं। अब आप बताइये इन पचास वर्षों में आपने क्या प्राप्त किया?" मैंने कहा, "इस बारे में कभी सोचा नहीं। हमारे यहां बारह वर्ष की इकाई मानी जाती है, मैंने तो अभी चार इकाइयां ही पूरी की हैं। अभी से परिणाम की ओर क्या देखना। कहते हैं एक साधक सौ वर्ष तक तपस्या और वेदाध्ययन करता रहा। सौ वर्ष पूरे हुए तो इंद्र ने आकर पूछा, 'अगर मैं तुम्हें और सौ वर्षों का जीवन दूं तो तुम क्या करोगे?' उसने झट उत्तर दिया, 'वेदाध्ययन'। यही बात तीन बार हुई और हर बार उसने वेदाध्ययन के और सौ वर्ष मांगे। यहां यह ख्याल रखिये कि सौ वर्ष तक वेदाध्ययन का मतलब वेद की चार पुस्तकें पढ़ना नहीं है, वेद का अर्थ है ज्ञान, तो साधक ने कहा, 'अब तो वेद का परिचय शुरू हो रहा है।' इंद्र ने उसे अमर बना दिया।"

मैंने उनसे पूछा, "अच्छा आप मेरे बारे में पूछ चुके। क्या मैं आपसे पूछ सकता हूं, आपने यूरोप, एशिया, अमरीका, अफ्रीका के सभी देश देखे हैं, ऊंचे-ऊंचे पदाधिकारियों से मिले हैं, आपकी दुनिया के बारे में क्या राय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है? मानवजाति के भविष्य के बारे में आप क्या सोचते हैं।" उन्होंने बिना संकोच के उत्तर दिया, "मैं तो सब जगह अंधकार देखता हूं, कहीं किसी भाग में, किसी देश में आशा की एक किरण भी नहीं दिखायी देती। सब जगह भ्रष्टाचार और निराशा का राज्य है। रूप अलग-अलग हो सकते हैं पर चीज सब जगह एक ही है, मानवजाति रसातल में जा रही है।" उन्होंने बहुत-से उदाहरण दिये।

अब मेरी बारी थी, मैंने कहा, "आपने जो कुछ कहा उसके बारे में मैंने भी बहुत कुछ पढ़ा और सुना है, परंतु आप विश्वास करेंगे, मेरी धारणा नहीं, मेरा दृढ़ विश्वास है कि भारत का, मानवजाति का भविष्य उज्ज्वल और महिमामय है।"

वे चौंक पड़े और बोले, "यह कैसे हो सकता है? आपके पास क्या प्रमाण है इसका?" मैंने धीरे से कहा, "मेरे पास तो कोई प्रमाण नहीं है परंतु मुझे यह बात उन्होंने बतायी है जिन्होंने उसे, उस भविष्य को करतल की तरह देखा है। मैंने सारी दुनिया की निराशाजनक स्थिति का चित्र खींचते हुए माताजी से पूछा था कि इस अवस्था में 'where do we stand' तो उन्होंने जवाब दिया 'In front of a glorious future।' इसके बाद शंका या संदेह के लिये कोई स्थान नहीं रहता।" उन सज्जन ने पूछा, "क्या आपको माताजी की बात पर पूरा विश्वास है?" मैंने कहा, "और बातों पर कभी संदेह उपज भी सकता है लेकिन इसपर नहीं। ये अमिट अक्षर हैं। वे उठकर खड़े हो गये और बोले, "इससे बड़ी उपलब्धि और क्या हो सकती है। आपके पचास वर्ष पूरी तरह सफल हुए और मेरा आपके पास आना भी सफल हुआ।"

मुझे भारत की स्वाधीनता के अवसर पर दिये गये श्रीअरविन्द के संदेश के एक अंश की याद हो आयी :

"...हिन्दुओं और मुसलमानों का पुराना सांप्रदायिक भेद देश के स्थायी राजनीतिक विभाजन के रूप में सुदृढ़ हो गया दीखता है। यह आशा करनी चाहिये कि इस तय किये गये विभाजन को पत्थर की लकीर नहीं मान लिया जायगा और उसे एक काम-चलाऊ अस्थायी उपाय से बढ़कर और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ न माना जायगा क्योंकि यदि वह कायम रहे तो भारत भयानक रूप से दुर्बल और अपंग तक हो सकता है। गृह-कलह का होना सदा संभव रह सकता है, नये आक्रमण और विदेशी राज्य का हो जाना भी संभव हो सकता है। भारत की आंतरिक उन्नति और समृद्धि रुक सकती है। राष्ट्रों के बीच उसकी स्थिति दुर्बल हो सकती है, उसका भविष्य कुंठित, यहांतक कि व्यर्थ भी हो सकता है। यह नहीं होना चाहिये। देश का विभाजन अवश्य दूर होना चाहिये। हम आशा करें कि यह कार्य स्वाभाविक रूप से हो जायगा, न केवल शांति और मेल-मिलाप की, बल्कि मिल-जुल कर काम करने की आवश्यकता को उत्तरोत्तर समझ लेने और मिल-जुलकर काम करने के अभ्यास और उसके लिये साधनों को उत्पन्न कर लेने में संपन्न हो जायगा। . . . चाहे किसी उपाय से हो, किसी प्रकार से हो, विभाजन अवश्य हटना चाहिये, एकता अवश्य स्थापित होनी चाहिये और स्थापित होगी ही, क्योंकि भारत के भविष्य की महानता के लिये यह आवश्यक है।"

भारत की स्वाधीनता के प्रथम दिवस पर दिया गया यह भाषण कितना सच्चा साबित हुआ उसके साक्षी हैं हमारे और पाकिस्तान के बीच हुए कई युद्ध! इसी आधार पर हम यह आशा करते हैं कि उनकी दूसरी भविष्यवाणी भी सच हो उठेगी और एकता आयगी और तब भारत का उज्ज्वल भविष्य, उसकी महानता चरितार्थ होकर रहेगी।

इस बात का आश्वासन देता है आश्रम के क्रीड़ांगण में शोभायमान भारत का मानचित्र जिसके आंगे माताजी खड़ी होकर सलामी लिया करती थी और जिसका चित्र हमारे इस बार के आवरण पृष्ठ पर दिया जा रहा है।

*

जगत् यातनाओं तथा कष्टों से भरपूर है। हमें कोशिश करनी चाहिये कि हम एक और कष्ट का कारण न बनें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दैनन्दिनी

अप्रैल

१. ओ, मेरे मधुर स्वामी, मैं तुम्हारे लिये अभीप्सा कर रही हूं, इस ज्ञान के लिये अभीप्सा करती हूं कि तू क्या है ताकि तेरे साथ तादात्म्य पा सकूं।

२. हे प्रेम और पवित्रता के स्वामी, वर दे कि अपने छोटे-से-छोटे स्तर पर, क्षुद्र-से-क्षुद्र क्रिया-कलाप में भी यह यंत्र जो तेरी सेवा के योग्य होना चाहता है, समस्त अहम् से, भूलों से और समस्त अंधकार से पवित्र हो जाये।

३. हे मधुर स्वामी, वर दे कि समस्त उपादान और सारे क्रिया-कलाप तेरे दिव्य प्रेम और तेरी सार्वभौम प्रसन्न शान्ति के सिवा और किसी वस्तु की अभिव्यक्ति न हों।

४. हे मेरे मधुर स्वामी, मेरा हृदय एक ज्वलंत प्रार्थना-गृह है और तू उसमें उत्कृष्टतम मूर्ति की भांति हमेशा के लिये बैठा हुआ है।

५. संसार में कार्यरत तेरा दिव्य प्रेम बन जाने में माधुर्य है, और उस अनंत अभीप्सा बनने में और अधिक मधुरता है जो उस अनंत प्रेम की ओर उठती है।

६. इस व्यक्तिगत सत्ता में, किसी भी अंश को यह न भूलने देना चाहिये कि वह केवल यंत्र है, तेरे हस्तक्षेप के कारण वास्तविक बना हुआ एक भ्रम है और यही कि केवल तेरा ही अस्तित्व है, तू ही कार्य करता है।

७. तू अज्ञान के अंधकार को और दुर्भावना के अहंपूर्ण धुंए को दूर भगा देगा।

८. तेरी दिव्य शक्ति का सामना कौन कर सकता है?
तू ही एकमात्र और परम सद्वस्तु है।

९. सब कुछ प्रकाश है, सब कुछ प्रेम है; अज्ञान और अहम् केवल मरीचिकाएं हैं; उन्हें लुप्त कर दिया जायगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१०. हे प्रभु, हमारी सोयी हुई ऊर्जाओं को जगा, हमारे साहस को प्रोत्साहित कर, हमें ज्ञान दे, हमें मार्ग दिखा।

११. हे प्रभु, इस सत्ता में तू निर्विकार प्रशांत प्रसन्नता के साथ अविरत, तीव्र, आवेगमुक्त और सतत अभीप्सा की सृष्टि तैयार कर।

१२. नीरवता और शांति हैं ही; उनके साथ आग्रहपूर्ण तीव्रता होनी चाहिये।

१३. पूरी सत्ता के साथ प्रयास करना, याचना करना और अभीप्सा करना हमारा कार्य है।

१४. प्रकाश देना, ज्ञान देना और शक्ति देना तेरा कार्य है।

१५. सूर्य की भांति तेरा वैभव धरती पर फैल रहा है और वह संसार को आलोकित करेगा।

१६. अपने प्रेम के आनंद से हमारे हृदय को भर दे, अपने प्रकाश की दीप्ति से हमारे मन को परिप्लावित कर दे; वर दे कि हम तेरी विजय को चरितार्थ कर पायें।

१७. मानव सत्ता को ऐसा होना चाहिये . . . एक ऐसा दर्पण जो एक ही साथ निष्क्रिय और पूरी तरह शुद्ध हो, जो अंदर और बाहर दोनों ओर मुड़ा हो और जो उसी इच्छा को चरितार्थ करनेवाली सक्रियता भी हो।

१८. उस सच्चे प्रेम का जन्म होने दे जो समस्त दुःखों को शांत कर पाये।

१९. उस अचल शांति की स्थापना कर दे जिसमें सच्ची शक्ति का निवास हो।

२०. हमें वह सर्वश्रेष्ठ ज्ञान दे जो समस्त अंधकार को दूर भगा दे।

२१. उन सब चीजों में, जो नयी, सदा अधिक पूर्ण और उच्चतर अभिव्यक्ति की ओर प्रयास करती हैं, तू विद्यमान है।

२२. हे दिव्य स्वामी, जो होना है वह होकर रहेगा, शायद और सबकी अपेक्षा बिल्कुल भिन्न होगा।

२३. ओह, तेरे शांत आश्वासन का माधुर्य, तेरी शांति का सामर्थ्य!

२४. हमें सामान्य ढंग से सोचने और परखने से मुक्त कर दे; वर दे कि हम तेरे अनंत प्रेम की चेतना में जियें।

२५. हे प्रभु, हमें समस्त अज्ञान से मुक्त कर, हमें सच्ची श्रद्धा दे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२६. यह या वह बनने में क्या समझदारी है? इस तरह अपने-आपको परेशान क्यों करें? क्या तू श्रेष्ठ कार्यकर्ता नहीं है? क्या हमारा यह कर्तव्य नहीं है कि हम तेरे आज्ञाकारी यंत्र बनें?

२७. हमें हमेशा जाग्रत् रहना और छोटी-से-छोटी पुकार की ओर ध्यान देना चाहिये ताकि जब तू कार्य के लिये संकेत दे तो हम सोये न रहें, निष्क्रिय न हों।

२८. साथ ही हमें इस सतत प्रतीक्षा और निष्ठावान् सद्भावना की अवस्था को व्याकुल और बेचैन उत्तेजना की अवस्था के साथ उलझाना न चाहिये, यह डर न होना चाहिये कि यह या वह बनकर हम तुझे नाराज कर देंगे।

२९. तेरा हृदय चरम शरण है जहां सारी चिन्ताएं मिट जाती हैं। इस हृदय को पूरा खोल दे ताकि जो यातना पाते हैं, व्यथित हैं उन्हें सर्वश्रेष्ठ आश्रय मिले।

३०. इस कोलाहल को शांत करो, अपनी शांति को स्थापित करो।

३१. योद्धा बनो जो बाधाओं पर विजयी होता है; विजय को प्राप्त करो।

—*—

जब तुम शांत रूप से सुखी हो तो ज्यादा उपयोगी होते हो।

*

भगवान् के प्रति अपने समर्पण को पूर्ण बनाने की कोशिश करो तो तुम्हारे लिये तुम्हारे जीवन को सुव्यवस्थित बना दिया जाएगा।

*

तुम जो सिखाना चाहते हो उसे तुम्हें जीना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चतुर्विध तपस्या और चतुर्विध मुक्ति

(गतांक से आगे)

(२)

जब हम मानसिक तपस्या के विषय में बात करते हैं तो हमें तुरंत उन लंबे ध्यानों का ख्याल आता है जो विचारों पर नियंत्रण और अंत में शिखर के रूप में आंतरिक नीरवता की ओर ले जाते हैं। योग-साधना का यह पक्ष सुपरिचित है और इसके बारे में विस्तार से कुछ कहने की जरूरत नहीं। लेकिन इसका एक और पक्ष भी है जिसकी ओर लोग ज्यादा ध्यान नहीं देते, यह है वाणी का संयम। कुछ विरल अपवादों को छोड़कर साधारणतः खुली बकवास के विरुद्ध पूर्ण मौन को ही खड़ा किया जाता है। लेकिन वाणी का नियंत्रण करना पूर्ण निरोध की अपेक्षा ज्यादा महान् और फलप्रद तपस्या है।

धरती पर मनुष्य ही पहला प्राणी है जो स्पष्ट रूप में उच्चरित ध्वनि का उपयोग करता है। वह सचमुच इसपर गर्व करता है और बिना सोचे-समझे, बिना विवेक के इसका उपयोग करता है। संसार उसके शब्दों के कोलाहल से बहरा हो गया है, इसलिये कभी-कभी मनुष्य को वनस्पति जगत् की समस्वर नीरवता का अभाव खलता है।

यह एक जाना हुआ तथ्य है कि मानसिक शक्ति जितनी कम होगी बोलने की आवश्यकता उतनी ही अधिक होगी। उदाहरण के लिये, आदिम जातियां हैं, ऐसे लोग हैं जिन्हें कोई शिक्षा नहीं मिली, वे बोले बिना सोच ही नहीं सकते। तुम उन्हें कम या अधिक धीमी आवाज में बुदबुदाते सुन सकते हो। अपनी विचार-धारा का अनुसरण करने के लिये उनके पास बस, यही एक तरीका है, बोले हुए शब्दों के बिना उनके विचार कोई रूप ही नहीं ले सकते।

काफी बड़ी संख्या में ऐसे लोग हैं, पढ़े-लिखों में भी, जिनकी मानसिक शक्ति बहुत दुर्बल है और वे कहने से पहले यह नहीं जानते कि उन्हें क्या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहना है। उनके साथ बातचीत बहुत उबानेवाली हो जाती है और उसका अंत ही नहीं आता। लेकिन जब वे बोलते हैं तो उनके विचार अधिकाधिक स्पष्ट और यथार्थ होते जाते हैं और इस कारण वह एक ही बात को बार-बार, बार-बार दोहराने के लिये बाधित होते हैं ताकि वह उसे ज्यादा-ज्यादा ठीक तरह कह सकें। कुछ ऐसे होते हैं जिन्हें वे जो कुछ कहना चाहते हों उसे पहले से तैयार करना पड़ता है और अगर उन्हें अचानक कहीं कुछ बोलना पड़ जाय तो वे हिचकिचाते, हकलाने लगते हैं, क्योंकि वे जो कुछ कहना चाहते हैं उसके लिये उपयुक्त शब्दों को क्रमबद्ध करने का उन्हें समय ही नहीं मिला।

और अंत में, कुछ जन्मजात वक्ता होते हैं जिन्हें भाषण-कला पर पूरा अधिकार होता है। वे जो कुछ कहना चाहते हैं उसे कहने और भली-भांति कहने के लिये उन्हें सहज रूप से शब्द मिलते जाते हैं और वे अच्छी तरह बोलते हैं।

फिर भी, यह सब मानसिक तपस्या की दृष्टि से बकवास की गिनती में आ जाता है। बकवास से मेरा मतलब है ऐसा कोई भी शब्द बोलना जो एकदम अनिवार्य न हो। तुम पूछ सकते हो इसका निर्णय कैसे किया जाय? इसके लिये हमें सामान्य रूप में बोले गये सभी शब्दों का वर्गीकरण करना होगा।

सबसे पहले, भौतिक क्षेत्र में, वे सब शब्द हैं जो भौतिक कारणों से बोले जाते हैं। वे सबसे ज्यादा संख्या में हैं और सामान्य जीवन में शायद सबसे अधिक उपयोगी भी हैं।

ऐसा लगता है कि शब्दों की एक सतत गूंज हमारे दैनिक रूढ़ कार्य की अनिवार्य संगत बन गयी है। लेकिन फिर अगर तुम शोर को कम-से-कम करने का प्रयत्न करो तो तुम देखना शुरू करोगे कि बहुत-सी चीजें नीरवता में ज्यादा अच्छी और ज्यादा जल्दी की जा सकती हैं। और इससे आंतरिक शांति और एकाग्रता बनाये रखने में भी सहायता मिलती है।

अगर तुम अकेले नहीं हो, बल्कि औरों के साथ रहते हो तो ऐसी आदत डालो कि अपने-आपको सारे समय ऊंची आवाज में उच्चारित शब्दों में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अभिव्यक्त न करते रहो, तब तुम देखोगे कि तुम्हारे और औरों के बीच थोड़ी-थोड़ी करके एक आंतरिक समझ पैदा हो गयी है; तब तुम उनके साथ कम-से-कम शब्दों या बिना शब्दों के ही संपर्क रख सकोगे। यह बाहरी मौन आंतरिक शांति के लिये बहुत अनुकूल होता है और अगर तुम्हारे अंदर सद्भावना और सतत अभीप्सा है तो तुम प्रगति के लिये सहायक वातावरण पैदा कर सकोगे।

सार्वजनिक जीवन में, उन शब्दों के साथ जिनका संबंध जीविका और भौतिक व्यापार से होता है, वे शब्द भी जुड़ जाते हैं जो संवेदनों, भावनाओं और आवेगों को व्यक्त करते हैं। इस क्षेत्र में बाहरी मौन की आदत बहुमूल्य सहायक सिद्ध होती है। क्योंकि जब तुमपर संवेदनों या भावनाओं का हमला होता है तो यही मौन की आदत तुम्हें सोचने का अवकाश देती है और अगर जरूरत हो तो तुम्हें अपने संवेदनों और भावों को शब्दों में प्रकट करने से पहले ही रोक लेती है। इस तरह कितने सारे लड़ाई-झगड़ों को रोका जा सकता है; तुम कितनी बार उन मनोवैज्ञानिक विपदाओं से बच सकते हो जो बहुत बार वाणी के असंयम का परिणाम होती हैं।

तुम इस हद तक भले न जाओ, पर तुम्हें हमेशा अपने उच्चारित शब्दों पर संयम रखना चाहिये। तुम्हें अपनी जीभ को क्रोध, उग्रता या रोष के अधीन कभी काम न करने देना चाहिये। उससे. आनेवाले परिणामों में केवल झगड़ा ही बुरा नहीं है, बल्कि यह तथ्य भी है कि तुम अपनी जीभ के द्वारा वातावरण में बुरे भाव प्रक्षिप्त होने देते हो, क्योंकि ध्वनि के स्पंदनों से ज्यादा छुतहा कोई और चीज नहीं है। इन गतियों को अपने-आपको प्रकट करने का अवसर देकर तुम उन्हें अपने अंदर और दूसरों के अंदर स्थायी बनाते हो।

सबसे अधिक अवांछनीय प्रकार की बकवास में उस बातचीत को भी गिनना चाहिये जो तुम औरों के बारे में करते हो।

जबतक तुम संरक्षक, अध्यापक या विभागाध्यक्ष के रूप में कुछ लोगों के लिये उत्तरदायी न हो तबतक दूसरे क्या करते हैं और क्या नहीं करते इसके साथ तुम्हारा कोई मतलब नहीं। तुम्हें औरों के बारे में बातचीत करने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से, उनके बारे में राय देने से, या वे क्या करते हैं या दूसरे उनके बारे में क्या सोचते हैं, इस विषय में कुछ कहने से बचना चाहिये।

हो सकता है कि तुम्हारा काम ही ऐसा हो कि किसी विशेष विभाग या व्यवस्था या सामूहिक कार्य में क्या हो रहा है इसकी सूचना देना तुम्हारा कर्तव्य हो जाता है। ऐसी हालत में, तुम्हारी रिपोर्ट शुद्ध रूप से काम के साथ ही संबद्ध होनी चाहिये, किसी व्यक्तिगत मामले से नहीं। वह हर हालत में पूरी तरह वस्तुनिष्ठ होनी चाहिये। तुम्हें उसके अंदर व्यक्तिगत प्रतिक्रिया, पसंद, सहानुभूति या विरोध को प्रवेश न करने देना चाहिये। विशेष रूप से, तुम्हें जो काम सौंपा गया है उसमें किसी निजी तुच्छ वैरभाव को कभी न मिलने दो।

हर हालत में, सामान्य रूप से, दूसरों के बारे में तुम जितना ही कम बोलो—उनकी प्रशंसा में भी—उतना ही अच्छा। अपने अंदर क्या हो रहा है उसे ही ठीक-ठीक जानना इतना मुश्किल है—फिर भला निश्चित रूप से यह कैसे जाना जाय कि दूसरों में क्या हो रहा है? इसलिये किसी भी व्यक्ति के बारे में कोई अटल निर्णय न सुना दो। वह यदि दुर्भावनापूर्ण न भी हुआ तो मूर्खतापूर्ण तो अवश्य होगा।

जब विचार शब्दों में अभिव्यक्त किया जाता है तो ध्वनि के स्पंदन में विचार के साथ सबसे अधिक भौतिक तत्त्व का संबंध जोड़ कर उसे ठोस और प्रभावशाली वास्तविकता बना देने की काफी क्षमता होती है। इसलिये तुम्हें चीजों या लोगों के बारे में बुरी बातें न कहनी चाहियें, शब्दों में ऐसी चीजों को व्यक्त न करना चाहिये जो भागवत उपलब्धि की प्रगति का विरोध करें। यह एक सामान्य और सुनिश्चित नियम है। किन्तु इसका एक अपवाद भी है। तुम्हें किसी चीज या कर्म की आलोचना तबतक न करनी चाहिये जबतक तुम्हारे अंदर उसका—जिसकी तुम आलोचना कर रहे हो—अंत करने या उसका रूपांतर करने की सचेतन शक्ति और सक्रिय संकल्प न हों। वस्तुतः, इस सचेतन शक्ति और क्रियाशील संकल्प में स्थूल भौतिक पदार्थ में प्रतिक्रिया की संभावना उत्पन्न करने की, बुरे स्पंदन को अस्वीकार करने की और अंत में उसे इस हदतक सुधारने की क्षमता होती है कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसके लिये अपने-आपको भौतिक स्तर पर व्यक्त करना असंभव हो जाता है।

यह काम बिना किसी संकट और भय के केवल वही कर सकता है जो विज्ञानमय लोकों में विचरण करता हो और जिसे अपनी मानसिक क्षमताओं में आत्मा का प्रकाश और सत्य की शक्ति प्राप्त हो। वह दिव्यकर्मी सब प्रकार की पसंद और आसक्ति से मुक्त होता है। वह अपने अंदर अहंकार की सीमाओं को तोड़ चुकता है और वह धरती पर अतिमानसिक कार्य के पूर्णतया शुद्ध और निर्वैयक्तिक के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है।

ऐसे शब्द भी हैं जो विचार, सम्मति, मनन और अध्ययन के परिणामों को व्यक्त करने के लिये काम आते हैं। यहां हम बौद्धिक क्षेत्र में हैं और यह सोच सकते हैं कि इस क्षेत्र में मनुष्य ज्यादा समझदार और संतुलित होते हैं और यहां कठोर तपस्या कम अनिवार्य है। लेकिन बात ऐसी बिल्कुल नहीं है क्योंकि यहां भी, लोगों ने विचारों और ज्ञान के इस क्षेत्र में भी, विश्वासों की उग्रता, सांप्रदायिक असहिष्णुता और पसंद का, आवेग का प्रवेश करा दिया है। अतः, यहां भी व्यक्ति को मानसिक तपस्या का आश्रय लेना चाहिये और उन विचारों के आदान-प्रदान से सावधानी के साथ बचना चाहिये जिनकी समाप्ति ऐसे तर्क-वितर्क में होती है जो अधिकतर कटु और प्रायः हमेशा ही निरर्थक होते हैं; और उन मतभेदों से भी बचना चाहिये जिनका अंत गरमा-गरम बहस, यहांतक कि झगड़े में भी होता है। यह सब मन की संकीर्णता से आता है और जब आदमी मानसिक क्षेत्र में काफी ऊंचा उठ जाये तो इसका इलाज आसानी से हो सकता है।

वास्तव में, आदमी जब यह जान जाय कि सूत्रबद्ध विचार उस चीज को कहने का केवल एक ढंग है जो वर्णन से परे है, तो फिर सांप्रदायिकता असंभव हो जाती है। हर विचार या भाव में थोड़ा-सा सत्य या सत्य का एक पहलू होता है, पर कोई भी विचार या भाव ऐसा नहीं है जो अपने-आपमें पूर्ण सत्य हो।

चीजों की सापेक्षता का यह भाव, व्यक्ति में संतुलन रखने और उसकी बातचीत में गंभीर संयम बनाये रखने में बहुत सहायक होता है। मैंने एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुह्यवेत्ता को, जिसे कुछ ज्ञान प्राप्त था, यह कहते हुए सुना था : "कोई भी चीज तत्वतः अशुभ या बुरी नहीं है; केवल ऐसी चीजें हैं जो अपने स्थान पर नहीं हैं। हर एक चीज को उसके अपने स्थान पर रख दो और तुम सामंजस्यपूर्ण संसार पा जाओगे।"

फिर भी, कार्य की दृष्टि से, विचार का मूल्य उसकी व्यावहारिक शक्ति के अनुपात में होता है। यह सच है कि यह शक्ति जिन लोगों में काम करती है उनके अनुसार भिन्न होती है। एक भाव-विशेष जो एक व्यक्ति में महान् प्रेरक शक्ति रखता है वही दूसरे में एकदम असफल होता है। लेकिन शक्ति अपने-आपमें संक्रामक है। कुछ भावों में दुनिया का रूपांतर करने की शक्ति होती है। इन्हींको व्यक्त करना चाहिये। ये आत्मा के आकाश में पथ-प्रदर्शक नक्षत्र हैं और ये ही धरती को अपनी परम उपलब्धि की ओर ले जाते हैं।

अंत में, वे सब शब्द हैं जो पढ़ाने के लिये काम में लाये जाते हैं। शब्दों की यह श्रेणी शिशु-विहार से लेकर विश्वविद्यालय तक फैली है जिसमें मनुष्य के कलात्मक और साहित्यिक सर्जनों का भी समावेश है जो या तो मनोरंजक होते हैं या शिक्षाप्रद। इस क्षेत्र में सब कुछ कार्य के मूल्य पर निर्भर है और यह विषय इतना बड़ा है कि इसे यहां पर ले सकना संभव नहीं है। यह एक तथ्य है कि आजकल शिक्षा की ओर बहुत ध्यान दिया जा रहा है और नयी-से-नयी वैज्ञानिक खोजों का उपयोग करके उन्हें शिक्षा की सेवा में लगाने का सराहनीय प्रयास हो रहा है। लेकिन सत्य के लिये अभीप्सा करनेवाले के लिये यहां भी तप की जरूरत है।

आमतौर पर यह माना जाता है कि शिक्षा की प्रक्रिया में हल्की, मनोरंजक बल्कि तुच्छ कृतियों को भी स्थान मिलना चाहिये ताकि प्रयास का दबाव कम पड़े और केवल बच्चों को ही नहीं बड़ों को भी कुछ आसानी हो। एक दृष्टिकोण से यह सच है; लेकिन दुर्भाग्यवश इस मान्यता के कारण चीजों की, एक ऐसी पूरी-की-पूरी श्रेणी को आयात करने का बहाना मिल गया है जो मानव प्रकृति में जो कुछ गंवारू, भद्दा और निम्न कोटि का है उसके खिलने से कम नहीं है। इस मान्यता में अत्यंत जघन्य प्रवृत्तियों तथा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अति हीन रुचियों को अनिवार्य आवश्यकता के रूप में अपना प्रदर्शन करने और अपने-आपको स्थापित करने का अच्छा बहाना मिल जाता है। लेकिन बात ऐसी नहीं है; आदमी कामुक हुए बिना विश्राम कर सकता है, वह लंपट बने बिना भी अपने-आपको आराम दे सकता है। वह विश्राम कर सकता है, पर अपनी प्रकृति की स्थूल चीजों को उभरने दिये बिना। लेकिन तपस्या की दृष्टि से इन आवश्यकताओं को भी अपनी प्रकृति बदलने की जरूरत है; आराम एक आंतरिक नीरवता में, विश्राम ध्यान में, और शिथिलीकरण आनंद में बदल जाता है।

मन-बहलाव की, काम में आराम की, जीवन के लक्ष्य को कुछ समय के लिये या ज्यादा समय के लिये पूरी तरह भूल जाने की और साथ ही जीवन के मूल हेतु को भूल जाने की आवश्यकता को बिल्कुल स्वाभाविक और अनिवार्य नहीं मान लेना चाहिये। यह एक ऐसी दुर्बलता है जिसके आगे मनुष्य अभीप्सा की तीव्रता के अभाव, संकल्प-शक्ति की अस्थिरता, अज्ञान, निश्चेतना और निरुत्साह के कारण झुक जाता है। इन प्रवृत्तियों को न्यायसंगत न ठहराओ और शीघ्र ही तुम देखोगे कि ये जरूरी नहीं रहीं; कुछ समय बाद ये तुम्हारे लिये अरुचिकर, यहांतक कि, अग्राह्य हो जायेंगी। तब मनुष्य की कृतियों का एक छोटा नहीं, बल्कि काफी बड़ा भाग, जो "मनबहलाब" कहाता है पर सचमुच है नीचे ले जानेवाला, अपना आधार और प्रोत्साहन खो बैठेगा।

फिर भी, यह न समझो कि बोले हुए शब्दों का मूल्य बातचीत के विषय पर निर्भर है। तुम आध्यात्मिक विषयों पर भी उसी तरह बकवास कर सकते हो जैसे किसी और विषय पर। लेकिन इस प्रकार की बकवास सबसे अधिक भयंकर बकवासों में से एक हो सकती है। उदाहरण के लिये, नया साधक जो कुछ थोड़ा-बहुत जानता है उसे औरों में बांटने के लिये बहुत उत्सुक रहता है। लेकिन जैसे वह मार्ग पर आगे बढ़ता है उसे अधिकाधिक पता लगता है कि वह बहुत नहीं जानता और औरों को सिखाने का प्रयास करने से पहले उसे अपने ज्ञान के मूल्य के बारे में निश्चित होना चाहिये जबतक कि अंत में वह बुद्धिमान न हो जाय और यह अनुभव न करने लगे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि कुछ मिनटों तक उपयोगी बात करने के लिये घंटों की नीरव एकाग्रता की जरूरत होती है। इसके अतिरिक्त, आंतरिक जीवन और आध्यात्मिक साधना के बारे में वाणी के उपयोग पर ज्यादा कठोर अनुशासन रखना होगा और जबतक एकदम आवश्यक ही न हो, कुछ न कहा जाय।

यह भली-भांति जाना हुआ तथ्य है कि अगर तुम अपनी अनुभूति में इकट्ठी की गयी शक्ति को, जो तुम्हारी प्रगति को तेज करने के लिये है, क्षण-भर में गायब होते नहीं देखना चाहते तो तुम्हें अपनी आध्यात्मिक अनुभूतियों के बारे में कभी न बोलना चाहिये। इसमें केवल एक ही अपवाद हो सकता है—गुरु, जब तुम उनसे अपनी अनुभूति के बारे में कोई व्याख्या चाहो या उसके अर्थ के संबंध में कोई आदेश चाहो। वास्तव में, तुम केवल अपने गुरु के सामने ही इन चीजों के बारे में बिना किसी भय के बोल सकते हो, क्योंकि केवल गुरु अपने ज्ञान द्वारा तुम्हारी अनुभूति के तत्वों को तुम्हारी भलाई के लिये नयी चढ़ाई के सोपान में बदल सकते हैं।

यह सत्य है कि गुरु भी स्वयं अपनी निजी बातों के बारे में इसी तरह नीरवता के नियम के अधीन होते हैं। प्रकृति में हर चीज गतिशील है; अतः जो आगे नहीं बढ़ता वह पीछे हटने के लिये बाधित है। अपने शिष्य की भांति गुरु को भी आगे बढ़ना चाहिये, चाहे उनकी प्रगति उसी स्तर पर न हो। उनके लिये भी अपनी अनुभूति के बारे में बोलना हितकर नहीं है। अनुभूति की गतिशील शक्ति को शब्दों में प्रकट किया जाय तो वह बड़ी हदतक भाप बन कर उड़ जाती है। दूसरी ओर, शिष्यों को अपने अनुभव समझाकर गुरु उनकी समझ और उनकी प्रगति में प्रबल सहायता पहुंचाते हैं। उन्हें अपनी समझ के अनुसार यह जानना होगा कि किस हदतक एक को दूसरे के लिये बलि चढ़ायें। यह तो जानी-मानी बात है कि उनके वर्णन में शेखी या अहंमन्यता का प्रवेश नहीं होना चाहिये, क्योंकि जरा-सा अभिमान उन्हें गुरु की जगह पाखंडी बना देगा।

रही बात शिष्य की, तो उससे मैं कहूंगी : "हर हालत में अपने गुरु के प्रति निष्ठावान् बने रहो, वह चाहे कुछ भी क्यों न हो; तुम जितनी दूर तक जा सको वह तुम्हें उतनी दूर तक ले जायेंगे। लेकिन अगर तुम्हें भगवान् को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ही गुरु के रूप में पाने का सौभाग्य प्राप्त हो तो तुम्हारी उपलब्धि की कोई सीमा न होगी।

फिर भी, जब भगवान् धरती पर अवतार लेते हैं तो वे भी प्रगति के इस विधान के अधीन होते हैं। उनकी अभिव्यक्ति के यंत्र को, भौतिक सत्ता को, जो उनका परिधान होती है, सतत प्रगति की अवस्था में रहना चाहिये और उनकी निजी आत्माभिव्यक्ति का नियंत्रण करनेवाले विधान एक तरह से धरती की प्रगति के सामान्य विधान से जुड़े रहते हैं। इस तरह सशरीर भगवान् धरती पर तबतक पूर्ण नहीं हो सकते जबतक मनुष्य पूर्णता को समझने और स्वीकार करने के लिये तैयार न हों। ऐसा एक दिन होगा जब मनुष्य सब कुछ भगवान् के प्रति प्रेम के कारण करेंगे, आज की तरह उनके प्रति कर्तव्य मानकर नहीं। तब प्रगति एक प्रयास, और बहुधा संघर्ष होने की जगह एक आनंद होगी, या यह कहना ज्यादा ठीक होगा कि प्रगति समस्त सत्ता की निष्ठा के आनंद के द्वारा होगी, अहंकार के प्रतिरोध के दमन के द्वारा नहीं, जिसका अर्थ होता है बहुत प्रयास और कभी-कभी बहुत दुःख-कष्ट।

अंत में, मैं तुम से यह कहूंगी : यदि तुम चाहते हो कि तुम्हारी वाणी सत्य को अभिव्यक्त करे और भागवत शब्द की शक्ति प्राप्त करे तो पहले से मत सोचो कि तुम क्या कहोगे, यह निश्चय न करो कि क्या कहना अच्छा या बुरा होगा, यह हिसाब न लगाओ कि जो तुम कहनेवाले हो उसका क्या प्रभाव होगा। अपने मन में नीरव रहो और 'सर्व प्रज्ञा', 'सर्व ज्ञान', 'सर्व चेतना' के लिये सतत अभीप्सा के सच्चे भाव में स्थिर रहो। तब, अगर तुम्हारी अभीप्सा निष्कपट है, अगर यह चीजों को अच्छी तरह करने और सफल होने की महत्त्वाकांक्षा को छिपाने के लिये एक आवरण नहीं है, अगर वह शुद्ध, सहज और सर्वांगीण है तो तुम सरलता के साथ बोल सकोगे, वही शब्द बोलोगे जो बोले जाने चाहियें, न अधिक, न कम, और उनमें सर्जक शक्ति होगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(३)

सभी तपस्याओं में सबसे कठिन है संवेदन और भावों की तपस्या, प्रेम की तपस्या।

वस्तुतः, शायद भावों के क्षेत्र में मनुष्य को, अन्य सब क्षेत्रों से बढ़कर, एक विवशता, अदम्यता और अनिवार्यता का अनुभव होता है, एक शासक नियति का भाव होता है जिससे वह बच नहीं सकता। प्रेम को (कम-से-कम वह चीज जिसे मनुष्य यह नाम देते हैं) विशेष रूप में एक ऐसा निरंकुश प्रभु माना जाता है जिसकी सनकों से नहीं बचा जा सकता, जो तुम्हारे ऊपर मनचाहे ढंग से प्रहार करता है, और तुम चाहो या न चाहो, तुम्हें आज्ञापालन के लिये बाधित करता है। प्रेम के नाम पर बुरे-से-बुरे अपराध किये गये हैं, बेलगाम मूर्खताएं की गयी हैं।

और फिर भी, मनुष्य ने प्रेम की इस शक्ति को वश में करने की आशा से, इसे सौम्य और विनीत बनाने के लिये सब प्रकार के नैतिक और सामाजिक नियम बनाये हैं, लेकिन ऐसा लगता है कि वे नियम तोड़ने के लिये ही बनाये गये थे और उसकी स्वच्छन्द गति पर लगाये गये प्रतिबंध उसकी विस्फोटक शक्ति को बढ़ाते प्रतीत होते हैं। क्योंकि प्रेम की गतिविधि को नियमों के द्वारा वश में नहीं किया जा सकता। प्रेम के अदम्य आवेगों को केवल प्रेम की अधिक महान्, अधिक ऊंची और अधिक सच्ची शक्ति ही वश में कर सकती है। प्रेम ही प्रेम पर, उसे प्रकाशित करके, उसका रूपांतर करके और उसे बढ़ाकर, शासन कर सकता है। क्योंकि यहां भी, अन्य किसी भी और स्थान की अपेक्षा कहीं अधिक, संयम दबाने या त्यागने में नहीं, एक उदात्त कीमिया के द्वारा रूपांतरित करने में है। इसका कारण यह है कि संसार पर क्रिया करनेवाली सभी शक्तियों में प्रेम ही सबसे अधिक शक्तिशाली, सबसे अधिक अदम्य है। प्रेम के बिना जगत् फिर से निश्चेतना की अवस्था में जा गिरेगा।

वस्तुतः, चेतना विश्व की स्त्रष्टा है, परंतु प्रेम उसका रक्षक है। केवल सचेतन अनुभूति ही इस बात की झांकी दे सकती है कि प्रेम क्या है, क्यों है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और कैसे है। उसकी प्रतिलिपि शब्दों में निश्चित रूप से उस वस्तु का मानसिक छद्मवेश है जो सब प्रकार की अभिव्यक्ति से बच निकलती है। दार्शनिक, गुह्यवेत्ता, रहस्यवादी, सब प्रयास कर चुके हैं, लेकिन व्यर्थ। मैं यह दावा नहीं करती कि जहां वे असफल हो गये वहां मैं सफल होऊंगी। मेरा उद्देश्य है उस चीज को सरल-से-सरल भाषा में रखना जो उनकी लेखनी के द्वारा इतना अमूर्त और जटिल रूप ले लेती है। मेरे शब्दों का केवल यही लक्ष्य होगा कि वे एक बच्चे को भी जीवित-जाग्रत् अनुभूति की ओर ले जायें।

प्रेम, अपने सार-तत्त्व में, एकात्मता का आनंद है; वह ऐक्य के आनंद में अपनी चरम अभिव्यक्ति पाता है। इन दो अवस्थाओं के बीच वैश्व अभिव्यक्ति के सभी पक्ष आ जाते हैं।

इस अभिव्यक्ति के आरंभ में, प्रेम अपने उद्गम की पवित्रता में दो गतियों से बना होता है, पूर्ण मिलन की प्रवृत्ति के दो पूरक ध्रुवों से बना होता है। एक ओर आकर्षण की परम शक्ति और दूसरी ओर है पूर्ण आत्म-समर्पण की आवश्यकता जिसका कोई प्रतिरोध नहीं कर सकता। व्यक्तिगत सत्ता में चेतना के अपने मूल स्रोत से बिछुड़ कर निश्चेतना बनते समय जो खाई खुद गयी थी उसे पाटने के लिये कोई और शक्ति प्रेम से बढ़कर नहीं हो सकती।

जो चीज देश-काल में प्रक्षिप्त की गयी थी उसे इस भांति बनी हुई सृष्टि को नष्ट किये बिना स्वयं अपने में वापिस लाना था। इसके लिये प्रेम, जो मिलन की एकमात्र अदम्य शक्ति है, उमड़ पड़ा।

वह अंधकार और निश्चेतना पर मंडराता रहा है, उसने अपने-आपको अगाध रात्रि के वक्ष में बिखेर दिया है, चूर-चूर कर दिया है। और तभी से जागरण और आरोहण का आरंभ हुआ है, धीरे-धीरे जड़-तत्त्व का निर्माण और उसका अंतहीन विकास शुरू हुआ था। क्या वह प्रेम ही नहीं है जो एक भ्रांतिपूर्ण और अंधेरे रूप में भौतिक और प्राणिक प्रकृति की सभी प्रेरणाओं के साथ जुड़ा है तथा प्रत्येक क्रिया और प्रत्येक समूहीकरण की ओर प्रेरित करता है? वनस्पति जगत् में यह बिल्कुल स्पष्ट दिखायी देता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। पेड़-पौधों में यह अधिक प्रकाश और अधिक हवा, अधिक स्थान पाने के लिये बढ़ने की आवश्यकता है, तो फूल में यही सौंदर्य और सुरभि के साथ प्रस्फुटन है। और पशु-जगत् में क्या यही भूख-प्यास, अधिकार, विस्तार और प्रजनन, संक्षेप में कहें तो सभी कामनाओं के पीछे जाने-अजाने रूप में नहीं रहता? और उच्चतर श्रेणियों में मादा की अपने बच्चों के लिये निःस्वार्थ निष्ठा में यही चीज नहीं है? यह चीज हमें स्वभावतः मानवजातितक ले आती है जहां मानसिक गतिविधि के विजयपूर्ण आगमन से यह संबंध अपनी चरम सीमा को पा लेता है, क्योंकि वहां पर यह सचेतन और सुविवेचित है। वास्तव में, धरती के विकास में यह संभव हुआ तो प्रकृति ने प्रेम की इस महान् शक्ति को लेकर प्रजनन के साथ जोड़कर, मिलाकर अपनी सर्जक-शक्ति की सेवा में लगा दिया। यह संयोग इतना ज्यादा हिल-मिलकर घनिष्ठ हो गया कि बहुत कम लोगों में इतनी प्रबुद्ध चेतना है कि वे इन दोनों को अलग करके इनका अलग-अलग अनुभव कर सकें। इस प्रकार प्रेम को सब तरह की अधोगति सहनी पड़ी, वह पशुता के स्तरतक उतर गया।

इसी अवस्था से प्रकृति के कामों में धीरे-धीरे क्रमिक अवस्थाओं के द्वारा अधिकाधिक जटिल और बहुतेरे समूहों की सहायता से फिर से आद्य ऐक्य की रचना करने की प्रवृत्ति स्पष्ट रूप में प्रकट हुई। उसने प्रेम की शक्ति द्वारा दो मनुष्यों को साथ लाकर दो का समूह पैदा किया जो कुटुंब का मूल है। एक बार उसने व्यक्तिगत अहंभाव की सीमाओं को दोहरे अहं का रूप देकर तोड़ दिया और फिर बालक को प्रकट करके परिवार की ज्यादा जटिल इकाई को जन्म दिया। आगे चलकर कुटुंबों के अनेक संबंधों और व्यक्तियों के आदान-प्रदान और रक्त के मिश्रण से गोत्र, वंश, जाति, वर्ग और अंत में, राष्ट्र की रचना की। समूहों की रचना का काम संसार-भर में एक ही साथ अलग-अलग स्थानों पर होता रहा और इसीने विभिन्न जातियों के निर्माण को स्पष्ट रूप दिया। प्रकृति इन जातियों को भी, धीरे-धीरे मानव एकता का स्थूल और वास्तविक आधार बनाने के प्रयत्न में एक-दूसरे से मिला देगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अधिकतर लोगों की चेतना को यह जीवन के संयोगों का खेल लगता है; किसी सार्वभौम योजना की ओर उनका ध्यान ही नहीं जाता। परिस्थितियां जैसे-जैसे आती हैं, वे उन्हें अपने स्वभाव के अनुसार कम या ज्यादा आसानी के साथ स्वीकारते हैं, कुछ लोग संतुष्ट होते हैं और कुछ असंतुष्ट।

संतुष्ट लोगों में, एक श्रेणी ऐसे लोगों की है जो प्रकृति के तौर-तरीके के साथ पूरा मेल खाते हैं : ये हैं आशावादी। उन्हें रात के कारण दिन अधिक प्रकाशमान दीखता है, छाया के कारण रंग अधिक चमकीले हैं, कष्ट के कारण हर्ष अधिक तीव्र होता है, दुःख सुख को अधिक मोहक बनाता है, रोग स्वास्थ्य को उसका पूरा मूल्य प्रदान करता है; मैंने कुछ लोगों को यह कहते हुए भी सुना है कि वे दुश्मन पाकर खुश होते हैं, क्योंकि तब वे अपने मित्रों का मूल्य ज्यादा अच्छी तरह समझ सकते हैं। बहरहाल, ऐसे लोगों के लिये काम-केलि सबसे अधिक सुखकर कार्य है, जीभ की संतुष्टि जीवन के उन रसों में से है जिनके बिना काम नहीं चल सकता; उनके लिये यह बिल्कुल स्वाभाविक बात है कि जो पैदा हुआ है उसे मरना भी होगा: यह उस यात्रा का अंत है जो अगर बहुत ज्यादा चलती तो नीरस और उबाऊ हो जाती।

संक्षेप में, उन्हें जीवन जैसा है वैसा ही बिल्कुल ठीक लगता है। वे यह जानने की परवाह नहीं करते कि उसका कोई हेतु या लक्ष्य भी है या नहीं; वे दूसरों के दुःख-दैन्य से कष्ट नहीं पाते और प्रगति की कोई आवश्यकता नहीं देखते।

लेकिन तुम्हें ऐसे लोगों का "मत परिवर्तन" करने की कोशिश कभी न करनी चाहिये; यह बहुत बड़ी भूल होगी। अगर दुर्भाग्यवश वे तुम्हारी बात मान लें तो वे अपना वर्तमान संतुलन खो बैठेंगे, लेकिन कोई नया संतुलन न पायेंगे। वे आंतरिक जीवन के लिये तैयार नहीं हैं, लेकिन वे प्रकृति के प्यारे हैं; उसके साथ उनकी घनिष्ठ मैत्री है और उनकी इस प्राप्ति को बिना कारण धक्का न पहुंचाना चाहिये।

संसार में दूसरे संतुष्ट लोग ऐसे हैं जो इनसे जरा कम संतुष्ट और, सबसे बढ़कर, कम स्थायी रूप में संतुष्ट हैं। उनकी संतुष्टि प्रेम की क्रिया के जादू

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के कारण होती है। हर बार जब कोई व्यक्ति उस संकीर्ण सीमा को तोड़ता है जिसमें उसके अहं ने उसे बंद कर रखा है, जैसे ही वह आत्म-दान के कारण खुली हवा में उठता है, वह चाहे किसी और मनुष्य के लिये हो या परिवार या देश या अपने श्रद्धा-विश्वास के लिये, उसे इस आत्म-विस्मृति के अंदर प्रेम के अद्‌भुत आनंद का पूर्ण रस प्राप्त होता है और इससे उसे ऐसा लगता है कि वह भगवान् के संपर्क में आ गया है। लेकिन बहुधा यह क्षणिक संपर्क होता है, क्योंकि मनुष्यों में प्रेम तुरंत अहंकारपूर्ण निम्न गतियों में मिल जाता है जो उसे बदरंग बना देती हैं और उसकी पवित्रता की सारी शक्ति को दूर कर देती हैं। फिर भी, अगर वह शुद्ध बना भी रहता तो भी भागवत सत्ता के साथ यह संपर्क चिरस्थायी न होता, क्योंकि प्रेम भगवान् का केवल एक पक्ष है; एक ऐसा पक्ष जो धरती पर अन्य पक्षों की तरह समान रूप से विकृत हो गया है।

बहरहाल, ये सब अनुभूतियां उस सामान्य मनुष्य के लिये बहुत अच्छी और उपयोगी हैं जो सामान्य पथ पर भावी ऐक्य के लक्ष्य की ओर डिगते पैरों से बढ़ती गयी प्रकृति का अनुसरण करता है, लेकिन इनसे उन लोगों को संतोष नहीं हो सकता जो गति को तेज करना चाहते हैं। दूसरे शब्दों में कहें तो ये उन्हें संतुष्ट नहीं कर सकतीं जो किसी और धारा का, अधिक सीधी और अधिक तेज धारा का अनुसरण करना चाहते हैं, जो उन्हें सामान्य मानव प्रकृति और उसकी अनंत यात्रा से मुक्त कर दें, जो उन्हें आध्यात्मिक प्रगति में भाग लेने योग्य बना दे, जो उन्हें द्रुत मार्ग से उस नयी जाति की सृष्टि की ओर ले जाय जो धरती पर अतिमानसिक सत्य को अभिव्यक्त करेगी। इन विशिष्ट आत्माओं को मनुष्य-मनुष्य के बीच सारे प्रेम का त्याग करना होगा, क्योंकि वह चाहे कितना भी सुंदर और पवित्र क्यों न हो, वह एक प्रकार से लघु परिपथ (शॉर्ट सर्किट) बना देता है और भगवान् के साथ सीधे संबंध को काट देता है।

जिसने भागवत प्रेम को जान लिया है वह और सभी प्रकार के प्रेम को धुंधला, क्षुद्र, अहंकार और अंधकार से मिला हुआ पाता है; वह व्यापार या श्रेष्ठता के लिये, अंधकार के लिये संघर्ष के जैसा लगता है और अपने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अच्छे-से-अच्छे रूप में भी वह गलतफहमी, चिड़चिड़ेपन, मन-मुटाव और नासमझी से भरा रहता है।

और फिर, यह जानी हुई बात है कि तुम जिससे प्रेम करते हो उसीके जैसे बनते जाते हो। अगर तुम भगवान् जैसे बनना चाहो तो तुम्हें केवल उन्हींसे प्रेम करना चाहिये। जिसने भगवान् के सायुज्य के आनंद का अनुभव किया है वही जान सकता है कि बाकी सारा प्रेम उसकी तुलना में कितना नीरस, मंद और शक्तिहीन होता है और यदि इस सायुज्य को प्राप्त करने के लिये कठोरतम तपस्या की जरूरत पड़े तो भी कोई चीज अत्यंत कठिन, बहुत अधिक लंबी या अत्यंत कठोर नहीं है—बशर्ते कि वह तुम्हें वहांतक पहुंचा दे—क्योंकि यह सब प्रकार की अभिव्यक्ति से परे है।

हम धरती पर इस अद्‌भुत स्थिति को चरितार्थ करना चाहते हैं। यही धरती का रूपान्तर करके उसे भागवत सत्ता के योग्य आवास बनायेगी। तब सच्चा और विशुद्ध प्रेम एक ऐसे शरीर में अवतार लेगा जो उसके लिये आवरण या छद्मवेश न रहेगा। तपस्या को ज्यादा सरल बनाने के लिये तथा ज्यादा नजदीक और स्पष्ट रूप से अनुभव की जा सकनेवाली घनिष्ठता उत्पन्न करने के लिये भगवान् ने प्रेम के सर्वोच्च रूप में एक ऐसा भौतिक शरीर ग्रहण करने की इच्छा की जो देखने में मनुष्य-शरीर के जैसा ही हो। लेकिन हमेशा ही जड़-द्रव्य के स्थूल रूप में बंद होने के कारण वह अपना एक विकृत रूप ही व्यक्त कर सके। वे अपनी पूर्णता के वैभव में अपने-आपको तभी अभिव्यक्त कर सकेंगे जब मनुष्य अपनी चेतना और अपने शरीर में कुछ अनिवार्य प्रगति कर लेंगे; क्योंकि मनुष्य का तुच्छता-भरा मिथ्याभिमान और उसका मूर्खतापूर्ण अहंभाव, मानव शरीर में अभिव्यक्त भागवत प्रेम को दुर्बलता, निर्भरता और आवश्यकता का चिह्न मान लेता है।

लेकिन फिर भी, मनुष्य शुरू में धुंधले रूप में, लेकिन जैसे-जैसे वह पूर्णता की ओर बढ़ता जाता है, वैसे-वैसे ज्यादा स्पष्ट रूप में यह जानने लगता है कि केवल प्रेम ही संसार के दुःख-कष्ट का अंत ला सकता है; प्रेम का अनिर्वचनीय आनंद ही, अपने सार-तत्त्व में, संसार से विछोह की जलती हुई पीड़ा को दूर कर सकता है। क्योंकि परम ऐक्य के आनंद में ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सृष्टि को अपने अस्तित्व का हेतु और उसकी चरितार्थता प्राप्त हो सकती है।

इसलिये कोई भी प्रयास बहुत कठिन नहीं है, कोई तपस्या बहुत कठोर नहीं है अगर वह भौतिक तत्त्व को इतना प्रकाशित, शुद्ध, पूर्ण और रूपांतरित कर सके कि भगवान् जब उसमें रूप धारण करें तो वह उन्हें छिपा न पाये। तब वह अद्‌भुत प्रेम अपने-आपको इस जगत् में प्रकट कर सकेगा, इस भागवत प्रेम में ही जीवन को मधुर आनंद के स्वर्ग में बदलने की क्षमता है।

तुम कह सकते हो कि यह तो चरम उद्देश्य, प्रयास का मुकुट, अंतिम विजय है; लेकिन वहांतक पहुंचने के लिये क्या किया जाय? कौन-से मार्ग का अनुसरण किया जाय और रास्ते के पहले कदम कौन-से हैं?

चूंकि हमने यह निश्चय कर लिया है कि पूर्ण वैभवमय प्रेम को भगवान् के साथ अपने व्यक्तिगत संबंध के लिये सुरक्षित रखें, इसलिये औरों के साथ अपने संबंध में प्रेम की जगह एक पूर्ण अपरिवर्तनशील, स्थायी और अहंकारशून्य शुभ कामना और सद्‌भावना रखेंगे जो बदले में किसी पुरस्कार, कृतज्ञता या मान्यता की भी आशा न करेगी। दूसरे तुम्हारे साथ चाहे जैसे व्यवहार करें, तुम अपने-आपको किसी मनोमालिन्य या नाराजगी में न बहने दोगे; और भगवान् के प्रति अपने विशुद्ध प्रेम में तुम उन्हें ही इस बात के लिये एकमात्र निर्णायक बनाओगे कि वे दूसरों की गलतफहमी और दुर्भावना से तुम्हारी रक्षा कैसे करेंगे।

तुम अपने आनंद और अपने सुख के लिये केवल भगवान् पर ही निर्भर रहोगे, केवल उन्हींमें सहायता और आश्रय खोजोगे और पाओगे। वे तुम्हें हर दुःख में आश्वासन देंगे, तुम्हें पथ पर चलायेंगे, तुम ठोकर खा जाओ तो तुम्हें उठायेंगे और यदि दुर्बलता और क्लांति की घड़ियां आयें तो प्रेम की बलवान् भुजाओं में लेकर अपनी सुखद मधुरिमा में लपेट लेंगे।

यहां एक गलतफहमी से बचने के लिये मुझे यह बता देना चाहिये कि भाषा की मांग के कारण मुझे भगवान् के लिये पुल्लिंग रूप का उपयोग करना पड़ता है लेकिन वास्तव में मैं प्रेम के रूप में जिस सत्य के बारे में बोल रही हूं, वह स्त्रीलिंग और पुल्लिंग सब प्रकार के लिंगों से ऊपर और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परे है; और जब वह मानव देह लेता है, तो तटस्थ भाव से, उसे जो काम करना है उसकी जरूरत की दृष्टि से नर या नारी का शरीर धारण करता है।

संक्षेप में, भाव की तपस्या में सब प्रकार की भाव-संबंधी आसक्ति का त्याग आता है, वह चाहे किसी प्रकार का क्यों न हो, चाहे किसी व्यक्ति के लिये हो, परिवार के लिये हो, देश के लिये हो या किसी और चीज के लिये हो। और इस त्याग के साथ भगवान् के लिये अनन्य रूप से आसक्ति होनी चाहिये। इस एकाग्रता की पूर्णाहुति होगी सर्वांगीण तादात्म्य में, और यह धरती पर अतिमानसिक उपलब्धि के लिये यंत्र-रूप होगी।

यह बात हमें बिल्कुल स्वाभाविक रूप में चार मुक्तियों तक ले जाती है जो इस सिद्धि के चार मूर्त रूप हैं। भाव-संबंधी मुक्ति, अतिमानसिक एकता की सर्वांगीण उपलब्धि के परिणामस्वरूप, कष्टों से मुक्ति होगी। मानसिक मुक्ति, अर्थात्, अज्ञान से मुक्ति सत्ता में प्रकाशमय मन, अर्थात्, अतिमानसिक चेतना की प्रतिष्ठा करेगी जो अपने-आपको 'वाणी' की सर्जक शक्ति के रूप में प्रकट करेगी।

प्राणिक मुक्ति या इच्छा-कामना से मुक्ति व्यक्तिगत संकल्प को भागवत संकल्प के साथ पूरी तरह और सचेतन रूप में एक होने की क्षमता प्रदान करेगी और शांति, धीरज और परिणामस्वरूप, शक्ति लायेगी।

अंत में, सबसे ऊपर मुकुट के रूप में आती है भौतिक मुक्ति या भौतिक कार्य-कारण के नियम से मुक्ति। तुम पूरी तरह अपने स्वामी होने के कारण प्रकृति के नियमों के दास नहीं रहते जिसके कारण तुम अवचेतन और अर्धचेतन प्रेरणाओं द्वारा चलाये जाते हो, जो तुम्हें साधारण जीवन की लीक से बांध देता है। इस मुक्ति के कारण तुम पूर्ण ज्ञान के साथ यह निश्चय कर सकते हो कि तुम कौन-सा मार्ग अपनाना चाहते हो, उस कार्य को चुन सकते हो जिसे तुम चरितार्थ करना चाहते हो, अपने-आपको अंध नियति से मुक्त कर सकते हो। अपने जीवन-पथ में उच्चतम संकल्प, सत्यतम ज्ञान और अतिमानसिक चेतना के सिवा किसी और को हस्तक्षेप न करने दो।

—श्रीमां

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छोटे-बड़े विद्यार्थियों से

धरती के इतिहास में कुछ ऐसे संक्रांति काल आते हैं जब हजारों वर्षों से चली आयी चीजों को अपना स्थान ऐसी चीजों को देना पड़ता है जो अभिव्यक्त होने को हैं। ऐसे कालों में विश्व चेतना विशेष रूप से केंद्रित होती है, या यूं कहा जा सकता है, उसके प्रयास में तीव्रता आती है जो जिस प्रकार की प्रगति करनी है, जिस प्रकार का रूपांतर सिद्ध करना है उसके अनुसार भिन्न होती है। हम विश्व इतिहास के ठीक ऐसे ही मोड़ पर हैं। जैसे प्रकृति धरती पर पहले ही एक मानसिक सत्ता को बना चुकी है, वैसे ही अब इस मन में अतिमानसिक चेतना और व्यक्तित्व लाने के लिये एकाग्र क्रिया हो रही है।

कुछ सत्ताएं, मैं यूं कह सकती हूं, देवताओं के रहस्य से परिचित हैं। उन्हें धरती के जीवन की इस घड़ी के महत्व के बारे में बतलाया गया है और उन्होंने जैसे हो सके वैसे अपनी भूमिका निभाने के लिये धरती पर जन्म लिया है। एक महान् ज्योतिर्मय चेतना पृथ्वी के ऊपर उठ रही है और उसने वातावरण में एक भंवर-सा पैदा कर दिया है। जो लोग खुले हुए हैं उन सबको इस भंवर से एक लहर प्राप्त होती है, इस ज्योति से एक किरण मिलती है और हर एक अपनी क्षमता के अनुसार उसे रूप देने की कोशिश में है।

यहां हमें यह अनुपम सौभाग्य प्राप्त है कि हम विकिरणशील ज्योति के ठीक बीच में, रूपांतर की शक्ति के स्रोत में हैं।

श्रीअरविंद ने मानव शरीर में अतिमानसिक चेतना को उतारा, उन्होंने हमें केवल पथ का स्वरूप ही नहीं दिखाया, लक्ष्य तक पहुंचने के लिये उसके अनुसरण का तरीका ही नहीं दिखाया, बल्कि अपनी निंजी उपलब्धि के द्वारा हमारे आगे उदाहरण भी रखा है। हम कह सकते हैं कि उन्होंने यह प्रमाण दिया है कि यह किया जा सकता है और अब उसे करने का समय है।

अतः, हम यहां पर उसीको दोहराने के लिये नहीं हैं जिसे और लोग कर चुके हैं। हम यहां एक नयी चेतना और नये जीवन की अभिव्यक्ति के लिये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने-आपको तैयार करने के लिये हैं। इसीलिये मैं तुमसे, विद्यार्थियों से, बात कर रही हूं, अर्थात्, उन सबसे जो सीखना चाहते हैं, अधिकाधिक सीखना चाहते हैं और ज्यादा अच्छा सीखना चाहते हैं, ताकि एक दिन तुम नयी शक्ति के प्रति खुल सको और उसकी भौतिक स्तर पर अभिव्यक्ति को संभव बना सको। क्योंकि यही हमारा कार्यक्रम है, तुम्हें यह न भूलना चाहिये। अगर तुम इसका सच्चा कारण जानना चाहो कि तुम यहां क्यों हो तो तुम्हें याद रखना चाहिये कि हमारा लक्ष्य है संसार में भागवत संकल्प को अभिव्यक्त करनेवाला, जहांतक हो सके, अधिक-से-अधिक पूर्ण यंत्र बनना। और, अगर यंत्र को पूर्ण बनना है तो तुम्हें उसे साधना होगा, शिक्षण और प्रशिक्षण देना होगा। तुम उसे बंजर जमीन या अनगढ़ पत्थर की तरह नहीं छोड़ सकते। हीरा कलापूर्ण ढंग से तराशे जाने पर ही अपना पूरा सौंदर्य दिखाता है। तुम्हारे बारे में भी यही बात है। जब तुम यह चाहते हो कि तुम्हारी भौतिक सत्ता अतिमानसिक चेतना को अभिव्यक्त करनेवाला पूर्ण यंत्र बने तो तुम्हें उसे साधना होगा, आकार देना होगा, शुद्ध करना होगा और उसमें जो कमी हो उसे पूरा करना होगा और जो कुछ उसमें पहले से ही है उसे पूर्ण बनाना होगा। इसीलिये तुम कक्षा में आते हो, मेरे बच्चे, चाहे तुम बड़े हो या छोटे, क्योंकि व्यक्ति हर अवस्था में सीख सकता है—और इसलिये तुम्हें कक्षा में जाना होता है।

कभी-कभी जब तुम कुछ अनमने-से हो तो तुम कहते हो: "यह कक्षा कितनी उबाऊ होगी!" हां, हो सकता है कि कक्षा एक ऐसा अध्यापक लेता है जो तुम्हारा मनोरंजन करना नहीं जानता। वह एक अच्छा अध्यापक हो सकता है, फिर भी तुम्हारा मनोरंजन नहीं कर सकता, क्योंकि यह हमेशा आसान नहीं होता। ऐसे दिन होते हैं जब आदमी को मनोरंजन करने की इच्छा नहीं होती। तुम्हारे लिये और उसके लिये समान रूप से ऐसे दिन होते हैं जब तुम विद्यालय में रहने की जगह कहीं और रहना ज्यादा पसंद करोगे, फिर भी तुम कक्षा में जाते हो, तुम जाते हो क्योंकि जाना चाहिये, क्योंकि अगर तुम अपनी सब सनकों के अनुसार चलने लगो तो कभी अपने ऊपर अधिकार न पा सकोगे; तुम्हारी सनकें ही तुम्हें अपने वश में रखेंगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसलिये तुम कक्षा में जाते हो। परंतु यह सोचते हुए न जाओ : "ओह, कक्षा कितनी अरुचिकर और उबाऊ होगी", उसकी जगह यूं कहो : "जीवन में एक क्षण भी ऐसा नहीं होता, एक परिस्थिति भी ऐसी नहीं होती जो प्रगति का अवसर न हो। तो आज मैं कौन-सी प्रगति करनेवाला हूं ? आज मैं जिस कक्षा में जा रहा हूं, वहां जो विषय पढ़ाया जायगा उसमें मुझे रस नहीं है। लेकिन शायद मेरे अंदर ही कुछ कमी है; शायद, मेरे मस्तिष्क के किसी कोने में, कुछ कोषाणुओं में विकार है। इसीलिये मुझे इस विषय में रस नहीं आता। अगर बात ऐसी है तो मैं कोशिश करूंगा, अच्छी तरह सुनूंगा, एकाग्र रहूंगा, और सबसे बढ़कर, अपने दिमाग से इस छिछोरेपन को निकाल बाहर करूंगा। यह ऊपरी हल्कापन ही इस बात के लिये जिम्मेदार है कि जब कोई बात मेरी पकड़ में नहीं आती तो मैं ऊब उठता हूं। मैं इसलिये ऊब उठता हूं क्योंकि मैं समझने का कोई प्रयास नहीं करता, मेरे अंदर प्रगति के लिये संकल्प नहीं है।" जब तुम प्रगति नहीं करते तब सभीको ऊब आती है, चाहे वह जवान हो या बूढ़ा, क्योंकि हम यहां धरती पर प्रगति करने के लिये हैं। अगर जीवन प्रगति न करता तो वह कितना थकानेवाला हो जाता ! जीवन एकरस है, बहुधा सुखकर नहीं है, वह सुंदर होने से बहुत दूर है। लेकिन अगर हम उसे प्रगति का क्षेत्र मान लें तो हर चीज बदल जाती है, हर चीज रुचिकर बन जाती है और ऊब के लिये कोई जगह ही नहीं रहती। अगली बार जब तुम्हें अपना अध्यापक थकानेवाला लगे तो कुछ न करने में अपना समय बरबाद करने की जगह, यह समझने की कोशिश करो कि वह ऐसा क्यों है। अगर तुम्हारे अंदर अवलोकन की क्षमता है और अगर तुम समझने के लिये प्रयास करो तो तुम शीघ्र ही देखोगे कि कैसा चमत्कार हो गया, अब तुम्हें ऊब नहीं आ रही।

यह इलाज प्रायः सभी अवस्थाओं में अच्छा होता है। कभी-कभी किन्हीं विशेष प्रकार की परिस्थितियों में तुम्हें हर चीज उदास, थकानेवाली और मूर्खता-भरी लगती है। इसका अर्थ है कि स्वयं तुम भी वैसे ही थकानेवाले और नीरस हो जैसी तुम्हारी परिस्थितियां, यह इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि तुम प्रगतिशील अवस्था में नहीं हो। तुम्हारे ऊपर से ऊब और खिन्नता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की एक लहर दौड़ गयी है। और इससे बढ़कर जीवन के उद्देश्य का विरोधी और कोई नहीं है। ऐसे समय तुम प्रयास करके अपने-आपसे पूछ सकते हो : "यह खिन्नता इस बात का प्रमाण है कि मुझे कुछ सीखना है, अपने अंदर कोई प्रगति करनी है, किसी तमस् को जीतना है, किसी दुर्बलता पर विजय पानी है।" खिन्नता या ऊब चेतना का चपटा हो जाना है; अगर तुम अपने अंदर ही उपचार ढूंढ़ो तो उसे तुरंत गायब होते देखोगे। अधिक लोग ऊब की अवस्था में अपनी चेतना में एक कदम ऊपर उठने का प्रयास करने की जगह एक कदम नीचे आ जाते हैं। बल्कि जिस स्तर पर थे उससे भी नीचे उतर जाते हैं और अधिक-से-अधिक मूर्खता-भरी चीजें करते हैं। वे अपना मन बहलाने की आशा से एकदम भद्दी चीजें करते हैं। इसी तरह लोग पीना शुरू करते हैं, अपना स्वास्थ्य खराब कर लेते हैं और अपने मस्तिष्क को मृतप्रायः बना देते हैं। अगर वे गिरने की जगह ऊपर उठे होते तो इस अवसर का लाभ उठाकर प्रगति कर लेते।

वास्तव में, यह बात उन सब परिस्थितियों में समान रूप से सच्ची है जब जीवन तुम्हें कोई करारी चोट पहुंचाता है, जिस चोट को मनुष्य "महा विपत्ति" कहता है। वह सबसे पहली चीज जो करना चाहते हैं वह है भुला देना, मानों वैसे ही वह बहुत जल्दी नहीं भूल जाते ! और भूलने के लिये वह सब तरह की चीजें करते हैं। जब चीज बहुत कष्टदायक हो उठे तो उन्हें मनबहलाव की तलाश होती है, जिसे वह 'मनबहलाव' कहते हैं, यानी मूर्खता-भरी चीजें करते हैं और अपनी चेतना को ऊपर उठाने की जगह, और भी नीचे घसीटते हैं। अगर तुम्हें बहुत कष्टप्रद अनुभव हो रहा हो तो कभी अपने-आपको सुन्न करने की, भूल जाने की, निश्चेतना में उतरने की कोशिश न करो, बल्कि आगे बढ़ो, अपने दुःख के हृदय में पैठो। तुम वहां उस ज्योति, सत्य, शक्ति और आनंद को पाओगे जिन्हें पीड़ा छिपाती है। लेकिन उसके लिये तुम्हें दृढ़ होना चाहिये और नीचे फिसलने से इंकार करना चाहिये।

इस तरह तुम्हारे जीवन की सभी छोटी-बड़ी घटनाएं प्रगति का अवसर बन सकती हैं। अगर तुम उनसे लाभ उठाना जानो तो ब्यौरे की नगण्य चीजें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी अंत:प्रकाश की ओर ले जा सकती हैं। जब कभी तुम किसी ऐसी चीज में लगे हो जो तुम्हारे पूरे-पूरे ध्यान की मांग नहीं करती तो अपनी अवलोकन-शक्ति को विकसित करने का लाभ उठाओ। तुम देखोगे कि तुम मजेदार खोजें कर पाओगे। मैं क्या कह रही हूं यह समझाने के लिये मैं तुम्हें दो उदाहरण दूंगी। जीवन की दो छोटी-सी घटनाएं हैं जो अपने-आपमें कुछ भी नहीं हैं, पर फिर भी गहरी और स्थायी छाप छोड़ जाती हैं।

पहला उदाहरण है पैरिस की एक घटना का। तुम्हें इस महानगरी में टहलना है। सब जगह शोर है, दीखने में सब कुछ अस्त-व्यस्त है, एक चकरानेवाली हलचल है। अचानक तुम एक स्त्री को देखते हो जो तुम्हारे आगे-आगे चल रही है; वह अन्य अधिकतर औरतों के जैसी ही है, उसके वेश में ऐसी कोई चीज नहीं जो ध्यान खींचे, लेकिन उसकी चाल अद्भुत है, लचीली, तालबद्ध, सुरुचिपूर्ण और समस्वर। तुम्हारा ध्यान खिंचता है और तुम उसकी प्रशंसा करते हो। फिर, इतने लालित्य के साथ चलता हुआ यह शरीर प्राचीन यूनान के वैभवों की और उसकी संस्कृति द्वारा समस्त संसार को दिये गये सुन्दरता के अनुपम पाठ की याद दिलाता है, और यह क्षण तुम्हारे लिये अविस्मरणीय हो उठता है—और यह सब एक ऐसी स्त्री के कारण जो चलना जानती थी!

दूसरा उदाहरण संसार के दूसरे छोर, जापान से है। तुम अभी इस देश में, जो इतना अधिक सुन्दर है, काफी समय रहने के लिये आये-ही-आये हो। तुम्हें लगता है कि तुम यहांकी भाषा का थोड़ा बहुत परिचय न कर लो तो काम चलाना कठिन होगा। तुम जापानी भाषा सीखना शुरू करते हो और लोगों को बोलते हुए सुनने का कोई अवसर नहीं छोड़ते ताकि तुम उससे परिचित हो जाओ। उसी समय तुम ट्राम में, जिसमें तुम आकर बैठे हो, अपनी मां के साथ एक चार-पांच वर्ष के बच्चे को देखते हो। बच्चा शुद्ध स्पष्ट लहजे में बोलना शुरू करता है। तुम सुनते हो और तुम्हें यह अनोखा अनुभव होता है कि ज़िन बातों को तुम्हें बड़े प्रयास के साथ सीखना पड़ता है उन्हें वह बालक सहज रूप से जानता है, और, जहांतक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जापानी भाषा का संबंध है, अपनी छोटी अवस्था के बावजूद वह तुम्हारा अध्यापक हो सकता है।

इस तरह जीवन आश्चर्यपूर्ण बन जाता है और हर पग तुम्हें नया पाठ देता है। इस दृष्टि से देखा जाये तो जीवन सचमुच जीने योग्य है।

—श्रीमां

भविष्य दृष्टि

भवितव्यता को पहले से जान लेना ! कितनों ने इसके लिये प्रयास किया है, कितनी पद्धतियां बनी हैं, भविष्य-दर्शन की कितनी विद्याएं रची गयी हैं, विकसित की गयी हैं और फिर झूठी पंडिताई और अंधविश्वास के आरोप के साथ नष्ट हो गयी हैं ! पर भवितव्यता को पहले से जान लेना हमेशा इतना कठिन क्यों रहा है ? जब कि यह साबित हो चुका है कि प्रत्येक चीज अनिवार्य रूप से पूर्वनिर्दिष्ट है, तब क्या कारण है कि हम निश्चित रूप से नियति को जानने में सफल नहीं हो पाते ?

यहां भी समाधान योग में ही मिलता है। यौगिक साधना के द्वारा हम केवल अपनी भवितव्यता को पहले से जान ही नहीं सकते, बल्कि उसे बदल भी सकते हैं, प्रायः पूर्ण रूप से बदल सकते हैं। सबसे पहले, योग हमें यह सिखाता है कि हम एकमात्र सत्ता, एक सीधी-सादी चीज नहीं हैं, जिसकी केवल एक ही सीधी-सादी और युक्तिसंगत भवितव्यता हो सकती है। हमें यह स्वीकार करना ही होगा कि अधिकतर मनुष्यों की भवितव्यता जटिल, बहुविध होती है। उसमें इतनी जटिलता होती है जो कभी-कभी असंगत अंडबंड अवस्थातक पहुंच जाती है। क्या यह जटिलता ही वह चीज नहीं है जो अप्रत्याशित और अनिर्दिष्ट की छाप देकर कहती है कि उसके बारे में पहले से कुछ नहीं जाना जा सकता ?

इस समस्या को हल करने के लिये हमें पहले यह जानना होगा कि सभी सजीव प्राणी, विशेषकर मनुष्य, कई सत्ताओं की समष्टि से बना है जो एक साथ दलबद्ध होती हैं, एक-दूसरी में प्रवेश करती हैं, कभी-कभी अपने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपको संगठित करतीं और एक-दूसरे को पूर्ण बनाती हैं और फिर अन्य समयों में, एक-दूसरे का विरोध और खंडन करती हैं। इन सत्ताओं या सत्ता की अवस्थाओं में से प्रत्येक का अपना एक निजी लोक है और वह स्वयं अपने अंदर अपनी भवितव्यता को, अपनी नियति को वहन करती है। और इन सभी नियतियों का योगफल—जो कभी-कभी बड़ा ही बेढब होता है—वह चीज है जो व्यक्ति की भवितव्यता का निर्माण करता है। परंतु इन सभी सत्ताओं का संगठन और पारस्परिक संबंध व्यक्तिगत साधना और संकल्प-शक्ति के द्वारा बदला जा सकता है और नियति की विभिन्न धाराएं अलग-अलग ढंग से, चेतना की एकाग्रता के अनुसार एक-दूसरे पर कार्य करती हैं और इसलिये उनका सम्मिश्रण हमेशा बदलता रहता है, इसलिये उसके विषय में भविष्यवाणी करना संभव नहीं होता।

उदाहरणार्थ, किसी प्राणी की भौतिक या स्थूल भवितव्यता उसके पिता और माता के पूर्वजों से, उन बाह्य स्थूल अवस्थाओं, परिस्थितियों से आती है जिनमें वह जन्मा होता है; अतएव हम पहले से ही जान सकते हैं कि उसके भौतिक जीवन की क्या-क्या विशेष घटनाएं होंगी, उसका स्वास्थ्य कैसा और शरीर की उम्र लगभग कितनी होगी। परंतु फिर आती है मैदान में उसकी प्राणमय सत्ता की रचना (कामना-वासना, आवेग-उत्तेजना आदि के साथ-ही-साथ संचालन-शक्ति और सक्रिय संकल्प की सत्ता) जो अपने साथ अपनी निजी भवितव्यता भी ले आती है। यह भवितव्यता भौतिक भवितव्यता पर अपना प्रभाव डालती है और उसे पूर्ण रूप से बदल सकती है, यहांतक कि बहुत बार उसे अधिक बुरी अवस्था में पहुंचा देती है। उदाहरण के लिये मान लें कि एक आदमी बड़ी अच्छी नैतिक स्थिति के साथ पैदा हुआ है और उसे बहुत स्वस्थ जीवन बिताना चाहिये। अब यदि उसका प्राण पुरुष उसे सब प्रकार की ज्यादतियों, बुरी आदतों, यहांतक कि पापकर्मों की ओर ढकेल दे तो वह इस तरह अपनी अच्छी भवितव्यता को अंशतः नष्ट कर सकता है और स्वास्थ्य और बल-सामर्थ्य के सामंजस्य को खो सकता है जिसे उसने इस हानिकारक हस्तक्षेप के न होनेपर अवश्य प्राप्त किया होता। यह केवल एक उदाहरण है। परंतु समस्या इससे बहुत अधिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जटिल है, क्योंकि , भौतिक और प्राणिक भवितव्यता के साथ फिर आ जुटती हैं मानसिक भवितव्यता, आंतरात्मिक भवितव्यता और कितनी ही अन्य-अन्य भवितव्यताएं।

वास्तव में, कोई जीवन मनुष्य-श्रेणी में जितना ही ऊंचा खड़ा होता है उसकी सत्ता उतनी ही अधिक जटिल होती है, उतनी ही अधिक विविध होती है उसकी भवितव्यता। और इसलिये उसके भाग्य को पहले से जानना उतना ही अधिक कठिन होता है। पर, जो हो, यह सब केवल ऊपर से देखने में ही ऐसा है। जब सत्ता की इन विभिन्न स्थितियों का और उनसे संबंधित अंतर जगतों का ज्ञान प्राप्त होता है तब साथ-ही-साथ, उस ज्ञान के फलस्वरूप, इन विभिन्न भवितव्यताओं को, उनके पारस्परिक सम्मिश्रण को और उनके सम्मिलित या सर्वप्रधान कार्य को पहचानने की क्षमता भी आ जाती है। भतिव्यता की उच्चतर धाराएं स्पष्ट ही विश्व के केंद्रीय सत्य के बहुत समीप होती हैं, उससे मिलती-जुलती होती हैं और अगर उन्हें हस्तक्षेप करने दिया जाय, तो उनका कार्य निश्चय ही लाभदायी होता है। इस तरह जीवन-यापन करने की कला—सर्वोत्तम विधि—यह होगी कि हम अपने को हमेशा अपनी उच्चतम चेतना के अंदर बनाये रखें और इस तरह अपने जीवन और कार्य में अपनी उच्चतम भवितव्यता को ही अन्य भवितव्यताओं के ऊपर प्राधान्य स्थापित करने दें। इस तरह हम कह सकते हैं, और इसमें भूल होने का कोई डर नहीं, कि हमेशा अपनी चेतना के शिखर पर रहो और तब तुम्हारे लिये वही होगा जो अच्छे-से-अच्छा होगा। परंतु यह एक ऐसी चरम अवस्था है जिसे प्राप्त करना आसान नहीं है। परंतु, फिर भी, जबतक यह आदर्श अवस्था न उपलब्ध हो, तबतक प्रत्येक व्यक्ति कम-से-कम इतना तो कर ही सकता है कि जब कोई खतरा या संगीन अवस्था सामने आये तो वह अभीप्सा, प्रार्थना तथा भागवत इच्छा के प्रति विश्वासपूर्ण आत्म-दान के द्वारा अपनी उच्चतम भवितव्यता का आवाहन करे। ऐसा करने पर, व्यक्ति का आवाहन जितना सच्चा होता है उसी अनुपात में यह उच्चतर भवितव्यता व्यक्ति की सामान्य भवितव्यता में अनुकूल हस्तक्षेप करती है, और घटना-चक्र को, जहांतक उसका अपना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

व्यक्तिगत संबंध हो, एकदम परिवर्तित कर देती है। इसी तरह की घटनाएं हमारी बाह्य चेतना को चमत्कार, दिव्य हस्तक्षेप प्रतीत होती हैं।

—श्रीमां

रूपांतर

हम चाहते हैं सर्वांगपूर्ण रूपांतर, शरीर और उसके सभी क्रिया-कलापों का रूपांतर। परंतु इसका एक प्रथम, पूर्ण रूप से अनिवार्य पग है : चेतना का रूपांतर जिसे और कोई चीज आरंभ करने से पहले पूरा करना होगा। यह कहने की जरूरत नहीं कि इस विषय में हमारी यात्रा का प्रारंभ-स्थल होगा इस रूपांतर की अभीप्सा और इसे सिद्ध करने का संकल्प; उसके बिना कुछ भी नहीं किया जा सकता। परंतु अभीप्सा के साथ यदि एक प्रकार का आंतरिक उद्घाटन, एक प्रकार की ग्रहणशीलता भी आ जुटे तो व्यक्ति एक ही छलांग में इस रूपांतरित चेतना में प्रवेश कर सकता है और वहीं बना रह सकता है। कहा जा सकता है कि चेतना का यह परिवर्तन अकस्मात् होता है; जब होता है तो एकाएक हो जाता है, उसकी तैयारी भले ही बहुत धीरे-धीरे और दीर्घकाल से होती आयी हो। मैं यहां मानसिक दृष्टिकोण में होनेवाले किसी सामान्य परिवर्तन की बात नहीं कह रही, बल्कि स्वयं चेतना के परिवर्तन की बात कह रही हूं। यह एक प्रकार से पूर्ण और विशुद्ध परिवर्तन है, आधारभूत स्थिति में होनेवाली एक क्रांति है; यह प्रायः गेंद को भीतर से बाहर की ओर उलट देने के जैसी बात है। इस परिवर्तित चेतना में प्रत्येक चीज केवल नयी और भिन्न ही नहीं मालूम होती, बल्कि पहले साधारण चेतना को जैसी मालूम होती थी उससे प्रायः उल्टी प्रतीत होती है। साधारण चेतना में तुम धीरे-धीरे चलते हो, एक-के-बाद-एक प्रयोग करते हुए चलते हो, अज्ञान से किसी सुदूर-स्थित और यहांतक कि, संदिग्ध ज्ञान की ओर जाते हो पर रूपांतरित चेतना में तुम ज्ञान से आरंभ करते हो, और ज्ञान से ज्ञान की ओर अग्रसर होते हो। फिर भी, यह है आरंभ ही, क्योंकि बाहरी चेतना, बाहरी और क्रियाशील सत्ता के विभिन्न स्तर और अंश एक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भीतरी रूपांतर के फल-स्वरूप, धीरे-धीरे और क्रमशः ही रूपांतरित होते हैं।

वह वास्तव में चेतना का एक आंशिक परिवर्तन है जिसके कारण तुम उन सब चीजों में बिल्कुल रस लेना छोड़ देते हो जो पहले वांछनीय लगती थीं; लेकिन यह तो केवल चेतना का परिवर्तन है, वह चीज नहीं है जिसे हम रूपांतर कहते हैं। क्योंकि रूपांतर तो एक मौलिक और निरपेक्ष वस्तु है; वह एक परिवर्तन मात्र नहीं है, बल्कि चेतना का एकदम उलट जाना है: मानों सारी सत्ता एक चक्कर खा गयी हो और एक और ही स्थिति में जा खड़ी हुई हो। इस उल्टी हुई चेतना में हमारी सत्ता जीवन और वस्तुओं से ऊपर खड़ी होती है और वहांसे उनके साथ व्यवहार करती है; वह केंद्र में होती है और वहींसे अपनी क्रिया बाहर की ओर चलाती है। जब कि साधारण चेतना में हमारी सत्ता बाहर और नीचे खड़ी रहती है : बाहर से वह केंद्र में आने के लिये प्रयास करती है; नीचे से वह अपने अज्ञान और अंधेपन के बोझ तले दबी हुई उनसे ऊपर उठने के लिये जी-तोड़ संघर्ष करती है। साधारण चेतना यह नहीं जानती कि वास्तव में चीजें कैसी हैं; वह केवल ऊपरी छिलके को, कठोर आवरण को ही देखती है। परंतु सच्ची चेतना केंद्र में, सद्वस्तु के हृदय में रहती है और समस्त गतिविधि और क्रिया-कलाप के मूल को अपनी सीधी दृष्टि से देखती है। अंदर और ऊपर रहते हुए यह सभी वस्तुओं और शक्तियों के मूल उद्‌गम, कारण और परिणाम को जानती है।

मैं फिर दुहरा रही हूं, चेतना का यह पलटना आकस्मिक होता है। कोई चीज तुम्हारे अंदर खुल जाती है और तुम अपने को तुरत-फुरत एक नवीन जगत् में पाते हो। यह परिवर्तन आरंभ से ही संभव है कि अंतिम और सुनिश्चित न हो; इसे स्थायी रूप से जमने और तुम्हारा सामान्य स्वभाव बनने के लिये समय की आवश्यकता होती है। परंतु एक बार परिवर्तन हो जाय तो वह तत्त्वतः, सदा के लिये बना रहता है; और उसके बाद जिस चीज की जरूरत होती है वह है अपनी ठोस अभिव्यक्ति के लिये उसका पूर्ण ब्योरे के साथ कार्यान्वित होना। रूपांतरित चेतना की पहली अभिव्यक्ति हमेशा आकस्मिक प्रतीत होती है। तुम्हें यह नहीं लगता कि तुम धीरे-धीरे और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्रमशः एक चीज से दूसरी चीज में बदलते जा रहे हो; बल्कि यह अनुभव करते हो कि तुम एकाएक एक नयी चेतना में जाग्रत् हो गये हो या जन्म ले रहे हो। मन का कोई भी प्रयास यह परिवर्तन नहीं ला सकता; क्योंकि मन से तुम यह कल्पना ही नहीं कर सकते कि यह क्या चीज़ है और मन का कोई भी वर्णन यथार्थ नहीं हो सकता।

यही समस्त, सर्वांगपूर्ण रूपांतर का प्रारंभ है।

—श्रीमां

सफेद हाथी

हिमालय के जंगलों में अस्सी हजार हाथियों का दल घूमा करता था। एक विशालकाय सफेद हाथी उनका राजा था।

राजा की मां अंधी थी।

अगर कभी राजा अपने दल के साथ दूर निकल जाता था तो भी उसे मां का ध्यान बना रहता था और वह सेवकों के हाथ उसके लिये फल भेजा करता था। लेकिन खेद की बात यह है कि सेवक फल अपने-आप खा लेते थे और प्रेमोपहार अंधी मां तक न पहुंच पाते थे।

जब राजा को इस धोखेबाजी का पता लगा तो उसने दल को छोड़ देने का निश्चय किया ताकि अच्छी तरह मां की सेवा और रक्षा कर सके। वह मां को लेकर किसी कन्दरा में रहने लगा जिसके पास ही एक झील थी।

एक बार बनारस का एक आदमी उधर आ निकला। वह अपना रास्ता भूल गया था और सात दिन से इधर-उधर निराश हो कर भटक रहा था। हस्तिराज ने उसके आगे झुक कर उसे अपनी पीठ पर बिठा लिया और बनारस की सड़क पर छोड़ आया और आगे का रास्ता भी दिखा दिया।

लेकिन हां, मनुष्य बुरे दिलवाला था। उसने बनारस के राजा को बता दिया कि उस कन्दरा के पास एक सुन्दर सफेद हाथी मिल सकता है। राजा ने उसके साथ कई शिकारी कर दिये और हाथी को पकड़ लाने का हुकुम दिया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शिकारियों ने देखा सफेद हाथी झील में खड़ा है। उन्होंने उसे जा पकड़ा। उसने कोई विरोध नहीं किया। वे उसे पकड़ कर बनारस ले आये।

जब सफेद हाथी नहीं लौटा तो उसकी मां को बहुत दुःख हुआ। उसने कहा, "चीड़, कुटज, कनेर, कुमुद से लेकर घास तक सब सुखी हैं पर मेरा बेटा कहां है? कहां है वह?"

इधर हाथी को एक बहुत बड़ी, फूलों से सजी गजशाला में रखा गया। राजा अपने-आप उसे खिलाने आता था। लेकिन हाथी कुछ न खाता था। उसने कहा, "मेरी मां यहां नहीं है।"

राजा ने कहा, "लो, सीधी तरह खाओ। मेरे दोस्त बनो।" हाथी ने कहा, "लेकिन वह बेचारी अंधी कंदरा में रो रही होगी।" राजा ने कहा, "तुम्हारा मतलब क्या है?" हाथी ने कहा, "मेरी मां मेरे लिये रो रही होगी।"

राजा ने हाथी को छोड़ देने का हुकुम दिया। हाथी तेजी से भागा और रास्ते में से सूंड में पानी भर कर ले गया और जाते ही मां के ऊपर छिड़कने लगा। मां ने रो कर कहा, "हाय! वर्षा हो रही है। मेरी देखभाल के लिये मेरा बेटा यहां नहीं है।"

"मां, मैं आ गया, राजा ने मुझे वापिस भेज दिया।"

सोसायटी समाचार

२१ फरवरी माताजी का १११ वां जन्मदिन था। इस अवसर पर विशेष कार्यक्रम होता है माताजी के कमरे का दर्शन। यह साल में दो बार ही होता है, एक २१ फरवरी को दूसरा १७ नवंबर को। इस बार श्रीअरविन्द का यह संदेश बांटा गया था: "अगर यह वही है जिसके बारे में जगत् ने सुन रखा है, तो किसी भी सुखद परिवर्तन पर आश्चर्य न करो, उसके रूपांतरकारी हृदय का हर सरल, सुख-शांतिपूर्ण चमत्कार एक कीमिया है।"

सोसायटी की यूथ काउंसिल ने पांडिचेरी में २२ दिसंबर से २ जनवरी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तक एक शिविर का आयोजन किया जिसमें भारत के बारह प्रदेशों से ३५ लोगों ने भाग लिया। एक जर्मन भी इसीके लिये आया था। इस अवसर पर भारत की एकता, आत्म-विकास, कला-कौशल, युवकों की भूमिका आदि विषयों पर बातचीत हुई। आसन, शारीरिक व्यायाम, आश्रम भोजनालय में सेवा-कार्य, संगीत आदि की व्यवस्था की गयी थी। इन चीजों की सहायता से लोग अपने-अपने नगर में जाकर माताजी और श्रीअरविन्द की प्रेरणा से काम का वातावरण बना सकते हैं।

१३ से २५ फरवरी तक श्रीअरविन्द की पुस्तक 'मदर' के अध्ययन की व्यवस्था के लिये डा. महेश्वरी के तत्त्वावधान में एक शिविर लगा।

२३ मई से ३ जून तक सोसायटी कार्यालय में श्रीअरविन्द और माताजी के प्रकाश में शिक्षासंबंधी शिविर लगेगा। जो लोग इसमें भाग लेना चाहें उन्हें अपने रहने-खाने का खर्च अपने-आप उठाना होगा। विस्तृत जानकारी के लिये श्री महादेविया, श्रीअरविन्द सोसायटी पांडिचेरी—६०५००२ से पत्र-व्यवहार करें।

सिंगापुर विश्व-विद्यालय के प्राध्यापक श्री मंगेश नाडकर्णी ने ३ और ४ जनवरी को पांडिचेरी विश्व-विद्यालय में नवजात स्मारक-भाषण के तौर पर 'पार्थिव पूर्णता की ओर' पर दो भाषण दिये।

सोसायटी के जाइंट सेक्रेटरी श्री गोपाल भट्टाचार्य ने कई सार्वजनिक सभाओं और शिक्षा-संस्थाओं में भाषण दिये और दो नये केंद्र खोले।

जनवरी के महीने में बंगाल युवा समिति ने कई शिविरों और सेमिनारों की व्यवस्था की।

कलकत्ता समिति के १५ जनवरी के वार्षिक स्वाध्ययन शिविर में लगभग तीन सौ लोगों ने भाग लिया।

कलकत्ते की क्षेत्रीय समिति ने सातवें वार्षिक युवक-शिविर की आयोजना कृपारामपुर गांव में २९ जनवरी को की। करीब १३० विद्यार्थियों ने इसमें भाग लिया।

बीजापुर (कर्णाटक) केंद्र ने ५ फरवरी को अपनी जयंती मनायी।

भावनगर (गुजरात) में श्री अनिरुद्ध स्मार्त ने १८ जनवरी को श्रीअरविन्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के 'दिव्य जीवन' पर भाषण दिया और दो स्थानीय कालेजों में भी इन्होंने भाषण दिये।

कलकत्ते के 'श्रीअरविन्द इंस्टीट्यूट ऑफ कलचर' ने अपनी चौदहवीं जयंती मनायी। 'शारीरिक व्यायाम में मानसिक और आध्यात्मिक पक्ष', 'सेवा-भाव द्वारा स्वास्थ्य और चिकित्सा', 'गुरुदेव रवींद्रनाथ, स्वामी विवेकानंद और श्रीअरविन्द', तथा नलिनी कांत गुप्त की शताब्दी पर सेमिनार आयोजित किये। वहां आश्रम के साहित्य तथा वहां की अन्य चीजों की प्रदर्शनी भी की गयी।

अमरावती के मराठी साहित्य सम्मेलन के अधिवेशन में समुचित रूप से श्रीअरविन्द साहित्य का प्रदर्शन किया गया तथा उनके संदेश बांटे गये।

घोषणाएं

श्रीअरविन्द आश्रम दिल्ली शाखा से सूचना आयी है कि उनके नैनीताल केंद्र 'वन निवास' में २९ मई १९८९ को श्रीअरविन्द के पवित्र अवशेष पधराये जायेंगे। १९०१ की २९ मई को श्रीअरविन्द अपनी बहिन और पत्नी के साथ नैनीताल आये थे। वे महाराजा बड़ौदा के साथ छुट्टी मनाने आये थे और ब्रूकहिल एस्टेट में ठहरे थे जो अब उत्तर प्रदेश सरकार की अतिथि-शाला है। इस अवसर पर विशेष कार्यक्रम की योजना बन रही है।

हर बार की तरह इस बार भी श्रीअरविन्द एज्यूकेशन सोसायटी की ओर से मई और जून में नैनीताल में तीन ग्रीष्म शिविर होंगे। जिन्हें इनमें रस हो वे शिविर संयोजक, श्रीअरविन्दाश्रम दिल्ली शाखा, श्रीअरविन्द मार्ग, नई दिल्ली—११००१६ से पत्र-व्यवहार करें।

श्रीअरविन्दाश्रम का संस्कृत कार्यालय सरल संस्कृत पुस्तक प्रकाशित कर रहा है। अभी हाल में एक पुस्तक प्रकाशित हुई है जिसमें संस्कृत और तमिल शब्दों में समानता दिखलायी गयी है, दाम केवल ७ रुपये।

हावड़ा, महाराष्ट्र, उदयपर, त्रिपुरा, प्रकाशम आदि कई स्थानों पर सोसायटी की नयी शाखाएं खोली गयी हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

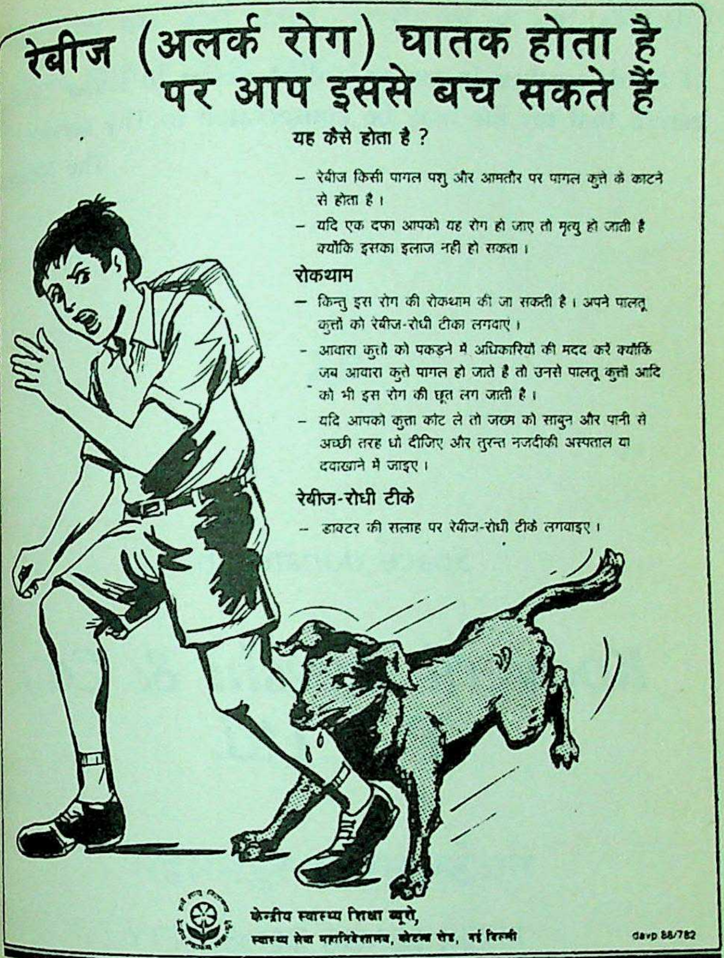

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

O Lord, awaken in me an ardent desire to know Thee. I aspire that my life may be consecrated to Thy service.

The Mother

Space donated by

Kooverji Devshi & Co., Pvt. Ltd.

FIREX LEADS TO SAFETY
SAFETY LEADS TO PROSPERITY

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सबसे पहली चीज होनी चाहिये 'शांति'। तुम जो कुछ करो उसे शांतिपूर्ण तरीके से करना चाहिये।

सहारनपुर सर्विस स्टेशन

पैट्रोल-पम्प, देहरादून रोड

सहारनपुर-२४७००१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Registered with the Registrar of Newspapers for India
No. R. N. 18135/70
REGD. No. M. 8731

A happy beginning
a good continuation
and no end —
an endless progression

14-5-57

New Horizon Sugar Mills (Pvt.) Ltd

PONDICHERRY

Telegram : SAKAR
Phone : Town Office : 4280
Factory : 4423 4424

P.O. Box 29
Pondicherry
S. India

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अखिल भारतीय पत्रिका

मई १९८९

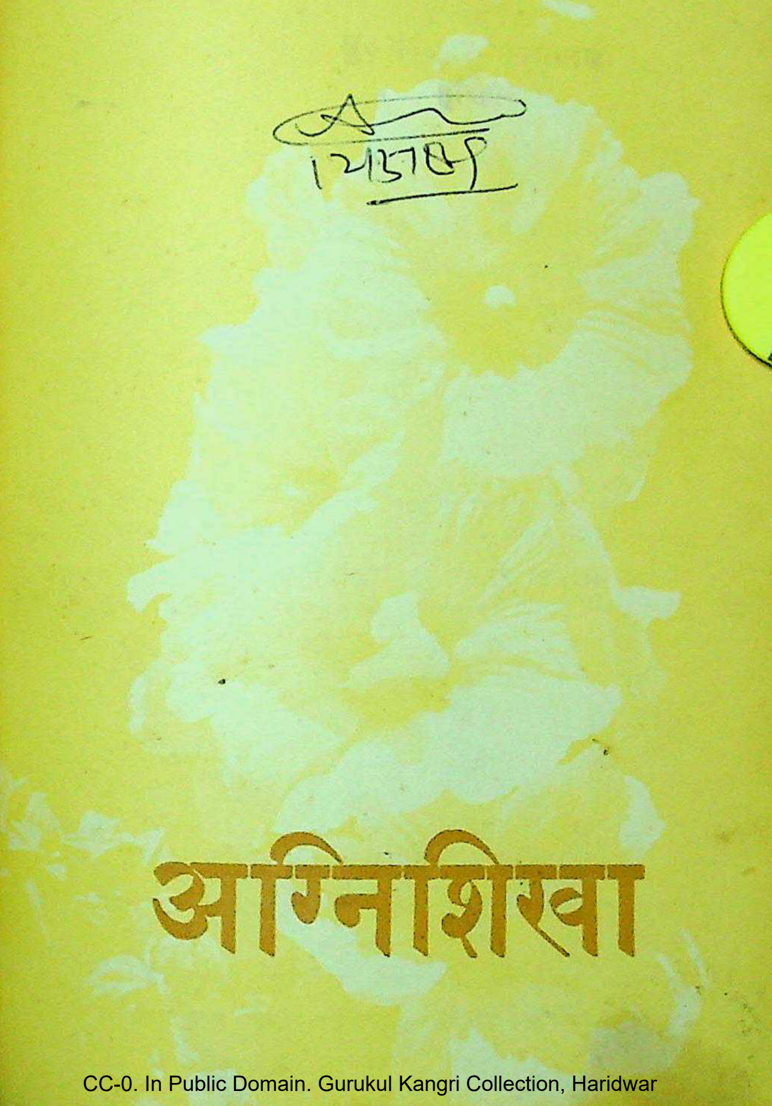

अग्निशिखा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अग्निशिखा मई १९८९ वर्ष १९, अंक १०, पूर्णांक २२६

विषय-सूची

सन्देश		१
'संपादकीय': सच्ची सेवा	अनुबेन	२
दैनन्दिनी		३
उत्तरपाड़ा भाषण		७
श्रीअरविंद के साथ बातचीत		२०
एक युवा साधक का श्रीअरविंद और माताजी के साथ पत्र-व्यवहार		२३
वाणी और आन्तरिक सम्पर्क	श्रीमातृवाणी से	२७
सद्भावना	श्रीमातृवाणी से	३०
ऋषिवर बोले: जीवन में प्रेम		३२
सोसायटी समाचार		४०

आपका अग्निशिखा/पुरोधा का चंदा ... में समाप्त हो रहा है। कृपया अग्निशिखा के १० और पुरोधा के १४ शीघ्र भेजें अन्यथा अगला अंक वी. पी. पी. से जायगा। वी. पी. पी लौट आने से हमें बहुत हानि होती है। अलग अनुस्मारक नहीं भेजा जायगा। कृपया चेक न भेजें। चाहें तो २२५ और २७५ एक साथ या किस्तों में देकर अग्निशिखा और पुरोधा के या ५०० देकर दोनों के आजीवन सदस्य बन सकते हैं।

अग्निशिखा वार्षिक १०.०० आजीवन २२५.००

श्रीअरविंद सोसायटी की मासिक पत्रिका

संपादक: रवींद्र, अनुबेन
प्रकाशक: श्रीअरविंद सोसायटी, पांडिचेरी-६०५००२
मुद्रक: अमियरंजन गांगुली, श्रीअरविंद आश्रम प्रेस, पांडिचेरी-६०५००२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उद्बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि

संदेश

शारीरिक शिक्षा का चरम लक्ष्य होना चाहिये जो साधन उपलब्ध हों उनके माध्यम से जितनी महान् पूर्णता संभव हो शरीर में लाना। सभी शिक्षाओं का सच्चा लक्ष्य है पूर्णता; आध्यात्मिक और चैत्य, मानसिक, प्राणिक पूर्णता और हमारी शारीरिक शिक्षा का लक्ष्य भी वही होना चाहिये। अगर हमारी खोज सत्ता की संपूर्ण पूर्णता है तो उसका भौतिक अंग पीछे नहीं छोड़ा जा सकता क्योंकि शरीर भौतिक आधार है, शरीर वह यंत्र है जिसका हमें उपयोग करना है। ''शरीरम् खलु धर्मसाधनम्'' संस्कृत कहावत कहती है—''धर्म का पालन करने के लिये शरीर एक साधन है'' और धर्म का अर्थ है वह आदर्श जिसे हम अपने सामने रखते हैं, उसको क्रियान्वित करने के नियम और उसका कार्य अपने आगे रखते हैं। समग्र पूर्णता वह चरम लक्ष्य है जो हम अपने लिये निश्चित करते हैं, क्योंकि हमारा आदर्श दिव्य जीवन है जिसे हम यहां उतारना चाहते हैं : आत्मा का वह जीवन जिसे पृथ्वी पर चरितार्थ करना है ताकि भौतिक विश्व की परिस्थितियों में, यहां पृथ्वी पर जीवन अपने आध्यात्मिक रूपांतर को संपादित कर पाये। यह तबतक संभव न होगा जबतक शरीर भी रूपांतरित न हो जाये, जबतक उसकी क्रिया और वृत्ति उस चरम क्षमता और पूर्णतातक न पहुंच जाये जो उसके लिये संभव हो या जिसे संभव बनाया जा सके।

—माताजी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संपादकीय :

सच्ची सेवा

एक समय था जब भारत के यश का सूर्य सारे संसार पर अपना प्रकाश फैलाकर सर्व-मंगल की कामना से भूखंड का कल्याण करता था और उसे समस्त मानवजाति का दुलार और सम्मान प्राप्त था।

अगर आज वह तृतीय जगत् की पंक्ति में आ खड़ा हुआ है तो उसकी इस अवस्था के लिये भारतीयों को अंतर्निरीक्षण करना होगा। उस संस्कृत कहावत के अनुसार "कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति" मा भारती ने न अपना स्नेह बरसाना कम किया, न उसकी सहायता अनुपलब्ध रही, किंतु भारतीयों ने मातृमूर्त्ति की अवहेलना कर उससे मुंह मोड़ लिया। अंग्रेजी प्रभुओं की सफलता से प्रभावित होकर हमने साहब बनने की ठानी। अब भारत स्वाधीन हो चुका है किंतु उसका आंतरिक रूप अभीतक गुलाम-सा ही है।

भारत की वर्तमान अवस्था के लिये भारतीय ही दोषी हैं।

हम जानते हैं कि आज भारत की छवि संसार में उज्ज्वल होती जा रही है लेकिन उसके लिये आधुनिक भारतीय श्रेय नहीं ले सकते। उसके लिये हमें उन असंख्य शहीदों का कृतज्ञ होना चाहिये जिनकी तपस्या के कारण ही आज भारत उन्नत सिर के साथ संसार के राष्ट्रों के बीच खड़ा है।

वे अज्ञात शहीद तो देश-प्रेम का प्रमाण देकर मां भारती की गोद में जा बैठे किंतु हम आधुनिक भारतीय मां की क्या सेवा करेंगे?

अगर रोज सुबह हम उठकर यह प्रार्थना करें कि भगवान्, जितना संभव हो, मैं प्रत्येक कार्य को करने के पहले यह सोच पाऊं कि क्या इस कार्य से राष्ट्र का कल्याण होगा, उन्नति होगी? अगर उत्तर नकारात्मक हो तो यथासंभव हमें उस कार्य से बचने का प्रयत्न करना चाहिये। अपने मन को भारत की शुभ चिंता में लगाना चाहिये, अपने हृदय में भारत के लिये प्रेम को जगाकर कुछ ऐसा कार्य करना चाहिये जिससे भारत की संस्कृति अधिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उज्ज्वल हो उठे। अंत में अपने शरीर को सुगठित, शक्तिपुंज और स्वस्थ रखने के लिये कुछ-न-कुछ व्यायाम करना चाहिये। इन सब क्रिया-कलापों में हमें किसी भी संस्था या सरकार से विशेष सरोकार की आवश्यकता नहीं।

अगर हम ईमानदारी से इतना कर पायें तो अवश्य हमारी नीरव सेवा को मां भारती स्वीकार करेंगी।

—अनुबेन

दैनन्दिनी

मई

१. हे प्रभु, जगत् के स्वामी, तेरी जय हो, हमें ऐसी शक्ति दे कि हम अपना काम बिना आसक्ति के करें।
२. हमें अपने लक्ष्य को भूलने मत दे; वर दे कि हम सदा तेरी शक्ति के साथ एक होकर रहें।
३. सर्व वरदानों के दाता, तू जो अंधकार में से प्रकाश को उछाल देता है और दुर्बलता से प्रकाश को जगाता है, हमारे प्रयासों को सहारा दे, हमारे कदमों का निर्देशन कर, हमें विजय की ओर ले चल।
४. इस यंत्र ने अपने-आपको तुझे दिया है और वह अपने-आपको प्रबल निष्ठा से, संपूर्ण समर्पण के साथ दे रहा है; चाहे तू उसे मिट्टी में मिला दे या उसका सूर्य के रूप में रूपांतर करे।
५. हे प्रकाश, प्रेम, अनिर्वचनीय शक्ति, सारे अणु तुझे पुकार रहे हैं ताकि तू उनमें प्रवेश करे और उनका रूपांतर कर दे।
६. ओह, मैं तेरे चरणों में विलीन हो जाऊं, तेरे अंदर पिघल जाऊं।
७. जो द्वार बंद हैं, उन्हें खोल दे, सूखे फव्वारे से जल को फिर से उछाल दे ताकि तेरी अर्थपूर्ण वाणी, तेरा सौंदर्य संसार को परिप्लावित कर दें।
८. वर दे कि प्राचुर्य और प्रताप हो, आभिजात्य और लालित्य हो,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सौम्यता और भव्यता हो, विविधता और सामर्थ्य हो क्योंकि प्रभु अभिव्यक्त होने की इच्छा करते हैं।

९. अभीतक जो द्वार बंद हैं उन्हें खोल दे, क्षितिज को विस्तृत कर, शक्ति को स्थापित कर, हमारी सत्ताओं को एकत्रित कर और हमें अपने दिव्य परमानंद में भाग लेने योग्य बना ताकि हम सब मनुष्यों को उसमें हिस्सा दिलवा सकें।

१०. हे मधुर स्वामी, रूपांतरकारी सम्राट्, सारी असावधानियों का, सारी आलसी निष्क्रियता का अंत कर दे; हमारी सारी ऊर्जाओं को एक साथ बांध दे, उन्हें अपराजेय, अप्रतिरोध्य इच्छा में बदल दे।

११. वर दे कि हम आंतरिक और बाह्य बाधाओं पर विजयी हों, अंतिम कठिनाइयों को जीत लें। तेरी ओर उठती हुई एक भी प्रबल और सहृदय प्रार्थना व्यर्थ नहीं जाती।

१२. हे दिव्य स्वामी, इस अंधव्यवस्था पर अपने प्रकाश को पड़ने दे और उसमें से नयी सृष्टि को उत्पन्न कर।

१३. जिसकी अभी तैयारियां चल रही हैं उसे चरितार्थ कर और नयी मानवता की सृष्टि कर जो तेरे नये और उत्कृष्ट विधान की संपूर्ण अभिव्यक्ति हो।

१४. हमारी प्रेरक शक्ति को कुछ भी न रोक पायेगा, हमारे प्रयासों को कोई न रोक पायेगा और सारी आशाओं और क्रियाओं को तुझपर रखकर, तेरी परम इच्छा के प्रति अपने पूर्ण समर्पण में सशक्त रहते हुए हम विजय की ओर कूच करेंगे।

१५. प्रभु, तू सर्वशक्तिमान् है, योद्धा बनकर विजय प्राप्त कर। तेरा प्रेम हमारे हृदय का सम्राट् बने और तेरा ज्ञान कभी हमारे विचारों को न छोड़े।

१६. हमें असमर्थता और अंधकार में मत छोड़ दे, हर सीमा को तोड़ दे, प्रत्येक जंजीर को छिन्न-भिन्न कर दे, हर भ्रम को दूर कर। हमारी अभीप्सा तेरी ओर आवेगपूर्ण प्रार्थना में ऊपर उठ रही है।

१७. मेरी सत्ता अधिक सौंदर्य, अधिक प्रकाश, अधिक ज्ञान, अधिक प्रेम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के लिये अभीप्सा करती है; एक शब्द में तेरे साथ अधिक सचेतन, सतत संपर्क के लिये अभीप्सा करती है।

१८. मुझे अपने चरणों में रहने दे, मुझे अपने हृदय में पिघलने दे और अपने अंदर अदृश्य हो जाने दे। अपने परम आनंद में मुझे मिट जाने दे या फिर मुझे अपना सेवक बनने दे।

१९. अपने राज्य का फिर से राजा बन जा; पृथ्वी को उस बोझिल भार से मुक्त कर जो उसे कुचल रहा है। उसको अपनी निष्क्रिय, अज्ञानमय और अंधकारपूर्ण दुर्भावना के भार से मुक्त कर।

२०. प्रभु, हम तेरे सामने इसलिये हैं कि तेरी इच्छा पूर्ण हो, हमारे विचारों से समस्त बाधाओं, शंकाओं, सारी दुर्बलताओं और सीमाओं को दूर कर, उन सबको हटा जो हमारे ज्ञान पर पर्दा डालते हैं और हमारी समझ को धुंधला कर देते हैं।

२१. मुझे प्यास है तेरी चेतना की, मुझे प्यास है तेरे साथ संपूर्ण ऐक्य पाने की, वह भौतिक क्रियाओं से निष्क्रिय होने और पलायन करने के लिये नहीं बल्कि तेरी इच्छा को पूर्ण, निरपेक्ष रूप में चरितार्थ करने के लिये है।

२२. ओ मेरे दिव्य प्रभु, मेरे अर्घ्य को अस्वीकार न करना। अर्पण करने की परिपूर्णता और अभिव्यक्ति की पूर्णता में मुझे पूरी तरह अपना बन जाने के योग्य बना।

२३. हे नाथ, अर्घ्य को स्वीकारो, हमारी पुकार का उत्तर दो; आओ।

२४. हे प्रभु, मेरी पुकार का प्रत्युत्तर दो, मेरी सत्ता की अयोग्यता और सीमाओं के बावजूद मेरे अर्पण को स्वीकार करो; पधारो।

२५. नव जीवनदात्री धाराएं अधिक और हमेशा अधिक हितकारी लहरों में धरती पर उतरें। रूपांतरित करो, प्रकाश दो।

२६. हमें शांत प्रसन्नता में सुन्न बनकर रहने मत दे। जबतक तेरे नवीन और परम प्रेम की अभिव्यक्ति न हो तबतक हमें विश्राम न करना चाहिये।

२७. मैं पूर्ण समर्पण और सबसे संपूर्ण विश्वास में प्रतीक्षा करती हूं। तेरी वाणी मुझे तेरी राह पर ले चलती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२८. हे प्रभु, तेरी इच्छा ही चले। तेरा कार्य चरितार्थ हो। हमारी भक्ति को अधिक शक्तिमान् बना, हमारे समर्पण को बढ़ा, हमारे पथ पर प्रकाश डाल।

२९. हम तुझे परम गुरु के रूप में अपने अंदर स्थापित करते हैं ताकि तू समस्त पृथ्वी का परम गुरु बन जाये।

३०. यह अंधकार इतना सघन है कि केवल तू ही उसे दूर कर सकता है। अपने-आपको प्रकट कर ताकि तेरा कार्य संपूर्ण हो।

३१. हे प्रभु, मुझे योद्धा का सर्वांगीण हृदय दे और तेरी विजय निश्चित है। "किसी भी कीमत पर विजय प्राप्त कर" यही हमारा आदर्श वाक्य होना चाहिये।

—*—

दूसरों की त्रुटियों के बारे में बोलना निश्चय ही बहुत बुरा है; हर एक की अपनी-अपनी त्रुटियां होती हैं और उनके बारे में सोचते रहने से निश्चय ही उन्हें ठीक करने में सहायता नहीं मिलती।

*

*जबतक तुम कुछ के **पक्ष** में और कुछ के **विपक्ष** में हो तबतक तुम अनिवार्य रूप से **सत्य के बाहर** हो।*

*

कोई क्या कर रहा है या क्या नहीं कर रहा, इसके बारे में गप्पें लगाना गलत है।

—माताजी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्तरपाड़ा भाषण

[अलीपुर जेल से छूटने के बाद श्रीअरविंद का पहला महत्त्वपूर्ण भाषण उत्तरपाड़ा में हुआ था। इसमें उन्होंने अपने जेल-जीवन का आध्यात्मिक अनुभव सुनाया और साथ ही देश को सच्ची राष्ट्रीयता का संदेश दिया। इसमें उन्होंने बताया है कि सच्चा हिंदू धर्म, सच्चा सनातन धर्म क्या है और आज के संसार को उसकी क्यों जरूरत है! उनका यह भाषण उनके जीवन में एक नये मोड़ का परिचय देता है।

इस भाषण के बाद ही हम श्रीअरविंद की बंगला में लिखी हुई "कारा-काहिनी" का अनुवाद दे रहे हैं।

इस अनुवाद में जहांतक हो सका हमने श्रीअरविंद की मूल बंगला के साथ-साथ चलने की कोशिश की है। —सं०]

जब मुझे आपकी सभा के इस वार्षिक अधिवेशन में बोलने के लिये कहा गया, तो मैंने यही सोचा था कि आज के लिये जो विषय चुना गया है उसीपर, अर्थात् हिंदू धर्म पर कुछ कहूंगा। मैं नहीं जानता कि उस इच्छा को मैं पूरा कर सकूंगा या नहीं; क्योंकि जैसे ही मैं यहां आकर बैठा मेरे मन में एक संदेश आया और यह संदेश आपको और सारे भारत राष्ट्र को सुनाना है। यह वाणी मुझे पहले-पहल जेल में सुनायी दी थी और उसे अपने देशवासियों को सुनाने के लिये मैं जेल से बाहर आया हूं।

पिछली बार जब मैं यहां आया था उसे एक वर्ष से ऊपर हो चुका है। उस बार मैं अकेला न था; तब मेरे साथ ही बैठे थे राष्ट्रीयता के एक परम शक्तिमान् दूत। उन दिनों वे उस एकांतवास से लौटकर आये थे जहां उन्हें भगवान् ने इसलिये भेजा था कि वे अपनी कालकोठरी की शांति और निर्जनता में उस वाणी को सुन सकें जो उन्हें सुनानी थी। उस समय आप सैंकड़ों की संख्या में उन्हींका स्वागत करने आये थे। आज वे हमसे बहुत दूर हैं, वे हमसे हजारों मील के फासले पर हैं। दूसरे लोग भी, जिन्हें मैं अपने साथ काम करते हुए पाता था, आज अनुपस्थित हैं। देश पर जो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तूफान आया था उसने उन्हें दूर-दूर बिखेर दिया है। इस बार एक वर्ष का समय निर्जनवास में बिताकर आया हूं और अब बाहर आकर देखता हूं कि सब कुछ बदल गया है। जो सदा मेरे साथ बैठते थे, जो सदा मेरे काम में सहयोग दिया करते थे, आज बर्मा में कैद हैं, दूसरे उत्तर में नजरबंद होकर सड़ रहे हैं। जब मैं बाहर आया तो मैंने अपने चारों ओर देखा, जिनसे सलाह और प्रेरणा पाने का अभ्यास था उन्हें खोजा। वे मुझे नहीं मिले। इतना ही नहीं, जब मैं जेल गया था तो सारा देश वंदे मातरम् की ध्वनि से गूंज रहा था, वह एक राष्ट्र बनने की आशा से जीवित था। यह उन करोड़ों मनुष्यों की आशा थी जो गिरी हुई दशा से अभी-अभी ऊपर उठे थे। जब मैं जेल से बाहर आया तो मैंने इस ध्वनि को सुनने की कोशिश की, किंतु इसके स्थान पर निस्तब्धता थी। देश में सन्नाटा था और लोग हक्के-बक्के से दिखायी दिये; क्योंकि जहां पहले हमारे सामने भविष्य की कल्पना से भरा ईश्वर का उज्ज्वल स्वर्ग था वहां हमारे सिर पर धूसर आकाश दिखायी दिया जिससे मानवीय वज्र और बिजली की वर्षा हो रही थी। किसीको यह न दिखायी देता था कि किस ओर चलना चाहिये, चारों ओर से यही प्रश्न उठ रहा था "अब क्या करें? हम क्या कर सकते हैं?" मुझे भी पता न था कि अब क्या किया जा सकता है। लेकिन एक बात मैं जानता था, ईश्वर की जिस महान् शक्ति ने उस ध्वनि को जगाया था, उस आशा का संचार किया था उसी शक्ति ने यह सन्नाटा भेजा है। जो ईश्वर उस कोलाहल और आंदोलन में थे, वे ही इस विश्राम और निस्तब्धता में भी हैं। ईश्वर ने इसे भेजा है ताकि राष्ट्र क्षणभर के लिये रुककर अपने अंदर खोजे और जाने कि उनकी इच्छा क्या है। इस निस्तब्धता से मैं निरुत्साहित नहीं हुआ हूं, क्योंकि कारागार में इस निस्तब्धता के साथ मेरा परिचय हो चुका है और मैं जानता हूं कि मैंने एक वर्ष की लंबी कैद के विश्राम और निस्तब्धता में ही यह पाठ पढ़ा है। जब विपिनचंद्र पाल जेल से बाहर आये तो वह एक संदेश लेकर आये थे और वह प्रेरणा से मिला हुआ संदेश था। उन्होंने यहां जो वक्तृता दी थी वह मुझे याद है। उस वक्तृता का मर्म और अभिप्राय उतना राजनीतिक नहीं था जितना धार्मिक था। उन्होंने उस समय जेल के अंदर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मिली हुई अनुभूति की, हम सबके अंदर जो भगवान् हैं, राष्ट्र के अंदर जो परमेश्वर हैं उनकी बात की थी। अपने बाद के व्याख्यानों में भी उन्होंने कहा था कि इस आंदोलन में जो शक्ति काम कर रही है वह सामान्य शक्ति की अपेक्षा महान् है और इसका हेतु भी साधारण हेतु से कहीं बढ़कर है। आज मैं भी आपसे फिर मिल रहा हूं, मैं भी जेल से बाहर आया हूं और इस बार भी आप ही, इस उत्तरपाड़ा के निवासी ही, मेरा सबसे पहले स्वागत कर रहे हैं। किसी राजनीतिक सभा में नहीं, बल्कि उस समिति की सभा में जिसका उद्देश्य है धर्म की रक्षा। जो संदेश विपिनचंद्र पाल ने बक्सर जेल में पाया था वही भगवान् ने मुझे अलीपुर में दिया। वह ज्ञान भगवान् ने मुझे बारह महीने के कारावास में दिन-प्रतिदिन दिया और आदेश दिया है कि अब जब मैं जेल से बाहर आ गया हूं तो आपसे उसकी बात करूं।

मैं जानता था कि मैं जेल से बाहर निकल आऊंगा। यह वर्षभर की नजरबंदी केवल एक वर्ष के एकांतवास और प्रशिक्षण के लिये थी। भला किसीके लिये यह कैसे संभव होता कि वह मुझे जेल में उतने दिनों से अधिक रोक रखता जितने दिन भगवान् का हेतु सिद्ध करने के लिये आवश्यक थे? भगवान् ने कहने के लिये एक संदेश दिया है और करने के लिये एक काम, मैं यह जानता था कि जबतक यह संदेश सुना नहीं दिया जाता तबतक कोई मानवशक्ति मुझे चुप नहीं कर सकती, जबतक वह काम नहीं हो जाता तबतक कोई मानव शक्ति भगवान् के यंत्र को रोक नहीं सकती, फिर वह यंत्र चाहे कितना ही दुर्बल, कितना ही कमजोर क्यों न हो। अब जब कि मैं बाहर आ गया हूं, इन चंद मिनटों में ही मुझे एक ऐसी वाणी सुझायी गयी है जिसे व्यक्त करने की मेरी कोई इच्छा न थी। मेरे मन में जो कुछ था उसे भगवान् ने निकालकर फेंक दिया है और मैं जो कुछ बोल रहा हूं वह एक प्रेरणा के वश होकर, बाध्य होकर बोल रहा हूं।

जब मुझे गिरफ़ार करके जल्दी-जल्दी लालबाजार की हाजत में पहुंचाया गया तो मेरी श्रद्धा क्षणभर के लिये डिग गयी थी, क्योंकि उस समय मैं भगवान् की इच्छा के मर्म को नहीं जान पाया था। इसलिये मैं क्षणभर के लिये विचलित हो गया और अपने हृदय में भगवान् को पुकारकर कहने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगा, "यह क्या हुआ ? मेरा यह विश्वास था कि मुझे अपने देशवासियों के लिये कोई विशेष काम करना है और जबतक वह काम पूरा नहीं हो जाता तबतक तुम मेरी रक्षा करोगे। तब फिर मैं यहां क्यों हूं और वह भी इस प्रकार के अभियोग में ?" एक दिन बीता, दो दिन बीते, तीन दिन बीत गये, तब मेरे अंदर से एक आवाज आयी, "ठहरो और देखो कि क्या होता है।" तब मैं शांत हो गया और प्रतीक्षा करने लगा। मैं लाल बाजार थाने से अलीपुर जेल में ले जाया गया और वहां मुझे एक महीने के लिये मनुष्यों से दूर एक निर्जन कालकोठरी में रखा गया। वहां मैं अपने अंदर विद्यमान भगवान् की वाणी सुनने के लिये, यह जानने के लिये कि वे मुझसे क्या कहना चाहते हैं और यह सीखने के लिये कि मुझे क्या करना होगा, रात-दिन प्रतीक्षा करने लगा। इस एकांतवास में मुझे सबसे पहली अनुभूति हुई, पहली शिक्षा मिली। उस समय मुझे याद आया कि गिरफ़्तारी से एक महीना या उससे भी कुछ अधिक पहले मुझे यह आदेश मिला था कि मैं अपने सारे कर्म छोड़कर एकांत में चला जाऊं और अपने अंदर खोज करूं ताकि भगवान् के साथ अधिक संपर्क में आ सकूं। मैं दुर्बल था और उस आदेश को स्वीकार न कर सका। मुझे अपना कार्य बहुत प्रिय था और हृदय में इस बात का अभिमान था कि यदि मैं न रहूं तो इस काम को धक्का पहुंचेगा, इतना ही नहीं शायद असफल और बंद भी हो जायेगा; इसलिये मुझे काम नहीं छोड़ना चाहिये। ऐसा बोध हुआ कि वे मुझसे फिर बोले और उन्होंने कहा कि, "जिन बंधनों को तोड़ने की शक्ति तुममें नहीं थी उन्हें तुम्हारे लिये मैंने तोड़ दिया है क्योंकि मेरी यह इच्छा नहीं है और न थी ही कि वे कार्य जारी रहें। तुम्हारे करने के लिये मैंने दूसरा काम चुना है और उसीके लिये मैं तुम्हें यहां लाया हूं ताकि मैं तुम्हें वह बात सिखा दूं जिसे तुम स्वयं नहीं सीख सके और तुम्हें अपने काम के लिये तैयार कर लूं।" इसके बाद भगवान् ने मेरे हाथों में गीता रख दी। मेरे अंदर उनकी शक्ति प्रवेश कर गयी और मैं गीता की साधना करने में समर्थ हुआ। मुझे केवल बुद्धि द्वारा ही नहीं, बल्कि अनुभूति द्वारा यह जानना पड़ा कि श्री कृष्ण की अर्जुन से क्या मांग थी और वे उन लोगों से क्या मांगते हैं जो उनका कार्य करने की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इच्छा रखते हैं, अर्थात् घृणा और कामना-वासना से मुक्त होना होगा, फल की इच्छा न रखकर भगवान् के लिये कर्म करना होगा, अपनी इच्छा का त्याग करना होगा और निश्चेष्ट तथा सच्चा यंत्र बनकर भगवान् के हाथों में रहना होगा, ऊंच और नीच, मित्र और शत्रु, सफलता और विफलता के प्रति समदृष्टि रखनी होगी और यह सब होते हुए भी उनके कार्य में कोई अवहेलना न आने पाये। मैंने यह जाना कि हिंदू धर्म का मतलब क्या है। बहुधा हम हिंदू धर्म, सनातन धर्म की बातें करते हैं, किंतु वास्तव में हममें से कम ही लोग यह जानते हैं कि यह धर्म क्या है। दूसरे धर्म मुख्य रूप से विश्वास, व्रत, दीक्षा और मान्यता को महत्त्व देते हैं, किंतु सनातन धर्म तो स्वयं जीवन है, यह इतनी विश्वास करने की चीज नहीं है जितनी जीवन में उतारने की चीज है। यही वह धर्म है जिसका लालन-पालन मानव-जाति के कल्याण के लिये प्राचीन काल से इस प्रायद्वीप के एकांतवास में होता आ रहा है। यही धर्म देने के लिये भारत उठ रहा है। भारतवर्ष, दूसरे देशों की तरह, अपने लिये ही या मजबूत होकर दूसरों को कुचलने के लिये नहीं उठ रहा। वह उठ रहा है सारे संसार पर वह सनातन ज्योति डालने के लिये जो उसे सौंपी गयी है। भारत का जीवन सदा ही मानव-जाति के लिये रहा है, उसे अपने लिये नहीं बल्कि मानवजाति के लिये महान् होना है।

अतः भगवान् ने मुझे दूसरी वस्तु दिखायी—उन्होंने मुझे हिंदू धर्म के मूल सत्य का साक्षात्कार करा दिया। उन्होंने मेरे जेलरों के दिल को मेरी ओर मोड़ दिया, उन्होंने जेल के प्रधान अंग्रेज अधिकारी से कहा कि "ये कालकोठरी में बहुत कष्ट पा रहे हैं; इन्हें कम-से-कम सुबह-शाम आध-आध घंटा कोठरी के बाहर टहलने की आज्ञा दे दी जाये।" यह आज्ञा मिल गयी और जब मैं टहल रहा था तो भगवान् की शक्ति ने फिर मेरे अंदर प्रवेश किया। मैंने उस जेल की ओर दृष्टि डाली जो मुझे और लोगों से अलग किये हुए था। मैंने देखा कि अब मैं उसकी ऊंची दीवारों के अंदर बंद नहीं हूं; मुझे घेरे हुए थे वासुदेव। मैं अपनी कालकोठरी के सामने के पेड़ की शाखाओं के नीचे टहल रहा था, परंतु वहां पेड़ न था, मुझे प्रतीत हुआ कि वह वासुदेव हैं; मैंने देखा कि स्वयं श्री कृष्ण खड़े हैं और मेरे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ऊपर अपनी छाया किये हुए हैं। मैंने अपनी कालकोठरी के सींखचों की ओर देखा, उस जाली की ओर देखा जो दरवाजे का काम कर रही थी, वहां भी वासुदेव दिखायी दिये। स्वयं नारायण संतरी बनकर पहरा दे रहे थे। जब मैं उन मोटे कंबलों पर लेटा जो मुझे पलंग की जगह मिले थे तो मैंने यह अनुभव किया कि मेरे सखा और प्रेमी श्री कृष्ण मुझे अपनी बाहुओं में लिये हुए हैं। मुझे उन्होंने जो गहरी दृष्टि दी थी उसका यह पहला प्रयोग था। मैंने जेल के कैदियों—चोरों, हत्यारों और बदमाशों—को देखा और मुझे वासुदेव दिखायी पड़े, उन अंधेरे में पड़ी आत्माओं और बुरी तरह काम में लाये गये शरीरों में मुझे नारायण मिले। उन चोरों और डाकुओं में बहुत-से ऐसे थे जिन्होंने अपनी सहानुभूति और दया के द्वारा मुझे लज्जित कर दिया, इस विपरीत परिस्थिति में मानवता विजयी हुई थी। इनमेंसे एक आदमी को मैंने विशेष रूप से देखा जो मुझे एक संत मालूम हुआ। वह हमारे देश का एक किसान था जो लिखना-पढ़ना नहीं जानता था, जिसे डकैती के अभियोग में दस वर्ष का कठोर दंड मिला था। यह उनमें से एक व्यक्ति था जिन्हें हम वर्ग के मिथ्याभिमान में आकर "छोटो लोक" (नीच) कहा करते हैं। फिर एक बार भगवान् मुझसे बोले, उन्होंने कहा, "अपना कुछ थोड़ा-सा काम करने के लिये मैंने तुम्हें जिनके बीच भेजा है उन लोगों को देखो। जिस जाति को मैं ऊपर उठा रहा हूं उसका स्वरूप यही है और इसी कारण मैं उसे ऊपर उठा रहा हूं।"

जब छोटी अदालत में मुकदमा शुरू हुआ और हम लोग मजिस्ट्रेट के सामने खड़े किये गये तो वहां भी मेरी अंतर्दृष्टि मेरे साथ थी। भगवान् ने मुझसे कहा, "जब तुम जेल में डाले गये थे तो क्या तुम्हारा हृदय हताश नहीं हुआ था, क्या तुमने मुझे पुकारकर यह नहीं कहा था, कहां, तुम्हारी रक्षा कहां है ? लो, अब मजिस्ट्रेट की ओर देखो, सरकारी वकील की ओर देखो।" मैंने देखा कि अदालत की कुर्सी पर मजिस्ट्रेट नहीं, स्वयं वासुदेव, नारायण बैठे थे। अब मैंने सरकारी वकील की ओर देखा पर वहां कोई सरकारी वकील नहीं दिखायी दिया, वहां तो श्री कृष्ण बैठे थे, मेरे सखा, मेरे प्रेमी वहां बैठे मुस्करा रहे थे। उन्होंने कहा, "अब डरते हो ? मैं सभी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनुष्यों में विद्यमान हूं और उनके सभी कर्मों और शब्दों पर राज करता हूं। मेरा संरक्षण अब भी तुम्हारे साथ है और तुम्हें डरना नहीं चाहिये। तुम्हारे विरुद्ध जो यह मुकदमा चलाया गया है उसे मेरे हाथों में सौंप दो। यह तुम्हारे लिये नहीं है। मैं तुम्हें यहां मुकदमे के लिये नहीं बल्कि किसी और काम के लिये लाया हूं। यह तो मेरे काम का एक साधनमात्र है, इससे अधिक कुछ नहीं।" इसके बाद जब सेशन जज की अदालत में विचार आरंभ हुआ तो मैं अपने वकील के लिये ऐसी बहुत-सी हिदायतें लिखने लगा कि गवाही में मेरे विरुद्ध कही गयी बातों में से कौन-सी बातें गलत हैं और किन-किन पर गवाहों से जिरह की जा सकती है। तब एक ऐसी घटना घटी जिसकी मैं आशा नहीं करता था। मेरे मुकदमे की पैरवी के लिये जो प्रबंध किया गया था वह एकाएक बदल गया और मेरी सफाई के लिये एक दूसरे ही वकील खड़े हुए। वे अप्रत्याशित रूप से आ गये—वे मेरे एक मित्र थे, किंतु मैं नहीं जानता था कि वे आयेंगे। आप सभीने उनका नाम सुना है, जिन्होंने मन से सभी विचार निकाल बाहर किये और इस मुकदमे के सिवा सारी वकालत बंद कर दी, जिन्होंने महीनों लगातार आधी-आधी रात तक जगकर मुझे बचाने के लिये अपना स्वास्थ्य बिगाड़ लिया—वे हैं श्री चित्तरंजन दास। जब मैंने उन्हें देखा तो मुझे संतोष हुआ, फिर भी मैं समझता था कि हिदायत लिखना जरूरी है। इसके बाद यह विचार हटा दिया गया और मेरे अंदर से आवाज आयी, "यही आदमी है जो तुम्हारे पैरों के चारों ओर फैले जाल से तुम्हें बाहर निकालेगा। तुम इन कागजों को अलग धर दो। इन्हें तुम हिदायतें नहीं दोगे, मैं दूंगा।" उस समय से इस मुकदमे के संबंध में मैंने अपनी ओर से अपने वकील से एक शब्द भी नहीं कहा, कोई हिदायत नहीं दी और यदि कभी मुझसे कोई सवाल पूछा गया तो मैंने सदा यही देखा कि मेरे उत्तर से मुकदमे को कोई मदद नहीं मिली। मैंने मुकदमा उन्हें सौंप दिया और उन्होंने पूरी तरह उसे अपने हाथों में ले लिया, और उसका परिणाम आप जानते ही हैं। मैं सदा यह जानता था कि मेरे संबंध में भगवान् की क्या इच्छा है, क्योंकि मुझे बार-बार यह वाणी सुनायी पड़ती थी, मेरे अंदर से सदा यह आवाज आया करती थी, "मैं रास्ता दिखा रहा हूं, इसलिये डरो मत।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मैं तुम्हें जिस काम के लिये जेल में लाया हूं अपने उस काम की ओर मुड़ो और जब तुम जेल से बाहर निकलो तो यह याद रखना—कभी डरना मत, कभी हिचकिचाना मत। याद रखो, यह सब मैं कर रहा हूं, तुम या और कोई नहीं। अतः चाहे जितने बादल घिरें, चाहे जितने खतरे और दुःख-कष्ट आयें, कठिनाइयां हों, चाहे जितनी असंभवताएं आयें, कुछ भी असंभव नहीं है, कुछ भी कठिन नहीं है। मैं इस देश और इसके उत्थान में हूं, मैं वासुदेव हूं, मैं नारायण हूं। जो कुछ मेरी इच्छा होगी वही होगा, दूसरों की इच्छा से नहीं। मैं जिस चीज को लाना चाहता हूं उसे कोई मानव-शक्ति नहीं रोक सकती।"

इस बीच वे मुझे उस एकांत कालकोठरी से बाहर ले आये और मुझे उन लोगों के साथ रख दिया जिनपर मेरे साथ ही अभियोग चल रहा था। आज आपने मेरे आत्म-त्याग और देशप्रेम के बारे में बहुत कुछ कहा है। मैं जब से जेल से निकला हूं तब से इसी प्रकार की बातें सुनता आ रहा हूं, किंतु ऐसी बातें सुनने से मुझे लज्जा आती है, मेरे अंदर एक तरह की वेदना होती है। क्योंकि मैं अपनी दुर्बलता जानता हूं, मैं अपने दोष और त्रुटियों का शिकार हूं। मैं इन बातों के बारे में पहले भी अंधा न था और जब मेरे एकांतवास में, ये सब-की-सब मेरे विरुद्ध खड़ी हो गयीं तो मैंने इनका पूरी तरह अनुभव किया। तब मुझे मालूम हुआ कि मनुष्य के नाते मैं दुर्बलताओं का एक ढेर हूं, एक दोषभरा अपूर्ण यंत्र हूं, मुझमें ताकत तभी आती है जब कोई उच्चतर शक्ति मेरे अंदर आ जाये। अब मैं उन युवकों के बीच में आया और मैंने देखा कि उनमेंसे बहुतों में एक प्रचण्ड साहस और अपनेको मिटा देने की शक्ति है और उनकी तुलना में मैं कुछ भी नहीं हूं। इनमेंसे एक-दो ऐसे थे जो केवल बल और चरित्र में ही मुझसे बढ़कर नहीं थे—ऐसे तो बहुत थे—बल्कि मैं जिस बुद्धि की योग्यता का अभिमान रखता था, उसमें भी बढ़े हुए थे। भगवान् ने मुझसे फिर कहा, "यही वह युवक-दल, वह नवीन और बलवान् जाति है जो मेरे आदेश से ऊपर उठ रही है। ये तुमसे अधिक बड़े हैं। तुम्हें भय किस बात का है? यदि तुम इस काम से हट जाओ या सो जाओ तो भी काम पूरा होगा। कल तुम इस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काम से हटा दिये जाओ तो ये युवक तुम्हारे काम को उठा लेंगे और उसे इतने प्रभावशाली ढंग से करेंगे जैसे तुमने भी नहीं किया। तुम्हें इस देश को एक वाणी सुनाने के लिये मुझसे कुछ बल मिला है, यह वाणी इस जाति को ऊपर उठाने में सहायता देगी।" यह वह दूसरी बात थी जो भगवान् ने मुझसे कही।

इसके बाद अचानक कुछ हुआ और क्षणभर में मुझे एक कालकोठरी के एकांतवास में पहुंचा दिया गया। इस एकांतवास में मेरे अंदर क्या हुआ यह कहने की प्रेरणा नहीं हो रही, बस इतना काफी है कि वहां दिन-प्रतिदिन भगवान् ने अपने चमत्कार दिखाये और मुझे हिंदू धर्म के वास्तविक सत्य का साक्षात्कार कराया। पहले मेरे अंदर अनेक प्रकार के संदेह थे। मेरा लालन-पालन इंग्लैंड में विदेशी भावों और सर्वथा विदेशी वातावरण में हुआ था। एक समय मैं हिंदू धर्म की बहुत-सी बातों को मात्र कल्पना समझता था, यह समझता था कि इसमें बहुत कुछ केवल स्वप्न, भ्रम या माया है। परंतु अब दिन-प्रतिदिन मैंने हिंदू धर्म के सत्य को, अपने मन में, अपने प्राण में और अपने शरीर में अनुभव किया। वे मेरे लिये जीवित अनुभव हो गये और मेरे सामने ऐसी सब बातें प्रकट होने लगीं जिनके बारे में भौतिक विज्ञान कोई व्याख्या नहीं दे सकता। जब मैं पहले-पहल भगवान् के पास गया तो पूरी तरह भक्ति-भाव के साथ नहीं गया था, पूरी तरह ज्ञानी के भाव से भी नहीं गया था। बहुत दिन हुए, स्वदेशी-आंदोलन शुरू होने से पहले और मेरे सार्वजनिक काम में घुसने से कुछ वर्ष पहले बड़ौदा में मैं उनकी ओर बढ़ा था।

उन दिनों जब मैं भगवान् की ओर बढ़ा तो मुझे उनपर जीवंत श्रद्धा न थी। उस समय मेरे अंदर अज्ञेयवादी था, नास्तिक था, संदेहवादी था और मुझे पूरी तरह विश्वास न था कि भगवान् हैं भी। मैं उनकी उपस्थिति का अनुभव नहीं करता था। फिर भी कोई चीज थी जिसने मुझे वेद के सत्य की ओर, गीता के सत्य की ओर, हिंदूधर्म के सत्य की ओर आकर्षित किया। मुझे लगा कि इस योग में कहीं पर कोई महाशक्तिशाली सत्य अवश्य है, वेदांत पर आधारित इस धर्म में कोई परम बलशाली सत्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अवश्य है। इसलिये जब मैं योग की ओर मुड़ा और योगाभ्यास करके यह जानने का संकल्प किया कि मेरी बात सच्ची है या नहीं तो मैंने उसे इस भाव और इस प्रार्थना से शुरू किया। मैंने कहा, "हे भगवान्, यदि तुम हो तो तुम मेरे हृदय की बात जानते हो। तुम जानते हो कि मैं मुक्ति नहीं मांगता, मैं ऐसी कोई चीज नहीं मांगता जो दूसरे मांगा करते हैं। मैं केवल इस जाति को ऊपर उठाने की शक्ति मांगता हूं, मैं केवल यह मांगता हूं कि मुझे इस देश के लोगों के लिये, जिनसे मैं प्यार करता हूं, जीने और कर्म करने की आज्ञा मिले और यह प्रार्थना करता हूं कि मैं अपना जीवन उनके लिये लगा सकूं।" मैंने योगसिद्धि पाने के लिये बहुत दिनोंतक प्रयास किया और अंत में किसी हदतक मुझे मिली भी, पर जिस बात के लिये मेरी बहुत अधिक इच्छा थी उसके संबंध में मुझे संतोष नहीं हुआ। तब उस जेल के, उस कालकोठरी के एकांतवास में मैंने उसके लिये फिर से प्रार्थना की। मैंने कहा, "मुझे अपना आदेश दो, मैं नहीं जानता कि कौन-सा काम करूं और कैसे करूं। मुझे एक संदेश दो।" इस योगयुक्त अवस्था में मुझे दो संदेश मिले। पहला यह था, "मैंने तुम्हें एक काम सौंपा है और वह है इस जाति के उत्थान में सहायता देना। शीघ्र ही वह समय आयेगा जब तुम्हें जेल के बाहर जाना होगा; क्योंकि मैं नहीं चाहता कि इस बार तुम्हें सजा हो या तुम अपना समय, औरों की तरह अपने देश के लिये कष्ट सहते हुए बिताओ। मैंने तुम्हें काम के लिये बुलाया है और यही वह आदेश है जो तुमने मांगा था। मैं तुम्हें आदेश देता हूं कि जाओ और काम करो।" दूसरा संदेश आया, वह इस प्रकार था, "इस एक वर्ष के एकांतवास में तुम्हें कुछ दिखाया गया है, वह चीज दिखायी गयी है जिसके बारे में तुम्हें संदेह था, वह है हिंदूधर्म का सत्य। इसी धर्म को मैं संसार के सामने उठा रहा हूं, यही वह धर्म है जिसे मैंने ऋषि-मुनियों और अवतारों के द्वारा विकसित किया और पूर्ण बनाया है और अब यह धर्म अन्य जातियों में मेरा काम करने के लिये बढ़ रहा है। मैं अपनी वाणी का प्रसार करने के लिये इस जाति को उठा रहा हूं। यही वह सनातन धर्म है जिसे तुम पहले सचमुच नहीं जानते थे, किंतु जिसे अब मैंने तुम्हारे सामने प्रकट कर दिया है। तुम्हारे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अंदर जो नास्तिकता थी, जो संदेह था उनका उत्तर दे दिया गया है, क्योंकि मैंने अंदर और बाहर स्थूल और सूक्ष्म, सभी प्रमाण दे दिये हैं और उनसे तुम्हें संतोष हो गया है। जब तुम बाहर निकलो तो सदा अपनी जाति को यही वाणी सुनाना कि वे सनातन धर्म के लिये उठ रहे हैं, वे अपने लिये नहीं बल्कि संसार के लिये उठ रहे हैं। मैं उन्हें संसार की सेवा के लिये स्वतंत्रता दे रहा हूं। अतएव जब यह कहा जाता है कि भारतवर्ष ऊपर उठेगा तो उसका अर्थ होता है सनातन धर्म ऊपर उठेगा। जब कहा जाता है कि भारतवर्ष महान् होगा तो उसका अर्थ होता है सनातन धर्म महान् होगा। जब कहा जाता है कि भारतवर्ष बढ़ेगा और फैलेगा तो इसका अर्थ होता है सनातन धर्म बढ़ेगा और संसार पर छा जायेगा। धर्म के लिये और धर्म के द्वारा ही भारत का अस्तित्व है। धर्म की महिमा बढ़ाने का अर्थ है देश की महिमा बढ़ाना। मैंने तुम्हें दिखा दिया है कि मैं सब जगह हूं, सभी मनुष्यों और सभी वस्तुओं में हूं, मैं इस आंदोलन में हूं और केवल उन्हींके अंदर कार्य नहीं कर रहा जो देश के लिये मेहनत कर रहे हैं बल्कि उनके अंदर भी जो उनका विरोध करते और मार्ग में रोड़े अटकाते हैं। मैं प्रत्येक व्यक्ति के अंदर काम कर रहा हूं और मनुष्य चाहे जो कुछ सोचें या करें, पर वे मेरे हेतु की सहायता करने के अतिरिक्त और कुछ नहीं कर सकते। वे भी मेरा ही काम कर रहे हैं; वे मेरे शत्रु नहीं बल्कि मेरे यंत्र हैं। तुम यह जाने बिना भी कि तुम किस ओर जा रहे हो, अपनी सारी क्रियाओं के द्वारा आगे बढ़ रहे हो। तुम करना चाहते हो कुछ और पर कर बैठते हो कुछ और। तुम एक परिणाम को लक्ष्य बनाते हो और तुम्हारे प्रयास ऐसे हो जाते हैं जो उससे भिन्न या उल्टे परिणाम लाते हैं। शक्ति का आविर्भाव हुआ है और उसने लोगों में प्रवेश किया है। मैं एक जमाने से इस उत्थान की तैयारी करता आ रहा हूं और अब वह समय आ गया है। अब मैं ही इसे पूर्णता की ओर ले जाऊंगा।''

यही वह वाणी है जो मुझे आपको सुनानी है। आपकी सभा का नाम है "धर्मरक्षिणी सभा''। अस्तु, धर्म का संरक्षण, दुनिया के सामने हिंदूधर्म का संरक्षण और उत्थान—यही कार्य हमारे सामने है। परंतु हिंदूधर्म क्या है?

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह धर्म क्या है जिसे हम सनातन धर्म कहते हैं? वह हिंदूधर्म इसी नाते है कि हिंदूजाति ने इसको रखा है, क्योंकि समुद्र और हिमालय से घिरे हुए इस प्रायद्वीप के एकांतवास में यह फला-फूला है, क्योंकि इस पवित्र और प्राचीन भूमि पर इसकी युगोंतक रक्षा करने का भार आर्यजाति को सौंपा गया था। परंतु यह धर्म किसी एक देश की सीमा से घिरा नहीं है, यह संसार के किसी सीमित भाग के साथ विशेष रूप से और सदा के लिये बंधा नहीं है। जिसे हम हिंदूधर्म कहते हैं वह वास्तव में सनातन धर्म है, क्योंकि यही वह विश्वव्यापी धर्म है जो दूसरे सभी धर्मों का आलिंगन करता है। यदि कोई धर्म विश्वव्यापी न हो तो वह सनातन भी नहीं हो सकता। कोई संकुचित धर्म, सांप्रदायिक धर्म, अनुदार धर्म कुछ काल और किसी मर्यादित हेतु के लिये ही रह सकता है। यही एक ऐसा धर्म है जो अपने अंदर सायंस के आविष्कारों और दर्शनशास्त्र के चिंतनों का पूर्वाभास देकर और उन्हें अपने अंदर मिलाकर जड़वाद पर विजय प्राप्त कर सकता है। यही एक धर्म है जो मानवजाति के दिल में यह बात बिठा देता है कि भगवान् हमारे निकट हैं, यह उन सभी साधनों को अपने अंदर ले लेता है जिनके द्वारा मनुष्य भगवान् के पास पहुंच सकते हैं। यही एक ऐसा धर्म है जो प्रत्येक क्षण, सभी धर्मों के माने हुए इस सत्य पर जोर देता है कि भगवान् हर आदमी और हर चीज में हैं तथा हम उन्हींमें चलते-फिरते हैं और उन्हींमें हम निवास करते हैं। यही एक ऐसा धर्म है जो इस सत्य को केवल समझने और उसपर विश्वास करने में ही हमारा सहायक नहीं होता बल्कि अपनी सत्ता के अंग-अंग में इसका अनुभव करने में भी हमारी मदद करता है। यही एक धर्म है जो संसार को दिखा देता है कि संसार क्या है—वासुदेव की लीला। यही एक ऐसा धर्म है जो हमें यह बताता है कि इस लीला में हम अपनी भूमिका अच्छी-से-अच्छी तरह कैसे निभा सकते हैं, जो हमें यह दिखाता है कि इसके सूक्ष्म-से-सूक्ष्म नियम क्या हैं, इसके महान्-से-महान् विधान कौन-से हैं। यही एक ऐसा धर्म है जो जीवन की छोटी-से-छोटी बात को भी धर्म से अलग नहीं करता, जो यह जानता है कि अमरता क्या है और जिसने मृत्यु की वास्तविकता को हमारे अंदर से एकदम निकाल दिया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यही वह वाणी है जो आपको सुनाने के लिये आज मेरी जबान पर रख दी गयी थी। मैं जो कुछ कहना चाहता था वह तो मुझसे अलग कर दिया गया है और जो मुझे कहने के लिये दिया गया है उससे अधिक मेरे पास कहने के लिये कुछ नहीं है। जो वाणी मेरे अंदर रख दी गयी थी केवल वही आपको सुना सकता हूं। अब वह समाप्त हो चुकी है। पहले भी एक बार जब मेरे अंदर यही शक्ति काम कर रही थी तो मैंने आपसे कहा था कि यह आंदोलन राजनीतिक आंदोलन नहीं है और राष्ट्रीयता राजनीति नहीं, बल्कि एक धर्म है, एक विश्वास है, एक निष्ठा है। उसी बात को आज फिर मैं दोहराता हूं, किंतु आज मैं उसे दूसरे ही रूप में उपस्थित कर रहा हूं। आज मैं यह नहीं कहता कि राष्ट्रीयता एक विश्वास है, एक धर्म है, एक निष्ठा है, बल्कि मैं यह कहता हूं कि सनातन धर्म ही हमारे लिये राष्ट्रीयता है। यह हिंदूजाति सनातन धर्म को लेकर ही पैदा हुई है, उसीको लेकर चलती है और उसीको लेकर पनपती है। जब सनातन धर्म की हानि होती है तब इस जाति की भी अवनति होती है और यदि सनातन धर्म का विनाश संभव होता तो सनातन धर्म के साथ-ही-साथ इस जाति का विनाश हो जाता। सनातन धर्म ही है राष्ट्रीयता। यही वह संदेश है जो मुझे आपको सुनाना है।

—*—

युवा होने का मतलब है हमें जो बनना चाहिये उसके लिये हम जो हैं उसे छोड़ने के लिये हमेशा तैयार रहना।

*

युवा होने का मतलब है यह कभी न स्वीकारना कि कोई चीज सुधारी नहीं जा सकती।

—माताजी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रीअरविंद के साथ बातचीत

(प्राणिक शक्ति, गुरु की सहायता, भोजन इत्यादि के बारे में)

२८-८-१९२६

(चमत्कारी शक्तियों के बारे में बात चली, एक आदमी के अंदर कुछ शक्तियां थीं। वह बीमार पड़ा तो शक्तियां गायब हो गयीं।)

श्रीअरविन्द—इससे पता चलता है कि शक्तियां किसी प्राणिक स्रोत से आयी थीं। ये शक्तियां प्रायः योगी के रास्ते में बड़ी बाधाएं होती हैं। योगी, जब उसकी मरजी हो, इनका उपयोग नहीं कर सकता। थोड़ी-बहुत शक्ति इकट्ठी होती है और वह क्रिया करती है। इससे शक्ति क्षीण हो जाती है। 'तपःक्षय' का प्रयोग इस बात को स्पष्ट करता है।

इन शक्तियों का भद्दा उपयोग किया जाता है, उदाहरण के लिये आत्म-प्रदर्शन, चेले इकट्ठे करने या निचले प्रकार के अहंकार को संतुष्ट करने के लिये इनका दुरुपयोग किया जाता है, योगी इनका उचित समय पर अंतर्भास पाने पर उपयोग करता है। इन शक्तियों का भद्दा उपयोग इसलिये वर्जित है क्योंकि यह चेतना के निचले स्तर की चीज है और योगी को नीचे खींच लेती है।

शिष्य—क्या प्राणिक स्तर की ये शक्तियां विरोधी शक्तियों से आती हैं?

श्रीअरविन्द—यह जरूरी नहीं है परंतु प्रायः ऐसा ही होता है।

शिष्य—ऐसी शक्तियां पाने की वृत्ति योग में बाधक होती है?

श्रीअरविन्द—हां, जब उन्हें उन्हीके लिये, प्राणिक संतोष के लिये पाने की कोशिश की जाये लेकिन वे योग की प्रगति में अपने-आप भी आ सकती हैं।

श्रीअरविन्द—जब कोई योगी शिष्य स्वीकार करता है तो इससे उसकी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शक्तियों का बहुत क्षय होता है, शिष्य गुरु के मार्ग में बाधाएं खड़ी करते हैं और उसे उन्हें पार करना पड़ता है।

शिष्य—क्या शिष्य किसी दिशा में गुरु की सहायता नहीं करते?

श्रीअरविन्द—शिष्य सहायक नहीं होते। सहायक वह होगा जिसमें योगी को कुछ ऐसी चीज प्राप्त हो जो उसके पास नहीं है।

शिष्य ऐसी बाधाएं खड़ी करके सहायता करते हैं जिन्हें पार करने के लिये गुरु को शक्ति का प्रयोग करना पड़ता है।

शिष्य—यह तो नकारात्मक सहायता हुई, क्या कोई सकारात्मक सहायता भी हो सकती है?

श्रीअरविन्द—हां, नकारात्मक और सकारात्मक दोनों तरह की सहायता हो सकती हैं। हमारे योग में यदि शिष्य के अंदर सच्ची अभीप्सा हो तो यह बड़ी सहायता होती है। हम अतिमानसिक शक्ति को उतारने की कोशिश कर रहे हैं और इससे एक सतह बन जाती है।

अगर शिष्य बहुत ग्रहणशील हो तो गुरु को बहुत शक्ति नहीं खर्च करनी पड़ती, तब गुरु से शक्ति का स्वाभाविक प्रवाह होता है जो उसकी अपनी गति का एक अंग होता है। अन्यथा गुरु को विशेष जोर लगाना पड़ता है और इससे गुरु की शक्ति का बहुत व्यय हो जाता है।

*

हमें सभी बने-बनाये संस्कारों और विचारों को अस्वीकार कर देना चाहिये। उन सब विचारों को, जो हमें अपनी माता से या पिछले जीवन से मिले हैं। हमारी पसंद और नापसंद केवल आदत की बातें हैं। इन्हें जीता जा सकता है। जो चीज तुम्हें वीभत्स मालूम होती है उसमें से भी तुम्हें कुछ ग्रहण करना सीखना होगा। मेरे अंदर कोई पसंद या नापसंद नहीं है। मैं हर चीज का रस ले सकता हूं।

शिष्य—लंबे हरे केले खाने से मुझे पित्त हो जाता है और खांसी आती है। 'क' का कहना है कि मेरे मन का विचार ही पित्त को पैदा करता है,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुझे उसे निकाल फेंकना चाहिये। क्या स्वयं केले के अंदर कोई रोग पैदा करनेवाली चीज है या मेरे मन के संस्कार ही यह बीमारी लाते हैं?

श्रीअरविन्द—दोनों बातें ठीक हैं। एक चीज है द्रव्यगुण और दूसरी चीज है हमारे अंदर भरे हुए संस्कार। लेकिन केवल मन से इन संस्कारों को निकाल देना तुम्हें मुक्त नहीं कर देता। तुम्हें अपने प्राण में भी उस विचार के होने का भान होना चाहिये और उसे वहां से भी निकाल बाहर करना चाहिये। इसी तरह प्राण में प्रबल पसंद और नापसंद होती है। मैंने उसे भौतिक प्राण तक से निकाल दिया है और अब मैं कोई भी भोजन ले सकता हूं चाहे वह बहुत मसालेदार, चटपटा, अच्छा या बुरा कैसा भी क्यों न हो। अब मैं हर भोजन में से उसका सार या उसका रस ले सकता हूं। लेकिन अब भी मेरे शरीर के अणुओं में अमुक चीजों के लिये कामना और दूसरों का विरोध बाकी है। अगर उसे भी अलग किया जा सके तब वह संभव होगा जिसकी तुम बात कर रहे हो। यानी विष का प्याला भी मेरे ऊपर कोई असर न करेगा। हर चीज के लिये एक ही नियम नहीं है। हमारे ऊपर, हमारे वातावरण के विचार का भी असर होता है। उदाहरण के लिये हमारे वातावरण में, निम्नतर पशु जगत् तक में विष के मारक होने के बारे में विश्वास बैठा हुआ है। हर चीज का व्यवहार करते समय तुम्हें उसकी प्रकृति, उस सारे खेल का और अन्य बहुत सारी चीजों का सामना करने की अपनी शक्ति को देखना होगा। इस सबके बाद ही तुम उसपर विजय पाने की आशा कर सकते हो। तुम अस्वीकार करने की भावना से नहीं, बल्कि एक सामयिक उपाय के रूप में अमुक प्रकार के भोजन से दूर रह सकते हो, जबतक कि तुम्हारे सारे शरीर का पुनर्गठन न हो जाये और तुम्हारे अंदर इतनी शक्ति न आ जाये कि तुम उससे अप्रभावित रहो।

—*—

विश्राम करने की इच्छा से बढ़कर दूसरी कोई खतरनाक चीज नहीं।
—माताजी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक युवा साधक का

श्रीअरविन्द और माताजी के साथ पत्रव्यवहार

[यह युवा साधक आश्रम में प्रवेश पानेवाले पहले बच्चों में से एक था। यह १९३० में तेरह वर्ष की आयु में आया था। दो वर्ष बाद उसने माताजी और श्रीअरविन्द को पत्र लिखना शुरू किया। वह साधारणतः फ्रेंच में और कभी-कभी श्रीअरविन्द को अंग्रेजी में भी लिखता था। श्रीअरविन्द अंग्रेजी में उत्तर देते थे और माताजी फ्रेंच में।

इस पत्र-व्यवहार के समय यह साधक १७ वर्ष का था।]

क्या यह सच नहीं है कि मनुष्य को अपनी सारी अशुद्धता जाननी चाहिये ?

उन्हें जानना निश्चय ही जरूरी है, लेकिन लगातार उन्हींपर अपना ध्यान लगाये रखना अच्छा नहीं है; यह चीज उन्हें हटाने में मदद नहीं देती—बल्कि इसके विपरीत होता है।

२१ मई १९३४

—माताजी

'क' ने मुझसे पूछा, "वह क्या है ?" मैंने जवाब दिया, "माताजी ने मेरे जन्मदिन के लिये कुछ लिखकर दिया है।" "क्या मैं देख सकती हूं ?" मैंने उसे पढ़ने के लिये दे दिया। मेरा ख्याल है मैंने ठीक नहीं किया।

निश्चय ही जब मैं ऐसे किसी अवसर के लिये प्रार्थना देती हूं तो मैं उसमें अमुक शक्ति को एकाग्र क़रती हूं। प्रार्थना दूसरों को दिखाकर तुम इस शक्ति के प्रभाव के बहुत बड़े हिस्से को नष्ट कर देते हो।

२२ मई १९३४

—माताजी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरे ख्याल से आपके पत्रों में भी कुछ शक्ति होती है, इसलिये ज्यादा अच्छा है कि उन्हें किसीको न दिखाया जाये।

हां, और सिद्धांत रूप में दूसरों के बारे में प्रश्नों के उत्तर देना पसंद नहीं करती। योग में हर एक को स्वयं अपनी प्रगति करनी चाहिये—दूसरों की प्रगति से उसका कोई वास्ता नहीं।
२३ मई १९३४ —माताजी

क्या यह ज्यादा अच्छा नहीं है कि दूसरे के बारे में हमारे जो विचार हैं उन्हें आपसे कह दिया जाये ताकि आप उन्हें ठीक कर सकें? क्योंकि अगर वे विचार गलत हैं तो बहुत खतरनाक होते हैं।

निश्चय ही, और यथार्थ रूप से सबसे अच्छी चीज है लोगों के बारे में सभी विचारों से दूर रहना। इस तरीके से गलत विचारों के होने का कोई खतरा ही नहीं रहता।

निश्चय ही, सबसे अच्छी चीज है दूसरों के बारे में कोई विचार न होना, लेकिन मेरे ख्याल से यह तबतक संभव नहीं है जबतक मन शुद्ध न हो जाये।

हां, यह बिलकुल संभव है अगर मन किसी ज्यादा उपयोगी चीज में रस ले और उसमें तल्लीन रहे।
२३ मई १९३४ —माताजी

तब दूसरों के बारे में मेरे जो विचार हैं उन्हें त्याग देना और उनके बारे में मानसिक रचनाएं बनाना बंद करना ज्यादा अच्छा है?

हां, यह ज्यादा अच्छा है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मेरे लिये 'ब' से मिलना अच्छा है क्या ?

यह इसपर निर्भर है कि उसके साथ मिलने से तुम्हारा क्या मतलब है—अगर यह कुछ शब्दों के आदान-प्रदान, कभी-कदास कोई सामान्य काम के लिये मिलना हो तो कोई हर्ज नहीं। लेकिन लंबी बातचीत से बचना चाहिये।

२४ मई १९३४ —माताजी

दूसरों की हंसी उड़ाने में आदमी को क्या मजा आता है ?

सचमुच, मेरी समझ में नहीं आता कि दूसरों के भावों को चोट पहुंचाकर मनुष्य को क्या मजा आता है ? यह ठीक चीज नहीं है और यह कितनी मिथ्याभिमानी मूर्खता दिखलाती है।

२४ मई १९३४ —माताजी

क्या मेरा आपको यह लिखना उचित था : "जब 'क्ष' जैसा व्यक्ति जो अपने-आपको बहुत अनुशासनपूर्ण समझता है वह यूं कहता है तो उसका अनुशासन कहां होता है ?" क्या मेरे अंतिम शब्दों में अतिशयोक्ति नहीं है ?

उनमें शायद अतिशयोक्ति न हो। बहरहाल ये बहुत दयापूर्ण नहीं हैं और चेतना के विस्तार और प्रबोधन की ओर जाने के लिये दयालुता (एक) अनिवार्य कदम है।

२५ मई १९३४ —माताजी

मधुर मां ! प्राण भगवान् के लिये कब उत्कंठित होगा ?

उसका आवेग चैत्य प्रेम में बदल जाये :
उसका क्रोध समचित्तता में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसकी ईर्ष्या विश्वास में
उसका दंभ विनम्रता में
उसकी स्वार्थपरता आत्मोत्सर्ग में बदल जाये।

२६ मई १९३४ —माताजी

'ब' दोपहर के खाने के बाद मेरे साथ घर जाया करता था, लेकिन कल वह मेरे बिना चला गया। उसने मुझसे कहा कि इसका कोई कारण न था। क्या यह सच है?

यह बहुत संभव है कि वह बिना किसी कारण ही चला गया। आदमी कितनी चीजें बिना किसी सचेतन अभिप्राय के करता है।

२८ मई १९३४ —माताजी

आपने लिखा है कि आदमी कितनी चीजें बिना किसी सचेतन अभिप्राय के करता है। लेकिन यह चीज सचमुच वांछनीय है क्या? मेरे ख्याल से किसी भी चीज को भली-भांति सोचे बिना करना ठीक नहीं है।

निश्चित रूप से यह अधिक वांछनीय है।

२८ मई १९३४ —माताजी

एक सपना। रात का समय था, मैं एक कविता लिख रहा था। अचानक 'क' आयी, उसने मेज पर रखे मिट्टी के तेल के लैंप को बुझा दिया। कुछ देर बाद उसने बत्ती भी बुझा दी। इस सपने का कोई अर्थ है क्या?

अगर इस सपने का कोई अर्थ है (जो निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता) तो इसका मतलब यह होगा कि किसी विरोधी शक्ति ने तुम्हारी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चेतना में 'क' के जैसा रूप ले लिया। बत्ती का बुझना हमेंशा चेतना के अचेतना में उतरने का प्रतीक होता है।

मधुर मां, मैं जानना चाहूंगा कि मेरी चेतना बाहर की ओर क्यों जा रही है और यह भी कि मेरी अभीप्सा कम क्यों हो गयी है ?

संभवतः तुम्हारी प्रकृति का अभीतक अपरिवर्तित कोई भाग ऊपर सतह पर उठ आया है और वही इस समय सक्रिय है।

२९ मई १९३४ —माताजी

वाणी और आंतरिक संपर्क

७ अप्रैल १९५४

"जब विचार वाणी में अभिव्यक्त किया जाता है तो ध्वनि के स्पंदन में इतनी अधिक शक्ति होती है कि वह अत्यधिक स्थूल पदार्थ का भी विचार के साथ संपर्क स्थापित कर देती है, इस प्रकार उसे एक ठोस और प्रभावकारी वास्तविक रूप प्रदान करती है। इसीलिये तुम्हें वस्तुओं या व्यक्तियों के विषय में कुछ बुरा नहीं कहना चाहिये अथवा न कोई ऐसी बात शब्दों में कहनी चाहिये जो संसार में भागवत चरितार्थता के विकास का खंडन करती हो। यह एक पूर्णतया सामान्य नियम है। तो भी इस विषय में एक अपवाद है। तुम्हें किसी भी वस्तु की तबतक आलोचना नहीं करनी चाहिये जबतक कि तुममें उसके साथ-साथ एक ऐसी चेतन शक्ति और सक्रिय संकल्प-शक्ति भी विद्यमान न हो जो उन गतिविधियों या वस्तुओं को विलीन या परिवर्तित कर सके जिनकी तुम आलोचना करते हो। क्योंकि यह चेतन शक्ति और सक्रिय संकल्प-शक्ति बुरे स्पंदन का प्रतिरोध करने तथा उसे अस्वीकार करने की संभावना को 'जड़पदार्थ' में प्रवेश

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कराने की सामर्थ्य रखती है और अंत में उस स्पंदन को भी ठीक रूप दे देती है ताकि उसे भौतिक स्तर पर अभिव्यक्त होते रहने से रोके।

"यह कार्य बिना किसी संकट या नुकसान के केवल वही कर सकता है जो विज्ञानमय क्षेत्रों में विचरता है तथा जिसकी मानसिक क्षमताओं में आत्मा का प्रकाश और सत्य की शक्ति विद्यमान रहती है।"

"विज्ञानमय क्षेत्र" कौन-सा है?

यह अतिमानस के बारे में बोलने का दूसरा ढंग है। विज्ञानमय—इसका अर्थ है 'ज्ञान', किंतु सच्चा ज्ञान। यह अतिमानसिक क्षेत्र का ज्ञान-पक्ष है।

"... तुम ऐसा अभ्यास डालो कि सदा अपने-आपको शब्दों में न उंडेलते रहो, और तुम देखोगे कि धीरे-धीरे तुममें और दूसरों में एक आंतरिक बोध स्थापित हो गया है; तब तुम कम-से-कम बोलकर या बिना बोले ही एक-दूसरे से संपर्क रख सकोगे।"

क्या प्रत्येक अवस्था में, स्थूल वस्तुओं में भी, दो व्यक्तियों के बीच एक आंतरिक समझ स्थापित की जा सकती है?

हूं! ... और तब? तुम क्या जानना चाहते हो?

यह आंतरिक समझ स्थापित की जा सकती है या नहीं?

हां, शब्द केवल दो मनों के बीच संपर्क के साधन हैं। उनका एकमात्र औचित्य यही है। किंतु यदि मन इतना निर्मल एवं सशक्त हो कि वह शब्दों का प्रयोग किये बिना संपर्क कर सके तो वह यह कार्य कहीं अधिक अच्छा, अधिक स्पष्ट और यथार्थ और शुद्ध रूप में कर सकता है। और तब शब्दों की आवश्यकता नहीं पड़ती।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बिलकुल भौतिक विषयों में भी नहीं ?

हां, तुम एक परीक्षण कर सकते हो। उदाहरणार्थ, जब दो व्यक्ति अपने मन एकलय कर लें और उनमेंसे एक सोचे : "इस वस्तु को वहां नहीं, यहां होना चाहिये," तो दूसरा स्वभावतया ही उठकर उस वस्तु को खोजता है और यथास्थान रख देता है। वह काफी स्पष्टता से उस बात को समझ जाता है, उसे कुछ कहने की आवश्यकता नहीं पड़ती। अथवा पहला सोचता है : "अब बाहर जाने का समय है" या "मुझे अमुक वस्तु की आवश्यकता है," तो दूसरा यह सब पूर्णतया ठीक ढंग से समझ जायेगा, उसे कहने की आवश्यकता नहीं होती। इस अवस्थातक पहुंचने से पहले एक बात प्रायः होती है—मैं उन लोगों की बात कर रही हूं जो अपने ऊपर नियंत्रण रखते हैं और चेतन होते हैं, इकट्ठे रहते हैं—एक उस प्रश्न का उत्तर देता है जो दूसरे ने मुंह से नहीं निकाला है। वह उसके मन में था, और दूसरा उत्तर देता है : "हां, यह बात ऐसी है; न, वह काम अभी नहीं हुआ।" दूसरे व्यक्ति ने कुछ पूछा नहीं था पर उसने सुन लिया था, समझ लिया था, उसे संदेश मिल गया था। ऐसा प्रायः होता है, होता है न ? और फिर, जिन वस्तुओं के संबंध में शब्दों के कहने की आवश्यकता भी पड़े, वहां भी दस शब्दों के स्थान पर एक ही शब्द बोलना काफी होता है, और बाकी बात स्वयं समझ में आ जाती है, जान ली जाती है। और यह सीधा आदान-प्रदान एक ऐसी अनुभूति है जो बड़ी सरलता से प्राप्त की जा सकती है। यदि तुम किसी नये व्यक्ति से बात करते हो और उसके साथ तुम्हारा मानसिक संपर्क अधिक नहीं है, तो वह चाहे उन्हीं शब्दों का प्रयोग करे जिन्हें तुम भी एक विशेष अर्थ में प्रयुक्त करते हो, तो भी तुम उसे बिलकुल समझ नहीं पाते, मानों उसकी भाषा बूझते ही नहीं। पर कुछ देर बाद, जब तुम उससे कई बार मिल लेते हो, उसके साथ मानसिक रूप में एकलय हो जाते हो, तो तुम एक-दूसरे को समझना शुरू कर देते हो।

वास्तव में, शब्द किसी ऐसी वस्तु के वाहकमात्र हैं जो शब्दों से परे है तथा जो उन लोगों के लिये बिना शब्दों के प्रकट की जा सकती है जिनके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पास काफी विकसित एवं यथार्थ यंत्र है। जब व्यक्ति सचमुच विचार के क्षेत्र में होता है, तो शब्द अर्थ का महत्त्व कम कर देते हैं। वे उसका महत्त्व तो कम करते ही हैं, उसे संकुचित और ससीम भी बना देते हैं, साथ ही उसकी शक्ति भी क्षीण कर देते हैं। जो विचार सीधा प्रक्षिप्त किया जाता है वह उस विचार से, जो शब्दों द्वारा व्यक्त किया जाता है, कहीं अधिक शक्ति रखता है। शब्द उसे छोटा, सीमाबद्ध, कठोर कर देता है, उसकी नमनीयता और सच्ची शक्ति हर लेता है, वस्तुतः उसका जीवन ही सोख लेता है। चूंकि मनुष्य के यंत्र ठीक ढंग से व्यवस्थित नहीं होते, हम बिना शब्दों के तार-संचार नहीं कर सकते। यदि यंत्र का सुर ठीक मिला होता, तो सारे दिन में हमें दस शब्द बोलने की भी आवश्यकता न पड़ती, और फिर भी सब समय हमारी बात समझ ली जाती।

(श्रीमातृवाणी, खंड ६ से)

सद्भावना

क्या सद्भावना के स्पंदनों से हम संसार की सहायता कर सकते हैं?

शुभ कामनाओं से हम बहुत-सी चीजें बदल सकते हैं, पर वह बहुत ही शुद्ध और अमिश्रित सद्भावना होनी चाहिये। यह तो बिलकुल स्पष्ट है कि यदि संसार में एक विचार, एक पूर्ण रूप से शुद्ध प्रार्थना भेजी जाये तो वह अपना काम करती है। लेकिन जब यह पूर्णतः शुद्ध और सच्चा विचार आदमी के दिमाग में से गुजरता है तो शुद्ध कहां रहता है? वह नीचे की ओर उतरता जाता है। यदि अंतःचेतना और ज्ञान के प्रयत्न से तुम सचमुच अपने अंदर किसी कामना पर विजय पा सको, अर्थात्, उसे विघटित कर सको, उसे जड़ से निकाल सको और यदि आंतरिक सद्भावना के द्वारा, चेतना, प्रकाश, ज्ञान के द्वारा कामना को विघटित कर सको तो सबसे पहले अपने अंदर व्यक्तिगत रूप से, कामना की पूर्ति पर जितने प्रसन्न होते उससे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सैंकड़ों गुने अधिक प्रसन्न होगे और फिर इसका अद्भुत परिणाम होगा। इसकी प्रतिक्रिया सारे संसार में होगी जिसका तुम्हें कोई अंदाज नहीं। वह फैलेगी। तुमने जो स्पंदन पैदा किये हैं वे फैलते जायेंगे। ये चीजें बरफ के गोले की तरह बढ़ती जाती हैं। तुम अपने चरित्र में जो विजय प्राप्त करते हो, वह चाहे कितनी ही छोटी क्यों न हो, वह ऐसी है जो सारे संसार में प्राप्त की जा सकती है। अभी मेरा आशय इसीसे था। वे सब चीजें जो आंतरिक परिवर्तन के बिना केवल बाहर से की जाती हैं—जैसे विद्यालय, हस्पताल वगैरा बनवाना—वे मिथ्याभिमान के द्वारा, बड़े होने की भावना के द्वारा की जाती हैं जब कि ये छोटी अलक्षित चीजें जिन्हें अपने अंदर जीता जाता है, अनंतगुनी बड़ी विजय होती है, भले उनके परिणाम छिपे रहें। तुम्हारे जीवन की प्रत्येक गतिविधि जो मिथ्या और सत्य-विरोधी है, वह भागवत जीवन का निषेध है। तुम्हारे छोटे प्रयासों के यथेष्ट परिणाम होते हैं, तुम्हें उन्हें जानने का संतोष भी नहीं मिलता, परंतु वे सच्चे होते हैं और उनका प्रभाव ठीक निर्वैयक्तिक और सामान्य होता है।

अगर तुम सचमुच कुछ भला करना चाहते हो तो सबसे अच्छी चीज जो तुम कर सकते हो वह यह है कि एक के बाद एक पूरी सचाई के साथ अपने अंदर विजय प्राप्त करो। इस तरह तुम संसार के लिये अपनी क्षमता के अनुसार अधिक-से-अधिक कर सकोगे।

क्या हमारी जीत सारे संसार के लिये काम करेगी?

वह सारे संसार को बदल नहीं देगी। क्योंकि तुम्हारी विजय संसार के लिये बहुत छोटी है। इस प्रकार की लखोखा विजयों की जरूरत है। संसार की तुलना में तुम्हारी विजय बहुत ही छोटी है। लेकिन वह और चीजों के साथ मिल जाती है . . .। यह कहा जा सकता है कि यह संसार में एक चीज करने की **क्षमता** लाने के समान है। लेकिन इसके प्रभावपूर्ण ढंग से काम करने के लिये कभी-कभी सैंकड़ों वर्ष लग जाते हैं। यह अनुपात का सवाल है। तुम इसका परीक्षण कर देखो, (और यह कहीं अधिक कठिन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है), उन लोगों के साथ कर देखो जो तुम्हारे चारों ओर हैं। इस बारे में तुम्हें पूरी तरह निष्कपट होना चाहिये कि तुम जो कर रहे हो वह परिणाम के विचार से नहीं, बल्कि विजय प्राप्त करने की दृष्टि से कर रहे हो। यदि तुम जीत जाओ तो निश्चित रूप से उसका प्रभाव तुम्हारे चारों ओर के लोगों पर होगा। किंतु यदि इसमें सौदेबाजी की भावना मिल जाये, अगर तुम यह चीज **इसलिये** करो कि तुम वह दूसरा परिणाम चाहते हो : "मैं अपनी त्रुटियों पर विजय पाना चाहता हूं, लेकिन उस व्यक्ति को भी ऐसी ही विजय प्राप्त करनी चाहिये," तब यह चीज काम न करेगी। यह तो व्यापारी की वृत्ति है : "मैं यह देता हूं, पर वह लूंगा ?" इससे सब कुछ बिगड़ जाता है। यह न तो सचाई या निष्कपटता है, न शुद्धि है। यह सौदेबाजी है।

तुम्हारी सचाई में, तुम्हारे उद्देश्य-हेतु में, तुम्हारी अभीप्सा में और कोई चीज नहीं मिलनी चाहिये। तुम भगवान् के प्रेम के लिये, सत्य के लिये, पूर्णता के लिये बिना किसी हेतु, बिना किसी विचार के चीजें करते हो। और इसीसे परिणाम आते हैं।

(श्रीमातृवाणी, खंड ५ से)

ऋषिवर बोले :

जीवन में प्रेम

आज की बैठक का विषय तो निश्चित ही था। ऋषिवर ने स्वस्तिवाचन के बाद कहना शुरू किया, "लड़का हो या लड़की, हर एक के जीवन में प्रेम की कठिन समस्या जरूर पैदा होती है। बचपन की देहली पार करते ही प्रायः सभीको, चाहे जल्दी या देर में, प्रेम का सामना करना पड़ता है और उसके कारण मानव हृदय में जो नाजुक स्थिति पैदा होती है उसकी एक तीव्र अनुभूति होती है। बालक उसे समझने की कोशिश करता है और यह जानना चाहता है कि इस परिस्थिति में उसे क्या करना चाहिये। इस विषय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में बड़े भी लगभग उसी नौका में होते हैं। वे भी उन शक्तियों के हाथ में खिलौना होते हैं जो उनपर कब्जा किये होती हैं। वे परिस्थिति के साथ समझौता करके ऐसी तरकीब निकाल लेते हैं जिसमें उनके तथा समाज के जीवन में खलबली न मचे।

"प्रेम की समस्या ऐसी अजीब है कि इसे हल करने के लिये कहीं से सहायता नहीं मिलती। बालक को अपनी पाठ्य पुस्तकों में से इसके बारे में कोई जानकारी नहीं मिलती। वह अपने माता-पिता, अध्यापक या किसी और बड़े से इस बारे में बात करते हुए सकुचाता है और अगर बात छेड़ भी दे तो उनके उत्तर और भी ज्यादा मुश्किल पैदा करनेवाले होते हैं। वे या तो चुप रहने के लिये डांट देते हैं या उससे कहा जाता है कि अभी से इन बातों में मत पड़ो, बड़े होकर अपने-आप समझ जाओगे—लेकिन यह सच्ची बात नहीं है। बड़े इस विषय में बच्चों से अधिक नहीं जानते। हां, उनके लिये यह विषय अपना नयापन खो देता है इसलिये उनकी जिज्ञासा मर-सी जाती है। और अगर बालक अपने साथियों के साथ इस विषय में बात करे तो . . . शायद इस विषय में कुछ न कहना ही ज्यादा अच्छा है।

"कभी-कभी मां-बाप बालक की सहायता करने की कोशिश करते हैं परंतु उनके उत्तर बालक की समझ से बाहर होते हैं और प्रायः उसका समाधान करने की जगह नये प्रश्न पैदा कर देते हैं। उसका एक ऐसी दुनिया से परिचय होता है जिसे वह देख तो नहीं पाता पर उसका प्रभाव छिपा नहीं रहता। ऐसा लगता है मानों उसे एक नीरव शक्ति से काम पड़ा है जिसे कोई नहीं समझता, जिसपर कोई अधिकार नहीं कर पाता फिर भी उसके साथ रहना है और उसके साथ समझौता करना है। उसके चारों ओर के लोग उसकी सहायता करने की जगह उसे दबाने या छिपाने की कोशिश करते हैं।"

बैठक के सभी सदस्यों ने ऋषिवर की हां में हां मिलायी, ऋषिवर ने देखा सबके चेहरे अब भी प्रश्नचिह्न से बने हैं तो बात जारी रखते हुए वे बोले, "बालक जैसे-जैसे बड़ा होता है वह देखता है कि प्रेम की समस्या संसार की सबसे बड़ी समस्याओं में से है। वह देखता है कि बड़े-बड़े

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेखकों और कवियों ने उसके माधुर्य की प्रशंसा में या उसकी उग्रता की निंदा में या उसकी तरंगों के बखान में पुलंदे-के-पुलंदे लिख मारे हैं। उन चीजों को पढ़ाते हुए उसके अध्यापकों को इस विषय में काफी गाल बजाना होता है परंतु वस्तुतः उसे समझनेवाला कोई नहीं मिलता।

"फिर बालक को कुछ ऐसी पुस्तकें मिल जाती हैं जो इस विषय पर प्रकाश डालने का दावा करती हैं। उससे कहा जाता है कि वह अपने स्वप्नों का विश्लेषण करे और अपनी उपचेतना के द्वार खोले। परिणामस्वरूप, उसके आगे एक गंदी नाली खुल जाती है। उसके द्वारा आये हुए नये समाधान और नये प्रश्न और नयी क़ठिनाइयों को जन्म देते हैं। अंत में बालक को यह स्वीकार करना पड़ता है कि प्रत्येक जीवित प्राणी की तरह उसमें भी एक गुप्त शक्ति काम कर रही है जिसका आरंभ और विकास शायद जानवरों में हुआ था, फिर भी उसे इसके परिणामों को दुनिया की आंखों से छिपाये रखना चाहिये।" अपनी बात समाप्त होते ही वे वंदना की ओर मुड़ते हुए बोले, "हां, तो वन्दना, माताजी और श्रीअरविन्द इस बारे में क्या कहते हैं?"

वंदना ने आगे बढ़ते हुए कहा, "जहांतक मैंने समझा है माताजी तथा श्रीअरविन्द ने अपने ग्रंथों में अनेक स्थानों पर प्रेम का उल्लेख किया है। उन्होंने बताया है कि प्रेम भगवान् का ही एक रूप है और इस विश्व के आधारभूत तत्त्वों में से है। हां, अभीतक वह भली-भांति अभिव्यक्त नहीं हुआ है और उसका अधिकांश परदे के पीछे से ही काम कर रहा है, इसलिये हम यह नहीं जान पाते कि उसने सृष्टि के अंदर हर व्यक्ति के विकास में कितना भाग लिया है।

"वे कहते हैं कि भगवान् एक होते हुए भी अनेक हैं। 'एक' और 'बहु' एक साथ हैं। वे सृष्टि में चेतना के भिन्न-भिन्न केन्द्रों द्वारा अभिव्यक्त होते हैं। प्रेम के बिना ये केंद्र हमेशा अलग ही रहेंगे, उनमेंसे प्रत्येक किसी दूसरे के साथ किसी प्रकार का संबंध रखे बिना विकसित होगा। प्रेम के बिना उसके अंदर भगवान् के साथ तादात्म्य तथा अन्य सब केंद्रों के साथ आंतरिक संबंध का भाव न पैदा होगा। भगवान् का वह रूप जिसने चिर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विरोध को पाटने का काम अपने ऊपर लिया है, प्रेम कहाता है; विकास में प्रेम ही वह छिपी हुई शक्ति है जो इस महान् कार्य को पूरा करेगी। ध्यान से देखनेवाला (बच्चे इसे प्रायः ध्यान से देखा करते हैं) हर जगह प्रेम की अभिव्यक्ति पायेगा। इसके प्रारंभिक रूप कीड़े-पतंगों में तथा निम्न श्रेणी के जानवरों में दिखायी देंगे। लैंगिक वृत्ति, सहकार वृत्ति (जैसे चींटियों या मधुमक्खियों में) आदि के रूप में वह नैसर्गिक या यांत्रिक रूप में दिखायी देता है। भूख भी एक प्रकार से प्रेम की ही एक अभिव्यक्ति है। व्यक्ति अपने प्रेमपात्र को आत्मसात् करने के लिये हड़प जाता है।

"हम भौतिक शास्त्र में पढ़ते हैं कि पदार्थ के निर्माण के लिये आकर्षण-शक्ति (विकर्षण-शक्ति इसीका दूसरा रूप है) अनिवार्य है। अणु और परमाणु अपने अंदर स्थित अमुक शक्ति के कारण ही अपनी स्थिति में रह सकते हैं। माताजी ने कहा है कि पत्थरों में भी सचेतन प्रेम विद्यमान है।"

सभी आंखों को अपनी ओर प्रश्नसूचक दृष्टि से ताकते हुए देखकर वंदना ने अपनी बात जारी रखी, "उच्चतर श्रेणी के प्राणियों में जैसे पक्षियों में या स्तनपायी जानवरों में प्रेम यांत्रिक या नैसर्गिक रूप से उठकर जरा ऊंचा रूप लेता है। उसमें विकासशील आत्मिक अंश भी आ जाता है। इसके प्रकट रूप हैं बच्चों का पालन-पोषण, अपने साथी के प्रति वफादारी, अपने झुंड के प्रति लगाव आदि; उच्चतर प्राणियों में और मनुष्य में इस दिशा में बहुत अधिक भेद नहीं है। अपने मानसिक विकास और चिंतन-शक्ति के कारण ही मनुष्य प्राणियों से अधिक भिन्न हो जाता है।

"प्रकृति ने अपना उद्देश्य पूरा करने के लिये ही लैंगिक भेद की रचना की है। यह प्रजनन के लिये अनिवार्य नहीं है क्योंकि हम सृष्टि में अलैंगिक और उभयलैंगिक जातियां भी पाते हैं। यह भेद उसके काम के लिये उपयोगी अवश्य है।

"हममें से हर व्यक्ति धरती पर बार-बार जन्म ले-लेकर विकास कर रहा है। हमारे विकास का उद्देश्य है तत्त्वतः भगवान् के साथ तादात्म्य पाना या एकता का अनुभव करना, साथ ही दूसरों के साथ प्रेम के संबंध को भी जान सकना। तब दूसरों का विरोध करने की जगह हममें से हर एक दूसरे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के साथ अपने स्वाभाविक लगाव का अनुभव कर सकेगा। विकास के साथ चेतना भी हमेशा विकसित होती रहती है और एक दिन आता है जब व्यक्ति दूसरों में भी उसी चेतना को देख सकता है जो उसके अपने अंदर है। वह दूसरों को भी अपनी ही आत्मा के अनेक रूप मानता है, वह अपने-आपको दूसरों में और सबमें देख पाता है। और अंत में वह उपनिषद् के इस रहस्य को समझ सकता है जिसमें कहा गया है—**आत्मनस्तु कामाय सर्वं प्रियं भवति**—सब कुछ इसीलिये प्रिय होता है कि उसमें भी अपनी आत्मा का ही प्रसार है। इस बात को आदमी तभी समझ सकता है जब वह हर जगह, हर एक में उस 'एक' को देख सके।'' इतना कहकर वंदना चुप हो गयी।

अभी सब एक-दूसरे की ओर देख ही रहे थे कि अब कौन बोलता है कि एक लड़की ने जिसे कोई हाथी का कान कहता है तो कोई सूई, कोई छटंकी कहता है तो कोई कुछ और, कहा, ''ऋषिवर, मैंने भी इस विषय में काफी सोचा-विचारा और पढ़ा है, उसके आधार पर एक लेख भी लिखा है, अनुमति हो तो सुनाऊं'' और अनुमति की प्रतीक्षा किये बिना ही सुनाना शुरू कर दिया, ''संसार के सभी कष्टों और द्वंद्वों का अंत करने की क्षमता केवल प्रेम में है। इन सब कष्टों के पीछे भगवान् से पृथकता छिपी है और प्रेम ही इस पृथकता को दूर कर सकता है। लेकिन भगवान् के लिये प्रेम ऐसा होना चाहिये जिसमें और किसी के लिये कोई स्थान न हो। प्रेम देना जानता है। भगवान् के लिये प्रेम हो तो अपने-आपको पूरी तरह भगवान् को देना होगा, यह नहीं कि हम रुपये में पच्चीस पैसे परिवार को, पच्चीस पैसे इष्ट मित्रों को, पच्चीस पैसे अन्य समस्त अधिकारियों को देने के बाद बाकी के पच्चीस पैसे बड़ी उदारता से भगवान् के अर्पण कर दें। भगवान् के लिये सच्चा प्रेम तभी जागता है जब अन्य सब बंधन कट जाते हैं। भगवान् के साथ पूर्ण ऐक्य का अनुभव करने पर ही हम सृष्टि का रहस्य जान सकते हैं और उसकी सार्थकता सिद्ध कर सकते हैं।

''भागवत प्रेम अपनी पूर्ण घनता के साथ, अपनी पूरी शक्ति के साथ सारे वातावरण में व्याप्त है परंतु हम अपने-आपको अपने बनाये हुए ढांचे में बंद किये रहते हैं इसलिये उसे देख नहीं पाते। हममें से बहुतों के जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में कभी-कभी ऐसे क्षण आते हैं जब उन्हें अचानक इस प्रेम की अनुभूति होती है और चिल्ला उठते हैं, ओह, भगवान् ने बड़ी कृपा की। भगवान् की कृपा तो हमेशा ही रहती है, हम कभी-कदास ही उसे अपने अंदर प्रवेश करने देते हैं। हम द्वार न खोलें तो प्रकाश कैसे आ सकता है? हम अपने अंधकार के कवच को एक सुई के बराबर भी छेद दें तो उसमेंसे भगवान् का प्रेम और उनकी चेतना का प्रवेश हो जाता है। हम जितना अधिक खुल सकें उतनी अधिक अनुभूति हो सकती है। भागवत करुणा, भागवत ज्योति आदि सभी हर समय हमारे चारों ओर हमारे खुलने की प्रतीक्षा में रहती हैं लेकिन हम अपनी ही क्षुद्रताओं में, अपने क्षुद्र अहं में इतने व्यस्त होते हैं कि भगवान् के लिये जगह नहीं होती, समय नहीं होता।

"हमारा यह दृष्टिकोण हर बात में गड़बड़ पैदा करता है। हम विश्व को देखते हैं तो अपने-आपको उसका केंद्र मानकर। वह कहानी तो सभी ने सुनी होगी कि एक आदमी नदी में डूबा जा रहा था। वह चिल्लाया: 'बचाओ, बचाओ, मुझे बचाओ, जगत् डूबा जा रहा है। लोगों ने उसे नदी से बाहर निकाला और जगत् के डूबने का रहस्य पूछा। उसने कहा आप मुआ तो जग मुआ।' बात कुछ ऐसी ही है। मनुष्य सारे जगत् में अपने-आपको ही देखता है और किसीके लिये जगह ही नहीं रहती।

"यदि हम सच्ची दृष्टि प्राप्त करना चाहें, वस्तुओं को उनके ठीक परिपार्श्व में देखना चाहें तो उसका सबसे सच्चा उपाय है अपने-आपको भगवान् के अर्पण कर देना। यह कहना जितना सरल है करना उतना सरल नहीं है। लोग इसके बारे में इतने हल्के ढंग से बात करते हैं मानों यह भी एक गुलाबजामुन या रसगुल्ला गटक लेना हो। लोग बड़ी आसानी से कह देते हैं हमने तो अपने-आपको भगवान् के हाथों में सौंप दिया, अब जो कुछ होता है उसीकी मरजी से होता है। परंतु दस में से नौ उदाहरणों में यह अपने-आपको धोखा देना और अपनी जिम्मेदारी से बचना होता है। लेकिन यदि हम सचाई के साथ अपने-आपको देने का प्रयास करें तो कम-से-कम कुछ हदतक तो अपने क्षुद्र अहं में से निकलना ही पड़ता है।

"साधारणतया मनुष्य जब भगवान् के बारे में सोचते हैं तो अपने-आपको

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

देना नहीं चाहते बल्कि स्वयं भगवान् को अपने पास खींच लाना चाहते हैं। हम कितनी बार सुनते हैं मैंने भगवान् को कितना पुकारा पर दीनदयाल के कान में भनकतक नहीं पड़ी। इसका एक रहस्य है। हमारी पुकार को प्रत्युत्तर अवश्य मिलता है पर बहुत बार हम उसे स्वीकार करने के लिये तैयार नहीं होते। हम अपने अंधेरे घरौंदे में से बाहर निकलने के लिये तैयार नहीं होते और शिकायत करते हैं कि भागवत ज्योति हमारे ऊपर कृपा नहीं कर रही। उपाय यही है कि हम अपने-आपको अपने घरौंदे में से बाहर निकालें, अपने लिये कुछ भी रखे बिना अपना सब कुछ बिना किसी मांग के भगवान् को अर्पित कर दें। आत्म-समर्पण का आनंद हमारे दरवाजे खोलेगा और तब हमें कुछ स्पर्श मिलने की संभावना होगी। जब हम केवल प्रेम के लिये प्रेम करते हैं, उसके बदले में कुछ नहीं मांगते, बदले में प्रेम पाने की परवाह नहीं करते, तब सच्चे प्रेम का आरंभ होता है।

"जब हम इसलिये प्रेम करते हैं कि हम प्रेम किये बिना नहीं रह सकते, इसलिये नहीं कि हमें उसका प्रत्युत्तर मिलता है अथवा हमारा प्रेम दूसरी ओर के प्रेम के प्रत्युत्तर के रूप में होता है बल्कि इसलिये कि प्रेम ही हमारा सब कुछ है, हम प्रेम करने में ही पूरा-पूरा संतोष पाते हैं, इसमें किसी प्रकार का वाणिज्य-व्यवसाय नहीं करते। और इस प्रकार के प्रेम का रस मिल जाये तो सब प्रश्न अपने-आप चुप हो जाते हैं, हमें किसी उत्तर की आवश्यकता नहीं रह जाती, हम स्वयं प्रेम बन जाते हैं, 'प्रभु प्रेम का पंथ पढ़ाइ दिया अब पढ़ने को नहीं कुछ बाकी।'

"लेकिन यहां एक बड़ी मुश्किल से सामना होता है। भागवत प्रेम का अनुभव करने के लिये अन्य सब प्रेमों से अलग होना जरूरी है। कई प्राचीन मार्ग प्रेम मात्र का बहिष्कार सिखाते हैं और हमारे अंदर के प्रेम को पूरी तरह सुखा डालने की कोशिश करते हैं लेकिन यह ठीक उपाय नहीं है क्योंकि इससे मनुष्य का हृदय बिलकुल सूख जाता है, उसके अंदर प्रेम करने की या प्रेम को अनुभव करने की क्षमता ही नहीं रह जाती इसलिये वह भागवत प्रेम से भी बिलकुल कोरा रह जाता है। मनुष्य की क्षमताएं इतनी सीमित हैं कि हम निम्नतर चीज को हटाने जाते हैं तो उच्चतर की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संभावना को भी खो बैठते हैं। और इसे ठीक करने के लिये बहुत वर्षों की, कई बार कई जन्मों की जरूरत होती है।

"मानव प्रेम, चाहे वह कितना ही स्वाभाविक और शुद्ध क्यों न दीखता हो, जैसे मां-बाप का अपने बच्चों के प्रति, बच्चों का मां-बाप के प्रति, भाई-बहन का, प्रेमी-युगल का—बिना अपवाद के सभी अविद्या, अज्ञान और अंधकार पर आधारित होते हैं और उनमें न्यूनाधिक मात्रा में स्वार्थ छिपा रहता है। इसलिये यदि मानव प्रेम का भी सच्चा रूप देखना है तो उसमें से अधिकार-लिप्सा के सभी रूपों को, ईर्ष्या आदि के सभी रूपों को निकाल बाहर करना होगा। हमें अपने प्रेमपात्र को अपने वश में करने की, उसपर अपनी मनमानी चलाने की, उसपर अपनी इच्छाएं या सनक लादने की या उसे अपना लेने की बात भी न सोचनी चाहिये। प्रेम में लेना नहीं, देना मुख्य है। प्रेम का पुरस्कार स्वयं प्रेम है। प्रेम के बदले में किसी प्रकार की मांग करना या किसी प्रकार की आशा रखना गलत है, कोई शिकायत करना गलत है।

"इतना हो जाये तो यह अपने-आपमें एक बहुत बड़ा कदम है। इस मार्ग पर प्रगति करते हुए हमें पता लगेगा कि प्रेम हमारी व्यक्तिगत चीज नहीं है, प्रेम दिव्य और सार्वभौम है और हमारे द्वारा प्रकट होने का प्रयास कर रहा है। प्रेम के लिये यह जरूरी है कि हम अहंकार को तिलांजलि दे दें। सिर्फ योग के साधकों के लिये नहीं, सामान्य प्रेमियों के लिये भी यह जरूरी है कि वे अहंकार के बिना प्रेमपात्र के चरणों में अपना उत्सर्ग कर दें। अपने-आपको बिना किसी मांग या शर्त के दे दें। 'जब लग मेरी-मेरी करे, तब लग काज एकहु नाहिं सरे' लेकिन प्रेमी का कार्य जहां समाप्त होता है साधक का क्षेत्र वहां शुरू होता है। भागवत प्रेम के पुजारी में यह इच्छा होनी चाहिये कि वह प्रेम के बाह्य रूप को छेदकर, उसकी मानव सीमाओं को लांघकर उसके पीछे छिपे दिव्य प्रेमतक पहुंच सके और उसके बाद तो—

पी ले प्याला हो मतवाला
प्याला प्रेम अमीरस का रे।"

उसका लेख सुनकर सब विचार में डूब गये। और शांति पाठ के साथ उठ खड़े हुए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोसायटी समाचार

सोसायटी की अनेक शाखाओं और केंद्रों में माताजी का जन्मदिन मनाया गया। इंग्लैंड की सोसायटी ने लंदन के भारतीय विद्याभवन में उत्सव मनाया। जर्मनी में भी कई स्थानों पर माताजी और आश्रम के वीडियो दिखाये गये।

हैदराबाद में श्रीअरविन्द के पवित्र अवशेष की स्थापना की दूसरी वर्षगांठ मनायी गयी।

लखनऊ में सोसायटी का एक नया केंद्र खुला है—श्रीअरविंद सोसायटी, लखनऊ सेंटर, द्वारा, श्री विनोद मिश्र, ७९/४ सर्वपल्ली, माल एवेन्यू, लखनऊ-२२६००१।

बंगलोर के श्रीअरविंद भवन में अतिथिशाला की व्यवस्था हो रही है। जिन्हें रस हो वे सीधा श्रीअरविंद भवन, ८, गंगाधर चट्टी रोड, बंगलोर-५६००४२ से पत्र-व्यवहार करें।

इन दिनों अंग्रेजी में *'योग इन एव्रीडे लाइफ—बुकलेट सीरीज़'* के अंतर्गत सोसायटी की पुस्तिकाओं का नया संस्करण छप रहा है। प्रत्येक का दाम ५ रु. है। अभीतक निम्नांकित चार पुस्तिकाएं अंग्रेजी में प्रकाशित हो गयी हैं—*अभीप्सा, समर्पण तथा कृपा, ध्यान, प्रार्थना और जप*। इनके अतिरिक्त निम्नलिखित पुस्तकें भी अंग्रेजी में उपलब्ध हैं—

द साइकिक बींग—मू० ४०.००। *गाइडेंस इन वर्क*—मू० ३०.००।

इसमें दैनन्दिन जीवन में आनेवाली समस्याओं के समाधान, साधना इत्यादि पर माताजी के साथ प्रश्नोत्तर हैं।

द डेस्टिनी ऑफ द बॉडी—मू० ७५.००

यह पुस्तक मानव शरीर की विकासात्मक संभावनाओं के बारे में है।

अंबालाल पुराणीकृत *दिव्य जीवन पर भाषण और प्रश्नोत्तर*—मू० ४०.००। पुराणी जी की अन्य कुछ पुस्तकें हैं—*सांध्य वार्ताएं*—मू० ८०.००, *श्रीअरविंद का जीवन चरित्र*—मू० ६०.००।

प्रसिद्ध क्रांतिकारी सुधीर सरकार की शताब्दी के उपलक्ष्य में उनकी जीवनी और श्रद्धांजलियों की पुस्तक भी छपी है—

विग्नेट्स ऑफ श्रीअरविंद एंड द मदर—मू० ३५.००।

ये पुस्तकें शब्द, श्रीअरविंद आश्रम, पांडिचेरी-६०५००२ में उपलब्ध हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सबसे पहली चीज होनी चाहिये 'शांति'। तुम जो कुछ करो उसे शांतिपूर्ण तरीके से करना चाहिये।

सहारनपुर सर्विस स्टेशन

पैट्रोल पम्प, देहरादून रोड

सहारनपुर–२४७००१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Registered with the Registrar of Newspapers for India
No. R. N. 18135/70

REGD. No. M. 8731

A happy beginning
a good continuation
and no end —
an endless progression

14-5-57

New Horizon Sugar Mills (Pvt.) Ltd.

PONDICHERRY

Telegram : SAKAR
Phone : Town Office : 4280
Factory : 4424

P.O. Box 29
Pondicherry
S. India

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

61684

अग्निशिखा

अखिल भारतीय पत्रिका

जून १९८९

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जून १९८९ वर्ष १९, अंक ११, पूर्णांक २२७

विषय-सूची

सन्देश : महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष	श्रीअरविंद	१
'संपादकीय' : आशा—कुछ सहमी-सहमी	अनुबेन	२
दैनन्दिनी		३
कारावास की कहानी		६
सोसायटी समाचार		३८

आपका अग्निशिखा/पुरोधा का चंदा ... में समाप्त हो रहा है। कृपया अग्निशिखा के १० और पुरोधा के १४ शीघ्र भेजें अन्यथा अगला अंक वी. पी. पी. से जायगा। वी. पी. पी लौट आने से हमें बहुत हानि होती है। अलग अनुस्मारक नहीं भेजा जायगा। कृपया चेक न भेजें। चाहें तो २२५ और २७५ एक साथ या किस्तों में देकर अग्निशिखा और पुरोधा के या ५०० देकर दोनों के आजीवन सदस्य बन सकते हैं।

अग्निशिखा वार्षिक १०.०० आजीवन २२५.००

श्रीअरविंद सोसायटी की मासिक पत्रिका

संपादक : रवींद्र, अनुबेन
प्रकाशक : श्रीअरविंद सोसायटी, पांडिचेरी-६०५००२
मुद्रक : अमियरंजन गांगुली, श्रीअरविंद आश्रम प्रेस, पांडिचेरी-६०५००२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उद्‌बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि

संदेश

महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष

जो घटनाएं संसार को विचलित कर देती हैं, बहुधा मामूली परिस्थितियों का परिणाम होती हैं। जब बृहद् परिवर्तन और अप्रतिरोध्य आंदोलन आगे बढ़ते रहते हैं तब आश्चर्य होता है कि कैसे एक घटना मात्र, एक संयोग ऐसी परिस्थितियों की शृंखला की ओर ले जाता है जो किसी राष्ट्र का या पृथ्वी का चेहरा बदल देती है। ऐसे समय जरा-सा इधर-उधर मुड़ने के कारण अनुपात में बेहद बड़े परिणाम आते हैं। ऐसे प्रसंग पर ही हमें अत्यधिक तीखा अनुभव होता है एक ऐसी शक्ति की वास्तविकता का जो घटनाओं की व्यवस्था करती है और मनुष्यों के तोड़-जोड़ को पराजित कर देती है। केवल एक व्यक्ति के आकस्मिक कार्य द्वारा बहुत-सी चीजों का अंत आ जाता है। एक स्पर्श मात्र से एक पूरा संसार लुप्त हो जाता है और दूसरे का सृजन होता है। निश्चिति गायब हो जाती है और हम अनुभव करते हैं कि हिंदुओं के प्रलय, एक युग से दूसरे युग के संक्रमण का सचमुच अर्थ क्या होता है और यह विचार कितना सच है कि लंबे अर्से से तैयार होते हुए परिवर्तनों को द्रुत संक्रमणों द्वारा प्रभावित किया जाता है। ऐसा परिवर्तन सारे संसार में आ रहा है और प्रायः सभी देशों में ऐसी घटनाएं घट रही हैं जिनका परिणाम उनके अभिनेता देख नहीं पाते। बड़े देशों की सतहपर छोटे-मोटे प्रसंग गुजरते हैं, इनमें से कई गुजर जाते हैं, भुला दिये जाते हैं और कई भविष्य को तेजी से आगे बढ़ाते हैं।

—श्रीअरविन्द

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संपादकीय :

आशा—कुछ सहमी-सहमी

दो घटनाओं को याद कर मन चिंता और आशा के झकोलों में ऊभ-चूभ कर रहा है।

हमारा नगर न बहुत बड़ा है न छोटा। एक दिन कराटे-प्रेमी मित्र ने अपना दंगल देखने का निमंत्रण दिया। वहां का दृश्य देखकर विचारों का तूफान जागा। सबसे पहले घोषित समय के आधा घंटा बाद कार्यक्रम शुरू हुआ; फिर उनकी मार्च पास्ट होनी थी। पांच दल थे, उन्हें पंक्ति में ढंग से खड़ा करने में और बीस मिनट लग गये। मन में यह विचार कौंधा, भारतीय खिलाड़ियों की अनुशासनहीनता उनकी पराजय का बड़ा अंग है। यहां भी उसीका प्रदर्शन देखकर निराशा हुई, लेकिन उसके बाद जब दंगल शुरू हुआ तो खिलाड़ियों का जो अनुशासन और संयम देखा तो आश्चर्य तो हुआ ही साथ-साथ यह आशा भी बनी कि भारतीय जनता एक बार ठान ले तो अनुशासन और संयम-पालन में किसीसे कम नहीं।

उसके बाद लड़कियों ने अपने करतब दिखाये तो दिल बल्लियों उछलने लगा। दक्षिण के इस कोने में लड़कियां इस तरह आगे बढ़कर कराटे जैसी वीर-विद्या को अपनायेंगी ऐसी आशा कतई न थी। मन में सोचा, जब स्त्री-शक्ति जाग रही है, मतलब आधी आबादी जाग उठी है, तब भारत का उत्थान निकट है।

दूसरी घटना से भारतीय जनता में अंतर्निहित आस्था, श्रद्धा का प्रमाण मिला। एक अधेड़, सामान्य स्त्री रेल द्वारा लंबी यात्रा कर रही थीं। रेल के डिब्बे की खिड़की में सीखचों के कारण बाहर से चोरी का खास डर नहीं रहता इसलिये महिला ने खिड़की के पास ही रात को विश्राम करने की व्यवस्था की। आधी राततक निश्चिंत सोती रही, फिर एक बिजली का झटका-सा लगा और उन्हें लगा कि कोई उनके बाल झटके दे-देकर खींच रहा है, और वह भी खिड़की के बाहर खड़ा कोई व्यक्ति। यह स्त्री न कराटे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जानती थीं, न कसरतबाज थीं; एकदम सामान्य घरेलू स्त्री। वह न चिल्लायीं, न घबरायीं, उन्होंने अपने इष्टदेव का स्मरण किया और दोनों हाथ उठाकर उस व्यक्ति के दोनों हाथ कसकर पकड़ लिये। वे उसे देख तो न पाती थीं किंतु उन्होंने अनुभव किया कि वह कसमसा रहा है। कुछ देर पकड़े रखने के बाद उन्होंने उसे धकेल दिया। बहुत संभव है, उसकी नजर उनके गले की जंजीर पर हो। यह छोटी घटना जन-मानस की श्रद्धा की पुष्टि करती है क्योंकि उन महिला के अंदर सामान्य अवस्था में ऐसी शक्ति न थी कि वे एक वयस्क पुरुष का भार केवल अपने दो हाथोंपर ले सकें। वे बार-बार कह रही थीं कि मेरी देवी मां ने ही मेरी सहायता की।

ये हैं हमारे आधुनिक भारत के चित्र जिनसे आशा जागती है किंतु थोड़ी सहमी-सहमी।

—अनुबेन

दैनन्दिनी

जून

१. ज्यादा ऊंचा, और भी ऊंचा, जो चरितार्थ हो चुका है, उससे हम कभी संतुष्ट न हों। किसी उपलब्धि को पाकर हमें वहीं रुक जाना न चाहिये। हम हमेशा आगे, बिना रुके, ऊर्जा के साथ, अधिक पूर्ण अभिव्यक्ति की ओर कूच करते रहें।

२. बीते कल की विजय आनेवाले कल की विजय के लिये एक सीढ़ी मात्र है।

३. हे दिव्य मां, तेरी कूच विजयिनी और अबाधित है, और तेरे साथ सर्वांगीण प्रेम में जो एक हो जाता है, वह हमेशा बढ़ते क्षितिजों की ओर अबाध गति से यात्रा करता रहता है . . .

४. हे दिव्य मां, बाधाओं पर विजय प्राप्त होगी, शत्रु को शांत किया जायेगा। अपने सर्व-श्रेष्ठ प्रेम से तू समस्त पृथ्वीपर शासन करेगी और प्रत्येक चेतना तेरी शांत प्रसन्नता से प्रकाशित हो उठेगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

५. देखो ! ये रहे पुष्प और आशीर्वाद ! यह है दिव्य प्रेम का स्मित। उसमें न पसंद है, न विकर्षण। वह सबकी ओर उदार धारा की नाईं बहता है और अपने अद्‌भुत उपहारों को कभी वापस नहीं लेता।

६. प्रत्येक बार जब तेरी दिव्य सांस के स्पर्श से एक हृदय उछल पड़ता है, तो थोड़ा अधिक सौंदर्य धरती पर जन्म लेता है, मधुर सुगंध से वातावरण मादक हो उठता है, सब कुछ अधिक मैत्रीपूर्ण हो जाता है।

७. सभी अस्तित्वों के स्वामी, तेरी शक्ति कितनी महान् है कि तेरे आनंद का एक अणु इतने सारे अंधकार को, इतने सारे दुःखों को मिटाने के लिये पर्याप्त है।

८. इन धन्य मुहूर्तों पर पृथ्वी उल्लास की स्तुतियां गाती है, हरियाली सुख से रोमांचित हो कांप-कांप उठती है, हवा प्रकाश से स्पंदित हो रही है, वृक्ष अपनी सबसे आर्द्र प्रार्थना स्वर्गतक ऊपर उठाते हैं।

९. अपने सर्व-शक्तिमान् प्रेम की जीवंत और उद्धारक ज्वाला को जीवनदायिनी वर्षा की तरह बूंद-बूंद बनकर तू नीचे गिरने देता है।

१०. मैं जानती हूं कि हम अयोग्य हैं, मैं जानती हूं कि संसार अबतक तैयार नहीं है। लेकिन मैं तेरी दिव्य कृपा में पूर्ण विश्वास रखकर तुझे पुकारती हूं और मैं जानती हूं कि तेरी दिव्य कृपा रक्षा करेगी।

११. मैं तेरे अंदर डुबकी मारती हूं और स्वयं को एक बालक के विश्वास के साथ तुझमें लीन होकर तुझसे उस आवश्यक प्रेरणा और शक्ति की प्रतीक्षा करती हूं ताकि अपने अंदर और अपने चारों ओर की भूलें ठीक कर सकूं।

१२. मैं अपनी सारी सत्ता से अभीप्सा करती हूं कि तू सम्राट् बनकर शासन करे और मेरे मन, हृदय और शरीर का स्वामी बन जाये। वर दे कि वे तेरे अज्ञाकारी यंत्र और विश्वसनीय चाकर बन जायें।

१३. मेरे सारे विचार तेरी ओर मुड़ते हैं, मेरे सब कार्य तुझे समर्पित हैं।

१४. तू ही अनुभूति को सारगर्भित बनाता है। तू जीवन को प्रगतिशील बनाता है, प्रकाश के आगे अंधकार को अदृश्य होने के लिये बाधित करता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

१५. हे परम स्वामी जो मेरी सत्ता में और प्रत्येक वस्तु में चमकता है, वर दे कि तेरा प्रकाश सर्वत्र हो, कि सबके लिये तेरी शांति का राज्य स्थापित हो।

१६. मुझे जो बनना चाहिये उसे तू बना सकेगा।

१७. अब भय नहीं, बेचैनी नहीं, कोई दुःख नहीं, प्रसन्न शांति के सिवा कुछ नहीं, संपूर्ण विश्वास, परम अडिग शांति !

१८. परछाईं और भ्रम, घुल जाओ, हे दुःख, धूमिल होकर अदृश्य हो जा, परम प्रभु, क्या तू इनमें विद्यमान नहीं ?

१९. सबके आगे पूर्ण समता बनाये रखो तो शाश्वत वहां विद्यमान रहेगा।

२०. जिस तरह निस्तब्धता में लौ जलती है, उस सुगंध की तरह जो बिना लहराए सीधी ऊपर उठती है, मेरा प्रेम तेरी ओर उठता है।

२१. तेरी शांति मेरे अंदर विद्यमान है और उस शांति में मैं केवल तुझे हर वस्तु में शाश्वत की अचंचलता के साथ उपस्थित देखती हूं।

२२. करनेवाला केवल तू है, मैं केवल एक यंत्र . . .

२३. सुन, ओ पृथ्वी, उठती हुई आवाज की ओर कान दे और नया साहस बटोर ले।

२४. तू चरम शांति है, अमिश्रित हर्ष और पूर्ण प्रसन्न शांति है।

२५. जो तेरी खोज उत्कटता से करते हैं उन्हें समझना चाहिये कि जब तेरी आवश्यकता होगी तू वहां अवश्य होगा।

२६. तेरी महिमा की घोषणा की जाये और जीवन पवित्र बन जाये, मनुष्यों के हृदय को वह रूपांतरित कर दे और तेरी शांति का शासन हो।

२७. गाओ, महाद्वीपो जातियो, हे मनुष्यो गाओ, दिव्य सामंजस्य यहां आ गया है।

२८. तेरी निश्चित विजय के पूर्ण विश्वास में मुझे सर्वोत्तम शांति और अपराजेय शक्ति मिलती है।

२९. हे प्रभु, तू ही मेरी शरण और मेरा आशीर्वाद है, मेरी शक्ति, मेरा स्वास्थ्य, मेरी आशा और मेरा साहस तू ही है।

३०. मेरी सारी सत्ता तेरे सामने अबाध कृतज्ञता और अनवरुद्ध आराधना में दंडवत् है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारावास की कहानी

[इस अनुवाद में जहांतक हो सका हमने श्रीअरविन्द की मूल बंगला के साथ-साथ चलने की कोशिश की है। —सं०]

मैं पहली मई सन् १९०८ ई., शुक्रवार के दिन 'वंदेमातरम्' के दफ़्तर में बैठा था, तभी श्रीयुत श्यामसुंदर चक्रवर्ती ने मुजफ्फरपुर का एक टेलीग्राम मेरे हाथ में थमाया। पढ़कर मालूम हुआ कि मुजफ्फरपुर में बम फटा है, जिससे दो मेमों की मृत्यु हो गयी है। उसी दिन के 'एम्पायर' अंग्रेजी अखबार में यह भी पढ़ा कि पुलिस कमिश्नर ने कहा है—हम जानते हैं, इस हत्याकांड में किन-किन का हाथ है और वे शीघ्र ही गिरफ़्तार किये जायेंगे। तब मैं यह नहीं जानता था कि मैं ही था इस संदेह का मुख्य निशाना, पुलिस के विचार में प्रधान हत्यारा, राष्ट्र-विप्लव-प्रयासी युवकदल का मंत्रदाता और गुप्त नेता। नहीं जानता था कि आज का दिन ही होगा मेरे जीवन के एक अंक का अंतिम पृष्ठ, मेरे सम्मुख था एक वर्ष का कारावास, इस समय से ही मनुष्य जीवन के साथ जितने बंधन हैं, सब छिन्न-भिन्न होंगे, एक वर्ष के लिये मानव समाज से अलग पशुओं की तरह पिंजरे में बंद रहना पड़ेगा। फिर जब कर्मक्षेत्र में वापस आऊंगा तब वह पुराना परिचित अरविंद घोष प्रवेश नहीं करेगा वरन्, एक नया मनुष्य, नया चरित्र, नयी बुद्धि, नया प्राण, नया मन ले और नये कार्य का भार उठा अलीपुरस्थ आश्रम से बाहर होगा। कहा है एक वर्ष का कारावास पर कहना उचित था एक वर्ष का वनवास, एक वर्ष का आश्रमवास। बहुत दिनों से हृदयस्थ नारायण के साक्षात् दर्शन करने की प्रबल चेष्टा में लगा था; उत्कट आशा संजोये हुए था कि जगद्धाता पुरुषोत्तम को बंधुभाव में, प्रभुभाव में प्राप्त करूं। किंतु संसार की सहस्रों वासनाओं के आकर्षणों, नाना कर्मों में आसक्ति और अज्ञान के प्रगाढ़ अंधकार के कारण कर न पाया। अंत में परमदयालु सर्वमंगलमय श्री हरि ने इन सब शत्रुओं को एक ही वार में समाप्त कर उसके लिये सुविधा कर दी, योगाश्रम दिखलाया और स्वयं गुरु

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रूप में, सखा रूप में उस क्षुद्र साधन कुटीर में अवस्थान किया। वह आश्रम था अंग्रेजों का कारागार। मैं अपने जीवन में बराबर ही यह आश्चर्यमय असंगति देखता आ रहा हूं कि मेरे हितैषी बंधुगण मेरा जितना भी उपकार क्यों न करें, अनिष्टकारी—शत्रु किसे कहूं, मेरा अब कोई शत्रु नहीं—शत्रुओं ने ही अधिक उपकार किया है। उन्होंने अनिष्ट करना चाहा पर इष्ट ही हुआ। ब्रिटिश गवर्नमेंट की कोप-दृष्टि का एकमात्र फल—मुझे भगवान् मिले। कारावास के आंतरिक जीवन का इतिहास लिखना इस लेख का उद्देश्य नहीं है, कुछ एक घटनाओं को वर्णित करने की ही इच्छा है, किंतु कारावास के मुख्य भाव का उल्लेख लेख के आरंभ में करना उचित समझा, नहीं तो पाठक समझ बैठेंगे कि कष्ट ही है कारावास का सार। कष्ट नहीं था ऐसी बात नहीं। किंतु अधिकांश समय आनंद से ही बीता।

शुक्रवार की रात को मैं निश्चिंतता से सो रहा था। सवेरे करीब पांच बजे मेरी बहिन एकदम डरी-सी मेरे कमरे में आयी और मेरा नाम ले मुझे पुकारने लगी। मैं जाग पड़ा। क्षण-भर में मेरा छोटा-सा कमरा सशस्त्र पुलिस से भर गया; उनमें थे सुपरिंटेंडेंट क्रेगन, २४ परगना के क्लार्क साहब, हमारे सुपरिचित श्रीमान् विनोदकुमार गुप्त की आनंदमयी और लावण्यमयी मूर्त्ति और कई एक इंस्पेक्टर, लाल पगड़ियां, जासूस और खानातलाशी के साक्षी। हाथों में पिस्तौल लिये वे वीर-दर्प से ऐसे दौड़े आये मानों तोपों और बंदूकों से सुरक्षित किले पर दखल करने आये हों। आंखों से तो नहीं देखा पर सुना कि एक श्वेतांग वीर पुरुष ने मेरी बहिन की छाती पर पिस्तौल तानी थी। मैं बिछौने पर बैठा हुआ हूं, अर्द्धनिद्रित अवस्था, क्रेगन साहब ने पूछा, ''अरविंद घोष कौन हैं? क्या आप ही हैं?'' मैंने कहा, ''हां, मैं ही हूं अरविंद घोष।'' तुरंत उन्होंने एक सिपाही को मुझे गिरफ्तार करने को कहा, उसके बाद क्रेगन साहब की किसी एक अश्लील बातपर क्षण-भर के लिये आपस में कहा-सुनी हो गयी। मैंने खानातलाशी का वारंट मांगा, पढ़कर उसपर सही की। वारंट में बंम की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बात देखकर समझ गया कि इस पुलिस सेना का आविर्भाव मुजफ्फरपुर में हुए खून से संबंधित है। परंतु यह समझ में नहीं आया कि बम या कोई स्फोटक पदार्थ मेरे मकान में पाये जाने के पहले ही और बिना 'बॉडी-वारंट' के मुझे क्यों गिरफ्तार किया गया। तो भी इस बारे में व्यर्थ कोई आपत्ति नहीं उठायी! इसके बाद ही क्रेगन साहब के हुकुम से मेरे हाथों में हथकड़ी और कमर में रस्सी बांध दी गयी। एक हिंदुस्तानी सिपाही वह रस्सी पकड़े मेरे पीछे खड़ा रहा। ठीक उसी समय श्रीयुत अविनाशचंद्र भट्टाचार्य और श्रीयुत शैलंद्र वसु को पुलिस ऊपर ले आयी, उनके भी हाथों में हथकड़ी और कमर में रस्सी थी। करीब आधे घंटे बाद, न जाने किस के कहने से उन्होंने हथकड़ी और रस्सी खोल दीं। क्रेगन की बातों से ऐसा लगता था मानों वह किसी खूंखार पशु की मांद में घुस आये हों, मानो हम थे अशिक्षित, हिंस्र और स्वभाव से कानून-भंगी, हमारे साथ भद्र व्यवहार या भद्रता से बात करना बेकार है। परंतु झगड़े के बाद साहब जरा नरम पड़ गये थे। विनोद बाबू ने मेरे बारे में उन्हें कुछ समझाने की चेष्टा की। उसके बाद क्रेगन ने मुझसे पूछा, "आपने शायद बी. ए. पास किया है? ऐसे मकान में, ऐसे सज्जाविहीन कमरे में जमीन पर सोये थे, इस तरह रहना आप जैसे शिक्षित व्यक्ति के लिये क्या लज्जाजनक नहीं?" मैंने कहा, "मैं दरिद्र हूं, दरिद्र की तरह ही रहता हूं।" साहब ने तुरंत गरजकर कहा, "तो क्या आपने धनी बनने के लिये ही यह सब षड्यंत्र रचा है?" देश-हितैषिता, स्वार्थत्याग या दारिद्र्य-व्रत का माहात्म्य इस स्थूल बुद्धि अंग्रेज को समझाना असाध्य जान मैंने वैसी चेष्टा नहीं की।

इस बीच खानातलाशी चलती रही। यह सवेरे साढ़े पांच बजे आरंभ हुई और प्रायः साढ़े ग्यारह बजे समाप्त हुई। बक्से के बाहर, भीतर जितनी कापियां, चिट्ठियां, कागज, कागज के टुकड़े, कविताएं, नाटक, पद्य, गद्य, प्रबंध, अनुवाद—जो कुछ भी मिला कुछ भी इन सर्वग्रासी खानातलाशियों के कवल से नहीं बच पाया। खानातलाशी के गवाहों में रक्षित महाशय क्षुण्णमना-से थे। बाद में बड़े दुःख के साथ उन्होंने मुझे बताया कि पुलिस अचानक बिना कुछ कहे-सुने उन्हें यहां घसीट लायी है, उन्हें रत्तीभर भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसकी भनक नहीं थी कि ऐसे घृणित कार्य में उन्हें योगदान करना होगा। रक्षित बाबू ने बड़े ही करुण भाव से इस हरण-कांड की कथा सुनायी। दूसरे साक्षी समरनाथ का भाव कुछ और ही था। उन्होंने बड़ी स्फूर्ति से एक सच्चे राजभक्त की तरह यह खानातलाशी का कार्य सुसंपन्न किया मानों to the manner born—इसीके लिये जनमे हों। खानातलाशी के समय और कोई उल्लेखनीय घटना नहीं घटी। पर याद आती है गत्ते के एक छोटे डिब्बे में दक्षिणेश्वर की जो मिट्टी रखी थी क्लार्क साहब उसे बड़े संदिग्ध चित्त से बहुत देरतक परखते रहे मानों उनके मन में शंका थी कि हो न हो यह कोई नया, भयंकर, तेजविशिष्ट स्फोटक पदार्थ है। एक तरह से क्लार्क साहब का संदेह निराधार भी नहीं कहा जा सकता। अंत में यह मान लिया गया कि यह मिट्टी के सिवा और कुछ नहीं, और इसे रासायनिक विश्लेषणकारियों के पास भेजना अनावश्यक है। खानातलाशी के समय बक्स खोलने के सिवा मैंने और कुछ नहीं किया। मुझे कोई भी कागज या चिट्ठी दिखलायी या पढ़कर सुनायी नहीं गयी, केवल अलकधारी की एक चिट्ठी क्रेगन साहब ने अपने मनोरंजन के लिये उच्च स्वर में पढ़ी। बंधुवर विनोदगुप्त अपने स्वाभाविक ललित पदविन्यास से घर को कंपाते हुए चक्कर काट रहे थे, शेल्फ में से या और कहीं से कागज या चिट्ठी निकालते, बीच-बीच में "बहुत जरूरी, बहुत जरूरी" कह उसे क्रेगन साहब को थमाते जाते। मैं जान नहीं पाया कि ये आवश्यक कागज क्या थे ? इस बारे में कोई कुतूहल भी नहीं था क्योंकि मुझे पता था कि मेरे घर में विस्फोटक पदार्थ बनाने की प्रणाली या षड्यंत्र में हाथ होने का कोई भी सबूत मिलना असंभव है।

मेरे कमरे का कोना-कोना छान मारने के बाद पुलिस हमें पासवाले कमरे में ले गयी। क्रेगन ने मेरी छोटी मासी का बक्स खोला, एक-दो बार चिट्ठियों पर नजर भर डालकर "औरतों की चिट्ठियों की जरूरत नहीं" कह उन्हें छोड़ दिया। इसके बाद एकतल्ले पर पुलिस महात्माओं का आविर्भाव हुआ। वहां क्रेगन का चाय-पानी हुआ। मैंने एक प्याला कोको और रोटी ली। ऐसे सुअवसर पर साहब अपने राजनीतिक मतों को युक्तितर्क द्वारा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रतिपादित करने की चेष्टा करने लगे। मैं अविचलित चित्त से यह मानसिक यंत्रणा सहता रहा। तो भी जिज्ञासा होती है कि शरीर पर अत्याचार करना तो पुलिस की सनातन प्रथा रही है, मन पर भी ऐसा अमानुषिक अत्याचार करना unwritten law—अलिखित कानून की चौहद्दी में पड़ता है क्या? आशा है हमारे परम मान्य देशहितैषी श्रीयुत योगेंद्रचंद्र घोष इस बारे में व्यवस्थापक सभा में प्रश्न उठायेंगे।

नीचे के कमरों और 'नवशक्ति कार्यालय' की खानातलाशी के बाद 'नवशक्ति' के एक लौह संदूक को खोलने के लिये पुलिस फिर से दोतल्ले पर गयी। आध घंटेतक व्यर्थ सिर फोड़ने के बाद उसे थाने ले जाना ही निश्चित हुआ। इस बार एक पुलिस साहब ने एक द्विचक्र-यान ढूंढ़ निकाला, उसपर लगे रेलवे लेबल पर 'कुष्टिया' लिखा था। तुरत ही कुष्टिया में साहब पर गोली चलानेवाले का वाहन मान इसे एक गुरुतर प्रमाण समझ सानंद साथ ले गये।

प्रायः साढ़े ग्यारह बजे हम घर से रवाना हुए। फाटक के बाहर मेरे मौसा जी एवं श्रीयुत भूपेंद्रनाथ वसु गाड़ी में उपस्थित थे। मौसाजी ने मुझसे पूछा, "किस अपराध में गिरफ्तार हुए हो?" मैंने कहा, "मैं कुछ नहीं जानता, इन्होंने घर में घुसते ही गिरफ्तार कर लिया, हाथों में हथकड़ी पहनायी, 'बॉडी वारंट' तक नहीं दिखाया।" मौसाजी के हथकड़ी पहनाये जाने का कारण पूछने पर विनोद बाबू बोले, "महाशय, मेरा दोष नहीं, अरविन्द बाबू से पूछिये, मैंने ही साहब से कहकर हथकड़ी खुलवायी है।" भूपेन बाबू के क्या अपराध हैं पूछने पर गुप्त महाशय ने नरहत्या की धारा दिखायी। यह सुन भूपेन बाबू स्तंभित रह गये और कोई भी बात नहीं की। बाद में सुना, मेरे सौलिसिटर श्रीयुत हेरंद्रनाथ दत्त ने ग्रे स्ट्रीट में खानातलाशी के समय मेरी ओर से उपस्थित रहने की इच्छा प्रकट की थी पर पुलिस ने उन्हें लौटा दिया।

हम तीनों को थाने ले जाने का भार था विनोद बाबू पर। थाने में उन्होंने हमारे साथ विशेष भद्र व्यवहार किया। वहीं नहा-धोकर, खा-पीकर लालबाजार के लिये चले। कुछ घंटे लालबाजार में बिठा रखने के बाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रायड स्ट्रीट में ले गये। शामतक उसी शुभ स्थान पर अपना समय काटा। वहीं जासूस-पुंगव मौलवी शम्स-उल् आलम के साथ मेरा पहला आलाप व प्रीति स्थापित हुई। मौलवी साहब का तबतक न इतना प्रभाव था और न उनमें इतना उत्साह और उद्यम, बम-केस के प्रधान अन्वेषक या नार्टन साहब के Prompter (प्रेरक) या जीवंत स्मरण-शक्ति के रूप में तबतक नहीं चमके थे, रामसदय बाबू ही थे इस केस के प्रधान पंडा। मौलवी साहब ने मुझे धर्म पर अतिशय सरस वक्तृता सुनायी। हिंदू-धर्म और इस्लाम धर्म का मूल-मंत्र एक ही है, हिंदुओं के ओंकार में तीन मात्राएं हैं—अ उ म्, कुरान के पहली तीन अक्षर हैं अ ल म, भाषातत्त्व के नियम से ल के बदले उ व्यवहृत होता है अतएव हिंदू और मुसलमान का मंत्र एक ही है। तथापि अपने धर्म का पार्थक्य अक्षुण्ण रखना होता है, मुसलमान के साथ खाना खाना हिंदू के लिये निंदनीय है। सत्यवादी होना भी धर्म का एक प्रधान अंग है। साहब लोग कहते हैं कि अरविंद घोष हत्याकारी दल के नेता हैं, भारतवर्ष के लिये यह बड़े दुःख और लज्जा की बात है, फिर भी सत्यवादिता अपनाने से situation saved (स्थिति संभाली जा) हो सकती है। मौलवी का दृढ़ विश्वास था कि विपिन पाल और अरविंद घोष जैसे उच्च चरित्रवान् व्यक्तियों ने चाहे जो भी किया हो, उसे मुक्तकंठ से स्वीकार करेंगे। श्रीयुत पूर्णचंद्र लाहिड़ी वहीं बैठे थे, उन्होंने इसपर संदेह प्रकट किया किंतु मौलवी साहब अपनी बात पर अड़े रहे। उनकी विद्या-बुद्धि और उत्कट धर्मभाव देख मैं अतिशय चमत्कृत और हर्षित हुआ। ज्यादा बोलना धृष्टता होगी यह सोच मैंने नम्र भाव से उनका अमूल्य उपदेश सुना और उसे सयत्न हृदयांकित किया। धर्म के लिये इतने मतवाले होने पर भी मौलवी साहब ने जासूसी नहीं छोड़ी। एक बार कहने लगे, "अपने छोटे भाई को बम बनाने के लिये आपने जो बगीचा दे दिया सो बड़ी भूल की, यह बुद्धिमानी का काम नहीं हुआ।" उनकी बात का आशय समझ मैं मुस्करायाः बोला, "महाशय, बगीचा जैसा मेरा वैसा मेरे भाई का, मैंने उसे दे दिया है या दिया भी तो बम तैयार करने के लिये दिया, यह खबर आपको कहां से मिली?" मौलवी साहब अप्रतिभ हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बोले, ''नहीं, नहीं, मैं कह रहा था यदि आपने ऐसा किया हो तो।'' यह महात्मा अपने जीवन-चरित का एक पन्ना खोल, मुझे दिखाते हुए बोले, ''मेरे जीवन में जितनी नैतिक या आर्थिक उन्नति हुई है उसका मूल कारण है मेरे बाप का एक अतिशय मूल्यवान् उपदेश। वे हमेशा कहा करते थे, परोसी थाली कभी नहीं ठुकराना। यही महावाक्य है मेरे जीवन का मूलमंत्र, इसे सदा याद रखने के कारण ही हुई मेरी यह उन्नति।'' ऐसा कहते समय मौलवी साहब ने ऐसी तीव्र दृष्टि से मेरी ओर घूरा मानों मैं ही हूं उनके सामने परोसी थाली। संध्या-समय स्वनामधन्य श्रीयुत रामसदय मुखोपाध्याय का आविर्भाव हुआ। उन्होंने मेरे प्रति अत्यंत दया और सहानुभूति दिखायी, सभी को मेरे खाने और सोने का प्रबंध करने को कहा। अगले ही क्षण कुछ लोग आकर मुझे और शैलेन्द्र को मूसलाधार वर्षा में लालबाजार हवालात में ले गये। रामसदय के साथ बस यही एक बार ही मेरी बातचीत हुई। समझ गया कि आदमी बुद्धिमान और उद्यमी हैं किंतु उनकी बातचीत, भावभंगी, स्वर, चलन, सब कुछ कृत्रिम और अस्वाभाविक है, हमेशा जैसे रंगमंच पर अभिनय कर रहे हों। ऐसे भी आदमी होते हैं जिनका शरीर, बात, क्रिया सब मानो अनृत के अवतार हों। कच्चे मन को भुलाने में वे पक्के हैं, किंतु जो मानव चरित्र से अभिज्ञ हैं एवं बहुत दिनोंतक मनुष्यों के साथ मिलते-जुलते रहे हैं, उनकी पकड़ में वे प्रथम परिचय में ही आ जाते हैं।

लालबाजार में दो तल्ले के एक बड़े कमरे में हम दोनों को एक साथ रखा गया। खाने को मिला थोड़ा-सा जलपान। कुछ देर बाद दो अंगरेज कमरे में घुसे, बाद में पता चला कि उनमें से एक थे स्वयं पुलिस कमिश्नर हैलिडे साहब। हम दोनों को एक साथ देख हैलिडे सार्जंट पर बरस पड़े, मुझे दिखाकर बोले, ''खबरदार, इस व्यक्ति के साथ न कोई रहे न कोई बोले।'' तुरंत ही शैलेन्द्र को दूसरे कमरे में हटा बंद कर दिया गया। और जब सब चले गये तो हैलिडे साहब मुझसे पूछते हैं—''इस कापुरुषोचित दुष्कर्म में भाग लेते हुए आपको शर्म नहीं आती ?'' ''मैं इसमें लिप्त था यह मान लेने का आपको क्या अधिकार है ?'' उत्तर में हैलिडे ने कहा, ''मैंने मान नहीं लिया, मैं सब जानता हूं ?'' मैंने कहा, ''क्या जानते हैं या क्या नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह आपको ही पता होगा पर मैं इस हत्याकांड के साथ अपना संपर्क पूर्णतया अस्वीकार करता हूं।" हैलिडे ने और कोई बात नहीं की।

उस रात मुझे देखने और कई दर्शक आये, सभी पुलिस के। इनके आने में एक रहस्य निहित था, उस रहस्य की आजतक मैं थाह नहीं ले पाया। गिरफ्तारी से डेढ़ माह पहले एक अपरिचित सज्जन मुझसे मिलने आये थे, उन्होंने कहा था, "महाशय, आपसे मेरा परिचय नहीं है फिर भी आपके प्रति श्रद्धा-भक्ति है, इसीलिये आपको सतर्क करने आया हूं और जानना चाहता हूं कि कोननगर में किसीसे आपका परिचय है क्या ? वहां कभी गये थे या वहां कोई घर-बार है क्या ?" मैंने कहा, "घर नहीं है, कोननगर एक बार गया था, कइयों से परिचय भी है।" उन्होंने कहा, "और कुछ नहीं कहूंगा पर कोननगर में अब और किसीसे मत मिलियेगा, आप और आपके भाई बारींद्र के विरुद्ध दुष्टजन षड्यंत्र रच रहे हैं, शीघ्र ही वे आप लोगों को विपत्ति में डालेंगे। मुझसे और कोई बात न पूछें।" मैंने कहा, "महाशय, मैं समझ नहीं पाया इस अधूरे संवाद से मेरा क्या उपकार हुआ, फिर भी आप उपकार करने आये थे उसके लिये धन्यवाद। मैं और कुछ नहीं जानना चाहता। भगवान् पर मुझे पूर्ण विश्वास है, वे ही सदा मेरी रक्षा करेंगे, उस विषय में स्वयं यत्न करना या सतर्क रहना निरर्थक है।"

उसके बाद इस संबंध में और कोई खबर नहीं मिली। मेरे इस अपरिचित हितैषी ने मिथ्या कल्पना नहीं की थी, इसका प्रमाण उस रात मिला। एक इंस्पेक्टर और कुछ पुलिस कर्मचारियों ने आकर कोननगर की सारी बातें जान लीं। उन्होंने पूछा, "कोननगर क्या आपका आदि स्थान है ? वहां मकान है क्या ? वहां कभी गये थे ? कब गये थे ? क्यों गये थे ? कोननगर में बारींद्र की कोई संपत्ति है क्या ?"—इस तरह के अनेक प्रश्न पूछे गये। बात क्या है यह जानने के लिये मैं इन सब प्रश्नों का उत्तर देता गया। इस चेष्टा में सफलता नहीं मिली, किंतु प्रश्नों से और पुलिस के पूछने के ढंग से लगा कि पुलिस को जो खबर मिली है वह सच है या झूठ इसकी छान-बीन चल रही है। अनुमान लगाया जैसे ताई महाराज के मुकदमें में तिलक को भंड, मिथ्यावादी, प्रवंचक और अत्याचारी करार कर देने की चेष्टा हुई थी एवं उस चेष्टा में बंबई सरकार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ने योग दे प्रजा के धन का अपव्यय किया था,—वैसे ही मुझे भी कुछ एक लोग मुसीबत में डालने की चेष्टा कर रहे हैं।

रविवार का सारा दिन हवालात में कटा। मेरे घर के सामने सीढ़ी थी। सवेरे देखा कि कुछ अल्पवयस्क लड़के सीढ़ी से उतर रहे हैं। शक्ल से नहीं जानता था पर अंदाज लगाया कि ये भी इसी मुकदमे में पकड़े गये हैं, बाद में जान पाया कि ये थे मानिकतला बगीचे के लड़के। एक माह बाद जेल में उनसे बातचीत हुई। कुछ देर बाद मुझे भी हाथ-मुंह धोने नीचे ले जाया गया—नहाने का कोई प्रबंध नहीं था अतः नहीं नहाया। उस दिन सवेरे खाने को मिला दाल-भात, जबरदस्ती कुछ-एक कौर उदरस्थ किये, बाकी छोड़ना पड़ा। शाम को मिले मुरमुरे। तीन दिनतक यही था हमारा आहार। किंतु इतना जरूर कहूंगा कि सोमवार को सार्जेंट ने स्वयं ही मुझे चाय और टोस्ट खाने को दिये।

बाद में सुना कि मेरे वकील ने कमिश्नर से घर से खाना भेजने की अनुमति मांगी थी पर हैलिडे साहब नहीं माने। यह भी सुना कि आसामियों से वकील या अटर्नी का मिलना निषिद्ध है। पता नहीं यह निषेध कानूनन ठीक है या नहीं। वकील का परामर्श मिलने से यद्यपि मुझे कुछ सुविधा होती फिर भी नितांत आवश्यकता नहीं थी, किंतु उससे अनेकों को मुकदमे में क्षति पहुंची। सोमवार को हमें कमिश्नर के सामने हाज़िर किया गया। मेरे साथ अविनाश और शैलेन थे। सबको अलग-अलग दल में ले जाया गया। पूर्वजन्म के पुण्यफल से हम तीनों पहले गिरफ़ार हुए थे और कानून की जटिलता काफी अनुभव कर चुके थे इसलिये तीनों ने ही कमिश्नर के आगे कुछ भी बोलने से इंकार कर दिया। अगले दिन हमें थौर्नहिल मैजिस्ट्रेट की कचहरी में ले जाया गया। इसी समय श्रीयुत कुमारकृष्ण दत्त, मान्युएल साहब और मेरे एक संबंधी से भेंट हुई। मान्युएल साहब ने मुझसे पूछा, "पुलिस कहती है आपके घर में अनेक संदेहजनक चिट्ठी-पत्री मिली हैं। ऐसी चिट्ठियां या कागजात क्या सचमुच थे?" मैंने कहा, "निस्संदेह कह सकता हूं, नहीं थे, होना बिल्कुल असंभव है।" निश्चय ही तब "मिष्टान्न पत्र" ('sweets letter') या scribbling (घसीट लेख) की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बात नहीं जानता था। अपने संबंधी से कहा, "घर में कह देना कि डरें नहीं, मेरी निर्दोषिता संपूर्णतया प्रमाणित होगी।" उस समय से मेरे मन में दृढ़ विश्वास उपजा कि यह होगा ही। पहले-पहल निर्जन कारावास में मन जरा विचलित हुआ किंतु तीन दिन प्रार्थना और ध्यान में बिताने के फलस्वरूप निश्चला शांति और अविचलित विश्वास ने प्राण को पुनः अभिभूत किया।

थौर्नहिल साहब के इजलास से हमें गाड़ी में अलीपुर ले जाया गया। उस दल में थे निरापद, दीनदयाल, हेमचंद्र दास आदि। इनमें हेमचंद्र दास को पहचानता था, एक बार मेदिनीपुर में उनके यहां ठहरा था। तब किसे पता था कि इस तरह बंदी भाव में जेल जाते हुए उनसे मिलना होगा। अलीपुर में मजिस्ट्रेट की अदालत में हमें काफी देर ठहरना पड़ा पर मजिस्ट्रेट के सामने हमें हाज़िर नहीं किया गया, केवल अंदर से वे हुकुम लिखा लाये। हम फिर से गाड़ी में चढ़े, तब एक सज्जन मेरे पास आकर बोले, "सुनता हूं कि इन्होंने आपके निर्जन कारावास की व्यवस्था की है, हुकुम लिखा जा रहा है। शायद किसीसे भी भेंट मुलाकात करने नहीं देंगे। इस बार यदि घरपर कुछ कहलाना चाहें तो मैं संदेश पहुंचा दूंगा।" मैंने उन्हें धन्यवाद दिया, किंतु जो कहना था वह मैं अपने आत्मीय द्वारा कहला चुका था अतः उनसे और कुछ नहीं कहा। अपने प्रति देशवासियों की सहानुभूति और अयाचित अनुग्रह के दृष्टांत के रूप में मैंने इस घटना का उल्लेख किया। इसके बाद कोर्ट से जेल में पहुंचा, हमें जेल के कर्मचारियों के हाथों में सौंप दिया गया। जेल में घुसने से पहले हमें स्नान कराया, जेल की पोशाक पहनने को दी और हमारे कुर्ते, धोती आदि धोने के लिये ले गये। चार दिन बाद स्नान करने पर हमें स्वर्गसुख की अनुभूति हुई। स्नान के बाद सबको अपनी-अपनी कोठरी में पहुंचा दिया गया। मैं भी अपने निर्जन कारागार में घुसा, छोटी-सी कोठरी के लौह-कपाट बंद हो गये। अलीपुर कारावास का आरंभ हुआ था ५ मई को। मुक्त हुआ अगले साल ६ मई को।

मेरा निर्जन कारागृह था नौ फीट लंबा और पांच-छः फीट चौड़ा, इसमें कोई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

खिड़की नहीं, सामने था एक बृहत् लौह कपाट; यह पिंजरा ही बना मेरा निर्दिष्ट वासस्थान। कमरे के बाहर था एक छोटा-सा पथरीला आंगन और ईंट की ऊंची दीवार, सामने था लकड़ी का दरवाजा। उस दरवाजे के ऊपरी भाग में मनुष्य की आंख की ऊंचाई पर था एक गोलाकार छेद, दरवाजा बंद होने पर संतरी उसमें आंख सटा थोड़ी-थोड़ी देर में झांकता था कि कैदी क्या कर रहा है। किंतु मेरे आंगन का दरवाजा प्रायः खुला रहता। ऐसे छः कमरे पास-पास थे, इन्हें कहा जाता था ६ 'डिक्री'। डिक्री का अर्थ है विशेष दंड का कमरा, न्याधीश या जेल सुपरिंटेंडेंट के हुकुम से जिन्हें निर्जन कारावास का दंड मिलता था उन्हें ही इन छोटे-छोटे गह्वरों में रहना होता था। इन निर्जन कारावासों की भी श्रेणी होती है। जिन्हें विशेष सजा मिलती है उनके आंगन का दरवाजा बंद रहता है; मनुष्य संसार से पूर्णतया वंचित हो जाते हैं, उनका जगत् से एकमात्र संपर्क रह जाता है संतरी की आंखों और दो समय खाना लानेवाले कैदी से। सी॰ आई॰ डी॰ की नजरों में हेमेंद्र दास मुझसे भी ज्यादा आतंककारी थे, इसीलिये उनके लिये ऐसी व्यवस्था की गयी। इस सजा के ऊपर भी सजा है—हाथ-पैर में हथकड़ी और बेड़ी पहन निर्जन कारावास में रहना। यह चरम दंड केवल जेल की शांति भंग करनेवालों या मारपीट करनेवालों के लिये नहीं, बार-बार काम में गफलत करने से भी यह दंड मिलता है। निर्जन कारावास के मुकदमे के आसामी को दंड के रूप में ऐसा कष्ट देना नियम के विरुद्ध है परंतु स्वदेशी या 'वंदेमातरम्' कैदी नियम से बाहर हैं, पुलिस की इच्छा से उनके लिये भी सुव्यवस्था होती है।

हमारा वासस्थान था तो ऐसा लेकिन साज-संरजाम में भी हमारे सहृदय कर्मचारियों ने आतिथ्य संस्कार में कोई त्रुटि नहीं की। एक थाली और एक कटोरा आंगन को सुशोभित करते थे। खूब अच्छी तरह मांजे जाने पर मेरा सर्वस्व थाली और कटोरा चांदी की तरह इस कदर चमकते कि प्राण जुड़ा जाते और उस निर्दोष किरणमय उज्ज्वलता में 'स्वर्गजगत्' में विशुद्ध ब्रिटिश राजतंत्र की उपमा पा राजभक्ति के निर्मल आनंद का अनुभव करता था। दोषों में एक दोष था कि थाली भी उसे समझ कर आनंद में इतनी उत्फुल्ल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हो उठती थी कि अंगुली का जरा-सा जोर पड़ते ही वह घुमक्कड़ अरब दरवेशों की तरह चक्कर काटने लगती, ऐसे में एक हाथ से खाना और एक हाथ से थाली पकड़े रहने के सिवा कोई चारा नहीं रहता। नहीं तो चक्कर काटते-काटते जेल का अतुलनीय मुट्ठी भर अन्न लेकर वह भाग जाने का उपक्रम करती। थाली की अपेक्षा कटोरा था और भी अधिक प्रिय और उपकारी। जड़ पदार्थों में मानों यह था ब्रिटिश सिविलियन। सिविलियनों में जैसे सब कार्यों में स्वभावजात निपुणता और योग्यता होती है, जज, शासनकर्ता, पुलिस, शुल्क-विभाग के कर्ता, म्युनिसिपैलिटी के अध्यक्ष, शिक्षक, धर्मोपदेशक, जो चाहो वही, कहने भर से ही, बन सकते हैं—जैसे उनके लिये, एक शरीर में, एक ही साथ अनुसंधाता, अभियोगकर्ता, पुलिस मजिस्ट्रेट और कभी-कभी वादी के परामर्शदाता का भी प्रीतिसम्मिलन सहज साध्य था, वैसा ही था मेरा प्यारा कटोरा भी। कटोरे की जात नहीं, विचार नहीं। कारागृह में उसी कटोरे से पानी ले शौच किया, उसी कटोरे से मुंह धोया, स्नान किया, कुछ देर बाद उसीमें खाना पड़ा, उसी कटोरे में दाल या तरकारी डाली गयी, उसी कटोरे से पानी पिया और कुल्ला किया। ऐसी सर्वकार्यक्षम मूल्यवान् वस्तु अंगरेजों की जेल में ही मिलनी संभव है। कटोरा मेरे लिये ये सब सांसारिक उपकार कर योग-साधना में भी सहायक बना। घृणा-परित्याग कराने का ऐसा सहायक और उपदेशक कहां पाऊंगा? निर्जन कारावास की पहली अवधि के बाद जब हमें एक साथ रखा गया तब मेरे सिविलियन के अधिकारों का पृथकीकरण हुआ,—अधिकारियों ने शौच के लिये अन्य उपकरण जुटाया किंतु महीने-भर में घृणा पर काबू पाने का बिना मांगा पाठ पढ़ लिया था। शौच की सारी व्यवस्था ही मानों इस संयम की शिक्षा को ध्यान में रखकर की गयी थी। पहले कहा है, निर्जन कारावास विशेष दंड में गिना जाता है और उस दंड का मूल सिद्धांत है जितना संभव हो मनुष्य-संसर्ग और मुक्त आकाश-सेवन का वर्जन। बाहर शौच की व्यवस्था करने से तो यह सिद्धांत भंग होता अतः कोठरी में ही तारकोल पुती दो टोकरियां दी जाती थीं। सवेरे-शाम मेहतर साफ कर जाता, तीव्र आंदोलन और मर्मस्पर्शी भाषण देने पर और समय भी सफाई हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाती, किंतु असमय पाखाना जाने से घंटों-घंटोंतक दुर्गन्ध भोगकर प्रायश्चित्त करना पड़ता। निर्जन कारावास की दूसरी अवधि में इसमें थोड़ा-बहुत सुधार हुआ किंतु सुधार होता है पुराने जमाने के मूलतत्त्वों को अक्षुण्ण रखते हुए शासन में सुधार। किं बहुना, इस छोटी-सी कोठरी में ऐसी व्यवस्था होने से हमेशा, विशेषकर खाने के समय और रात को, भारी असुविधा भोगनी पड़ती थी। जानता हूं, शयनागार के साथ पाखाना रखना प्रायः विलायती सभ्यता की विशेषता है किंतु एक छोटे-से कमरे में शयनागार, भोजनालय और पाखाना—इसे कहते हैं too much of a good thing (भलाई की भी सीमा पार कर जाना)। हम ठहरे कुअभ्यासग्रस्त भारतवासी, सभ्यता के इतने ऊंचे सोपान पर पहुंचना हमारे लिये कष्टकर है।

गृह-सामग्री में और भी चीजें थीं : एक नहाने की बाल्टी, पानी रखने को एक टीन की नलाकार बाल्टी और दो जेल के कंबल। स्नान की बाल्टी आंगन में रखी रहती, वहीं नहाता था। पहले हमारे भाग्य में पानी का कष्ट नहीं था पर बाद में यह भी भोगना पड़ा। पहले पास के गोहालघर (गोशाला) के कैदी नहाते समय मेरी इच्छानुसार बाल्टी में पानी भर देते थे, इसीलिये नहाने का समय ही था जेल की तपस्या के बीच प्रतिदिन गृहस्थ की विलासवृत्ति और सुखप्रियता को तृप्त करने का अवसर। दूसरे आसामियों के भाग्य में इतना भी नहीं जुटा था; एक बाल्टी पानी से ही उन्हें शौच, बर्तन-मंजाई, स्नान सब करना होता था। विचाराधीन कैदी थे इसीलिये इतना-सा विलास भी मिला हुआ था, कैदियों को तो दो-चार कटोरे पानी में ही स्नान करना पड़ता था। अंगरेज कहते हैं भगवत्-प्रेम व शरीर की स्वच्छंदता प्रायः समान और दुर्लभ सद्गुण हैं, जेलों में यह व्यवस्था इस प्रवाद की यथार्थता को सिद्ध करने के लिये है या अतिरिक्त स्नान के सुख से कैदियों के अनिच्छा-जनित तपस्या के रस भंग होने के भय से यह व्यवस्था प्रचलित की गयी है, यह निर्णय करना कठिन है। आसामी अधिकारियों की इस दया को काक-स्नान कह खिल्ली उड़ाते थे। मनुष्यमात्र ही है असंतोषप्रिय। नहाने की व्यवस्था से पीने के पानी की व्यवस्था और भी निराली थी। गर्मी का मौसम, मेरे छोटे-से कमरे में हवा का प्रवेश

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लगभग निषिद्ध था किंतु मई महीने की उग्र और प्रखर धूप बेरोक-टोक घुस आती थी। कमरा जलती भट्टी-सा हो उठता था। इस भट्टी में तपते हुए अदम्य जल-तृष्णा को कम करने का उपाय था वही टीन की बाल्टी का अर्धउष्ण जल। बार-बार वही पीता था, प्यास तो नहीं बुझती थी वरन् पसीना छूटता और कुछ देर में फिर से प्यास लग आती थी। पर हां, किसी-किसी के आंगन में मिट्टी की सुराही रखी होती, वे अपने पूर्वजन्म की तपस्या का स्मरण कर अपनेको धन्य मानते। तब घोर पुरुषार्थवादी को भी भाग्य में विश्वास करने को बाध्य होना पड़ता था, किसीके भाग्य में ठंडा पानी बदा था तो किसीके भाग्य में प्यास, सब था भाग्य का फेर। अधिकारीगण, किंतु, पूर्ण पक्षपातरहित हो कलसी या बाल्टी वितरण करते थे। इस यदृच्छा-लाभ से मेरे संतुष्ट होने या न होने से भी मेरा जल-कष्ट जेल के सहृदय डाक्टर बाबू को असह्य हो उठा। वे कलसी जुटाने में लगे किंतु क्योंकि इस बंदोबस्त में उनका हाथ नहीं था इसलिये बहुत दिनतक इसमें सफल नहीं हुए, अंत में उनके ही कहने से मुख्य जमादार ने कहीं से कलसी का आविष्कार किया। उससे पहले ही तृष्णा के साथ अनेक दिन के घोर संग्राम से मैं पिपासा-मुक्त हो चला था। तिसपर इस तप्त कमरे में बिस्तर के नाम को थे दो जेल के बने मोटे कंबल। तकिया नदारद, एक कंबल को नीचे बिछा लेता और दूसरे की तह करके तकिया बना सोता। जब गर्मी असह्य हो उठती और बिस्तर पर न रहा जाता तब मिट्टी में लोट लगा, बदन ठंडा कर आराम पाता था। माता वसुंधरा की शीतल गोद के स्पर्श का क्या सुख है यह तभी जाना। फिर भी, जेल में उस गोद का स्पर्श बहुत कोमल नहीं होता, उससे निद्रा के आगमन में बाधा आती अतः कंबल की शरण लेनी पड़ती। जिस दिन वर्षा होती वह दिन बड़े आनंद का दिन होता। इसमें भी एक असुविधा यह थी कि झड़ी-झंझा होते ही धूल, पत्ते और तिनकों से भरे प्रभंजन के तांडव नृत्य के बाद मेरे पिंजरे के अंदर बाढ़-सी आ जाती। ऐसे में रात को भीगा कंबल ले कमरे के एक कोने में दुबकने के सिवा कोई चारा न रहता। प्रकृति की इस विशिष्ट लीला के समाप्त होने पर भी जलप्लावित धरती जबतक सूख नहीं जाती थी तबतक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निद्रादेवी की आशा छोड़ विचारों का दामन पकड़ना पड़ता था। एकमात्र सूखी जगह थी शौच के आसपास किंतु वहां कंबल बिछाने की प्रवृत्ति न होती। इन सब असुविधाओं के होते हुए भी झड़ी-झंझा के दिन भीतर खूब हवा आती और कमरे की जलती भट्टी का ताप दूर हो जाता इसलिये झड़ी-झंझा का सादर स्वागत करता।

अलीपुर के गवर्नमेंट होटल का जो वर्णन मैंने किया है एवं आगे और भी करूंगा वह निजी कष्ट-भोग की विज्ञप्ति के लिये नहीं वरन् सुसभ्य ब्रिटिश राज्य में विचाराधीन कैदियों के लिये कितनी अद्भुत व्यवस्था थी, निर्दोषों को दीर्घकालव्यापी कितनी यंत्रणा भोगनी पड़ सकती है, यह बतलाने के लिये ही है यह वर्णन। कष्टों के जो कारण दिखलाये हैं, वे तो थे ही किंतु भगवान् की दया दृढ़ थी इसलिये थोड़े दिनोंतक ही कष्ट अनुभव किया, उसके बाद तो—किस उपाय से वह बाद में बताऊंगा—मन उस दुःख से अतीत हो कष्ट अनुभव करने में असमर्थ हो गया था। इसीलिये मन में जेल की स्मृति जगनेपर क्रोध या दुःख नहीं, हंसी ही आती है। पहले-पहल जब जेल की विचित्र पोशाक पहन अपने पिंजरे में घुसकर रहने का बंदोबस्त देखा था तब यही भाव मन में उदित हुआ था। मन-ही-मन हंस रहा था। अंगरेज जाति का इतिहास और आधुनिक आचरण का निरीक्षण कर बहुत पहले ही मैंने उनके विचित्र और रहस्यमय चरित्र को समझ लिया था, इसीलिये अपने प्रति उनका ऐसा व्यवहार देखकर भी जरा भी आश्चर्यान्वित या दुःखी नहीं हुआ। साधारण दृष्टि से हम लोगों के साथ उनका ऐसा व्यवहार अतिशय अनुदार व निंदनीय था। हम सब थे कुलीन घरानों के, बहुत-से थे जमींदारों के बेटे, कितने ही वंश, विद्या, गुण और चरित्र में थे इंग्लैंड के शीर्षस्थानीय व्यक्तियों के समकक्ष! हम जिस अपराध में पकड़े गये थे वह भी सामान्य खून, चोरी, डकैती नहीं था, था देश के लिये विदेशी सरकार के विरुद्ध युद्ध-चेष्टा या समरोद्योग का षड्यंत्र। तिसपर कइयों को दोषी ठहराने में प्रमाण का नितांत अभाव था; पुलिस का संदेह ही था उनके पकड़े जाने का एकमात्र कारण। ऐसे स्थान में सामान्य चोर-डकैतों की तरह रखना—चोर डकैत ही क्यों, पशुओं की तरह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पिंजरे में रख, पशुओं का अखाद्य आहार खिलाना, जलकष्ट, क्षुत्पिपासा, धूप, वर्षा व शीत सहन कराना—इससे ब्रिटिश सरकार और ब्रिटिश जाति की गौरव-वृद्धि नहीं होती। यह है किंतु उनका जातीय चरित्रगत दोष। अंगरेजों में क्षत्रियोचित गुण होते हुए भी शत्रु या विरुद्धाचरणकारी के साथ व्यवहार करते समय वे हैं सोलह आने बनिये। मेरे मन में तब विरक्ति की भावना ने स्थान नहीं पाया बल्कि मुझमें और देश के साधारण अशिक्षित लोगों में कुछ भेद नहीं रखा गया यह देखकर कुछ आनंदित हुआ, और फिर इस व्यवस्था ने तो मातृभक्ति के प्रेमाभाव में आहुति का काम किया। मैंने इसे योग-शिक्षा और द्वंद्व-जय का अपूर्व उपकरण और अनुकूल अवस्था माना, तिसपर मैं था चरमपंथी दल का जिनके मत में प्रजातंत्र एवं धनी-दरिद्र का साम्य राष्ट्रीय भाव का एक प्रधान अंग है। याद हो आया—मत को कार्यान्वित करना अपना कर्तव्य समझ सूरत जाते समय सभी ने एक साथ तीसरे दर्जे में यात्रा की थी, कैंप में नेतागण अपना-अपना अलग प्रबंध न कर सबके साथ एक भाव से, एक ही कमरे में सोते। धनी, दरिद्र, ब्राह्मण, वैश्य, शूद्र, बंगाली, मराठी, पंजाबी, गुजराती—सब दिव्य भ्रातृभाव से एक साथ रहते, सोते, खाते। जमीन पर सोना, दाल-भात, दही ही खाना, सब चीजों में था स्वदेशी का बोलबाला। कलकत्ता और बंबई के विदेश से लौटे हुए लोग और मद्रास के तिलकधारी ब्राह्मण सब एक साथ मिल-जुल गये थे। इस अलीपुर जेल में रहते समय अपने देश के कैदी, अपने देश के किसान, लुहार, कुम्हार, डोम-बाग्दियों के समान आहार, समान रहन-सहन, समान कष्ट, समान मानमर्यादा पाकर मैंने जाना कि सर्वशरीरवासी नारायण ने इस साम्यवाद, इस एकता, इस देशव्यापी भ्रातृभाव से सहमत हो मानों मेरे जीवन-व्रतपर अपनी मुहर लगा दी हो। जिस दिन जन्मभूमि-रूपिणी जगज्जननी के पवित्र मंडप में सारा देश भ्रातृभाव में एक प्राण हो जगत् के सामने उन्नतमस्तक हो खड़ा होगा, सहवासी आसामी और कैदियों के प्रेमपूर्ण आचरण एवं सरकार के इस साम्यभाव में, इस कारावास में उस शुभ दिन का हृदय में पूर्वाभास पा कितनी ही बार हर्षित व पुलकित हो उठता था। अभी उसी दिन पूना के "Indian Social

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Reformer" ने मेरी एक सहज बोधगम्य उक्ति पर व्यंग कसते हुए कहा था, "जेल में तो भगवत्सान्निध्य की बड़ी बाढ़-सी आ गयी दीखती है।" हाय रे मान-सम्मान के अन्वेषी, अल्प विद्या से, अल्प सद्‌गुण से गर्वित मनुष्य के अहंकार और क्षुद्रता ! जेल में, कुटीर में, आश्रम में, दुःखी के हृदय में भगवान् प्रकट नहीं होंगे तो क्या धनी के विलास-भवन में, सुखान्वेषी स्वार्थांध संसारी की सुख-शय्यापर होंगे ? भगवान् विद्या, सम्मान, लोकमान्यता, लोकप्रशंसा, बाह्य स्वच्छंदता व सभ्यता नहीं देखते। वे दुःखी के सामने ही दयामयी मां का रूप धरते हैं। जो मानवमात्र में, जाति में, स्वदेश में, दुःखी-गरीब, पतित-पापी में नारायण को देख उनकी सेवा में जीवन समर्पित करते हैं उन्हींके हृदय में आ बसते हैं नारायण और उत्थानोद्यत पतित जाति में, देश-सेवक की निर्जन कारा में ही संभव है भगवत्-सान्निध्य की बाढ़।

कंबल, थाली-कटोरी का प्रबंध कर जेलर के चले जानेपर कंबलपर बैठ मैं जेल का दृश्य देखने लगा। लालबाजार की हवालात की अपेक्षा यह निर्जन कारावास अधिक अच्छा लगा। वहां उस विशाल कमरे की निर्जनता मानो अपनी विशाल काया को विस्तारित करने का अवकाश पा निर्जनता को और भी गहन कर दे रही थी। यहां छोटे-से कमरे की दीवारें मानों बंधु-रूप में पास आ, ब्रह्ममय हो आलिंगन में भर लेने को तैयार थीं। वहां दो तल्ले के कमरे की ऊंची-ऊंची खिड़कियों से बाहर का आकाश भी नहीं दीखता था, इस संसार में पेड़-पत्ते, मनुष्य, पशु-पक्षी, घर-द्वार भी कुछ है, बहुत बार उसकी कल्पना करना भी कठिन हो जाता था। यहां आंगन का दरवाजा खुला होनेपर सरियों के पास बैठने से बाहर जेल की खुली जगह और कैदियों का आना-जाना देखा जा सकता है। आंगन की दीवार से सटा वृक्ष था, उसकी नयनरंजक नीलिमा से प्राण जुड़ा जाते। छह डिक्री के छह कमरों के सामने जो संतरी घूमता रहता उसका चेहरा और पदचाप बहुत बार परिचित बंधु के चलने-फिरने की तरह प्रिय लगता। कोठरी के पार्श्ववर्ती गोहालघर के कैदी कोठरी के सामने से गौएं चराने ले जाया करते। गौ और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गोपाल थे प्रतिदिन के प्रिय दृश्य। अलीपुर के निर्जन कारावास में अपूर्व प्रेम की शिक्षा पायी। यहां आने से पहले मनुष्यों के साथ मेरा व्यक्तिगत प्रेम अतिशय छोटे घेरे में घिरा था और पशु-पक्षियों पर रुद्ध प्रेम-स्रोत तो बहता ही नहीं था। याद आता है, रवि बाबू की एक कविता में भैंस के प्रति एक ग्राम्य बालक का गभीर प्रेम बहुत सुंदर ढंग से वर्णित हुआ है, पहली बार पढने पर वह जरा भी हृदयंगम नहीं हुई थी, भाव-वर्णन में अतिशयोक्ति और अस्वाभाविकता का दोष देखा था। अब पढ़नेपर उसे दूसरी ही दृष्टि से देखता। अलीपुर में रहकर समझ सका कि सब तरह के जीवों पर मनुष्य के प्राणों में कितना गभीर स्नेह स्थान पा सकता है, गौ, पक्षी, चींटी तक को देख कितने तीव्र आनंद के स्फुरण में मनुष्य का प्राण अस्थिर हो सकता है।

कारावास का पहला दिन शांति से कट गया। सभी कुछ था नया, इससे मन में स्फूर्ति जगी। लालबाजार की हवालात से तुलना करने पर इस अवस्था में भी प्रसन्नता हुई और भगवान् पर निर्भर था इसलिये यहां निर्जनता भी भारी नहीं पड़ी। जेल के खाने की अद्भुत सूरत देखकर भी इस भाव में कोई व्याघात नहीं पड़ा। मोटा भात, उसमें भी भूसी, कंकड़, कीड़ा, बाल आदि कितने तरह के मसालों से पूर्ण—स्वादहीन दाल में जल का अंश ही अधिक, तरकारी में निरा घास-पात का साग। मनुष्य का खाना इतना स्वादहीन और निस्सार हो सकता है यह पहले नहीं जानता था। साग की यह विषण्ण गाढ़ी कृष्ण मूर्ति देखकर ही डर गया, दो ही ग्रास खा उसे भक्तिपूर्ण नमस्कार कर एक ओर सरका दिया। सब कैदियों के भाग्य में एक ही तरकारी बदी थी और एक बार कोई तरकारी शुरू हो जाये तो अनंत कालतक वही चलती थी। उस समय साग का राज्य था। दिन बीते, पखवारे बीते, माह बीते किंतु दोनों समय वही साग, वही दाल, वही भात। चीजें तो क्या बदलनी थीं, रूप में भी कतई परिवर्तन नहीं होता था, उसका वही नित्य, सनातन, अनाद्यनंत, अपरिणामातीत अद्वितीय रूप! दो दिन में ही कैदी में इस नश्वर माया-जगत् के स्थायित्व पर विश्वास जनमने लगेगा। इसमें भी अन्य कैदियों की अपेक्षा मैं भाग्यशाली रहा, यह भी डाक्टर बाबू

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की दया से। उन्होंने हस्पताल से मेरे लिये दूध की व्यवस्था की थी, इससे कुछ दिन के लिये साग-दर्शन से मुक्ति मिली।

उस रात जल्दी ही सो गया; किंतु निश्चिंत निद्रा निर्जन कारावास का नियम नहीं, उससे कैदियों की सुखप्रियता जग सकती है। इसीलिये नियम है कि जितनी बार पहरा बदले उतनी बार कैदी को हांक मारकर उठाया जाता है और हुंकारा न भरनेतक छोड़ते नहीं। जो-जो छह डिक्री का पहरा देते थे उनमेंसे बहुत-से इस कर्तव्य-पालन से विमुख थे,—सिपाहियों में प्रायः ही कठोर कर्तव्य-ज्ञान की अपेक्षा दया और सहानुभूति अधिक थी, विशेषतः हिंदुस्तानियों के स्वभाव में। किंतु कुछ लोगों ने नहीं बख्शा। वे हमें इस तरह जगा यह कुशल संवाद पूछते : "बाबू, ठीक हैं तो?" यह असमय का हंसी-मजाक सदा नहीं सुहाता पर समझ गया था कि जो ऐसा करते हैं वे सरलभाव से नियमवश ही हमें उठाते हैं। कई दिन विरक्त होते हुए भी इसे सह गया। अंततः निद्रा की रक्षा के लिये धमकी देनी पड़ी। दो-चार बार धमकाने के बाद देखा कि रात को कुशल-क्षेम पूछने की प्रथा अपने-आप ही उठ गयी।

अगले दिन सवेरे सवा चार बजे जेल की घंटी बजी। कैदियों को जगाने के लिये यह पहली घंटी थी। कुछ मिनट बाद दूसरी बजती, इसके बाद कैदी पंक्तिबद्ध हो बाहर आ हाथ-मुंह धो, 'लपसी' खा दिनभर की मशक्कत में लग जाते। इतनी घंटियों के बजते हुए सोना असंभव जान मैं भी उठ जाता। पांच बजे लौह-द्वार खोला जाता, मैं हाथ-मुंह धो फिर से कमरे में आ बैठा। कुछ देर बाद मेरे दरवाजे पर लपसी हाजिर हुई किंतु उस दिन उसे खाया नहीं, केवल चाक्षुष परिचय हुआ। इसके कुछ दिन बाद पहली बार इस परमान्न का भोग लगाया। लपसी अर्थात् मांडसहित उबला भात, यही थी कैदियों की छोटी हाजिरी। लपसी की त्रिमूर्ति या तीन अवस्थाएं हैं। पहले दिन लपसी का प्राज्ञभाव,. अमिश्रित मूलपदार्थ, शुद्ध शिव शुभ्र-मूर्ति। दूसरे दिन लपसी का हिरण्यगर्भ रूप, दाल के साथ सीजा हुआ खिचड़ी के नाम से अभिहित, पीतवर्ण, नाना धर्मसंकुल। तीसरे दिन थोड़े-से गुड़ में मिश्रित लपसी की विराट् मूर्ति, धूसर वर्ण, कुछ परिमाण में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनुष्य के व्यवहार-योग्य। प्राज्ञ और हिरण्यगर्भ का सेवन साधारण मर्त्य मनुष्य के बूते से बाहर मान मैंने उसे त्याग दिया था। कभी-कभार विराट् के दो ग्रास उदरस्थ कर ब्रिटिश राज्य के नाना सद्गुण और पाश्चात्य सभ्यता के उच्च दर्जे के humanitarianism (लोकहितवाद) के बारे में सोच-सोचकर आनंदमग्न होता रहता था। कहना चाहिये कि लपसी ही था बंगाली कैदियों का एकमात्र पुष्टिकर आहार, बाकी सब था सारशून्य। वह होने से भी क्या होगा ? उसका जैसा स्वाद था, वह केवल भूख से सताये जाने पर ही खाया जा सकता है, वह भी जोर-जबर्दस्ती, मन को बहुत समझा-बुझाकर।

उस दिन साढ़े ग्यारह बजे स्नान किया। घर से जो पहनकर आया था, पहले चार-पांच दिन वही पहने रहना पड़ा। नहाते समय गोहालघर के जो वृद्ध कैदी वार्डर मेरी देखरेख के लिये नियुक्त हुए थे उन्होंने कहीं से डेढ़ हाथ चौड़ा एंडी का कपड़ा जुटा दिया था, अपने एकमात्र कपड़े सूखने तक वही पहने बैठा रहता। मुझे कपड़े धोने और बर्तन मांजने नहीं पड़ते थे, गोहालघर का एक कैदी यह कर देता था। ग्यारह बजे खाना। कमरे की छितनी के सान्निध्य से बचने के लिये ग्रीष्म की धूप सहते हुए प्रायः ही आंगन में खाया करता। संतरी भी इसमें बाधा न देते। शाम का खाना होता पांच-साढ़े पांच बजे। उसके बाद लौह-द्वार खुलना निषिद्ध था। सात बजे शाम का घंटा बजता। मुख्य जमादार कैदी वार्डरों को इकट्ठा कर उच्च स्वर में नाम पढ़ते जाते थे, उसके बाद सब अपनी-अपनी जगह चले जाते। श्रांत कैदी निद्रा की शरण ले जेल के इस एकमात्र सुख का अनुभव करते। इस समय दुर्बलचेता अपने दुर्भाग्य या भावी जेल-दुःख की चिंता कर रोया करते। भगवद्-भक्त नीरव रात्रि में ईश्वर का सान्निध्य अनुभव कर प्रार्थना या ध्यान में आनंद लूटते। रात को इन अभागे, पतित, समाज-पीड़ित तीन सहस्र ईश्वरसृष्ट प्राणियों का यह अलीपुर जेल, प्रकांड यंत्रणा-गृह विशाल नीरवता में डूब जाता।

जो मेरे साथ एक ही अभियोग के अभियुक्त थे उनसे जेल में मिलना-जुलना नहीं के बराबर था। उन्हें कहीं और रखा गया था। छह डिक्री के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पिछली तरफ छोटी-छोटी कोठरियों की दो पंक्तियां थीं, इन दोनों पंक्तियों में कुल मिलाकर थीं ४४ कोठरियां, इसीलिये ये चवालीस डिक्री कहलाती थीं। इसी डिक्री की एक पंक्ति में अधिकतर आसामियों का वासस्थान निर्दिष्ट था। कोठरी में बंद रहते हुए भी वे निर्जन कारावास नहीं भोग रहे थे, क्योंकि एक-एक कमरे में तीन-तीन थे। जेल के दूसरे भाग में एक और डिक्री थी, उसमें कुछ एक बड़े कमरे थे; एक-एक कमरे में बारह आदमी तक रह सकते थे। जिसके भाग्य में यह डिक्री पड़ती वे अधिक सुख से रहते। इस डिक्री में बहुत-से एक ही कमरे में बंद थे, वे रात-दिन बातचीत करने का मौका और मनुष्य-संपर्क पा सुख से समय बिताते। तो भी, उनमें से एक इस सुख से वंचित थे। वह थे हेमचंद्र दास। न जाने क्यों अधिकारियों को इनसे विशेष भय या इनपर क्रोध था, इतने लोगों में से निर्जन कारावास की यंत्रणा भोगने के लिये अधिकारियों ने उन्हें ही चुना। हेमचंद्र की निजी धारणा थी कि पुलिस भरपूर चेष्टा करने पर भी उनसे दोष स्वीकार न करा सकी इसीलिये था उनपर यह क्रोध। उन्हें इस डिक्री के एक बहुत ही छोटे-से कमरे में बंद करके बाहर का दरवाजा तक बंद रखा जाता था। कह चुका हूं कि यही थी इस विशेष सजा की चरमावस्था। बीच-बीच में पुलिस नाना जाति, नाना वर्ण, नाना आकृतियों के साक्षी ला Identification (शिनाख्त) के प्रहसन का नाटक कराती। उस समय हम सबको आफिस के आगे एक लंबी कतार में खड़ा किया जाता। जेल के अधिकारी हमारे साथ जेल के दूसरे-दूसरे मुकदमे के आसामियों को मिला उन्हें दिखाते थे। किंतु यह था केवल नाम के लिये। इन आसामियों में शिक्षित और सज्जन तो एक भी नहीं था, जब उनके साथ एक ही पंक्ति में खड़े होते तो दोनों तरह के आसामियों में इतना भेद होता कि एक तरफ तो बम-केस के अभियुक्त लड़कों का तेजस्वी, तीक्ष्णबुद्धि प्रकाशक चेहरे का भाव और गठन और दूसरी तरफ साधारण कैदियों की मलिन पोशाक और निस्तेज मुख को देख जो यह न बता पाये कि कौन किस श्रेणी का है उन्हें मूर्ख तो क्या निकृष्ट मनुष्यबुद्धि से भी रहित कहना होगा। यह शिनाख्त की परेड आसामियों को अप्रिय नहीं लगती थी। इससे जेल के एकरस जीवन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में वैचित्र्य आता और आपस में दो-एक बात कहने का भी मौका मिल जाता। गिरफ्तारी के बाद पहली बार ऐसी एक परेड में अपने भाई बारींद्र को देख पाया किंतु तब उसके साथ कोई बातचीत नहीं हुई। प्रायः नरेंद्र-नाथ गोस्वामी ही मेरी बगल में खड़े होते थे इसलिये उस समय उनके साथ बातचीत जरा ज्यादा हुई। गोसाईं अतिशय सुंदर, लंबे, गोरे, बलिष्ठ, पुष्टकाय थे किंतु उनकी आंखों से कुवृत्ति झलकती थी, बातों में भी बुद्धिमत्ता का कोई लक्षण नहीं मिला। इस बारे में उनमें और अन्य युवकों में विशेष अंतर था। उनके चेहरे में प्रायः ही उच्च और पवित्र भाव अधिक और बातचीत में प्रखरबुद्धि, ज्ञानलिप्सा और महत् स्वार्थहीन आकांक्षा की अभिव्यक्ति पाता। गोसाईं की बात मूर्खतापूर्ण और लघुचेता मनुष्य की बात की तरह होते हुए भी तेज और साहस से पूर्ण थी। उन्हें उस समय पूरा विश्वास था कि वे बरी हो जायेंगे। वे कहा करते, "मेरे पिता मुकदमे में पारंगत हैं, पुलिस उन्हें कभी भी नहीं हरा सकेगी। मेरे इज़हार भी मेरे विरुद्ध नहीं जायेंगे, क्योंकि यह प्रमाणित हो जायेगा कि पुलिस ने मुझे शारीरिक यंत्रणा देकर मेरे इज़हार लिये हैं" मैंने पूछा, "तुम तो पुलिस के हाथों में थे। साक्षी कहां हैं ?" अम्लानवदन गोसाईं बोले, "मेरे पिता सैंकड़ों मुकदमे लड़े हैं, वे अच्छी तरह सब समझते हैं। साक्षी का अभाव नहीं होगा"। ऐसे लोग ही बनते हैं approver—मुखविर !

अबतक आसामियों की अनर्थक असुविधा और नाना कष्टों की बात कही है किंतु यह भी कहना चाहिये कि सभी कुछ था जेल की प्रणाली का दोष; जेल के ये सब कष्ट किसी की व्यक्तिगत निष्ठुरता या मनुष्योचित गुण के अभाव से नहीं मिले। अलीपुर जेल के तो सभी अधिकारी अतिशय भद्र, दयावान् और न्यायपरायण थे। यदि किसी जेल में कैदी की यंत्रणा कम हुई है, यूरोपीय जेल-प्रणाली की अमानुषिक बर्बरता दया और न्यायपरायणता से घटी है तो वह बुराई से भलाई हुई है अलीपुर जेल में और इमर्सन साहब के राजत्व में। इस भलाई के दो प्रधान कारण थे जेल के अंगरेज सुपरिंटेंडेंट इमर्सन साहब और हस्पताल के असिस्टेंट बंगाली डाक्टर वैद्यनाथ चटर्जी के असाधारण गुण। इनमें से एक थे यूरोप के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लुप्तप्राय क्रिश्चियन आदर्श के अवतार और दूसरे हिंदूधर्म के सारमर्म दया और परोपकार की जीवंत मूर्ति। इमर्सन साहब-जैसे अंगरेज इस देश में कहां आते हैं, विलायत में भी कम ही मिलते हैं। एक क्रिश्चियन सज्जन में जो गुण होने चाहियें वे सब उनमें एक साथ अवतीर्ण हुए थे। वे थे शांतिप्रिय, विचारशील, दया-दाक्षिण्य में अतुलनीय, न्यायवान् भद्र व्यवहार को छोड़ अधम के प्रति भी अभद्रता दिखलाने में स्वभाव से अक्षम, सरल, अकपट, संयमी। दोष यही था कि कर्मकुशलता और उद्यम की कमी थी, जेलर पर सारा कार्यभार छोड़ वे स्वयं निश्चेष्ट रहते। मेरा ख्याल है कि इससे कोई बड़ी भारी क्षति नहीं हुई। जेलर योगेंद्र बाबू दक्ष और योग्य पुरुष थे, बहुमूत्र से अतिशय पीड़ित होनेपर भी अपने-आप सब काम-काज देखते और साहब का स्वभाव पहचानते थे इसलिये जेल में न्याय-निष्ठा और क्रूरता के अभाव की रक्षा करते। किंतु वे इमर्सन साहब की तरह महात्मा नहीं थे, थे मात्र सामान्य बंगाली सरकारी नौकर, साहब को खुश करना जानते थे, दक्षता और कर्तव्यबुद्धि के साथ काम करते, स्वाभाविक भद्रता और शांतभाव से लोगों के साथ व्यवहार करते, इसके अतिरिक्त और कोई विशेष गुण उनमें नहीं देखा। नौकरी से प्रबल मोह था। विशेषकर तब मई का महीना था, पेंशन पाने का समय पास ही आ गया था, जनवरी में पेंशन ले दीर्घ परिश्रमोपार्जित विश्राम का सुख लूटने की आशा बंधी थी। अलीपुर बम-केस के आसामियों का आविर्भाव देख हमारे जेलर महाशय अत्यंत भीत और चिंतित हो उठे थे। ये सब उग्र-स्वभाव तेजस्वी बंगाली लड़के किस दिन क्या कांड कर बैठें इसी चिंता से वे उद्विग्न रहते। वे कहा करते, ताड़-गाछ पर केवल डेढ़ इंच चढ़ना बाकी है। किंतु उस डेढ़ इंच का केवल आधा ही वे चढ़ पाये थे। अगस्त के अंत में बोकानन साहब जेल का पर्यवेक्षण कर संतुष्ट हुए। जेलर महाशय आनंदित हो बोले, "मेरे कार्य-अवधि में साहब का यह अंतिम आगमन था, अब पेंशन का डर नहीं।" हाय रे मनुष्य की अंधता! कवि ने ठीक ही कहा है, विधाता ने दुःखी मनुष्य के दो परम उपकार किये हैं। पहला, भविष्य को निबिड़ अंधकार से ढक रखा है, दूसरा, उसका एकमात्र अवलंबन और सांत्वना-स्वरूप अंधी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आशा उसे दी है। उनके कहने के चार-पांच दिन बाद ही नरेन गोसाईं कानाई के हाथों मारे गये, बोकानन का बार-बार जेल में आना शुरू हुआ। फलस्वरूप योगेंद्र बाबू की असमय ही नौकरी छूट गयी और शोक और रोग के मिलित आक्रमण से देह भी छूट गयी। ऐसे कर्मचारी पर संपूर्ण भार न छोड़ इमर्सन साहब स्वयं यदि सब कार्य देखते तो उनके राज में अलीपुर जेल के अधिक सुधार और उन्नति की संभावना थी। वे जितना देखते उसे सुसंपन्न भी करते, उनके चरित्रगत गुण से ही जेल नरक न बन मनुष्य को कठोर दंड देने का स्थान-भर बनकर रह गया था। उनकी बदली हो जाने पर भी उनकी साधुता का फल पूरी तरह मिट नहीं गया, अबतक भी परवर्ती कर्मचारी उनकी साधुता दस आना बचाये रखने को बाध्य हैं।

जैसे जेल के अन्यान्य विभागों में बंगाली योगेन बाबू कर्ता-धर्ता थे वैसे ही हस्पताल के सर्वेसर्वा थे बंगाली डाक्टर वैद्यनाथ बाबू। उनके उच्च अधिकारी डा॰ डैली, इमर्सन साहब की तरह दयावान् न होते हुए भी अत्यंत सज्जन और विचक्षण व्यक्ति थे। वे लड़कों का शांत आचरण, प्रफुल्लता और बाध्यता देख भूरि-भूरि प्रशंसा करते और अल्पवयस्कों के साथ हंसी-मजाक और दूसरे आसामियों के साथ राजनीति, धर्म और दर्शनविषयक चर्चा करते। डाक्टर साहब थे आयरिश वंशजात, उस उदार और भावप्रवण जाति के अनेक गुण उनमें साकार हुए थे। उनमें क्रूरता रत्ती-भर भी नहीं थी, कभी-कभी क्रोध के वशीभूत हो कोई कड़ी बात या कठोर आचरण कर बैठते लेकिन प्रायः ही उपकार करना उन्हें प्रिय था। वे जेल के कैदियों की चालाकी और कृत्रिम रोगों को देखने के अभ्यस्त थे; किंतु ऐसा भी होता कि असली रोगी की भी कृत्रिमता के संदेह में उपेक्षा कर देते थे, तो भी, सच्ची बीमारी का पता लगने पर बहुत ही यत्न से और दयापूर्वक रोगी की व्यवस्था करते। मुझे एक बार हल्का बुखार आया। उस समय थी वर्षाऋतु। अनेक वातायनयुक्त विशाल दालान में जलसिक्त मुक्त पवन अठखेलियां करता, फिर भी मैं हस्पताल जाना या दवा खाना नहीं चाहता था। रोग और चिकित्सा के संबंध में मेरे विचार बदल गये थे, औषधि-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सेवन में अब ज्यादा आस्था नहीं रह गयी थी, मुझे विश्वास था कि रोग कठिन न हो तो प्रकृति की साधारण क्रिया से ही स्वास्थ्यलाभ होगा। बरसाती हवा के स्पर्श से जो अनिष्ट संभव है उसका योगबल से दमन कर योगशिक्षागत सारी क्रियाओं का याथार्थ्य और साफल्य अपनी तर्कबुद्धि के सामने प्रतिपादन करने की इच्छा थी। किंतु डाक्टर साहब मेरे लिये महाचिंतित थे, बड़े आग्रह के साथ उन्होंने मुझे हस्पताल जाने की आवश्यकता समझायी। हस्पताल जानेपर जितना हो सका उन्होंने घर की तरह रखने-खाने की व्यवस्था कर मुझे सौजन्य से रखा। वर्षा में जेल-वार्ड में रहने से मेरा स्वास्थ्य खराब न हो इस कारण वे मुझे ज्यादा दिन यहां सुख से रखना चाहते थे। किंतु मैं जबरदस्ती वार्ड में लौट आया, हस्पताल में और अधिक रहने को सहमत नहीं हुआ। सबपर उनका समान अनुग्रह नहीं था। खास कर जो पुष्टशरीर और बलवान् थे उन्हें बीमारी होते हुए भी हस्पताल में रखने से डरते थे। उनकी यह भ्रांत धारणा थी कि यदि जेल में कोई भी कांड घटता है तो वह इन सबल और चंचल लड़कों द्वारा होगा। अंततः ठीक इसका विपरीत फल हुआ, हस्पताल में जो कांड घटा वह घटा व्याधिग्रस्त, विशीर्ण, शुष्ककाय सत्येंद्रनाथ वसु और रोग-क्लिष्ट धीरप्रकृति, अल्प-भाषी कानाईलाल द्वारा। डाक्टर डैली में ये सब गुण होते हुए भी वैद्यनाथ बाबू ही थे उनके अधिकांश सत्कार्यों के प्रवर्तक और प्रेरणादायक। सचमुच वैद्यनाथ बाबू के समान हृदयवान् मनुष्य मैंने न पहले कभी देखा और न बाद में ही दीखने की आशा है, उन्होंने मानो दया और उपकार करने के लिये ही जन्म लिया था। किसी भी दुःखगाथा से अवगत होना और उसे हल्का करने को तत्काल दौड़ना ही जैसे उनके चरित्र का स्वाभाविक कारण और अवश्यंभावी कार्य बन गया था। वे इस यंत्रणापूर्ण दुःखालय में मानो नरक के प्राणियों को स्वर्ग का सयत्न-संचित नंदनवारि वितरण करते थे। किसी भी अभाव, अन्याय या अनर्थक कष्टमोचन का श्रेष्ठ उपाय था उसे डाक्टर बाबू के कानोंतक पहुंचा देना। उसे दूर करना यदि उनके बस का होता तो वैसी व्यवस्था करने से नहीं चूकते थे। वैद्यनाथ बाबू हृदय में गभीर देशभक्ति संजोये थे लेकिन सरकारी नौकर होने के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारण प्राणों की उस भावना को चरितार्थ करने में अक्षम थे। उनका एकमात्र दोष था जरूरत से ज्यादा सहानुभूति। किंतु वह भाव जेल के अधिकारी के लिये दोष होते हुए भी उच्च नीति के अनुसार मनुष्यत्व का चरम विकास और भगवान् का प्रियतम गुण कहलाता है। उनके लिये साधारण कैदियों और "वंदे मातरम्" के कैदियों में कोई भेद नहीं था; पीड़ित देखते ही सभीको सयत्न हस्पताल में रखते और पूर्ण शारीरिक स्वास्थ्यलाभ हुए बिना छोड़ना नहीं चाहते थे। यह दोष ही था उनके बरखास्त किये जाने का असली कारण। गोसाईं की हत्या के बाद अधिकारियों ने उनके इस आचरण पर संदेह कर उन्हें अन्यायपूर्वक कर्मच्युत किया।

इन सब अधिकारियों की दया और मनुष्योचित स्वभाव का वर्णन करने का विशेष अभिप्राय है। जेल में हमारे लिये जो व्यवस्था की गयी थी, पहले उसकी आलोचना करने को बाध्य हुआ था और उसके बाद भी ब्रिटिश जेलप्रणाली की अमानुषिक निष्ठुरता सिद्ध करने की चेष्टा करूंगा। बाद में कोई भी पाठक इस निष्ठुरता को कर्मचारियों के चरित्र का कुफल न मान ले इसीलिये किया है मुख्य कर्मचारियों के गुणों का बखान। कारावास की प्रथम अवस्था के विवरण में उनके इन सब गुणों के और भी प्रमाण मिलेंगे।

निर्जन कारावास में पहले दिन की मानसिक अवस्था का वर्णन कर चुका हूं। इस निर्जन कारावास में समय बिताने के लिये पुस्तक या दूसरी कोई वस्तु के बिना कुछ दिन रहना पड़ा था। बाद में इमर्सन साहब मुझे घर से धोती, कुर्ता और पढ़ने को किताबें मंगवाने की अनुमति दे गये। मैंने कर्मचारियों से कलम, दवात और चिट्ठी के लिये जेल के छपे कागज मंगवा अपने पूजनीय मौसा, 'संजीवनी' के सुप्रसिद्ध संपादक को धोती, कुर्ता और पढ़ने की किताबों में गीता और उपनिषद् भेजने का अनुरोध किया। इन दो पुस्तकों को मुझतक पहुंचने में दो-चार दिन लगे। तबतक निर्जन कारावास का महत्त्व समझने का यथेष्ट अवसर मिला। यह भी जाना कि ऐसे

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारावास में दृढ़ और सुप्रतिष्ठित बुद्धि भी नष्ट होती है और जल्द ही उन्मादावस्था को पहुंच जाती है और इसी अवस्था में भगवान् की असीम दया और उनके साथ युक्त होने का कितना दुर्लभ सुअवसर है यह भी हृदयंगम हुआ। कारावास से पहले मुझे एक घंटा सवेरे और एक घंटा शाम को ध्यान करने का अभ्यास था। इस निर्जन कारावास में और कोई काम न होने से ज्यादा देर ध्यानावस्थित रहने की चेष्टा की। किंतु मनुष्य के सहस्रों दिशाओं की ओर भागनेवाले चंचल मन को ध्यानार्थ यथेष्ट संयत और एक-लक्ष्यमुखी रखना अनभ्यस्त मनुष्य के लिये सहज नहीं। किसी तरह डेढ़-दो घंटे एक-मन हो रह पाता, फिर मन विद्रोही हो उठता, देह भी अवसन्न हो पड़ जाती। पहले नाना विचारों में व्यस्त रहता था। बाद में मनुष्य की उस आलापरहित चिंतन की विषयशून्य असहनीय अकर्मण्यता से मन धीरे-धीरे चिंतनशक्ति-रहित होने लगा। ऐसी अवस्था होने लगी मानों सहस्र अस्पष्ट विचार मन के सब द्वारों के चारों ओर चक्कर काट रहे हैं किंतु प्रवेश-पथ निरुद्ध है; दो-एक प्रवेश करने में समर्थ होने पर भी उस निस्तब्ध मनोराज्य की नीरवता से भयभीत हो निःशब्द भाग खड़े होते। इस अनिश्चित अवश अवस्था से अतिशय मानसिक कष्ट पाने लगा। प्रकृति की शोभा से चित्तवृत्ति स्निग्ध होने और तप्त मन को सांत्वना मिलने की आशा से बाहर की ओर निहारा, किंतु उसी एकमात्र वृक्ष, नीलाकाश के परिमित टुकड़े और जेल के उसी नीरस दृश्य से मनुष्य का ऐसी अवस्थाप्राप्त मन भला कितनी देर सांत्वना पा सकता है ? दीवारों की ओर ताका, जेल की कोठरी की उस निर्जीव सफेद दीवार के दर्शन से मन जैसे और भी अधिक निरुपाय हो केवल बद्धावस्था की यंत्रणा ही उपलब्ध कर मस्तिष्क के पिंजरे में छटपटाने लगा। फिर से ध्यान करने बैठा, किसी भी तरह ध्यान न कर सका वरन् उस तीव्र विफल चेष्टा से मन और भी श्रांत, अकर्मण्य और दग्ध होने लगा। चारों ओर नजर दौड़ायी, अंततः जमीन पर कुछ बड़ी-बड़ी काली चींटियों को विवर के पास घूमते-फिरते देखा, उनकी गतिविधि, चेष्टा और चरित्र का निरीक्षण करते-करते समय कट गया। उसके बाद देखता हूं कि छोटी-छोटी लाल चींटियां भी चल-फिर रही हैं। काली और लाल में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बड़ा झगड़ा, काली चींटियां लाल को देख काट-काट कर उन्हें मार डालने लगीं। अत्याचार से पीड़ित लाल चींटियों पर बड़ी दया और सहानुभूति उपजी। मैं काली चींटियों को भगा उन्हें बचाने लगा। इससे एक काम जुटा, सोचने का विषय भी मिला, चींटियों की सहायता से ये कुछ दिन कट गये। फिर भी दीर्घ दिनार्द्ध बिताने का कोई उपाय नहीं जुटाता था। मन को समझाया, जबरदस्ती विचारों को खींच लाया किंतु दिन प्रतिदिन मन विद्रोही होने लगा, हाहाकार करने लगा। काल मानों उसपर असह्य भार बन पीड़ा पहुंचा रहा हो, उस चाप से चूर्ण हो हांफने तक की शक्ति वह नहीं पा रहा था, मानों स्वप्न में शत्रुद्वारा आक्रांत व्यक्ति गला घोंटने से मरा जा रहा हो एवं हाथ-पैर होते हुए भी हिलने-डुलने की शक्ति न हो। यह अवस्था देख मैं आश्चर्य-चकित रह गया! सच है कि मुझे अकर्मण्य और निश्चेष्ट रहना कभी नहीं रुचा, फिर भी कितनी ही बार एकाकी रह चिंतन-मनन में समय गुजारा है, अब मन में ऐसी क्या दुर्बलता आ गयी है कि थोड़े दिन के इस एकांत से आकुल हो उठा हूं? सोचने लगा कि शायद उस स्वेच्छाप्राप्त एकांत और इस परेच्छाप्राप्त एकांत में प्रभेद है। घर में रहते हुए एकाकी रहना एक बात है और परेच्छावश कारागृह में यह निर्जनवास बिल्कुल दूसरी बात। वहां, जब चाहूं मनुष्य का आश्रय ले सकता हूं, पुस्तकगत ज्ञान और भाषा-लालित्य में, बंधु-बांधवों के प्रिय संभाषण में, रास्ते के कोलाहल में, जगत् के विविध दृश्यों में मन की तृप्ति का साधन पा प्राणों को शीतल कर सकता हूं। किंतु यहां कठोर नियमों में आबद्ध हो परेच्छा से सब संसर्गों से रहित हो रहना होगा। कहते हैं, जो निर्जनता सह सकता है वह या तो देवता है या पशु, मनुष्य के लिये यह संयम है साध्यातीत। पहले इस बात में विश्वास नहीं कर पाता था, अब समझा कि सचमुच योगाभ्यस्त साधकों के लिये भी यह संयम सहजसाध्य नहीं। याद हो आया इतालवी राजहत्यारे 'ब्रेशी' का भयंकर अंत। उनके निष्ठुर न्यायाधीशों ने उन्हें प्राण दंड न दे सात साल के निर्जन कारावास की सजा दी थी। एक साल बीतते-न-बीतते ब्रेशी पागल हो गया। तो भी इतने दिन तो सहा! मेरे मन की दृढ़ता क्या इतनी कम है? उस समय नहीं समझ सका था कि भगवान् मेरे साथ खेल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहे हैं, खेल-खेल में कुछ आवश्यक शिक्षाएं दे रहे हैं। मन की कैसी अवस्था में निर्जन कारावास के कैदी पागलपन की ओर दौड़ते हैं, उन्होंने यह दिखा, कारावास की ऐसी अमानुषिक निष्ठुरता समझा मुझे यूरोपीय जेल-प्रणाली का घोर विरोधी बना दिया, जिससे मैं यथाशक्ति देशवासियों और जगत् को इस बर्बरता से मोड़ दयानुमोदित जेल-प्रणाली का पक्षपाती बनाने की चेष्टा करूं, यह थी उनकी पहली शिक्षा। याद आता है, पन्द्रह साल पहले विलायत से स्वदेश लौटकर जब मैंने बंबई से प्रकाशित 'इंदु प्रकाश' पत्रिका में कांग्रेस की निवेदन-नीति के विरुद्ध तीव्र आलोचनात्मक प्रबंध लिखने शुरू किये थे तो स्वर्गीय महादेव गोविंद रानाडे ने युवकों के मनपर इन प्रबंधों का प्रभाव पड़ते देख उन्हें बंद करने के उद्देश्य से, जैसे ही मैं उनसे मिलने गया, मुझे आधे घंटेतक इस काम को छोड़ कांग्रेस का दूसरा कोई भी कार्यभार ग्रहण करने का उपदेश दिया। उनकी इच्छा मुझे जेल-प्रणाली-सुधार का कार्य देने की थी। रानाडे की इस अप्रत्याशित उक्ति से मैं आश्चर्यचकित और असंतुष्ट हुआ था और मैंने उस कार्यभार को अस्वीकार किया था। तब नहीं जानता था कि यह है सुदूर भविष्य का पूर्वाभास-मात्र और एक दिन स्वयं भगवान् मुझे जेल में एक साल रखकर इस प्रणाली की क्रूरता और व्यर्थता एवं सुधार की आवश्यकता दिखायेंगे। अब समझा कि आज की राजनीतिक अवस्था में इस जेल-प्रणाली के सुधार की संभावना नहीं, फिर भी, जेल में बैठे-बैठे, अपनी अंतरात्मा को साक्षी बना, उसका प्रचार करने और उसके संबंध में युक्ति-तर्क देने की प्रतिज्ञा की जिससे स्वाधीन भारत में विदेशी सभ्यता का यह नारकीय अंश चिपका न रहे। भगवान् की दूसरी अभिसंधि थी मेरे मन की इस दुर्बलता को मन के आगे रख हमेशा के लिये विनष्ट करना। जो योगावस्था के प्रार्थी हैं उनके लिये जनता और निर्जनता समान होनी उचित हैं। वास्तव में बहुत थोड़े ही दिनों में यह दुर्बलता झड़ गयी, अब लगता है कि बीस साल अकेले रहने पर भी मन चंचल नहीं होगा। मंगलमय अमंगल द्वारा भी परम मंगल साधते हैं। तीसरी अभिसंधि थी मुझे यह शिक्षा देना कि मेरे योगाभ्यास में स्वचेष्टा से कुछ नहीं होगा, श्रद्धा और संपूर्ण आत्मसमर्पण ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है सिद्धि पाने का पथ; भगवान् प्रसन्न हो स्वयं जो शक्ति, सिद्धि या आनंद देंगे उसे ही ग्रहण कर उनके कार्य में लगाना ही होगा मेरी योगस्पृहा का एकमात्र उद्देश्य। जिस दिन से अज्ञान का प्रगाढ़ अंधकार छंटने लगा, उसी दिन से मैं जगत् की सब घटनाओं का निरीक्षण करते-करते मंगलमय श्रीहरि के आश्चर्यमय अनंत मंगल स्वरूप की उपलब्धि कर रहा हूं। ऐसी कोई घटना नहीं—चाहे वह घटना महान् हो या छोटी-से-भी-छोटी—जिसके द्वारा कोई मंगल संपन्न नहीं होता। प्रायः वे एक कार्य द्वारा दो-चार उद्देश्य सिद्ध करते हैं। हम जगत् में बहुत बार अंधशक्ति की लीला देखते हैं, अपव्यय ही प्रकृति का नियम है—कहकर भगवान् की सर्वज्ञता को अस्वीकार कर ईश्वरीय बुद्धि को दोषी ठहराते हैं। यह अभियोग निर्मूल है। ईश्वरीय शक्ति कभी भी अंधभाव से कार्य नहीं करती, बूंद भर भी उनकी शक्ति का अपव्यय नहीं हो सकता वरन् वे ऐसे संयत तरीके से अल्प व्ययद्वारा प्रचुर फल उत्पादित करते हैं कि मनुष्य कल्पना भी नहीं कर सकता।

इस तरह मन की निश्चेष्टता से पीड़ित हो कुछ दिन कष्ट से समय काटा। एक दिन अपराह्न को कुछ सोच रहा था, विचार उमड़ने लगे, अचानक सारे विचार इतने असंयत और असंलग्न होने लगे कि मैं समझ गया कि विचारों पर बुद्धि की निग्रह-शक्ति लुप्त हो चली है। उसके बाद जब प्रकृतिस्थ हुआ तो देखा कि बुद्धि की निग्रह-शक्ति लुप्त होने पर भी स्वयं बुद्धि लुप्त या पल भर को भी भ्रष्ट नहीं हुई, वरन् शांत भाव से मन की इस अपूर्व क्रिया का जैसे निरीक्षण कर रही थी। किंतु तब मैं उन्मत्तता के भय से त्रस्त हो इस ओर ध्यान नहीं दे पाया। प्राणपन से भगवान् को पुकारा, अपने बुद्धिभ्रंश के निवारण के लिये कहा। उसी क्षण मेरे संपूर्ण अंतःकरण में हठात् ऐसी शीतलता व्यापने लगी, उत्तप्त मन ऐसा स्निग्ध, प्रसन्न और परम सुखी हो उठा कि जीवन में पहले कभी इतनी सुखमय अवस्था अनुभव नहीं कर सका था। जैसे शिशु मातृ-अंक में आश्वस्त और निर्भीक हो सोया रहता है मैं भी मानों विश्वजननी की गोद में उसी तरह सोया रहा। इसी दिन से मेरा कारावास का कष्ट खतम हो गया। इसके बाद कई बार बद्धावस्था की अशांति, निर्जन कारावास और कर्महीनता से मन की उद्विग्नता, शारीरिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्लेश या व्याधि, योगांतर्गत कातर अवस्थाएं आयीं किंतु उस दिन भगवान् ने एक पल में अंतरात्मा में ऐसी शक्ति भर दी कि ये सब दुःख मन पर छाने और मन पर से हट जाने के बाद कोई दाग या चिह्न न छोड़ पाते, दुःख में ही बल और आनंद अनुभव कर बुद्धि मन के दुःखों का प्रत्याख्यान करने में समर्थ होती। पद्मपत्र पर जलबिन्दुवत् महसूस होता वह दुःख। उसके बाद जब पुस्तकें आयीं तो उनकी आवश्यकता बहुत कम रह गयी थी। पुस्तकें न आने पर भी अब मैं रह सकता था। यद्यपि इन प्रबंधों का उद्देश्य अपने आंतरिक जीवन का इतिहास लिखना नहीं फिर भी इस घटना का उल्लेख किये बिना न रह सका। बाद में, दीर्घकालीन निर्जन कारावास में क्योंकर आनंदपूर्वक रहना संभव हुआ वह इस घटना से समझा जा सकेगा। इसी हेतु भगवान् ने वैसी अवस्था रची। उन्होंने पागल न बना निर्जन कारावास में पागल हो जाने की क्रमिक प्रक्रिया का मेरे मन में अभिनय करा बुद्धि को उस नाटक के अविचलित दर्शक के रूप में बिठाये रखा। उससे मुझे शक्ति मिली, मनुष्य की निष्ठुरता के कारण अत्याचार पीड़ित व्यक्तियों के प्रति दया और सहानुभूति बढ़ी और प्रार्थना की असाधारण शक्ति व सफलता हृदयंगम की।

मेरे निर्जन कारावास के समय डाक्टर डैली और सहकारी सुपरिंटेंडंट साहब प्रायः हर रोज मेरे कमरे में आ दो-चार बातें कर जाते। पता नहीं क्यों, मैं शुरू से ही उनका विशेष अनुग्रह और सहानुभूति पा सका था। मैं उनके साथ कोई विशेष बात न करता, वे जो पूछते उसका उत्तर-भर दे देता। वे जो विषय उठाते वह या तो चुपचाप सुनता या केवल दो-एक सामान्य बात कह चुप हो जाता। तथापि वे मेरे पास आना न छोड़ते। एक दिन डैली साहब ने मुझसे कहा कि मैंने सहकारी सुपरिंटेंडेंट को कहकर बड़े साहब को मना लिया है कि तुम प्रतिदिन सवेरे-शाम डिक्री के सामने टहल सकोगे। तुम सारा दिन एक छोटी-सी कोठरी में बंद रहो यह मुझे अच्छा नहीं लगता इससे मन खराब होता है और शरीर भी। उस दिन से मैं सवेरे-शाम डिक्री के आगे खुली जगह में घूमने लगा। शाम को दस, पंद्रह, बीस मिनट घूमता लेकिन सवेरे एक घंटा, किसी-किसी दिन दो घंटेतक बाहर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहता, समय की कोई पाबंदी नहीं थी। यह समय बहुत अच्छा लगता। एक तरफ जेल का कारखाना, दूसरी तरफ गोहालघर—मेरे स्वाधीन राज्य की दो सीमाएं। कारखाने से गोहालघर, गोहालघर से कारखानेतक घूमते-घूमते या तो उपनिषद् के गभीर, भावोद्दीपक, अक्षय शक्तिदायक मंत्रों की आवृत्ति करता या फिर कैदियों का कार्यकलाप और यातायात देख 'सर्वघट में नारायण हैं' इस मूल सत्य को उपलब्ध करने की चेष्टा करता। वृक्ष, गृह, प्राचीर, मनुष्य, पशु, पक्षी, धातु और मिट्टी में, सर्वभूतों में '**सर्वं खल्विदं ब्रह्म**' मंत्र का मन-ही-मन उच्चारण कर इस उपलब्धि को आरोपित करता। यह करते-करते ऐसा भाव हो जाता कि कारागार और कारागार न लगता। वह उच्च प्राचीर, वह लौह कपाट, वह सफेद दीवार, वह सूर्य-रश्मि-दीप्त नील-पत्र-शोभित वृक्ष, वह छोटा-मोटा सामान मानों अब अचेतन नहीं रहा, सर्वव्यापी, चैतन्यपूर्ण हो सजीव हो उठा, ऐसा लगता कि वे मुझसे स्नेह करते हैं, मुझे आलिंगन में भर लेना चाहते हैं। मनुष्य, गौ, चींटी और विहंग चल रहे हैं, उड़ रहे हैं, गा रहे हैं, बातें कर रहे हैं, पर है यह सब प्रकृति की क्रीड़ा; भीतर एक महान् निर्मल, निर्लिप्त आत्मा शांतिमय आनंद में निमग्न हो विराजमान है। कभी-कभी ऐसा अनुभव होता मानों भगवान् उस वृक्ष के नीचे खड़े आनंद की वंशी बजा रहे हैं, और उस माधुर्य से मेरा हृदय मोहे ले रहे हैं। सदा यह अहसास होने लगा कि कोई मुझे आलिंगनमें भर रहा है, कोई मुझे गोदमें लिये हुए है। इस भावस्फुटनसे मेरे सारे मन-प्राण को अधिकृत कर एक निर्मल महती शांति विराजने लगी, उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। प्राणों का कठिन आवरण खुल गया और सभी जीवोंपर प्रेम का स्रोत उमड़ पड़ा। प्रेम के साथ दया, करुणा, अहिंसा इत्यादि सात्त्विक भाव मेरे रजःप्रधान स्वभाव को अभिभूत कर और अधिक पनपने लगे। और जैसे-जैसे वे बढ़ने लगे वैसे-वैसे आनंद भी बढ़ा एवं निर्मल शांतिभाव गभीर हुआ। मुकदमे की दुश्चिंता पहले ही दूर हो गयी थी, अब उससे उल्टा विचार मन में आया। भगवान् मंगलमय हैं, मेरे मंगल के लिये ही मुझे कारागृह में लाये हैं, कारामुक्ति और अभियोग खंडन अवश्य ही होगा यह दृढ़ विश्वास जम गया। इसके बाद बहुत दिनतक मुझे जेल में कोई भी कष्ट भोगना नहीं पड़ा।

(क्रमशः)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोसायटी समाचार

२९ मार्च—७५ वर्ष पहले इस रोज माताजी फ्रांस से भारत आयीं और श्रीअरविन्द से मिली थीं। माताजी ने इस मिलन के बारे में अपनी दैनन्दिनी में लिखा था, "इससे अधिक फर्क नहीं पड़ता कि हजारों लोग गहनतम अज्ञान में धंसे हैं, वे, जिन्हें मैंने कल देखा धरती पर हैं, उनकी उपस्थिति इस बात का पर्याप्त प्रमाण है कि एक दिन आयेगा जब अंधकार प्रकाश में रूपांतरित हो जायेगा, और तेरा राज्य पृथ्वी पर वस्तुतः प्रतिष्ठित हो जायेगा . . ." नलिनी दा ने अपने संस्मरणों में लिखा था, "पहली बार श्रीअरविंद ने माताजी के गुणों के बारे में बताते हुए कहा, मैंने इतना निरपेक्ष और अबाध समर्पण कहीं भी और कभी नहीं देखा। उन्होंने यह टिप्पणी और जोड़ दी कि शायद केवल स्त्रियां ही इतने समग्र रूप में और इतनी पूरी तरह और सुगमता से अपने-आपको देने में समर्थ हैं। इसका अर्थ हुआ भूतकाल के सभी गुणों और त्रुटियों को मिटाते हुए उसका पूरी तरह से विलोपन।" माताजी ने पहली अप्रैल को अपनी दैनन्दिनी में लिखा: "एक महान् आनंद, एक गभीर शांति मुझपर राज कर रही है और फिर भी मेरी सभी आंतरिक रचनाएं एक निष्फल स्वप्न की तरह विलीन हो गयी हैं और अब मैं स्वयं को बिना किसी चौखटे या प्रणाली के तेरी विशालता के सम्मुख पाती हूं . . ."

इस पुण्य दिवस की हीरक जयंती के उपलक्ष्य में आश्रमवासियों तथा दर्शनार्थियों ने श्रीअरविन्द के कमरे के दर्शन किये, शाम को क्रीड़ांगण में सामूहिक ध्यान हुआ।

इस अवसर पर पांडिचेरी के नागरिकों ने भी एक जुलूस निकाला और गांधी मैदान में सार्वजनिक सभा का आयोजन किया। श्री एम० पी० पंडित, प्रो० के० वैंकटरामन् तथा श्री एस० रामलिंगम् के भाषण हुए। शोभा-दी के दल ने संगीत का एक सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत किया।

४ अप्रैल—१९१० में इस दिन श्रीअरविन्द पांडिचेरी आये थे। हर साल की तरह इस बार भी शाम को क्रीड़ांगण में ध्यान हुआ।

२४ अप्रैल—१९२० में इस दिन माताजी जापान से पांडिचेरी आयीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थीं। सवेरे लोगों ने श्रीअरविन्द के कमरे के दर्शन किये, सवेरे आश्रम में और शाम को मार्च-पास्ट के बाद क्रीड़ांगण में सामूहिक ध्यान हुआ। इस अवसर पर सावित्री का एक उद्धरण संदेश के तौर पर बांटा गया जिसका भाव है :

अंध नियति और विरोधी शक्तियों के ऊपर
एक निष्कंप अपरिवर्तनशील इच्छा-शक्ति विद्यमान है,
अपने कर्मों का परिणाम उसकी सर्वशक्तिमत्ता के हाथ में छोड़ दे।
सभी वस्तुएं भगवान् के रूपांतरकारी मुहूर्त में बदल जायेंगी।

केंद्रों के समाचार

५ मार्च को पुरुलिया में सर्वांगीण शिक्षा के विषय में गोष्ठी हुई। २६ मार्च को अंडूल (हाउरा) में साधना में काम की महत्ता विषय पर सेमिनार हुआ। बारानागौर में भी १२ मार्च को एक मीटिंग हुई।

श्रीअरविंद सोसायटी के क्षेत्रीय केंद्र ने विधान सरणी इत्यादि में २६ फरवरी को पांचवें स्वाध्याय शिविर का आयोजन किया। इसमें कई लोगों के भाषण हुए और भक्ति गीतों का भी कार्यक्रम हुआ।

गुलबर्गा (कर्णाटक) में २९ मार्च जोर-शोर से मनाया गया।

घोषणाएं

श्रीअरविंद सोसायटी की वार्षिक सभा १२, १३ तथा १४ अगस्त ८९ को पांडिचेरी में होगी। रेलवे कंसेशन मिलने की संभावना है। अधिक जानकारी के लिये कृपया अपने शहर के केंद्र या शाखा से या सीधे पांडिचेरी के मुख्य दफ्तर से संपर्क करें।

"ह्वाट इज स्पिरिचुएलिटी"—यह चार पृष्ठों का फोल्डर है। १०० प्रतियों का दाम १० रु. है। जिन-जिन को रस हो वे इस दर के अनुसार अपना मनीआर्डर या क्रॉस चेक "श्रीअरविंद सोसायटी" के नाम भेज कर प्रतियां मंगवा सकते हैं।

श्रीअरविन्द सोसायटी के सदस्यों की एक असाधारण बैठक श्रीअरविन्द भवन, ८ शेक्सपीयर सरणी कलकत्ता में १-७-८९ को शाम के ५ बजे होगी जिसमें शोध निधि के अतिरिक्त पैसों की व्यवस्था के बारे में विचार होगा। उसके बारे में सूचना और व्याख्या अलग संलग्न है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Selfishness kills the soul; destroy it. But take care that your altruism does not kill the souls of others.

Sri Aurobindo

Assam Tea Warehousing Corporation

Registered and approved Warehouse at Gauhati (Assam)

H.O.: 8, Camac Street, Room No. 7
Shantiniketan Building
CALCUTTA – 700 017

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

A happy beginning
a good continuation
and no end —
an endless progression

14-5-57

New Horizon Sugar Mills (Pvt.) Ltd.

PONDICHERRY

Telegram : SAKAR
Phone : Town Office : 4280
Factory : 4423 4424

P.O. Box 29
Pondicherry
S. India

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Registered with the Registrar of Newspapers for India
No. R. N. 18135/70

REGD. No. M. 8731

सबसे पहली चीज होनी चाहिये 'शांति'। तुम जो कुछ करो उसे शांतिपूर्ण तरीके से करना चाहिये।

सहारनपुर सर्विस स्टेशन

पैट्रोल पम्प, देहरादून रोड

सहारनपुर–२४७००१

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उद्बुध्यस्वाग्ने प्रति जागृहि

संदेश

अगर कोई सचाई से दूसरों की और संसार की सहायता करना चाहता है तो उसके लिये सबसे अच्छा तरीका यह है कि वह स्वयं वैसा बन जाये जैसा कि वह औरों को बनाना चाहता है—केवल एक उदाहरण बनने के लिये नहीं, बल्कि इसलिये कि इस तरह वह व्यक्ति विकिरण करती हुई शक्ति का केन्द्र बन जाता है और अपने अस्तित्व मात्र से बाकी समस्त संसार को अपने-आपको रूपान्तरित करने के लिये बाधित करता है।

—*माताजी*

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

संपादकीय :

सेवा

कुछ दिन पहले एक सज्जन की चिट्ठी आयी। अब वे सेवा-निवृत्त हो गये हैं और हृद्-रोग से पीड़ित हैं। जब वे सरकारी नौकर थे तो अधिकतर लोगों की तरह वे न कामचोर थे न आलसी। उन्हें निवृत्ति से पहले ऐसा काम दिया गया था जो बहुत जल्दी ही पूरा करना था। कर्तव्यनिष्ठ मनुष्य की तरह उन्होंने अत्यन्त उत्साह से वह कार्य पूरा किया। उस समय न उन्होंने काम के घंटे देखे; न अपनी सुविधा या खाने-पीने की चिंता की। कार्य समाप्त करने के लिये उन्होंने बारह से सोलह घंटोंतक अविरत श्रम किया। निवृत्ति के साथ-साथ उन्हें दिल का दौरा पड़ा जो बहुत गंभीर तो न था किंतु चेतावनी अवश्य था।

इस समय वे सज्जन यह अफसोस कर रहे हैं कि उन्होंने अत्यधिक परिश्रम कर अपनी मुसीबत क्यों बुला ली।

इनके जैसे और भी लोग होंगे जो अपनी निष्ठा के लिये अब पश्चात्ताप करते हों। वास्तव में हमें अपना दृष्टिकोण बदलना होगा। हम कहीं भी काम करें, घर में, दफ़्तर में या समाज में, हमें कोशिश यही करनी चाहिये कि हर क्षण हम यह सब भगवान् को अर्पण करके, उनकी सेवा मानकर ही करें। इस मनोवृत्ति से हमें एक लाभ यह होता है कि कार्य करते हुए उसकी जिम्मेदारी हम अपनी नहीं समझते इसलिये तनाव-मुक्त रह सकते हैं और तब शरीर भी ज्यादा स्वस्थ रहता है। इस सिलसिले में मुझे श्री पुराणी जी की वाणी याद आती है। उन्होंने सत्तर वर्ष की आयु में भारत से आरंभ कर सिंगापुर होते हुए फ्रांसतक का दौरा किया क्योंकि उन्हें कई देशों से निमंत्रण मिले थे कि वे श्रीअरविंद और माताजी के बारे में भाषण दें। ग्यारह महीनों तक निरंतर यात्रा और भाषण के लिये नोट्स तैयार करने और लोगों से मिलने का ऐसा तांता रहा कि जब वे घर लौटे तो उन्हें दिल का दौरा पड़ गया। किसीने कुछ दिन बाद उन्हें समझाना चाहा कि इतना परिश्रम न करते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो यह बीमारी न होती। वे हंसकर बोले, "मैंने अपने गुरु का संदेश फैलाया, वह मेरा मिशन था, अब अगर मृत्यु आये भी तो मुझे उसकी चिंता नहीं।"

हमारे निवृत्ति-प्राप्त सज्जन अगर यह सोचें कि भगवान् ने मुझे देश की सेवा करने का मौका दिया और मैंने उसे भरसक निभाया, अब अगर कुछ सावधानी बरतनी पड़ी तो वह भी स्वीकार है। देश की सेवा भगवान् की, मानव में स्थित भगवान् की सेवा है। ऐसा अवसर दिया गया यही मेरा सौभाग्य है।

—अनुबेन

दैनन्दिनी

जुलाई

१. हे प्रभो, असीम हर्ष मेरे हृदय को भर रहा है, अद्‌भुत तरंगों में प्रसन्नता के गीत मेरे मस्तिष्क से गुजरते हैं और तेरी निश्चित विजय के पूर्ण विश्वास में मुझे चरम शान्ति और अजेय शक्ति प्राप्त होती हैं।

२. हे प्रभो, वर दे कि मैं एक ऐसी आग बन जाऊं जो प्रकाश दे और ऊष्मा भी दे। मैं उस स्रोत की तरह बनूं जो प्यास बुझाए, उस वृक्ष की तरह होऊं जो शरण दे और सुरक्षित रखे।

३. ओह, सच्चे प्रकाश, चरम प्रेम, दिव्य स्वामी, तू जो हमारे प्रकाश का, जीवन का स्रोत है, हमारा मार्ग-दर्शक और संरक्षक है, मैं तुझे अंतर की कितनी गहराई से पुकारती हूं।

४. यह सीमाहीन प्रेम का सामंजस्य है, समस्त दुःख-दर्द और अंधकार का विजेता प्रेम !

५. हे मधुर सामंजस्य जो प्रत्येक वस्तु में विद्यमान है, मेरे हृदय में निवास करता मधुर सामंजस्य, जीवन के सबसे बाह्य रूपों में भी अभिव्यक्त हो, प्रत्येक सम्वेदना में, प्रत्येक विचार में, प्रत्येक कार्य में अभिव्यक्त हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

६. तेरे सम्मुख नीरवता में बीते कुछ क्षण सदियों के उल्लास के समान होते हैं।

७. तेरे सामने मेरा हृदय शुद्ध स्फटिक सा रहे ताकि वह पूरी तरह तुझे प्रतिबिम्बित कर पाये।

८. अधिक नमनीय बनो, अधिक विश्वास रखो। करने योग्य काम यही है कि अपने-आपको किसी भी चीज से परेशान न होने दो।

९. उस शुद्ध भार-मुक्ति का, उस सुखद वायवीयता का कैसे वर्णन करूं जो तब आती हैं जब मनुष्य अपने बारे में परेशान होने से मुक्त हो जाता है, अपने जीवन और स्वास्थ्य और अपने संतोष, यहांतक कि अपनी प्रगति के बारे में भी परेशान होने से मुक्त हो जाता है।

१०. हे प्रभो, शाश्वत स्वामी, तू ही गुरु बनेगा, तू ही प्रेरणा देगा। तू मुझे यह सिखायेगा कि क्या करना चाहिये . . .
प्रेम और विश्वास के साथ मैं तेरे सामने नत-मस्तक हूं।

११. हम विशालतर क्षितिजों और तीव्रतर प्रकाश, अधिक पूर्ण अनुकंपा, अधिक निष्काम प्रेम की ओर हिम्मत से उड़ान भरें . . . तेरी ओर उड़ान भरें।

१२. हे प्रभु, अपना प्रकाश मुझे दे। वर दे कि मैं किसी भूल-भ्रांति में न जा गिरूं।

१३. हे प्रभो, प्रभो, वर दे कि तेरी इच्छा से भिन्न मेरी कोई इच्छा न हो और मेरे सारे कार्य तेरे दिव्य विधान की अभिव्यक्ति हों।

१४. तेरे बिना सब कुछ मिथ्यात्व और माया है और निराशा-जनक धुंधलापन है।
तुझमें विद्यमान हैं जीवन, प्रकाश और हर्ष।
तेरे अंदर है चरम शांति।

१५. तू सब कुछ है और तू ही सब कुछ कर सकता है।

१६. जब हम तुझसे बोलने का साहस करते हैं तो वह केवल बच्चों की तुतलाहट से बढ़कर कुछ नहीं होता।
सबसे बड़ा आदर नीरवता में होता है।

१७. हमारी भक्ति अधिक गहरी हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारा समर्पण हमेशा अधिक पूर्ण बनता रहे, और तू, जो जीवन का सम्राट् है, उसका सच्चा सम्राट् बन जाये।

१८. तेरा जीवन पुनरुज्जीवित करनेवाले उस स्रोत की तरह सबमें बहता रहे ताकि सब तेरी ओर मुड़ सकें और उस चिंतन के द्वारा सभी विजयों के लिये शक्ति प्राप्त कर सकें।

१९. हमारे अज्ञान को दूर कर, हमारे मन को प्रकाशित कर, हमारे हृदय को रूपांतरित कर दे।

२०. हमें वह प्रेम प्रदान कर जो कभी सूख नहीं जाता, और जो प्रत्येक सत्ता में तेरे मधुर विधान को पुष्पित कर दे।

२१. तेरे अंदर चरम शक्ति है, पूर्ण निःस्वार्थता की, पूर्ण स्पष्ट दर्शन की, सर्वोच्च दयालुता की शक्ति है।

२२. ओ तू, जो हमारी सत्ता की एकमात्र वास्तविकता है, ओ प्रेम का उत्कृष्ट स्वामी, जीवन का उद्धारक, मुझे हर क्षण, हर सत्ता में केवल तेरी चेतना के सिवा और किसी चेतना का पता न रहे।

२३. सब रूढ़ियों और पूर्वाग्रहों से परे तू ही है जो एक विशिष्ट प्रकाश, दिव्य और पवित्र प्रकाश से हम जैसे हैं और जो कार्य करते हैं, उन सबको आलोकित करता है और हमें स्पष्ट रूप से हम जो वास्तव में हैं और जो बन सकते हैं उसका भेद दिखाता है।

२४. हमारी चेतना को प्रबुद्ध बना, हमारे कदमों को पथप्रदर्शन दे और वर दे कि हम अपना पूर्ण प्रयास करें, तेरी सेवा में ही अपनी ऊर्जाओं का उपयोग करें।

२५. प्रत्येक सवेरे हमारे विचार उत्कंठा से तेरी ओर उठें, यह पूछते हुए कि हम तुझे सबसे अच्छी तरह कैसे अभिव्यक्त करें और कैसे तेरी सेवा करें।

२६. तेरे प्रकाश से हम देखेंगे, तेरे ज्ञान द्वारा हम जानेंगे, तेरी इच्छा से हम चरितार्थ करेंगे।

२७. हमें सब अज्ञान से मुक्त कर। हमें अपने-आपसे मुक्त कर ताकि हम तेरी भव्य अभिव्यक्ति के द्वार पूरी तरह खोल पायें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

२८. सब परिस्थितियों में हम तेरी वाणी के अग्रदूत बन सकते हैं, तेरे कार्य के सेवक बन सकते हैं।

२९. जिस क्षण मनुष्य तेरे विधान के बारे में सचेतन हो जाता है उसी क्षण से सारे संदेह समाप्त हो जाते हैं, समस्त हिचकिचाहट बंद हो जाती है।

३०. हमें अपने दिव्य प्रेम की जीवंत मशालों में रूपांतरित कर दे।

३१. तू जो एकमात्र सद्वस्तु, हमारे प्रकाश का भी प्रकाश, जीवन का भी जीवन है, परम प्रेम, संसार का त्राता है, वर दे कि मैं अधिक-से-अधिक पूर्ण रूप से तेरी सतत उपस्थिति की अभिज्ञता के प्रति जाग्रत् हो जाऊं।

———

जिस क्षण से तुम संतुष्ट होकर अभीप्सा करना बंद कर देते हो उसी क्षण से मरने लगते हो।

*

जबतक हम भूत की आदतों और मान्यताओं से नाता नहीं तोड़ लेते तबतक शीघ्रता से भविष्य की ओर बढ़ने की आशा कम ही है।

*

भागवत प्रेम की अभिव्यक्ति को जल्दी लाने का सबसे अच्छा तरीका है 'सत्य' की विजय के लिये सहयोग देना।

—माताजी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारावास की कहानी

(गतांक से आगे)

इस अवस्था को घनीभूत होने में कुछ दिन लगे, इसी बीच मजिस्ट्रेट की अदालत में मुकदमा शुरू हुआ। निर्जन कारावास की नीरवता से हठात् बाह्य जगत् के कोलाहल में लाये जाने पर शुरू-शुरू में मन बड़ा विचलित हुआ, साधना का धैर्य टूट गया और पांच-पांच घंटेतक मुकदमे के नीरस और विरक्तिकर बयान सुनने को मन किसी भी तरह राजी नहीं हुआ। पहले अदालत में बैठ साधना करने की चेष्टा करता, लेकिन अनभ्यस्त मन प्रत्येक शब्द और दृश्य की ओर खिंच जाता, शोरगुल में वह चेष्टा व्यर्थ चली जाती, बाद में भावपरिवर्तन हुआ, समीपवर्ती शब्द और दृश्य मन से बाहर ठेल सारी चिंतन-शक्ति को अंतर्मुखी करने की शक्ति जनमी, किंतु यह मुकदमे की प्रथम अवस्था में नहीं हुआ, तब ध्यान-धारणा की प्रकृत क्षमता नहीं थी। इसीलिये यह वृथा चेष्टा त्याग बीच-बीच में सर्वभूतों में ईश्वर के दर्शन कर संतुष्ट रहता, बाकी समय विपत्ति के साथियों की बातों और उनके कार्य-कलाप पर ध्यान देता, दूसरा कुछ सोचता, या कभी नार्टन साहब की श्रवण-योग्य बात या गवाहों की गवाही भी सुनता। देखता कि निर्जन कारागृह में समय काटना जितना सहज और सुखकर हो उठा है, जनता के बीच और इस गुरुतर मुकदमे के जीवन-मरण के खेल के बीच समय काटना उतना सहज नहीं। अभियुक्त लड़कों का हंसी-मजाक और आमोद-प्रमोद सुनना और देखना बड़ा अच्छा लगता, नहीं तो अदालत का समय केवल विरक्तिकर ही महसूस होता। साढ़े चार बजे कैदियों की गाड़ी में बैठ सानंद जेल लौट आता।

पंद्रह-सोलह दिन की बंदी अवस्था के बाद स्वाधीन मनुष्य जीवन का संसर्ग और एक-दूसरे का मुख देख दूसरे कैदी अत्यंत आनंदित हुए। गाड़ी में चढ़ते ही उनकी हंसी और बातों का फव्वारा फूट पड़ता और जो दस मिनट उन्हें गाड़ी में मिलते थे उसमें पल-भर को भी वह स्रोत न थमता। पहले दिन हमें खूब सम्मान के साथ अदालत ले गये। हमारे साथ ही थी यूरोपीयन सार्जेंटों की छोटी पलटन और उनके साथ थीं गोलीभरी पिस्तौलें। गाड़ी में चढ़ते समय सशस्त्र पुलिस की एक टुकड़ी हमें घेरे रहती और गाड़ी के पीछे परेड करती, उतरते समय भी यही आयोजन था। इस साज-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सज्जा को देख किसी-किसी अनभिज्ञ दर्शक ने निश्चय ही यह सोचा होगा कि ये हास्य-प्रिय अल्पवयस्क लड़के न जाने कितने दुःसाहसी विख्यात महायोद्धाओं का दल है। न जाने उनके प्राणों और शरीर में कितना साहस और बल है जो खाली हाथ सौ पुलिस और गोरों की दुर्भेद्य प्राचीर भेद, पलायन करने में सक्षम हैं। इसीलिये शायद उन्हें इतने सम्मान के साथ इस तरह ले गये। कुछ दिन यह ठाठ चला, फिर क्रमशः कम होने लगा, अंत में दो-चार सार्जेंट हमें ले जाते और ले आते। उतरते समय वे ज्यादा ख्याल नहीं करते थे कि हम कैसे जेल में घुसते हैं; हम मानों स्वाधीन भाव से घूम-फिरकर घर लौट रहे हों, उसी तरह जेल में घुसते। ऐसी असावधानी और शिथिलता देख पुलिस कमिश्नर साहब और कुछ सुपरिंटेंडेंट क्रुद्ध हो बोले, "पहले दिन पचीस तीस सार्जेंटों की व्यवस्था की थी, आजकल देखता हूं चार-पांच भी नहीं आते।" वे सार्जेंटों की भर्त्सना करते और रक्षण-निरीक्षण की कठोर व्यवस्था करते; उसके बाद दो-एक दिन और दो सार्जेंट आते और फिर वही पहले जैसी शिथिलता आरंभ हो जाती! सार्जेंटों ने देखा कि बम-भक्त बड़े निरीह और शांत लोग हैं, पलायन में उनका कोई प्रयास नहीं, किसीपर आक्रमण करने या हत्या करने की भी मंशा नहीं, उन्होंने सोचा कि हम क्यों अमूल्य समय इस विरक्तिकर कार्य में नष्ट करें। पहले अदालत में घुसते और निकलते समय हमारी तलाशी लेते थे, उससे हम सार्जेंटों के कोमल करस्पर्श का सुख अनुभव करते, इसके अलावा इस तलाशी से किसीके लाभ या क्षति की संभावना नहीं थी। स्पष्ट था कि इस तलाशी की आवश्यकता में हमारे रक्षकों की गभीर अनास्था है। दो-चार दिन बाद यह भी बंद हो गयी। हम अदालत में किताब, रोटी-चीनी जो इच्छा हो निर्विघ्न ले जाते। पहले-पहल छिपाकर, बाद में खुले आम। हम बम या पिस्तौल चलायेंगे, उनका यह विश्वास शीघ्र ही उठ गया। किंतु मैंने देखा कि एक भय सार्जेंटों के मन से नहीं गया। कौन जाने किसके मन में कब मजिस्ट्रेट साहब के महिमान्वित मस्तक पर जूते फेंकने की बदनीयत पैदा हो जाये, ऐसा हुआ तो सर्वनाश। अतः जूते भीतर ले जाना विशेषतया निषिद्ध था, और उस विषय में सार्जेंट हमेशा सतर्क रहते। और किसी तरह की सावधानता के प्रति आग्रह नहीं देखा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुकदमे का स्वरूप कुछ विचित्र था। मजिस्ट्रेट, परामर्शदाता, साक्षी, साक्ष्य Exhibits (साक्ष्य-सामग्री), आसामी सभी विचित्र। दिन-पर-दिन उन्हीं गवाहों और Exhibits का अविराम प्रवाह, उसी परामर्शदाता का नाटकोचित अभिनय, उसी बालक-स्वभाव मजिस्ट्रेट की बालकोचित चपलता और लघुता इस अपूर्व दृश्य को देखते-देखते बहुत बार मन में यह कल्पना उठती कि हम ब्रिटिश विचारालय में न बैठ किसी नाटकगृह के रंगमंच पर या किसी कल्पनापूर्ण औपन्यासिक राज्य में बैठे हैं। अब उस राज्य के सब विचित्र जीवों का संक्षिप्त वर्णन करता हूं।

इस नाटक के प्रधान अभिनेता थे सरकार बहादुर के परामर्शदाता नॉर्टन साहब। प्रधान अभिनेता ही क्यों इस नाटक के रचयिता, सूत्रधार (Stage Manager) और साक्षी-स्मारक (prompter) भी थे,—ऐसी वैचित्र्यमयी प्रतिभा जगत् में विरल है। परामर्शदाता नॉर्टन थे मद्रासी साहब, इसीलिये शायद थे बंगाली बैरिस्टर मंडली की प्रचलित नीति और भद्रता से अनभ्यस्त एवं अनभिज्ञ। वे कभी राष्ट्रीय महासभा के नेता रहे थे, शायद इसीलिये विरोध और प्रतिवाद सह नहीं सकते थे और विरोधी को शासित करने के आदी थे। ऐसी प्रकृति को लोग कहते हैं हिंस्रस्वभाव। नॉर्टन साहब कभी मद्रास कॉरपोरेशन के सिंह रहे कि नहीं, नहीं कह सकता पर हां, अलीपुर कोर्ट के सिंह तो थे ही। उनकी कानूनी अभिज्ञता की पैठ पर मुग्ध होना कठिन है—वह थी मानों ग्रीष्मकाल की शीत। किंतु वक्तृता के अनर्गल प्रवाह में, कथन-शैली में, बात की चोट से राई को पहाड़ बनाने की अद्भुत क्षमता में, निराधार या कुछ आधार लिये हुए कथनों को कहने की दुःसाहसिकता में, साक्षी और जूनियर बैरिस्टर की भर्त्सना में और सफेद को काला करने की मनमोहिनी शक्ति में नॉर्टन साहब की अतुलनीय प्रतिभा देख मुग्ध होना ही पड़ता था। श्रेष्ठ परामर्शदाताओं की तीन श्रेणियां हैं—जो कानून के पांडित्य से और यथार्थ व्याख्या और सूक्ष्म विश्लेषण से जज के मन में प्रतीति जनमा सकते हैं; जो चतुराई के साथ साक्षी से सच्ची बात उगलवा और मुकदमे-संबंधी घटनाओं और विवेच्य विषय का दक्षता के साथ प्रदर्शन कर जज या जूरी का मन अपनी ओर आकर्षित कर सकते हैं;

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और जो ऊंची आवाज से, धमकियों से, वक्तृता के प्रवाह से साक्षी को हतबुद्धि कर, मुकदमे के विषय को चमत्कारी ढंग से तोड़-मरोड़, गले के जोर से जज या जूरी की बुद्धि भरमा मुकदमे जीत सकते हैं। नॉर्टन साहब थे तीसरी श्रेणी में अग्रगण्य। यह कोई दोष की बात नहीं। वे ठहरे परामर्शदाता व्यवसायी आदमी, पैसा लेनेवाले, जो पैसा दे उसका अभीप्सित उद्देश्य सिद्ध करना है उनका कर्तव्य-कर्म। आजकल ब्रिटिश कानून-प्रणाली में सच्ची बात बाहर निकालना वादी या प्रतिवादी का असल उद्देश्य नहीं, किसी भी तरह मुकदमा जीतना ही है उद्देश्य। अतएव परामर्शदाता वैसी ही चेष्टा करेंगे, नहीं तो उन्हें धर्मच्युत होना होगा। भगवान् द्वारा अन्य गुण न दिये जाने पर जो गुण हैं उनके बल पर ही मुकदमा जीतना होगा, अतः नॉर्टन साहब स्वधर्म-पालन ही कर रहे थे। सरकार बहादुर उन्हें हर रोज हजार रुपये देती थी। यह अर्थव्यय वृथा जाने से सरकार बहादुर की क्षति होती, यह क्षति न हो इसके लिये नॉर्टन साहब ने प्राणपन से चेष्टा की थी। पर राजनीतिक मुकदमे में आसामी को विशेष उदारता के साथ सुविधा देना और संदेहजनक एवं अनिश्चित प्रमाण पर जोर न देना ब्रिटिश कानून-पद्धति का नियम है। नॉर्टन साहब यदि इस नियम को सदा याद रखते तो, मेरे ख्याल में, उनके केस की कोई हानि न होती। दूसरी तरफ कुछ-एक निर्दोषों को निर्जन कारावास की यंत्रणा न भोगनी पड़ती और निरीह अशोक नंदी की जान भी बच जाती। परामर्शदाता की सिंह-प्रकृति ही थी शायद इस दोष का मूल। होलिंशेड (Holinshed), हॉल (Hall), और प्लूटार्क (Plutarch) जैसे शेक्सपीयर के लिये ऐतिहासिक नाटकों का उपादान संगृहीत कर रख गये थे, पुलिस ने भी वैसे ही इस मुकदमे के नाटक के उपादान का संग्रह किया था। हमारे नाटक के शेक्सपीयर थे नॉर्टन साहब। किंतु शेक्सपीयर और नॉर्टन में मैंने एक प्रभेद देखा। संगृहीत उपादान का कुछ अंश शेक्सपीयर कहीं-कहीं छोड़ भी देते थे, पर नॉर्टन साहब अच्छा-बुरा, सत्य-मिथ्या, संलग्न-असंलग्न, अणोरणीयान् महतो महीयान् जो पाते, एक भी न छोड़ते, तिस पर निजी कल्पनासृष्ट प्रचुर Suggestion, Inference, Hypothesis (सुझाव, अनुमान, परिकल्पना) जुटा उन्होंने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इतना सुंदर Plot (कथानक) रचा कि शेक्सपीयर, डेफो इत्यादि सर्वश्रेष्ठ कवि और उपन्यासकार इस महाप्रभु के आगे मात खा गये। आलोचक कह सकते हैं कि जैसे फॉलस्टाफ के होटल के बिल में एक आने की रोटी और असंख्य गैलन शराब का समावेश था उसी तरह नॉर्टन साहब के Plot में एक रत्ती प्रमाण के साथ दस मन अनुमान और suggestions (सुझाव) थे। किंतु आलोचक भी plot की परिपाटी और रचना-कौशल की प्रशंसा करने को बाध्य होगा। नॉर्टन साहब ने इस नाटक के नायक के रूप में मुझे ही पसंद किया, यह देख मैं समधिक प्रसन्न हुआ। जैसे मिल्टन के "Paradise Lost" का शैतान, वैसे ही मैं भी था नॉर्टन साहब के Plot का कल्पनाप्रभूत महाविद्रोह का केंद्रस्वरूप, असाधारण तीक्ष्णबुद्धि-संपन्न, क्षमतावान् और प्रतापशाली bold bad man (ढीठ बुरा आदमी)। मैं ही था राष्ट्रीय आंदोलन का आदि और अंत, स्रष्टा और त्राता, ब्रिटिश साम्राज्य का संहार-प्रयासी। उत्कृष्ट और तेजस्वी अंग्रेजी लेख देखते ही नॉर्टन साहब उछल पड़ते और उच्च स्वर में कहते—अरविंद घोष। आंदोलन के जितने भी वैध, अवैध, सुशृंखलित अंग या अप्रत्याशित फल—वे सभी अरविंद घोष की सृष्टि हैं, और क्योंकि वे अरविंद की सृष्टि हैं इसलिये वैध होने पर भी उसमें अवैध अभिसंधि गुप्त रूप से निहित है। शायद उनका यह विश्वास था कि अगर मैं पकड़ा न गया तो दो साल के अंदर-अंदर अंगरेजों के भारतीय साम्राज्य का ध्वंस हो जायेगा। किसी फटे कागज के टुकड़े पर मेरा नाम पाते ही नॉर्टन साहब खूब खुश होते और इस परम मूल्यवान् प्रमाण को मजिस्ट्रेट के श्रीचरणों में सादर समर्पित करते। अफसोस है, कि मैं अवतार बनकर नहीं जनमा, नहीं तो मेरे प्रति उस समय की उनकी इतनी भक्ति और मेरे अनवरत ध्यान से नॉर्टन साहब निश्चित ही उसी समय मुक्ति पा जाते जिससे हमारी कारावास की अवधि और गर्वनमेंट का अर्थव्यय दोनों की ही बचत होती। सेशंस अदालत द्वारा मुझे निर्दोष प्रमाणित किये जाने से नॉर्टन-रचित plot की सब श्री और गौरव नष्ट हो गया। बेरसिक बीचक्राफ्ट 'हैमलेट' नाटक से हैमलेट को अलग करके बीसवीं सदी के श्रेष्ठ काव्य को हतश्री कर गये। समालोचक को यदि काव्य-परिवर्तन का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अधिकार दे दिया जाये तो भला क्यों न होगी ऐसी दुर्दशा ? नॉर्टन साहब को और एक दुःख था, कुछ गवाह भी ऐसे बेरसिक थे कि उन्होंने भी उनके रचित Plot के अनुसार गवाही देने से साफ इंकार कर दिया। नॉर्टन साहब गुस्से से लाल-पीले हो जाते, सिंह-गर्जना से उनके प्राण कंपा उन्हें धमकाते। जैसे कवि को स्वरचित शब्द के अन्यथा प्रकाशन पर और सूत्रधार को अपने दिये गये निर्देशों के विरुद्ध अभिनेता की आवृत्ति, स्वर या अंगभंगिमा पर न्यायसंगत और अदमनीय क्रोध आता है, वैसा ही क्रोध आता था नॉर्टन साहब को। बैरिस्टर भुवन चटर्जी के साथ हुए संघर्ष का कारण यह सात्त्विक क्रोध ही था। चटर्जी महाशय के जितना रसायनभिज्ञ पुरुष तो कोई नहीं देखा। उन्हें रत्ती भर भी समय-असमय का ज्ञान नहीं था। नॉर्टन साहब जब संलग्न-असंलग्न का विचार न कर केवल कवित्व की खातिर जिस-तिस प्रमाण को घुसेड़ते, तब चटर्जी महाशय खड़े हो असंलग्न या inadmissible (अमान्य) कह आपत्ति करते। वे समझ न सके कि ये साक्ष्य इसलिये नहीं पेश किये जा रहे कि ये संलग्न या कानून-सम्मत हैं वरन् इसलिये कि नॉर्टनकृत नाटक में शायद उपयोगी हों। इस असंगत व्यवहार से नॉर्टन ही क्यों, बर्ली साहबतक झुंझला उठते। एक बार बर्ली साहब ने चटर्जी महाशय को बड़े करुण स्वर में कहा था, "Mr. Chatterjee, we were getting on very nicely before you came," आपके आने से पहले हम निर्विघ्न मुकदमा चला रहे थे। सच ही तो है, नाटक की रचना के समय बात-बात पर आपत्ति उठाने से नाटक भी आगे नहीं बढ़ता और दर्शकों को भी मजा नहीं आता।

यदि नॉर्टन साहब थे नाटक के रचयिता, प्रधान अभिनेता और सूत्रधार तो मजिस्ट्रेट बर्ली को कहा जा सकता है नाटककार का पृष्ठपोषक या patron। बर्ली साहब शायद थे स्कॉच जाति के गौरव। उनका चेहरा स्काटलैंड का स्मारक चिह्न था। खूब गोरी, खूब लंबी, अति कृष, दीर्घ देहयष्टि पर छोटा-सा सिर देख ऐसा लगता था जैसे अग्रभेदी आक्टोरलोनी के monument (स्मारक) पर छोटे-से आक्टोरलोनी बैठे हों, या क्लियोपेट्रा के obelisk (स्तंभ) के शिखर पर एक पका नारियल रखा हो। उनके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बाल थे धूसर वर्ण (sandy haired) और स्काटलैंड की सारी ठंड और बर्फ उनके चेहरे के भाव पर जमी हुई थी। जो इतना दीर्घकाय हो उसकी बुद्धि भी तद्रूप होनी चाहिये, नहीं तो प्रकृति की मितव्ययता के संबंध में संदेह होता है। किंतु इस प्रसंग में, बर्ली की सृष्टि के समय, लगता है, प्रकृति देवी कुछ अनमनी एवं अन्यमनस्क हो गयी थीं। अंगरेज कवि मार्लो ने इस मितव्ययता का infinite riches in a little room (छोटे-से भंडार में असीम धन) कह वर्णन किया है किंतु बर्ली का दर्शन कवि के वर्णन से विपरीत भाव मन में जगाता है—infinite room in little riches (असीम भंडार में क्षुद्र धन)। सचमुच, इस दीर्घ देह में इतनी थोड़ी विद्या-बुद्धि देख दुःख होता था और इस तरह के अल्पसंख्यक शासनकर्ताओं द्वारा तीस कोटि भारतवासी शासित हो रहे हैं यह याद कर अंगरेजों की महिमा और ब्रिटिश शासन-प्रणाली पर प्रगाढ़ भक्ति उमड़ती थी। श्रीयुत व्योमकेश चक्रवर्ती द्वारा जिरह करते समय बर्ली साहब की विद्या की पोल खुली। इतने साल मजिस्ट्रेटगिरी करने के बाद भी यह निर्णय करने में उनका सिर घूम गया कि उन्होंने अपने करकमलों में यह मुकदमा कब ग्रहण किया या कैसे मुकदमा ग्रहण किया जाता है, इस समस्या को सुलझाने में असमर्थ हो चक्रवर्ती साहब पर इसका भार दे साहब स्वयं निष्कृति पाने के लिये सचेष्ट हुए। अभी भी यह प्रश्न मुकदमे की अतिजटिल समस्याओं में से एक गिना जाता है कि बर्ली ने कब मुकदमा अपने हाथ में लिया था। चटर्जी महाशय के प्रति किये गये जिस करुण निवेदन का उल्लेख मैंने किया है उससे भी साहब की चिंतनधारा का अनुमान लगाया जा सकता है। शुरू से ही वे नॉर्टन साहब के पांडित्य और वाग्विलास से मंत्रमुग्ध हो उनके वश में हो गये थे। ऐसे विनीत भाव से नॉर्टन द्वारा प्रदर्शित पथ का अनुसरण करते, नॉर्टन की हां में हां मिलाते, नॉर्टन के हंसने से हंसते, नॉर्टन के कुपित होने पर कुपित होते कि यह सरल शिशुवत् आचरण देख कभी-कभी मन में प्रबल स्नेह और वात्सल्य का आविर्भाव होता। बर्ली के स्वभाव में निरा लड़कपन था। उन्हें कभी भी मजिस्ट्रेट न मान सका, ऐसा लगता मानों स्कूल का छात्र हठात् स्कूल का शिक्षक बन शिक्षक के उच्च मंच पर चढ़

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बैठा है। ऐसे ही वे कोर्ट का काम चलाते। कोई उनके साथ अप्रिय व्यवहार करता तो स्कूली शिक्षक की तरह शासन करते। हममें से यदि कुछ मुकदमे के प्रहसन से विरक्त हो आपस में बातें करने लगते तो बर्ली साहब स्कूल मास्टर की तरह बिगड़ने लगते, उनकी बात न सुनने पर सबको खड़े हो जाने की आज्ञा देते, उसका भी तुरन्त पालन न किया तो प्रहरी को कहते हमें खड़ा कर देने के लिये। हम स्कूलमास्टर के इस रंग-ढंग को देखने के इतने आदी हो गये थे कि जब बर्ली और चटर्जी महाशय का झगड़ा खड़ा हुआ तो हम प्रति क्षण इस आशा में थे कि अब बैरिस्टर साहब को खड़े रहने का दंड मिलेगा। बर्ली साहब ने लेकिन उल्टा रास्ता पकड़ा, चिल्लाते हुए sit down, Mr. chatterjee (बैठ जाइये, मि० चटर्जी) कह अलीपुर स्कूल के इस नवागत उद्दंड छात्र को बिठा दिया। जैसे कोई-कोई मास्टर छात्र के किसी प्रश्न से या पढ़ाते समय अतिरिक्त व्याख्यान चाहने से खीजकर उसे डांट देते हैं, बर्ली भी आसामी के वकील की आपत्ति पर खीज उसे डपट देते। कोई-कोई साक्षी नॉर्टन को परेशान करते। नॉर्टन सिद्ध करना चाहते थे कि अमुक लेख अमुक आसामी के हस्ताक्षर हैं, साक्षी यदि कहते कि नहीं, यह तो ठीक उस लेख की तरह नहीं, फिर भी हो सकता है, कहा नहीं जा सकता—बहुत-से साक्षी इसी तरह का उत्तर देते थे—तो नॉर्टन अधीर हो उठते। बक-झक कर, चिल्लाकर, डांट-डपट कर किसी भी उपाय से अभीप्सित उत्तर उगलवाने की चेष्टा करते। उनका अंतिम प्रश्न होता, "what is your belief ?" तुम क्या मानते हो, हां या ना? साक्षी न हां कह पाते न ना। घुमा-फिरा बार-बार वही उत्तर देते। नॉर्टन को यह समझाने की चेष्टा करते कि उनका कोई भी belief (विश्वास) नहीं, वे संदेह में झूल रहे हैं। किंतु नॉर्टन वह उत्तर नहीं चाहते थे, बार-बार मेघगर्जना करते हुए उसी सांघातिक प्रश्न से साक्षी के सिर पर वज्राघात करते, "come, sir, what is your belief ?" (हां, तो फिर क्या राय है महाशय, आपकी?) नॉर्टन के क्रुद्ध होते ही बर्ली भी ऊपर से गरजते, "टोमारा क्या विश्वास है?" बेचारे साक्षी महाविपद् में पड़ जाते। उनका कोई विश्वास नहीं लेकिन एक तरफ से मजिस्ट्रेट, दूसरी तरफ से नॉर्टन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्षुधित व्याघ्र की तरह उनकी बोटी-बोटी अलग कर अमूल्य अप्राप्य विश्वास बाहर निकलवाने को तत्पर हो दोनों तरफ से भीषण गर्जन कर रहे हैं। बहुधा विश्वास जाहिर न होता, चकरायी बुद्धि और पसीने से तर साक्षी उस यंत्रणा-स्थल से अपने प्राण बचा भाग खड़े होते। कोई-कोई प्राणों को ही विश्वास से प्रियतर मान नॉर्टन साहब के चरण-कमलों में झूठे विश्वास का उपहार चढ़ा बच निकलते, नॉर्टन भी अति संतुष्ट हो बाकी जिरह स्नेहसहित सम्पन्न करते। ऐसे परामर्शदाता के साथ आ मिले ऐसे मजिस्ट्रेट तभी तो मुकदमे ने और भी अधिक नाटकीय रूप धारण कर लिया था।

कुछ एक साक्षियों के विरुद्धाचरण करने पर भी अधिकांश नॉर्टन साहब के प्रश्नों का अनुकूल उत्तर देते। इनमें जाने-पहचाने कम ही थे। कोई-कोई किंतु परिचित भी था। देवदास करण महाशय ने हमारी विरक्ति दूर कर हमें खूब हंसाया था, चिरकाल हम उनके कृतज्ञता के ऋण में बंधे रहेंगे। इन साक्षी ने यह गवाही दी थी कि मेदिनीपुर के सम्मेलन के समय जब सुरेंद्र बाबू ने अपने छात्रों से गुरुभक्ति के बारे में पूछा था तब अरविंद बाबू बोल पड़े थे, "द्रोण ने क्या किया ?" यह सुनते ही नॉर्टन साहब के आग्रह और कौतुहल की सीमा न रही, उन्होंने निस्संदेह यह सोचा होगा कि द्रोण या तो कोई बम का भक्त है या राजनीतिक हत्यारा या मानिकतला बागान या छात्रमंडली से संयुक्त। नॉर्टन के ख्याल में इस वाक्य का अर्थ शायद यह था कि अरविंद घोष ने सुरेंद्र बाबू को गुरुभक्ति के बदले बम का पुरस्कार देने का परामर्श दिया था, तब तो मुकदमे में बड़ी सुविधा हो सकती है। अतएव उन्होंने साग्रह प्रश्न किया, "द्रोण ने क्या किया ?" शुरू में साक्षी किसी भी तरह प्रश्न का उद्देश्य समझ न सके। पांच मिनटतक इसे लेकर खींचतान चलती रही, अंत में करण महाशय ने दोनों हाथ ऊपर फैला नॉर्टन साहब को जतलाया, "द्रोण ने अनेक चमत्कार दिखलाये थे।" इससे नॉर्टन साहब संतुष्ट नहीं हुए। द्रोण के बम का अनुसंधान न मिलने तक संतुष्ट हों भी कैसे ? दुबारा पूछा, "अनेक चमत्कार क्या बला हैं ? क्या विशेष किया है उन्होंने ?" साक्षी ने इसके अनेकों उत्तर दिये, एक से भी द्रोणाचार्य के जीवन के इस गुप्त रहस्य का भेद नहीं खुला ! नॉर्टन साहब भड़क उठे,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गरजना शुरू किया। साक्षी भी चिल्लाने लगे। एक वकील ने हंसते हुए यह संदेह व्यक्त किया कि शायद साक्षी को पता नहीं कि द्रोण ने क्या किया। करण महाशय इसपर क्रोध और क्षोभ से आगबबूला हो उठे। चिल्लाये, "क्या ? मैं ? मैं नहीं जानता कि द्रोण ने क्या किया ? वाह, क्या मैंने वृथा ही सारा महाभारत पढ़ा ?" आधे घंटेतक द्रोणाचार्य की मृत-देह पर करण और नॉर्टन का महायुद्ध चला। हर पांच मिनट बाद अलीपुर विचारालय को कंपाते नॉर्टन अपना प्रश्न गुंजाने लगे, "Out with it, Mr. Editor! what did Drona do ?" (हां, बताइये-बताइये, संपादक महाशय, द्रोण ने क्या किया ?) उत्तर में संपादक महाशय ने एक लंबी रामकहानी आरंभ की, किंतु द्रोण ने क्या किया, इसका कोई विश्वसनीय संवाद नहीं मिला। सारी अदालत ठहाकों से गूंज उठी। अंत में टिफिन के समय करण महाशय जरा ठंडे दिमाग से सोच-समझ कर लौटे और समस्या की यह मीमांसा बतलायी कि बेचारे द्रोण ने कुछ नहीं किया, बेकार ही उनकी परलोकगत आत्मा को ले आधे घंटेतक खींच-तान हुई, अर्जुन ने ही गुरु द्रोण का वध किया था। अर्जुन के इस मिथ्या अपवाद से द्रोणाचार्य ने निस्तार पा कैलाश पर सदाशिव को धन्यवाद दिया होगा कि करण महाशय की गवाही के कारण अलीपुर के बम-केस में उन्हें कठघरे में खड़ा नहीं होना पड़ा। संपादक महाशय की एक बात से सहज ही अरविंद घोष के साथ उनका संबंध प्रमाणित हो जाता। किंतु आशुतोष सदाशिव ने उनकी रक्षा की।

जो गवाही देने आये थे उन्हें तीन श्रेणियों में बांटा जा सकता है। पुलिस और गोयंदा, पुलिस के प्रेम में आबद्ध निम्नश्रेणी के लोग और सज्जन, और तीसरे अपने दोषवश पुलिस-प्रेम से वंचित, अनिच्छा से आये हुए गवाह। हर श्रेणी का गवाही देने का ढंग था अलग-अलग। पुलिस महोदय प्रफुल्ल भाव से, अम्लानवदन अपने पूर्वज्ञात वक्तव्यों को मनमाने ढंग से बोल जाते, जिसे पहचानना होता पहचान लेते—कोई संदेह नहीं, दुविधा नहीं, भूल-चूक नहीं। पुलिस के संगी-साथी अतिशय आग्रह के साथ गवाही देते, जिसे पहचानना होता उसे भी पहचान लेते और जिसे नहीं पहचानना होता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसे भी बहुत बार अतिशय उत्सुकतावश पहचान लेते। अनिच्छा से आये गवाह जो कुछ जानते होते वही कहते, लेकिन वह बहुत थोड़ा होता; नॉर्टन साहब उससे असंतुष्ट हो और यह सोचकर कि साक्षी के पेट में अपार मूल्यवान् और संदेहनाशक प्रमाण हैं, जिरह के बल पर उसका पेट चीर उन्हें बाहर निकालने की भरपूर चेष्टा करते। इससे साक्षी महा विपद् में पड़ जाते। एक ओर नॉर्टन साहब की गर्जना और बर्ली साहब की लाल-लाल आंखें, दूसरी ओर झूठी गवाही दे देशवासियों को कालेपानी भेजने का महापाप। गवाहों के सामने एक गुरुतर प्रश्न उठ खड़ा होता, नॉर्टन और बर्ली को खुश करें या भगवान् को। एक तरफ क्षणस्थायी विपत्ति—मनुष्यों का कोप, दूसरी ओर पाप का दंड—नरक और परजन्म में दुःख। लेकिन वे सोचते, नरक और परजन्म तो दूर की बातें हैं, मनुष्यकृत विपद् तो उन्हें अगले क्षण ही ग्रस सकती है। बहुतों के मन में यह डर था कि मिथ्या साक्ष्य देने के लिये राजी न होने पर भी मिथ्या साक्ष्य के अपराध में पकड़े जायेंगे, क्योंकि ऐसे स्थलों पर परिणाम के दृष्टांत विरल नहीं। अतएव इस श्रेणी के साक्षियों को जो समय साक्षी के कठघरे में अतिवाहित करना पड़ता वह उनके लिये विलक्षण भीति और यंत्रणा का समय होता। जिरह शेष होने पर उनके अर्द्ध-निर्गत प्राण फिर से देह में लौट उन्हें यंत्रणामुक्त करते। कुछ एक साहस के साथ गवाही देते, नॉर्टन की गर्जना की परवाह न करते, अंगरेज परामर्शदाता भी यह देख जातीय प्रथा का अनुसरण कर नरम पड़ जाते। इस तरह कितने ही साक्षी आये, कितनी तरह की गवाहियां दे गये, किंतु एक ने भी पुलिस के लिये उल्लेखनीय कोई सुविधा नहीं की। एक ने साफ कहा—मैं कुछ नहीं जानता, समझ नहीं आता क्यों पुलिस मुझे जबरदस्ती खींच लायी है ! इस तरह का मुकदमा चलाना शायद भारत में ही संभव है, दूसरे देशों में जज इससे झुंझला उठते और पुलिस का गंजन कर अच्छा सबक सिखाते। बिना अनुसंधान किये दोषी-निर्दोष का विचार न कर कठघरे में खड़ा करना, अंदाज से सौ-सौ साक्षी खड़े कर देश का पैसा बहाना और आसामियों को निरर्थक लंबे समयतक कारा-यंत्रणा में रखना इस देश की पुलिस को ही शोभा देता है। लेकिन बेचारी पुलिस क्या करे ? वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो नाम की गोयंदा थी, उसमें जब वह क्षमता ही नहीं थी तो ऐसे साक्षियों के लिये एक विशाल जाल फेंककर अंदाज से उत्तम, मध्यम और अधम साक्षी फंसा कठघरे में खड़ा करना ही था एकमात्र उपाय। क्या मालूम शायद वे कुछ जानते हों, कुछ प्रमाण दे भी दें ?

आसामियों को पहचानने की व्यवस्था भी बड़ी रहस्यमय थी। पहले साक्षी से पूछा जाता, तुम इनमें से किसीको पहचान सकोगे ? साक्षी यदि कहते, हां, पहचान सकता हूं तो नॉर्टन साहब हर्षोत्फुल्ल हो तुरत कठघरे में identification parade (पहचान-परेड) की व्यवस्था करा वहां उन्हें अपनी स्मरणशक्ति को चरितार्थ करने का आदेश देते। यदि वे कहते, पता नहीं, शायद पहचान भी लूं, तो जरा नाराजगी से कहते, अच्छा, जाओ, चेष्टा करो। यदि कोई कहता, नहीं, नहीं कर सकूंगा, मैंने उन्हें नहीं देखा या ध्यान नहीं दिया तो भी नॉर्टन साहब उन्हें न छोड़ते। शायद इतने चेहरे देख पूर्वजन्म की कोई स्मृति ही जागृत हो जाये इसलिये उसे परीक्षा करने को भेज देते। साक्षी में वैसी योगशक्ति नहीं थी। शायद पूर्वजन्मवाद में आस्था भी नहीं, वे आसामियों की दीर्घ दो पंक्तियों के बीच सार्जेंटों के नेतृत्व में, शुरू से अंततक गंभीर भाव से कूच करते हुए, हमारे चेहरों को बिना देखे ही सिर हिलाकर कहते—नहीं, नहीं पहचानता। निराश हृदय नॉर्टन इस मत्स्यशून्य जीवंत जाल को समेट लेते। मनुष्य की स्मरणशक्ति कितनी प्रखर और अभ्रांत हो सकती है इसका अपूर्व प्रमाण मिला इस मुकदमे में। तीस-चालीस आदमी खड़े हैं, उनका नाम नहीं पता, किसी भी जन्म में एक बार भी उनके साथ बातचीत नहीं हुई, फिर भी दो मास पहले किसे देखा है, किसे नहीं देखा, अमुक को अमुक तीन जगह देखा, अमुक दो जगह नहीं; एक बार उसे दांत मांजते हुए देखा था इसलिये उसका चेहरा जन्म-जन्मांतर के लिये मेरे मन में अंकित रह गया है। इन्हें कब देखा, क्या कर रहे थे, कौन साथ थे, या एकाकी थे, कुछ भी याद नहीं, फिर भी उनका चेहरा मेरे मन में जन्म-जन्मांतर के लिये अंकित है; हरि को दस बार देखा है इसलिये उन्हें भूलने की कोई संभावना नहीं, श्याम को एक बार सिर्फ आधे मिनट के लिये देखा लेकिन उसे भी मरते दमतक नहीं भूल सकूंगा, भूल-चूक होने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की कोई संभावना नहीं,—ऐसी स्मरणशक्ति इस अपूर्ण मानव प्रकृति में, इस तमोभिभूत मर्त्य धाम में साधारणतः नहीं मिलती। एक नहीं, दो नहीं, प्रत्येक पुलिसपुंगव में ऐसी विचित्र, निर्भूल, अभ्रांत स्मरणशक्ति देखने को मिली। इससे सी॰ आई॰ डी॰ पर हमारी श्रद्धा-भक्ति दिन-दिन प्रगाढ़ होने लगी। अफसोस है, सैशन्स कोर्ट में वह भक्ति कम करनी पड़ी थी। मजिस्ट्रेट को कोर्ट में दो-एक बार संदेह न हुआ हो ऐसी बात नहीं। जब यह लिखित गवाही देखी कि शिशिर घोष अप्रैल में बंबई में थे और ठीक उसी समय कुछ एक पुलिसपुंगवों ने उन्हें स्कॉट्स लेन और हैरिसन रोड पर भी देखा तब थोड़ा-सा संदेह तो हुआ ही था। जब श्रीहट्टवासी वींरेंद्रचंद्र सेन स्थूल शरीर से बनियाचंग में पितृभवन में रहते हुए भी बागान में और स्कॉट्स लेन में—जिस स्कॉट्स लेन का पता वींरेंद्र नहीं जानते थे, इसका अकाट्य प्रमाण लिखित साक्ष्य में मिला था—उनका सूक्ष्म शरीर सी॰ आई॰ डी॰ की सूक्ष्म दृष्टि ने देखा था, तब और भी संदेह हुआ था। विशेष कर जिन्होंने स्कॉट्स लेन में कभी भी पदार्पण नहीं किया, उन्होंने जब सुना कि पुलिस ने उन्हें वहां कई बार देखा है, तब संदेह का उद्रेक होना कुछ अस्वाभाविक नहीं। मेदिनीपुर के एक साक्षी—मेदिनीपुर के आसामियों से पता लगा कि वे भी गोयंदा हैं—बोले कि उन्होंने श्रीहट्ट के हेमचंद्र सेन को तमलूक में वक्तृता देते देखा था। किंतु हेमचंद्र ने अपनी स्थूल आंखों से कभी तमलूक नहीं देखा, तो भी उनके छायामय शरीर ने श्रीहट्ट से सुदूर तमलूक जाकर तेजस्वी और राजद्रोहपूर्ण स्वदेशी व्याख्यान दे गोयंदा महाशय की चक्षुतृप्ति और कर्णतृप्ति की थी। किंतु चंदननगर के चारुचंद्र राय के छायामय शरीर ने मानिकतला में उपस्थित हो इससे भी ज्यादा रहस्यमय कांड मचाया था। पुलिस के दो कर्मचारियों ने शपथ खाकर कहा था कि उन्होंने अमुक दिन अमुक समय चारु बाबू को श्याम-बाजार में देखा था, वे श्याम-बाजार से एक षड्यंत्रकारी के साथ मानिकतला बागान तक पैदल गये थे, उन्होंने भी वहांतक उनका पीछा किया था और बहुत पास से देखा था, अतः भूल होने की गुंजायश नहीं। वकील की जिरह से दोनों साक्षी टस से मस न हुए। **व्यासस्य वचनं सत्यम्**, पुलिस की गवाही भी अन्यथा नहीं हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सकती। दिन और समय के संबंध में भी उनकी भूल होने की कोई बात नहीं, क्योंकि ठीक उसी दिन, उसी समय चारु बाबू कालिज से छुट्टी ले कलकत्ते में उपस्थित थे, चंदननगर के डुप्ले कालिज के अध्यक्ष की गवाही से यह प्रमाणित हुआ था। किंतु आश्चर्य ! ठीक उसी दिन, उसी समय चारु बाबू हावड़ा स्टेशन के प्लेटफार्म पर चंदननगर के मेयर तार्दिवाल, तार्दिवाल की पत्नी, चंदननगर के गवर्नर और अन्यान्य संभ्रांत यूरोपीय सज्जनों के साथ बातें करते-करते टहल रहे थे। ये सब इसी बात को याद कर चारु बाबू के पक्ष में गवाही देने के लिये राजी हुए थे। फ्रेंच गवर्नमेंट की चेष्टा से पुलिस द्वारा चारु बाबू को छोड़ दिये जाने पर विचारालय में इस रहस्य का उद्घाटन नहीं हुआ। किंतु चारु बाबू को मैं यह परामर्श देता हूं कि वे ये सब प्रमाण Psychical Research Society को भेज मनुष्यजाति के ज्ञान-संचय में सहायता करें। पुलिस की गवाहियां मिथ्या नहीं हो सकतीं,—विशेषकर सी० आई० डी० की—अतएव थियोसोफी के आश्रय के अलावा हमारे लिये और कोई चारा नहीं। सौ बात की एक बात, ब्रिटिश कानून प्रणाली में कितनी आसानी से निर्दोषों को जेल, कालापानी और फांसी तक हो सकती है इसका दृष्टांत इस मुकदमे में पग-पग पर पाया। कठघरे में खड़े न होने तक पाश्चात्य विचार-प्रणाली की मायावी असत्यता हृदयंगम नहीं की जा सकती। यूरोप की यह प्रणाली है जुए का एक खास खेल; मनुष्य की स्वाधीनता, मनुष्य का सुख-दुःख, उसकी और उसके परिवार एवं आत्मीय बंधु की जीवनव्यापी यंत्रणा, अपमान और जीवंत मृत्यु को ले जुए का खेल। इससे कितने दोषी बच जाते हैं और कितने निर्दोष मर जाते हैं इसकी कोई गिनती नहीं। यूरोप में Socialism (समाजवाद) और Anarchism (अराजकतावाद) का कितना प्रचार और प्रभाव हुआ है वह इस जुए में एक बार फंसने पर, इस निष्ठुर निर्विचार समाजरक्षक पेषणयंत्र में एक बार पड़ने पर पहली दृष्टि में ही समझ में आ जाता है। ऐसी अवस्था में यह कोई आश्चर्य की बात नहीं कि अनेक उदार-चेता दयालु जन कहने लग गये हैं कि इस समाज को तोड़ दो, चूर-मार कर दो; इतने पाप, इतने दुःख, इतने निर्दोषों के तप्त निःश्वास और हृदय के खून से यदि समाज की रक्षा करनी हो तो बेकार है वह रक्षा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मजिस्ट्रेट की कोर्ट में एकमात्र विशेष उल्लेखनीय घटना थी नरेंद्रनाथ गोस्वामी की गवाही। उस घटना का वर्णन करने से पहले अपनी विपदा के संगी युवक आसामियों के बारे में कहता चलूं। कोर्ट में इनका आचरण देख अच्छी तरह समझ गया था कि बंगाल में नवयुग आ गया है, नयी संतति मां की गोद में वास करना आरंभ कर चुकी है। तत्कालीन बंगाली लड़के दो तरह के थे, या तो थे शांत, शिष्ट, निरीह, सच्चरित्र, भीरु, आत्मसम्मान और उच्चाकांक्षा से शून्य; या दुश्चरित्र, दुर्दांत, अस्थिर, ठग, संयमी और साधुता से शून्य! इन दो चरमावस्थाओं के बीच नानारूप जीव बंगजननी की क्रोड़ में जनमे थे, लेकिन आठ-दस असाधारण प्रतिभावान्, शक्तिमान्, भविष्य के पथ-प्रदर्शकों को छोड़ इन दो श्रेणियों के अलावा तेजस्वी आर्य संतान प्रायः देखने में नहीं आती थी। बंगाली में बुद्धि थी, मेधाशक्ति थी लेकिन शक्ति नहीं थी; मनुष्यत्व नहीं था। लेकिन इन लड़कों को देखते ही लगता था मानों अन्य युग के अन्य शिक्षाप्राप्त, उदारचेता, दुर्दांत तेजस्वी पुरुष फिर से भारतवर्ष में लौट आये हैं। वह निर्भीक सरल दृष्टि, वह तेजपूर्ण वाणी, वह चिंताशून्य आनंदमय हंसी, इस घोर विपद् के समय भी वह अक्षुण्ण तेजस्विता, मन की प्रसन्नता, विमर्शता, चिंता या संताप का अभाव, उस समय के तमःक्लिष्ट भारतवासी का नहीं, नूतन युग का, नूतन जाति का, नूतन कर्मस्रोत का लक्षण है। ये यदि हत्यारे हों तो कहना पड़ेगा कि हत्या की रक्तमयी छाया उनके स्वभाव पर नहीं पड़ी, क्रूरता, उन्मत्तता और पाशविक भाव उनमें कतई नहीं था। उन्होंने भविष्य की या मुकदमे के फल की जरा भी चिंता न कर कारावास के दिन बालकोचित आमोद में, हंसी में, खेल में, पढ़ने-सुनने में, समालोचना में बिताये। बहुत जल्दी ही उन्होंने जेल में कर्मचारी, सिपाही, कैदी, यूरोपीय सार्जेंट, जासूस, कोर्ट के कर्मचारी सभी के साथ मैत्री का नाता जोड़ लिया था एवं शत्रु-मित्र, बड़े-छोटे का विचार न कर सबके साथ बातचीत, हंसी-मजाक करने लग गये थे। कोर्ट का समय उन्हें बड़ा विरक्तिकर लगता, क्योंकि मुकदमे के प्रहसन में रस बहुत कम आता था। यह समय काटने के लिये उनके पास न पढ़ने को किताब थी न बात करने की अनुमति। जो योग करना शुरू कर चुके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थे, उन्होंने तबतक गुल-गपाड़े में ध्यान करना नहीं सीखा था, उन्हें समय काटना पहाड़ हो जाता। शुरू में दो-चार जन पढ़ने के लिये किताब अंदर लाने लगे, उनकी देखा-देखी बाकी सबने भी उसी उपाय का सहारा लिया। उसके बाद एक अद्भुत दृश्य देखने को मिलता—मुकदमा चल रहा है, तीस-चालीस आसामियों के समस्त भविष्य को ले खींचा-तानी चल रही है, उसका फल हो सकता है फांसी के तख्ते पर मृत्यु या आजीवन कालापानी, किंतु उस ओर दृक्पात न कर उनमें से कोई बंकिम का उपन्यास, कोई विवेकानंद का राजयोग या Science of Religions , कोई गीता, कोई पुराण तो कोई यूरोपीय दर्शन एकाग्र मन से पढ़ रहा होता। अंगरेज सार्जेंट या देशी सिपाही कोई भी उनके इस आचरण में बाधा नहीं देता। वे सोचते थे कि यदि इससे ही इतने सारे पिंजराबद्ध व्याघ्र शांत रहें तो हमारा काम भी कम होता है और इससे किसी की क्षति भी नहीं होती। लेकिन एक दिन बर्ली साहब की दृष्टि खिंच गयी इस दृश्य की ओर, असह्य हो उठा मजिस्ट्रेट साहब को यह आचरण। दो दिन तो वे कुछ नहीं बोलें लेकिन और ज्यादा न सह सके, पुस्तकें लाने की मनाही कर दी। असल में बर्ली इतना सुंदर विचार कर रहे थे कि उसे सुनकर कहां तो सबको आनंद लेना चाहिये था, उल्टे पढ़ रहे थे सब पुस्तकें। यह तो बर्ली के गौरव और ब्रिटिश जस्टिस की महिमा के प्रति घोर असम्मान प्रदर्शित करना है, इसमें संदेह नहीं।

हम जितने दिन अलग-अलग कोठरियों में बंद थे उतने दिन केवल गाड़ी में, मजिस्ट्रेट के आने से पहले एक घंटा या आधा घंटा और खाने के समय कुछ बातें करने का अवसर पाते। जिनका परस्पर-परिचय या आलाप था वे इस समय cell (सेल) की नीरवता और निर्जनता का प्रतिशोध लेते, हंसी, आमोद और नाना विषयों की आलोचना में समय बिताते। लेकिन ऐसे अवसरों पर अपरिचितों के साथ बात करने की सुविधा नहीं होती इसलिये मैं अपने भाई बारींद्र और अविनाश को छोड़ और किसी से भी ज्यादा बात न करता, उनका हंसी-मजाक, उनकी बातें सुनता पर स्वयं उसमें भाग न

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेता। किंतु एक आदमी बात-चीत में मेरे पास खिसक आता। वे थे भावी approver (मुखबिर) नरेंद्रनाथ गोस्वामी। दूसरे लड़कों की तरह उनका स्वभाव न शांत था न शिष्ट। वे थे साहसी और लघुचेता एवं चरित्र, वाणी और कर्म में असंयत। पकड़े जाने के समय नरेन गोसाईं ने अपना स्वाभाविक साहस और प्रगल्भता दिखायी थी, लेकिन लघुचेता होने के कारण कारावास का थोड़ा-सा भी दुःख और असुविधा सहन करना उनके लिये असाध्य हो उठा था। वे थे जमींदार के बेटे अतः सुख, विलास और दुर्नीति में पले, वे कारागृह के कठोर संयम और तपस्या से अत्यंत कातर हो गये थे, और यह भाव सबके सामने प्रकट करने में भी कुंठित नहीं हुए। जिस किसी भी उपाय से इस यंत्रणा से मुक्त होने की उत्कट लालसा उनके मन में दिन-दिन बढ़ने लगी। पहले उन्हें यह आशा थी कि अपनी स्वीकारोक्ति का प्रत्याहार कर वे यह प्रमाणित कर सकेंगे कि पुलिस ने शारीरिक यंत्रणा देकर दोष स्वीकार कराया था। उन्होंने हमें बताया कि उनके पिता इस तरह के झूठे गवाह जुटाने के लिये कृतसंकल्प थे। किंतु थोड़े दिनों में ही और एक भाव सामने आने लगा। उनके पिता और एक मुखतार उनके पास बार-बार जेल में आने-जाने लगे, अंत में जासूस शमसुल आलम भी उनके पास आ बहुत देरतक गुप-चुप बातें करने लगे। ऐसे समय हठात् गोसाईं के कौतुहल और प्रश्न करने की प्रवृत्ति देख बहुतों के मन में संदेह का उद्रेक हुआ। भारतवर्ष के बड़े-बड़े आदमियों के साथ उनका परिचय या घनिष्ठता थी कि नहीं, गुप्त समिति को किस-किस ने आर्थिक सहायता दे उसका पोषण किया, समिति के और कौन-कौन सदस्य बाहर या भारत के अन्यान्य प्रदेशों में थे, अब कौन समिति का कार्य चलायेंगे, शाखा-समिति कहां है इत्यादि अनेक छोटे-बड़े प्रश्न बारींद्र और उपेंद्र से पूछते। गोसाईं की यह ज्ञानतृष्णा की बात अचिरात् सबके कर्णगोचर हुई और शमसुल आलम के साथ उनकी घनिष्ठता की बात भी अब गोपनीय प्रेमालाप न रह open secret (खुला रहस्य) हो उठा। इसे लेकर खूब आलोचना होती और किसी-किसी ने यह भी लक्ष्य किया कि हमेशा पुलिस-दर्शन के बाद ही इस तरह के नये-नये प्रश्न गोसाईं के मन में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चक्कर काटते हैं। कहने की जरूरत नहीं कि उन्हें इन प्रश्नों का संतोषजनक उत्तर नहीं मिला। जब पहले-पहल आसामियों में यह बात प्रचारित होने लगी तब गोसाईं ने स्वयं स्वीकार किया था कि पुलिस उनके पास आ "सरकारी गवाह" बन जाने के लिये उन्हें नाना उपायों से समझाने की चेष्टा कर रही है। कोर्ट में उन्होंने मुझे एक बार यह बात कही थी। मैंने उनसे पूछा था, "आपने क्या उत्तर दिया।" वे बोले, "मैं क्या मान लूंगा! मानने पर भी भला मैं क्या जानता हूं जो उनकी इच्छानुसार साक्ष्य दूंगा?" उसके कुछ दिन बाद उन्होंने फिर से जब इस बात का उल्लेख किया तो देखा कि यह बात बहुत आगे बढ़ चुकी है। जेल में identification parade (पहचान-परेड) के समय मेरी बगल में गोसाईं खड़े थे, तब वे मुझसे कहते: "पुलिस केवल मेरे पास ही आती है।" मैंने उपहास करते हुए कहा, "आप यह बात कह क्यों नहीं देते कि सर ऐंड्रू फ्रेजर गुप्त समिति के प्रधान पृष्ठपोषक थे, इससे उनका परिश्रम सार्थक होगा।" गोसाईं बोले, "ऐसी बात तो मैंने कह ही दी है। मैं उन्हें कह चुका हूं कि सुरेंद्रनाथ बनर्जी हैं हमारे head (प्रधान) और मैंने उन्हें भी एक बार बम दिखाया है।" स्तंभित हो मैंने उनसे पूछा, "यह बात कहने की जरूरत क्या थी?" गोसाईं बोले, "मैं . . . का श्राद्ध करके रहूंगा। उस तरह की और भी बहुत-सी खबरें मैंने दी हैं। मरें साले corroboration (प्रमाण) खोजते-खोजते। क्या पता, इस उपाय से, मुकदमा फिस ही हो जाये?" इसके उत्तर में मैंने केवल इतना कहा था, "ऐसी शरारत से बाज आइये। उनके साथ चालाकी करते-करते खुद ही ठगे जायेंगे।" पता नहीं गोसाईं की यह बात कहांतक सच थी। और सब आसामियों की यह राय थी कि हमारी आंखों में धूल झोंकने के लिये उन्होंने ऐसा कहा था। मेरा ख्याल था कि तबतक गोसाईं approver (मुखबिर) होने के लिये पूर्णतया कृतनिश्चय नहीं थे, यह ठीक है कि इस विषय में वे बहुत आगे बढ़ चुके थे, किंतु पुलिस को ठग उनका केस मिट्टी कर देने की आशा भी उन्हें थी। चालाकी और असदुपाय से कार्यसिद्धि ही दुष्प्रवृत्ति की स्वाभाविक प्रेरणा है। तभी से समझ गया था कि गोसाईं पुलिस के वश हो सच झूठ उन्हें जो भी चाहिये वह कह अपने को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बचाने की चेष्टा करेंगे। एक नीच स्वभाव का और भी निम्नतर दुष्कर्म की ओर अधःपतन हमारी आंखों के सामने नाटक की तरह अभिनीत होने लगा। मैंने लक्ष्य किया कि किस तरह गोसाईं का मन दिन-प्रतिदिन बदलता जा रहा है, उनके मुख, भावभंगिमा और बात-चीत में भी परिवर्तन हो रहा है। विश्वासघात कर अपने संगी-साथियों का सर्वनाश करने के लिये वे जो कुछ जुटा रहे थे उसके समर्थन के लिये क्रम से नाना अर्धनैतिक और राजनीतिक युक्तियां बाहर करने लगे। ऐसी interesting psychological study (मनोरंजक मानसिक अध्ययन) प्रायः सहज ही हाथ नहीं लगती।

शुरू में किसीने भी गोसाईं को यह पता न लगने दिया कि सभी उनकी अभिसंधि भांप गये हैं। वे भी इतने नासमझ निकले कि बहुत दिनतक कुछ भी न समझ सके, वे समझते थे कि मैं खूब छिपे-छिपे पुलिस की मदद कर रहा हूं। किंतु कुछ दिन बाद यह हुकुम हुआ कि हमें अब और निर्जन कारावास में न रख एक साथ रखा जायेगा तब, उस नूतन व्यवस्था से, रात-दिन पारस्परिक मेल-जोल और बात-चीत से कुछ भी ज्यादा दिन छिपा न रहा। उन्हीं दिनों दो-एक लड़कों के साथ गोसाईं का झगड़ा हुआ, उनकी बातों से और सबके अप्रीतिकर व्यवहार से गोसाईं समझ गये कि उनकी अभिसंधि किसीके लिये भी अज्ञात नहीं रही। जब गोसाईं गवाही देते तो कुछ एक अंगरेजी अखबारों में यह खबर छपती कि आसामी इस अप्रत्याशित घटना से चमत्कृत और उत्तेजित हुए। कहना न होगा, यह थी रिपोर्टरों की कोरी कल्पना। बहुत दिन पहले ही सब जान गये थे कि इस तरह की गवाही दी जायेगी। यहांतक कि किस दिन कौन-सी साक्षी दी जायेगी उसका भी पता था। ऐसे समय एक आसामी गोसाईं के पास जाकर बोले, "देखो भई, अब और नहीं सहा जाता, मैं भी approver (मुखबिर) बनूंगा, तुम शमसुल आलम को कहो कि मेरी रिहाई की भी व्यवस्था करें।" गोसाईं राजी हो गये। कुछ दिन बाद उनसे कहा : इस विषय में गवर्नमेंट की चिट्ठी आयी है कि इस आसामी के निवेदन के अनुकूल निर्णय (favourable consideration) की संभावना है। यह कह गोसाईं ने उन्हें उपेन आदि से कुछ इस तरह की आवश्यक बातें निकलवाने को कहा, जैसे—गुप्त समिति की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शाखा कहां थी, कौन थे उसके नेता इत्यादि। नकली approver आमोद-प्रिय एवं रसिक आदमी थे, उन्होने उपेंद्रनाथ के साथ परामर्श कर गोसाईं को कुछ एक कल्पित नाम जता दिये कि मद्रास में विश्वंभर पिल्लै, सातारा में पुरुषोत्तम नाटेकर, बंबई में प्रोफेसर भट्ट और बड़ौदा में कृष्णाजीराव भाऊ थे इस गुप्त समिति की शाखा के नेता। गोसाईं ने आनंदित हो यह विश्वासयोग्य संवाद पुलिस को दे दिया। पुलिस ने भी मद्रास में कोना-कोना छान मारा, बहुत-से छोटे-बड़े पिल्लै मिले, लेकिन एक भी पिल्लै विश्वंभर या अर्द्ध विश्वंभर तक न मिला, सातारा में पुरुषोत्तम नाटेकर भी अपना अस्तित्व घने अंधकार में छिपाये रहे, बंबई में एक प्रोफेसर भट्ट मिल गये, किंतु वे थे निरीह राजभक्त सज्जन, उनके पीछे कोई गुप्त समिति होने की संभावना नहीं थी। फिर भी, गोसाईं ने गवाही देते समय, उपेन से पहले कभी सुनी बात के आधार पर कल्पना-राज्य के निवासी विश्वंभर पिल्लै इत्यादि षड्यंत्र के महारथियों की नॉर्टन के श्रीचरणों में बलि चढ़ा अपनी अद्‌भुत prosecution theory (अभियोग सिद्धांत) को पुष्ट किया। वीर कृष्णाजीराव भाऊ को लेकर पुलिस ने और एक रहस्य रचा। उन लोगों ने बागान से बड़ौदा के कृष्णाजीराव देशपांडे के नाम किसी "घोष" द्वारा प्रेषित टेलीग्राम की नकल प्रस्तुत की। उस नाम का कोई आदमी था कि नहीं, बड़ौदावासियों को इसका कोई संधान नहीं मिला, लेकिन चूंकि सत्यवादी गोसाईं ने बड़ौदावासी कृष्णाजीराव भाऊ की बात कही है तो निश्चय ही कृष्णाजीराव भाऊ और कृष्णाजीराव देशपांडे हैं एक ही व्यक्ति। और कृष्णाजीराव देशपांडे हों या न हों, हमारे श्रद्धेय बंधु केशवराव देशपांडे का नाम चिट्ठी-पत्री में मिला था। इसलिये निश्चय ही कृष्णाजीराव भाऊ और कृष्णाजीराव देशपांडे एक ही व्यक्ति हैं। इससे यह प्रमाणित हो गया कि केशवराव देशपांडे हैं गुप्त षड्यंत्र के एक प्रधान पंडा। ऐसे सब असाधारण अनुमानों पर प्रतिष्ठित थी नॉर्टन साहब की वह विख्यात theory (परिकल्पना)।

गोसाईं की बात का विश्वास करने से यह भी विश्वास करना होगा कि उन्हीं के कहने से हमारा निर्जन कारावास खतम हुआ एवं हमें इकट्ठे रहने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का हुकुम मिला। उन्होंने बताया कि पुलिस ने उन्हें सबके बीच में रख षड्यंत्र की गुप्त बातें निकलवाने के लिये यह व्यवस्था की है। गोसाईं नहीं जानते थे कि पहले ही सबने उनके नूतन व्यवसाय की गंध पा ली है, इसलिये कौन षड्यंत्र में लिप्त हैं, शाखा समिति कहां है, कौन पैसे देते या सहायता करते हैं, अब कौन गुप्त समिति का काम चलायेंगे आदि ऐसे अनेक प्रश्न पूछने लगे। इन सब प्रश्नों के उन्हें कैसे उत्तर मिले इसका दृष्टांत मैंने ऊपर दिया है। लेकिन गोसाईं की अधिकांश बातें ही झूठी थीं। डा० डैली ने हमें बताया था कि उन्हींने इमर्सन साहब से कह-सुनकर यह परिवर्तन कराया था। संभवतः डैली की बात ही सच है; हो सकता है कि इस नूतन व्यवस्था से अवगत होने के बाद पुलिस ने ऐसे लाभ की कल्पना की हो। जो भी हो, इस परिवर्तन से मुझे छोड़ अन्य सबको परम आनंद मिला, मैं उस समय लोगों से मिलने-जुलने को अनिच्छुक था, तब मेरी साधना खूब जोरों से चल रही थी। समता, निष्कामता और शांति का कुछ-कुछ आस्वाद पाया था; किंतु तबतक यह भाव दृढ़ नहीं हुआ था। लोगों के साथ मिलने से, दूसरों के चिंतनस्रोत का आघात मेरे अपक्व नवीन चिंतन पर पड़ते ही इस नये भाव का ह्रास हो सकता है, बह जा सकता है। और सचमुच यही हुआ। उस समय नहीं जानता था कि मेरी साधना की पूर्णता के लिये विपरीत भाव के उद्रेक का जागना आवश्यक है, इसीलिये अंतर्यामी ने हठात् मुझे मेरी प्रिय निर्जनता से वंचित कर उद्दाम रजोगुण के स्रोत में बहा दिया। दूसरे सभी आनंद में अधीर हो उठे। उस रात जिस कमरे में हेमचंद्र दास, शचींद्र सेन इत्यादि गायक थे वह कमरा सबसे बड़ा था, अधिकांश आसामी वहीं एकत्रित हुए थे और रात के दो-तीन बजेतक कोई भी सो न सका। सारी रात हंसी के ठहाके, गाने का अविराम स्रोत, इतने दिन की रुद्ध कथा-वार्ता वर्षा-ऋतु की वन्या की तरह बहती रहने से नीरव कारागार कोलाहल से ध्वनित हो उठा। हम सो गये लेकिन जितनी बार नींद टूटी उतनी ही बार सुनी समान वेग से चलती हुई वही हंसी, वही गाने, वही गप्पें। अंतिम प्रहर में वह स्रोत क्षीण हो गया, गायक भी सो गये। हमारा वार्ड नीरवता में डूब गया। . . .

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारागृह और स्वाधीनता

लगभग सारी मनुष्यजाति ही है बाह्य अवस्था की दास, स्थूल जगत् की अनुभूति में ही आबद्ध। सब मानसिक क्रियाएं इस बाह्य अनुभूति का ही आश्रय लेती हैं, बुद्धि भी स्थूल की संकीर्ण सीमा लांघने में अक्षम है; प्राण के सुख-दुःख हैं बाह्य घटना की प्रतिध्वनिमात्र। यह आधिपत्य शरीर के दासत्व से पैदा होता है। उपनिषद् में कहा गया है, "जगत्-स्रष्टा स्वयंभू ने शरीर के सब द्वारों को बहिर्मुखी करके गढ़ा है इसलिये सबकी दृष्टि बहिर्जगत् में आबद्ध है, अंतरात्मा को कोई भी नहीं देखता। वे धीर प्रकृति महात्मा विरल हैं जिन्होंने अमृत की लालसा से चक्षुओं को भीतर की ओर फिरा आत्मा के प्रत्यक्ष दर्शन किये हैं।" हम भी साधारणतः जिस बहिर्मुखी स्थूल दृष्टि से मनुष्यजाति का जीवन देखते हैं उस दृष्टि से शरीर ही है हमारा मुख्य संबल। यूरोप को हम जितना भी जड़वादी क्यों न कहें पर असल में मनुष्यमात्र ही है जड़वादी। शरीर है धर्म साधन का उपाय, हमारा बहु-अश्वयुक्त रथ, जिस देह-रथ में आरोहण कर हम संसार पथ पर दौड़ लगाते हैं। किंतु हम देह का अयथार्थ प्राधान्य स्वीकार कर देहात्मक बुद्धि को ऐसे प्रश्रय देते हैं कि बाह्य कर्म और बाह्य शुभाशुभ द्वारा संपूर्णतया बंधे रह जाते हैं। इस अज्ञान का फल है जीवनव्यापी दासत्व और पराधीनता। सुख-दुःख, शुभाशुभ, संपद्-विपद् हमारी मानसिक अवस्था को अपना अनुयायी बनाने के लिये सचेष्ट तो होते ही हैं, हम भी कामना का ध्यान करते-करते उस स्रोत में बह जाते हैं। सुख की लालसा से, दुःख के भय से पराश्रित हो जाते हैं, पर-दत्त सुख और दुःख को ग्रहण कर अशेष कष्ट और लांछना भोगते हैं। क्योंकि, प्रकृति हो या मनुष्य, जो हमारे शरीर पर थोड़ा भी आधिपत्य जमा सकता है या अपनी शक्ति को अधिकार-क्षेत्र में ला सकता है हमें उसी के प्रभाव के अधीन रहना होता है। इसका चरम दृष्टांत है शत्रुग्रस्त या काराबद्ध की अवस्था। किंतु जो बंधु-बांधवों से वेष्टित हो, स्वाधीनता से मुक्त आकाश में विचरण करते हैं, काराबद्धों की तरह उनकी भी यही दुर्दशा है। शरीर ही है कारागृह और देहात्मक-बुद्धिरूप अज्ञानता है कारारूप शत्रु।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह कारावास है मनुष्यजाति की चिरंतन अवस्था। दूसरी ओर, साहित्य और इतिहास के प्रत्येक पन्ने पर देखने में आता है स्वाधीनता पाने के लिये मनुष्य जाति का अदमनीय उच्छ्वास और प्रयास। जैसे राजनीतिक या सामाजिक क्षेत्र में वैसे ही व्यक्तिगत जीवन में युग-युग में हुई है यही चेष्टा। आत्मसंयम, आत्मनिग्रह, सुख-दुःख वर्जन, Stoicism (स्टोइकवाद), Epicureanisms (सुखवाद), Asceticism (वैराग्य), वेदांत, बौद्धधर्म, अद्वैतवाद, मायावाद, राजयोग, हठयोग, गीता, ज्ञानमार्ग, भक्तिमार्ग, कर्ममार्ग आदि नाना पंथों का है एक ही गम्यस्थल। उद्देश्य—देह-विजय, स्थूल के आधिपत्य का वर्जन, आंतरिक जीवन की स्वाधीनता। पाश्चात्य विज्ञानविदों ने यह सिद्धांत बनाया है कि स्थूलजगत् के सिवा दूसरा कोई जगत् नहीं, स्थूल पर प्रतिष्ठित है सूक्ष्म, सूक्ष्म अनुभव है स्थूल अनुभव की प्रतिकृतिमात्र, व्यर्थ है मनुष्य का स्वाधीनता-प्रयास, धर्म-दर्शन और वेदांत हैं अलीक कल्पनाएं, संपूर्ण भूत प्रकृति-आबद्ध हमारा वह बंधन-मोचन या भूत प्रकृति की सीमा का उल्लंघन है मिथ्या चेष्टा। किंतु मानव-हृदय के ऐसे गूढ़तर स्तर में निहित है यह आकांक्षा कि हजार युक्तियां भी इसका उन्मूलन करने में असमर्थ हैं। मनुष्य विज्ञान के सिद्धांत से कभी संतुष्ट नहीं रह सकता। चिरकाल से मनुष्य अस्पष्टतः अनुभव करता आ रहा है कि स्थूलजय में समर्थ सूक्ष्म वस्तु उसके अभ्यंतर में दृढ़ता से वर्तमान है, सूक्ष्ममय अधिष्ठाता हैं नित्यमुक्त, आनंदमय पुरुष। वह नित्यमुक्ति और निर्मल आनंद पाना है धर्म का उद्देश्य। धर्म का यह जो उद्देश्य है, विज्ञान-कल्पित Evolution (विकास) का उद्देश्य भी वही है। विचारशक्ति और उसका अभाव पशु और मनुष्य का प्रकृत अंतर नहीं। पशु में विचार शक्ति है; लेकिन पशु देह में उसका उत्कर्ष नहीं होता। पशु और मनुष्य में असली भेद यह है कि शरीर का संपूर्ण दासत्व स्वीकार करना है पाशविक अवस्था और शरीरजय और आंतरिक स्वाधीनता की चेष्टा ही है मनुष्यत्व का विकास। यह स्वाधीनता ही है धर्म का प्रधान उद्देश्य, इसे ही कहते हैं मुक्ति। इस मुक्ति के लिये हम अंतः-करणस्थ मनोमय प्राण-शरीर-नेता को ज्ञान द्वारा पहचानने या कर्म और भक्तिद्वारा प्राण, मन, और शरीर को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अर्पित करने के लिये सचेष्ट होते हैं। गीता का यह प्रधान उपदेश, **योगस्थः कुरु कर्माणि**, (योग में स्थित होकर कर्म करो) ही यह स्वाधीनता है। आंतरिक सुख-दुःख जब बाह्य शुभाशुभ, संपद-विपद् का आश्रय न लेकर स्वयं-जात, स्वयं-प्रेरित और स्व-सीमाबद्ध होते हैं तब मनुष्य की साधारण अवस्था से विपरीत अवस्था होती है, उस समय बाह्य जीवन को आंतरिक जीवन का अनुयायी बनाया जा सकता है, कर्म-बंधन शिथिल हो सकता है। गीता के आदर्श पुरुष कर्मफल में आसक्ति त्याग पुरुषोत्तम में कर्मसंन्यास करते हैं। वे **दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः**, आंतरिक स्वातंत्र्य प्राप्त कर आत्मरत और आत्मसंतुष्ट हो रहते हैं। वे साधारण लोगों की तरह सुख की लालसा से, दुःख के भय से किसी पर आश्रित नहीं होते, परदत्त सुख-दुःख ग्रहण नहीं करते, अतः कर्मों के भोग नहीं भोगते। वरन् महासंयमी, महाप्रतापान्वित देवासुर युद्ध में राग, भय, क्रोध से अतीत महारथी हो भगवत्प्रेरित जो कर्मयोगी राष्ट्रविप्लव, या प्रतिष्ठित राज्य, धर्मसमाज की रक्षा कर निष्काम भाव से भगवत्कर्म सुसंपन्न करते हैं, वे हैं गीता के श्रेष्ठ पुरुष।

आधुनिक युग में हम खड़े हैं नूतन और पुरातन के संधिस्थल पर। मनुष्य निरंतर अपने गंतव्य स्थान की ओर अग्रसर हो रहा है, कभी-कभी समतल भूमि को त्याग ऊपर आरोहण करना होता है और आरोहण के समय राज्य, सभा, धर्म और ज्ञान में विप्लव होता है। आजकल स्थूल से सूक्ष्म की ओर आरोहण करने का प्रयास चल रहा है। पाश्चात्य वैज्ञानिक पंडितों द्वारा स्थूल जगत् की सांगोपांग परीक्षा और नियम-निर्धारण से आरोहण मार्ग की चारों ओर की समतल भूमि परिष्कृत हो गयी है। सूक्ष्म जगत् के विशाल राज्य में पाश्चात्य ज्ञानियों का प्रथम पदक्षेप हो रहा है, बहुतों का मन उस राज्य को जीतने की आशा से प्रलुब्ध हो उठा है। इसके अलावा दूसरे लक्षण भी दिखायी दे रहे हैं—जैसे थोड़े दिनों में थियोसोफी का विस्तार, अमेरिका में वेदांत का आदर, पाश्चात्य दर्शनशास्त्र और चिंतनप्रणाली में परोक्ष रूप से भारतवर्ष का कुछ आधिपत्य आदि। किंतु सर्वश्रेष्ठ लक्षण है भारत का आकस्मिक और आशातीत उत्थान। भारतवासी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जगत् के गुरु-पद पर अधिकार कर नये युग का परिवर्तन करने के लिये उठ रहे हैं। उनकी सहायता से वंचित रहने पर पाश्चात्य-गण उन्नति करने की चेष्टा में सिद्धकाम नहीं हो सकेंगे। जैसे आंतरिक जीवन के विकास के सर्व-प्रधान साधन-स्वरूप ब्रह्मज्ञान, तत्त्वज्ञान और योगाभ्यास में भारत को छोड़ दूसरे किसी देश का उत्कर्ष नहीं हुआ उसी तरह मनुष्यजाति के लिये आवश्यक चित्तशुद्धि, इंद्रियसंयम, ब्रह्मतेज, तपःक्षमता और निष्काम कर्मयोग-शिक्षा हैं भारत की ही संपत्ति। बाह्य सुख-दुःख की उपेक्षा कर आंतरिक स्वाधीनता अर्जित करना भारतवासी के लिये ही साध्य है, निष्काम कर्म में भारतवासी ही समर्थ हैं, अहंकार-वर्जन और कर्म में निर्लिप्तता उन्हींकी शिक्षा और सभ्यता का चरम उद्देश्य होने के कारण जातीय चरित्र में बीज रूप में निहित है।

इस बात की यथार्थता मैंने पहले अलीपुर जेल में अनुभव की। इस जेल में अधिकतर चोर, डकैत और हत्यारे रहते हैं। यद्यपि कैदियों के साथ हमारी बातचीत निषिद्ध थी तथापि व्यवहार में यह नियम पूरी तरह नहीं पाला जाता था, इसके अलावा रसोइये, पानीवाले और झाड़ू देनेवाले मेहतर आदि के साथ संपर्क हुए बिना काम नहीं चलता था, बहुत बार उनके साथ अबाध वाक्यालाप होता। जो मेरे साथ उसी अपराध में पकड़े गये थे वे भी "नृशंस हत्यारों का दल" आदि दुःश्राव्य विशेषणों से कलंकित और निंदित होते। यदि भारतवासी के चरित्र को कहीं घृणा की दृष्टि से देखना हो, यदि किसी अवस्था में उसके निकृष्ट, अधम और जघन्य भाव से परिचय पाना संभव हो तो अलीपुर जेल ही है वह स्थान और अलीपुर का कारावास ही है वह निकृष्ट, हीन अवस्था। इस स्थान में, ऐसी अवस्था में मैंने बारह महीने काटे। इन बारह महीनों के अनुभव का फल—भारतवासियों की श्रेष्ठता के संबंध में दृढ़ धारणा, मनुष्यचरित्र के प्रति द्विगुण भक्ति और स्वदेश एवं मनुष्यजाति की भावी उन्नति और कल्याण की दस गुनी आशा ले कर्म-क्षेत्र में लौटा हूं। यह मेरे स्वभावजात Optimism (आशावाद) या अतिरिक्त विश्वास का फल नहीं। श्रीयुत विपिन चंद्र पाल एक बार जेल में यह अनुभव कर आये थे, अलीपुर जेल के भूतपूर्व डॉक्टर डैली साहब भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसका समर्थन करते थे। डैली साहब थे मानव-चरित्र से अभिज्ञ, सहृदय और विचक्षण व्यक्ति, मानव-चरित्र की सारी निकृष्ट और जघन्य वृत्तियां प्रतिदिन उनके सामने विद्यमान रहतीं, फिर भी वे मुझसे कहते, "भारत के सज्जन या नीच लोगों को, समाज के संभ्रांत व्यक्ति या जेल के जितने भी कैदियों को देखता-सुनता हूं उससे मेरी यह धारणा दृढ़ हुई है कि चरित्र और गुण में तुम लोग हम से बहुत ऊंचे हो। इस देश के कैदियों और यूरोप के कैदियों में आकाश-पाताल का अंतर है। इन युवकों को देखकर मेरी यह धारणा और भी दृढ़ हो गयी है। इनका आचरण, चरित्र और नाना सद्गुण देखते हुए कौन कल्पना कर सकता है कि ये anarchist (अराजकतावादी) या हत्यारे हैं। उनमें क्रूरता, उद्दामभाव, अधीरता या धृष्टता थोड़ी भी नहीं पाता, पाता हूं सब उल्टे गुण ही।" निस्संदेह चोर और डाकू जेल में साधु-संन्यासी नहीं बन जाते। अंगेरजों की जेल चरित्र सुधारने की जगह नहीं, साधारण कैदियों के लिये तो उल्टे चरित्रहानि और मनुष्यत्व के नाश का साधन है। जो चोर, डाकू और खूनी थे, वे चोर, डाकू और खूनी ही रहते हैं, जेल में चोरी करते हैं, कड़ी पाबंदियों के बावजूद नशा करते हैं, धोखा देते हैं। पर इससे क्या, भारतीय का मनुष्यत्व जाकर भी नहीं जाता। सामाजिक अवनति के कारण पतित, मनुष्यत्व-नाश के फलस्वरूप निष्पेषित और बाहर कालिमा, कदर्यभाव, कलंक और विकृति, फिर भी भीतर वही लुप्तप्राय मनुष्यत्व भारतवासी के मज्जागत सद्गुण में छिपा आत्मरक्षा करता है, बार-बार उसकी बातों में और आचरणों में प्रकट होता है। जो थोड़ा-सा ऊपरी कीचड़ देख घृणा से मुंह फेर लेते हैं, केवल वे ही कह सकते हैं कि हमने इनमें मनुष्यत्व लेशमात्र भी नहीं देखा। किंतु जो साधुता का अहंकार त्याग अपनी सहजसाध्य स्थिर दृष्टि से निरीक्षण करते हैं वे कभी उनकी हां में हां नहीं मिलायेंगे। श्रीयुत विपिन चंद्र पाल ने बक्सर जेल में चोर-डाकुओं के बीच में ही सर्वघट में नारायण के दर्शन कर छः मास के कारावास के बाद उत्तरपाड़ा की सभा में मुक्त कंठ से इस बात को स्वीकारा था। मैं भी अलीपुर जेल में ही हिंदू धर्म के इस मूलतत्त्व को हृदयंगम कर पाया, नरदेह में सर्वप्रथम चोर, डाकू और खूनी में नारायण को उपलब्ध किया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस देश में सैंकड़ों निरपराध व्यक्ति दीर्घकाल तक जेल-रूपी नरकवास के भोग से पूर्वजन्मार्जित दुष्कर्म के फल को हल्का कर अपना स्वर्ग-पथ परिष्कृत कर रहे हैं। किंतु साधारण पाश्चात्यवासी जो धर्मभाव से पूत और देवभावापन्न नहीं हैं वे ऐसी परीक्षा में कहांतक उत्तीर्ण होते हैं इसका सहज अनुमान जो पश्चिम में रह चुके हैं या जिन्होंने पश्चिमी चरित्र-प्रकाशक साहित्य पढ़ा है, वे ही कर सकते हैं। ऐसे स्थलों में या तो उनका निराशा-पीड़ित, क्रोध और दुःख के अश्रुजल से प्लावित हृदय पार्थिव नरक के घोर अंधकार में एवं सहवासियों के संसर्ग में पड़ उनकी क्रूरता और नीचवृत्ति का आश्रय लेता है;—या दुर्बलता के निरतिशय निष्पेषण से बल-बुद्धिहीन हो केवल मनुष्य का नष्टावशेष बच रहता है।

अलीपुर के एक निरपराधी की बात सुनाता हूं। इस व्यक्ति को डकैती में शामिल होने के कारण दस साल के सश्रम कारावास का दंड मिला था। जाति का था ग्वाला, अशिक्षित, लिखने-पढ़ने के पास न फटकता, धर्म और संबंध के नाते उसमें थी भगवान् पर आस्था और आर्यशिक्षा-सुलभ धैर्य और अन्यान्य सद्गुण। इस वृद्ध का भाव देख मेरा विद्या और सहिष्णुता का अहंकार चूर्ण हो गया। वृद्ध के नयनों में सदा विराजता प्रशांत, सरल मैत्रीभाव और मुंह में सर्वदा अमायिक, प्रीतिपूर्ण आलाप। कभी-कभी अपने निरपराध होने पर भी कष्टभोग की बात कहते, स्त्री-पुत्र के बारे में बताते, कब भगवान् कारा से मुक्ति दिला स्त्री-पुत्र के मुख का दर्शन करायेंगे, यह भाव भी प्रकाशित करते, लेकिन कभी भी उन्हें निराश और अधीर नहीं देखा। भगवान् की कृपा के भरोसे धीर भाव से जेल का सब काम संपन्न करते हुए दिन काट रहे थे। वृद्ध की सारी चेष्टाएं और भावनाएं अपने लिये नहीं थीं, थीं दूसरों की सुख-सुविधाओं के लिये। उनकी हर बात से झलकती थी दया और दुःखियों के प्रति सहानुभूति। पर-सेवा था उनका स्वभाव-धर्म। नम्रता में ये सारे सद्गुण और भी फूट उठे थे। अपने से सहस्र गुना उच्च हृदय देख इस नम्रता के सामने मैं सर्वदा लज्जित हो जाता, वृद्ध से सेवा कराते संकोच होता था, लेकिन वे छोड़ते नहीं थे, वे सदा ही मेरे सुख-स्वस्ति के लिये चिंतित रहते। जैसा मेरे पर वैसा ही सब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर—विशेषतया निरपराधों और दुःखीजनों के प्रति उनकी दयादृष्टि और विनीत सेवा-सम्मान और भी अधिक था। तिस पर भी चेहरे पर और आचरण में कैसा एक स्वाभाविक और प्रशांत गांभीर्य और महिमा थी! देश के प्रति भी इनका यथेष्ट अनुराग था। इस वृद्ध कैदी की दया-दाक्षिण्यपूर्ण श्वेतश्मश्रुमंडित सौम्यमूर्ति चिरकाल मेरे स्मृति-पट पर अंकित रहेगी। इस अवनति के समय भी भारत के किसानों में—जिन्हें हम अशिक्षित और छोटी जात कहते हैं,—ऐसी हिंदू-संतानें मिलती हैं, इसीलिये है भारत का भविष्य आशाजनक। शिक्षित युवक-मंडली और अशिक्षित कृषकवर्ग—इन दो वर्गों में ही निहित है भारत का भविष्य, इनके मिलन से ही गठित होगी भावी आर्यजाति।

ऊपर एक अशिक्षित खेतिहर की कहानी सुनायी, अब दो शिक्षित युवकों की कहानी सुनाता हूं। इन्हें सात साल का सश्रम कारावास का दंड मिला था। ये थे हैरिसन रोड के दो कविराज, नगेंद्रनाथ और धरणी। ये भी जिस शांत भाव से, संतुष्ट मन से इस आकस्मिक विपत्ति, इस अन्याय राजदंड को सह रहे थे, उसे देख आश्चर्यचकित रह जाना पड़ता था। कभी भी उनके मुख से क्रोध-दुष्ट या असहिष्णुता-प्रकाशक एक भी बात नहीं सुनी। जिनके दोष से जेलरूपी नरक में यौवन काटना पड़ा था उनके प्रति जरा-सा भी क्रोध, तिरस्कार का भाव या विरक्तितक का कोई लक्षण कभी नहीं देखा। वे थे आधुनिक शिक्षा के गौरवस्थल, पाश्चात्य भाषा और पाश्चात्य विद्या से अनभिज्ञ। मातृभाषा ही थी इनका संबल, लेकिन अंगरेजी शिक्षा प्राप्त लोगों में उनके तुल्य कम ही लोग देखे। दोनों ने ही मनुष्य या विधाता के आगे शिकायत या नालिश न कर सहास्य-वदन नतमस्तक दंड ग्रहण कर लिया था। दोनों ही भाई थे साधक लेकिन विभिन्न प्रकृति के। नगेंद्र थे धीर प्रकृति, गंभीर और बुद्धिमान्, हरिकथा और धर्म-चर्चा में अत्यंत रुचि रखनेवाले। जब हमें निर्जन कारावास में रखा गया था तब जेल के अधिकारियों ने जेल की कड़ी मशक्कत के बाद हमें पुस्तकें पढ़ने की अनुमति दी थी। नगेंद्र की इच्छा थी भगवद्गीता पढ़ने की, मिली बाइबल। बाइबल पढ़कर उनके मन में कैसे-कैसे भाव उठते, कठघरे में बैठकर सब

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुझे बताते। नगेंद्र ने गीता नहीं पढ़ी, किन्तु आश्चर्य ! बाइबल की कथा न कह वे गीता के श्लोकों का अर्थ बोल रहे थे—कभी-कभी तो ऐसा लगता था कि कुरुक्षेत्र में श्रीकृष्ण मुख से निःसृत भगवद्गुणात्मक सारी महती उक्तियां उसी वासुदेव के मुखकमल से इस अलीपुर के कठघरे में फिर से निःसृत हो रही हैं। गीता न पढ़ी होने पर बाइबल में गीता का समतावाद, कर्मफल त्याग, सर्वत्र ईश्वर-दर्शन इत्यादि भाव उपलब्ध करना सामान्य साधना का लक्षण नहीं। धरणी नगेंद्र के समान बुद्धिमान् नहीं थे, लेकिन थे विनीत, कोमल प्रकृति और स्वभाव से ही भक्त। वे सदा ही मातृध्यान में विभोर रहते, उनके चेहरे पर प्रसन्नता, सरल हंसी और कोमल भक्ति-भाव देख जेल के जेलत्व की उपलब्धि कठिन हो जाती थी। इन्हें देख कौन कह सकता है कि बंगाली हीन और अधम हैं ? यह शक्ति, यह मनुष्यतत्त्व, यह पवित्र अग्नि बस छिपी पड़ी है राख के ढेर में।

ये दोनों ही थे निरपराध। बिना दोष के काराबद्ध होने पर भी निज गुणों या शिक्षा के बल पर बाह्य सुख-दुःख का आधिपत्य अस्वीकार कर आंतरिक जीवन की स्वाधीनता की रक्षा करने में समर्थ थे। किंतु जो अपराधी हैं, उनमें भी जातीय चरित्र के सद्गुण विकसित होते। मैं बारह महीने अलीपुर में था, दो-एक को छोड़ जितने भी कैदी, चोर-डाकू और खूनियों के साथ हमारा संपर्क हुआ सबसे ही हम सद्व्यवहार और अनुकूलता पाते। बल्कि आधुनिक शिक्षा से दूषित हम लोगों में इन सब गुणों का अभाव देखा जाता है। आधुनिक शिक्षा के अनेक गुण हो सकते हैं किंतु सौजन्य और निःस्वार्थ परसेवा उन गुणों में नहीं आते। जो दया और सहानुभूति हैं आर्यशिक्षा के मूल्यवान् अंग उन्हें इन चोर-डाकुओं में भी देखता। मेहतर, भंगी और पानीवाले को बिना दोष के हमारे साथ-साथ निर्जन कारावास का दुःख-कष्ट थोड़ा-बहुत भोगना पड़ता, लेकिन उन्होंने इससे एक दिन भी हमारे ऊपर असंतुष्टि या क्रोध नहीं दिखाया। देशीय जेलर के सामने भले ही कभी-कभी अपना दुखड़ा रो लेते थे लेकिन हमारी कारामुक्ति की प्रार्थना प्रसन्न-वदन करते। एक मुसलमान कैदी अभियुक्तों से अपने बेटों जैसा स्नेह करते थे, विदा लेते समय वे अपने आंसू न रोक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाये। देश के लिये यह लांछना और कष्ट भोगते देख वे और सब को संबोधित कर अफसोस करते, "देखो, ये हैं कुलीन, धनियों की संतान, गरीब-दुखियों की रक्षा करने जाने पर इनकी यह दुर्दशा।" जो पाश्चात्य सभ्यता के पिट्ठू हैं उनसे पूछता हूं, इंग्लैंड की जेल में निम्नश्रेणी के कैदियों, चोरों, डाकुओं और खूनियों में मिलेगा ऐसा आत्मसंयम, दया-दाक्षिण्य, कृतज्ञता और परार्थ भगवद्‌भक्ति ? असल में तो यूरोप है भोक्तृभूमि और भारत है दातृभूमि। गीता में दो श्रेणी के लोग वर्णित हैं—देव और असुर। भारतवासी हैं स्वभावतः देवप्रकृति और पाश्चात्यगण स्वभावतः असुरप्रकृति। किंतु इस घोर कलियुग में, तमोगुण के प्राधान्यवश आर्य शिक्षा के लोप से, देश की अवनति से हम निकृष्ट आसुरिक वृत्ति संचित कर रहे हैं और दूसरी ओर पाश्चात्य लोग राष्ट्रीय उन्नति और मनुष्यत्व के क्रमविकास के गुणद्वारा देवभाव अर्जित कर रहे हैं। इसके बावजूद उनके देवभाव में कुछ असुरत्व और हमारे आसुरिक भाव में भी देवभाव अस्पष्टतया प्रतीयमान है। उनमें जो श्रेष्ठ हैं वे भी पूरी तरह असुरत्व-रहित नहीं। निकृष्ट और निकृष्ट की जब हम तुलना करते हैं तो इसकी यथार्थता अति स्पष्ट रूप में समझ में आ जाती है।

इस विषय में बहुत कुछ लिखने को है, प्रबंध के बहुत लंबा हो जाने के भय से नहीं लिखा। तो भी जेल में जिनके आचरण में इस आंतरिक स्वाधीनता के दर्शन किये हैं, वे हैं इस देवभाव के चरम दृष्टांत। परवर्ती प्रबंध में इस विषय पर लिखने की इच्छा है।

*

केवल सत्य ही जगत् को भागवत प्रेम को ग्रहण करने और अभिव्यक्त करने की शक्ति प्रदान कर सकता है।

*

डरना बंद कर दो और कष्ट भी बंद हो जायेंगे। मेरा कोई बच्चा डर नहीं सकता।

—माताजी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सोसायटी समाचार

अंग्रेजी में सोसायटी की ओरसे 'सेल्फ पर्फेक्शन इन योग', 'फीअर—इट्स कॉज़ एंड क्योर,' 'व्हाट इज़ कानसेंनट्रेशन' तथा 'प्रेक्टिकल गाइडेंस' नामक पुस्तकें प्रकाशित हुई हैं। प्रत्येक का दाम चार-चार रुपये है। श्रीअरविंद सोसायटी सर्कल का वार्षिक अंक भी छप गया है।

श्रीअरविंद साधनालय **अयोध्या** में श्रीअरविंद के पवित्र अवशेषों की स्थापना हो गयी है।

देहरादून में सोसायटी की शाखा ने 'दैनिक जीवन में योग' विषय पर एक सेमिनार किया। सर्वश्री माधव पंडित, प्रदीप नारंग और ओ॰ पी॰ वाही के भाषण हुए।

सितान (गुजरात) के श्रीअरविंद आराधना केंद्र ने ७ अप्रैल को अपना १७ वां वार्षिक दिवस मनाया।

२४ अप्रैल को **बंगलौर, अमरावती, चक्रधरपुर** आदि स्थानों में अलग-अलग तरह के कार्यक्रम हुए।

पांडिचेरी मुख्यालय के श्री देवव्रत मार्च और अप्रैल में खड़गपुर, कलकत्ता, कैनिंग, आसनसोल, रामपुरहाट, रघुनाथगंज, जलेश्वर आदि स्थानों पर गये। पटना शाखा अपने नये विद्यालय के लिये इमारत बनवा रही है। सदस्यों ने अनेक प्रकार के कार्य शुरू कर दिये हैं।

ओडिसा के खरीड चौक की यात्रा बहुत फलप्रद रही जहां कुछ समय पहले श्रीअरविंद के पवित्र अवशेष प्रतिष्ठित किये गये थे। यह स्थान सड़क से १२ किलोमीटर दूर है। ८ किलोमीटर तो रिक्शा ले जाती है, बाकी रास्ता पैदल तय करना पड़ता है। इस दूरस्थ गांव में कुछ युवक बड़े समर्पण भाव से माताजी और श्रीअरविंद की सेवा करने का प्रयास कर रहे हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रणव कुमार भट्टाचार्य के आश्रम के व्यायामसंबंधी प्रकाशन

BOOKS:
1. Healthful Exercises for Women and Girls (New) Rs. 8/-
2. Basic Asanas (4th Edition) Rs. 6/-
3. Daily Dozen for Men (2nd Edition) Rs. 6/-

(Postage Extra)

CHARTS:
Basic Asanas (30″ × 20″, Art Paper) Rs. 8/-
Daily Dozen for Men (30″ × 20″, Art Paper) Rs. 8/-
Surya Namaskar (15″ × 10″, Board Paper) Rs. 2/-

(Postage Rs. 10/-)

प्रकाशक—नवज्योति कार्यालय, श्रीअरविंद आश्रम, पांडिचेरी—६०५००२

युवा होने का मतलब है भविष्य में रहना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

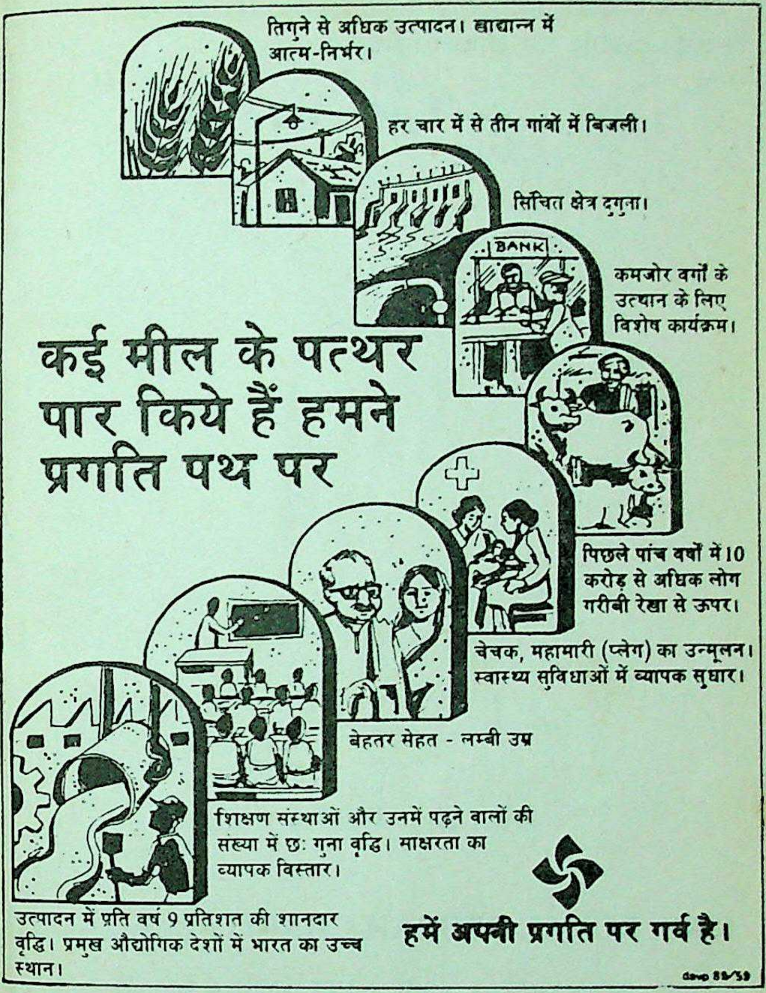

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"The constant remembrance of the Divine is indispensable for transformation."

— THE MOTHER

With Best Wishes from:

MRS. KOYAL DEORAH CHARITABLE TRUST
28, VARSHA, 69/B, NEPEANSEA ROAD
BOMBAY - 400 006

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

079580

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CA
11/11/90

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Compiled
1999-2000

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar